प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई नं० ४.

तीसरी बार
सितम्बर, १९४६

मुद्रक—
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिन्टिंग प्रेस,
६ केलेवाडी, गिरगाव, बम्बई ४

शेष प्रश्न

१

विभिन्न समयोंमें विभिन्न कार्योंसे आकर बहुत-से बंगाली परिवार युक्तप्रान्तके प्रसिद्ध शहर आगरेमें बस गये थे। कई तो पीढ़ियोंके वाशिन्दे हैं और कई हालमें ही आये हैं। चेचक और प्लेग जैसी महामारियोंके समयकी भगदड़के सिवा इनका जीवन अत्यन्त निर्विघ्न है। बादशाही जमानेके किले और इमारतें ये देख चुके हैं। अमीर-उमराओंकी छोटी, बड़ी, मझोली, टूटी और अध-टूटी जहाँ जितनी भी कब्रें हैं उनकी पूरी सूची इन्हें कण्ठस्थ हो चुकी है। यहाँ तक कि संसार-प्रसिद्ध ताजमहलमें भी अब इनके लिए कोई नवीनता नहीं रह गई है। सन्ध्याके समय उदास और सजल नेत्रोंको खोलकर, चाँदनी रातमें अर्ध-निमीलित नेत्रोंसे देखकर, अँधेरी रातमें आँखें फाड़-फाड़कर जमुनाके इस पार और उस पारसे ताजमहलके सौन्दर्य उपलब्ध करनेके जितने प्रकारके प्रचलित प्रवाद और तरकीबें हैं, उन सबको इन लोगोंने निचोड़कर खत्म कर दिया है। ताजमहल देखकर किस बड़े आदमीने कब क्या कहा है, किस किसने कविताएँ लिखी हैं, भावुकताके उच्छ्वासमें सामने खड़े होकर किस किसने गलेमें फाँसी डालकर मर जानेकी कोशिश की है, इन्हें सब मालूम है। इतिहासकी जानकारीकी तरफसे भी इनमें रंचमात्र त्रुटि नहीं पाई जाती। इनके छोटे छोटे बच्चे-बच्चियों तकने सीख लिया है कि किस बेगमकी कहाँ सौरी थी, कौन-सा जाट-सरदार कहाँ रोटी बनाकर खाता था और वहाँ लगी हुई कालिख कितनी प्राचीन है, किस डाकूने कितने हीरे माणिक लूटे थे और उनकी अनुमानसे कितनी कीमतें थीं,—इनमेंसे कोई भी बात उनसे छिपी नहीं है। इस ज्ञान और परम निश्चिन्तताके बीच सहसा एक दिन बंगाली-समाजमें चाञ्चल्य दिखाई दिया। प्रतिदिन मुसाफिरोंका झुण्ड आता-जाता रहता है,—अमेरिकन टूरिस्टों (भ्रमण करनेवालों) से लेकर वृन्दावनसे

लौटे हुए वैष्णवों तककी भीड़ बनी ही रहती है,—किसीको किसी बातकी उत्सुकता नहीं, दिनके काम धन्धोंमें दिन खतम हो जाता है। इतनेमें एक प्रौढ़ अवस्थाके बंगाली-साहब अपनी शिक्षिता, सुरूपा और पूर्ण-यौवना कन्याके साथ यहाँ आये, और स्वास्थ्य-उद्धारके निमित्त शहरके एक किनारे बड़ा भारी मकान किरायेपर लेकर रहने लगे। उनके साथ बैरा, बावरची, दरबान आये; नौकर-नौकरानी, ब्राह्मण रसोइया, गाड़ी-घोड़े, मोटर, शोफर, साईस, कोचवान वगैरह सभी आये; और इतने दिनोंसे खाली पड़ा हुआ इतना बड़ा मकान देखते देखते जैसे जादू कर दिया गया हो इस तरह रातों-रात आबाद हो गया। उन महाशयका नाम आशुतोष गुप्त था और कन्याका नाम मनोरमा। बहुत ही आसानीसे समझमें आ गया कि ये लोग बड़े आदमी हैं। परन्तु, ऊपर जिस चाञ्चल्यका उल्लेख किया है, वह इनकी धन-सम्पत्तिके परिणामकी कल्पना करके या मनोरमाकी शिक्षा और रूपकी ख्यातिके कारण उतना नहीं हुआ, जितना कि आशु बाबूके निरभिमान सरल और शिष्ट आचरणसे। वे खुद लड़कीको साथ लेकर शहर आये और तलाश कर-करके सबके घर मुलाकात करने गये। बोले, हम बीमार आदमी हैं, आप लोगोंके अतिथि हैं; इसलिए, आप लोग अपनी उदारतासे अगर कृपा करके हम प्रवासियोंको अपने दलमें शामिल नहीं कर लेंगे, तो हमारे लिए यह निर्वासन-काल काटना एक तरहसे असम्भव हो जायगा। मनोरमा घरोंके भीतर जा जाकर स्त्रियोंसे परिचय कर आई। उसने भी अस्वस्थ पिताकी तरफसे निवेदन किया कि आप लोग हमें गैर न समझें। तथा इस तरहकी और भी बहुत-सी रुचिकर मीठी बातें कहीं।

सुनकर सब ही खुश हुए। तबसे आशु बाबूकी गाड़ी और मोटर जब-तब और जिस-तिसके घर जाने-आने लगी, और मर्द औरतोंको घरसे लाने और घर पहुँचाने लगी। बातचीत, हँसी-मज़ाक, गाना-बजाना और देखने लायक चीजें बार बार देखनेकी दिलचस्पी ऐसी जमने लगी कि इस बातको भूलनेमें किसीको भी एक सप्ताहसे ज्यादा समय नहीं लगा कि ये लोग परदेशी या बहुत बड़े आदमी हैं। मगर एक बात; शायद कुछ संकोचवश और कुछ व्यर्थ-सी समझकर किसीने स्पष्ट तौरसे नहीं पूछी कि आप लोग सनातनी हैं या ब्राह्मसमाजी। और, परदेशमें, इनकी ऐसी कोई बड़ी जरूरत भी नहीं होती। फिर भी आचार-व्यवहारसे जितना समझा जा सकता है, सबने एक

तरहसे समझ लिया था कि ये हों चाहे किसी भी समाजके, पर अधिकांश उच्च-शिक्षित उच्च बंगाली परिवारोंके समान कमसे कम खाने-पीनेके विषयमें इनके कोई बचाव-विचार नहीं है। यह बात सबको मालूम न होनेपर भी कि घरमें मुसलमान बावर्ची है, इतना सब समझ गये कि इतनी उमर तक जिन्होंने लड़कीको कुँआरी रखकर कालेजमें पढ़ाया है, वे असलमें किसी भी समाजके क्यों न हों, अनेक तरहकी संकीर्णताओंसे छुटकारा पा चुके हैं।

अविनाश मुकर्जी कालेजका प्रोफेसर है। बहुत दिन हुए उसकी स्त्रीका देहान्त हो गया है,—फिर उसने ब्याह नहीं किया। घरमें दस सालका एक लड़का है। वह कालेजमें पढ़ाता है और मित्र-दोस्तोंके साथ आनन्द करता फिरता है। आर्थिक स्थिति अच्छी है,—निश्चिन्त और निरुपद्रव जीवन है। दो साल पहले विधवा साली मलेरिया बुखारसे पीड़ित होकर आब-हवा बदलने बहनोईके घर आई थी। बुखारने छोड़ दिया, पर बहनोईने नहीं छोड़ा। फिलहाल वही घरकी मालिकिन है। लड़केकी देख-भाल करती है, घर-गृहस्थी सम्हालती है। मित्र लोग सम्बन्धकी आलोचना करके मज़ाक उड़ाते हैं। अविनाश हँस देता है; कहता है, "भाई, व्यर्थमें शरमिन्दा करके अब न जलाओ। तकदीर है तकदीर! नहीं तो, कोशिश करनेमें तो कोई कसर रखी नहीं। अब सोचता हूँ, घनकी बदनामीसे डकैत मार डालें, सो भी मेरे लिए अच्छा है।"

अविनाश अपनी स्त्रीको बहुत ज्यादा चाहता था। मकान-भरमें सर्वत्र नाना आकार और नाना भंगिमाओंके उसके फोटोग्राफ टँगे हुए हैं। सोनेके कमरेमें एक बड़ी तसवीर टँगी हुई है। ऑइल पेण्टिंग है कीमती फ्रेममें मढ़ी हुई। अविनाश हर बुधवारको सवेरे उसपर माला लटका देता है। इस दिन उसकी मृत्यु हुई थी।

अविनाश सदा आनन्दित रहनेवाला आदमी है। ताश-चौपड़में उसकी अत्यधिक आसक्ति है। इसीसे, छुट्टीके दिन उसके घर लोगोंका खूब समागम होता है। आज किसी त्योहारकी वजहसे कालेज-कचहरी बन्द हैं। खाने-पीनेके बाद प्रोफेसर-मण्डल आ धमका है। दो जनें नीचेकी गद्दीपर शतरंज बिछाये बैठे हैं, और दो जनें औंधे लेटकर उसे देख रहे हैं: बाकीके सब लोग डिप्टी और मुन्सिफकी विद्या-बुद्धिकी स्वल्पताके अनुपातमें मोटी तनखाकी नाप-तौल करके उच्च कोलाहलके साथ गवर्नमेण्टके प्रति 'राइचुअस

मगर फिर भी, ये संन्यासी ढंगके दामाद साहब चाहे जो हों और चाहे जहाँ हों, मामूली आदमी नहीं हैं। कारण, उनकी मनाही नहीं, सिर्फ अनिच्छाके जोरसे ही इतने बडे विलासी और ऐश्वर्यशाली व्यक्तिकी एकमात्र शिक्षिता कन्याका मास-मछली और प्याज-लहसुन खाना एकबारगी बन्द हो गया है।

और, शरमाने और छिपानेकी इसमें कौन-सी बात है ? पिता मारे संकोचके जड़ हो गये, कन्या चेहरा सुख करके स्तब्ध हो रही,—सारा मामला सबके मनमें मानो एक अवाञ्छित और अप्रिय रहस्यकी तरह चुभकर रह गया, और आगन्तुक परिवारके साथ मिलने-जुलनेकी जो सहज और स्वच्छन्द धारा बह रही थी मानो उसमें अकस्मात् एक बाधा-सी आ पड़ी।

२

मालूम तो ऐसा हुआ था कि शायद आशु बाबू शहरके किसीको भी बाद नहीं देंगे, लेकिन, देखा गया कि बंगालियोंमे जो विशिष्ट लोग हैं, वे ही निमंत्रित हुए हैं। प्रोफेसरोंका दल गिरोह बाँधकर आ पहुँचा और उनके घरकी स्त्रियोंको पहलेसे ही मोटर भेजकर बुला लिया गया है।

एक बडे कमरेके फर्शपर लम्बा-चौडा कीमती कार्पेट बिछाकर लोगोंके बैठनेके लिए जगह की गई है। उसपर दो-तीन देशी उस्ताद बैठे साजका स्वर बाँध रहे हैं। बहुत-से बच्चे उन्हें घेरे बैठे हैं। घरके मालिक साहब अन्यत्र कहीं थे, खबर पाते ही दौडे दौड़े आये; और दोनों हाथ उठाकर थियेट्रिकल ढँगसे बोले, "स्वागत सज्जनगण! मोस्ट वेलकम्!"

फिर उस्तादोंको इशारेसे दिखलाकर और आँख मिचकाकर धीमे स्वरसे बोले, "डरनेकी कोई बात नहीं। सिर्फ इन्हीं लोगोंकी म्याँउँ म्याँउँ सुननेके लिए ही आप लोगोंको निमंत्रण देकर नहीं बुलाया है। सुनायेंगे, ऐसा गाना आज सुनायेंगे कि मुझे आप लोग आशीर्वाद देते हुए घर लौटेंगे।"

सुनकर सभी खुश हुए। सदा-प्रसन्न अविनाश बाबूका चेहरा आनन्दसे चमक उठा, बोले, "कहते क्या हैं आशु बाबू ? इस अभागे देशके तो सभी लोगोंको मैं जानता हूँ, अकस्मात् यह रत्न पा कहाँसे गये ?"

"आविष्कार किया है, साहब, आविष्कार किया है। आप लोग भी बिलकुल ही न पहचानते हों, सो बात नहीं है,—अब शायद भूल गये होंगे।

चलिए, दिखाता हूँ।" अपनी बैठकका परदा हटाकर सबको वे एक तरहसे ढकेलते हुए ही भीतर ले गये।

आदमी तो कुछ साँवले रंगका है, पर रूपका अन्त नहीं। जैसा लम्बा छरहरा शरीर, वैसा ही सारे अवयवोंका निर्दोष गठन। नाक, आँखें, भौंहें, ललाट, अधरोंकी तिरछी रेखा तक सारी विशेषताएँ एक ही मानव-शरीरमें सुविन्यस्त हो चुकनेपर वह कैसी विस्मयकी वस्तु हो जाती है, यह बात उस आदमीको बगैर देखे कयासमें नहीं आ सकती। देखते ही सहसा दंग रह जाना पड़ता है। उमर शायद बत्तीसके आसपास पहुँची होगी, मगर पहले वह और भी कम मालूम होती है। सामनेके शोफेपर बैठे वे मनोरमासे बात कर रहे थे, अब सीधे होकर बैठ गये और मुसकराकर बोले, "आइए।"

मनोरमाने उठकर आगन्तुक अतिथियोंको नमस्कार किया। परन्तु अकस्मात् सब ऐसे विचलित हो उठे कि प्रतिनमस्कारकी बात भी किसीके मनमें न आई।

अविनाश बाबू उमरमें भी बड़े थे और कालेजके लिहाजसे पद-गौरवमें भी सबसे श्रेष्ठ थे। सबसे पहले उन्हींने बात की। बोले, "आगरे कब लौटे शिवनाथ बाबू? खूब रहे साहब, हम लोगोंको तो खबर भी नहीं लगी।"

शिवनाथने कहा, "नहीं मिली? आश्चर्य है!" और फिर मुसकराकर बोले, "मैं नहीं समझता था अविनाश बाबू, कि मेरे आनेकी बाट देखते हुए आप लोग इतने उद्विग्न हो रहे थे।"

उत्तर सुनकर अविनाश बाबूने यद्यपि हँसनेकी कोशिश की, किन्तु उनके सहयोगियोंके चेहरे क्रोधसे भीषण हो उठे। किसी भी कारणसे हो, ये लोग पहलेसे ही इस प्रियदर्शन गुणी व्यक्तिसे प्रसन्न नहीं हैं। यह बात आभाससे मालूम होनेपर भी एककी इस वक्रोक्तिके भीतरसे और सबकी कठिन मुखच्छविकी व्यंजनासे इतनी कटु, अप्रिय और स्पष्ट हो उठी कि सिर्फ मनोरमा और उसके पिता ही नहीं बल्कि सदानन्द-प्रकृतिके अविनाश तक लज्जित हो गये।

परन्तु मामला आगे नहीं बढ़ पाया, यहीं रुक गया।

बगलके कमरेसे उस्तादजीकी आवाज सुनाई दी और दूसरे ही क्षण घरके गुमास्तेने आकर विनयके साथ कहा, "सब तैयार हैं, सिर्फ आप लोगोंके पहुँचने-भरकी देर है।"

पेशेवर उस्तादोंका संगीत साधारणतः जैसा हुआ करता है, यहाँ भी वैसा

ही हुआः विशेषताहीन मामूली। मगर कुछ देर बाद इस छोटी-सी संगीत-सभामें थोडेसे श्रोताओंके बीच शिवनाथका गाना सचमुच ही अपूर्व सुनाई दिया। सिर्फ उसका कण्ठ ही अतुलनीय और अनिन्दनीय हो सो बात नही, वास्तवमें वह इस विद्यामें असाधारण सुशिक्षित और पारदर्शी है। उसके गानेका आडम्बरशून्य संयत ढंग, स्वरकी स्वच्छन्द सरल गति, चेहरेपर अदृष्टपूर्व भावोंकी छाया, आँखोंकी अभिभूत उदासीन दृष्टि: सब बातोंने एक ही समयमे केन्द्रीभूत होकर सर्वाङ्गीण लय और तानसे परिशुद्ध जब वह सगीत समाप्त किया तब मालूम हुआ कि श्वेतभुजाने (सरस्वतीने) अपने दोनों हाथ खाली करके साराका सारा आशीर्वाद इस साधकके माथेपर उड़ेल दिया है।

कुछ देर तक सभी लोग वाक्यहीन स्तब्ध हो रहे, सिर्फ वृद्ध अमीर खॉने धीरेसे कहा, "ऐसा कभी नहीं सुना।"

मनोरमाने बचपनसे ही गाने बजानेका अभ्यास किया है। संगीतमे वह अपटु नहीं थी। अपने छोटेसे जीवनमें उसने बहुत कुछ सुना है, लेकिन यह बात उसे नहीं मालूम थी कि ससारमें ऐसी चीज़ भी मौजूद है और संगीतके छन्द छन्द या कदम कदमपर हृदयके भीतर इस तरह कसक भी उठ सकती है। उसकी दोनों ऑखें आसुओंसे भर आई और उसे छिपानेके लिए मुँह फेरकर वह चुपचाप उठके चली गई।

अविनाशने कहा, "शिवनाथ गानेको जल्दी तयार नहीं होता; उसका गाना हम लोगोंने पहले भी सुना है,—लेकिन उससे इसकी कोई तुलना ही नहीं हो सकती। इस साल-भरके अन्दर तो उसने 'इनफिनिट्ली इम्प्रूव' (हद दरजेका सुधार) किया है।"

हरेन्द्रने कहा, "हाँ।"

अक्षय इतिहासके अध्यापक हैं। कठोर सच्चे आदमीके तौरपर मित्र-मण्डलीमे उनकी ख्याति है। गाना-बजाना अच्छा लगना उनके मतसे मनकी कमजोरी है। वे निष्कलङ्क साधु आदमी हैं। इसीसे, सिर्फ अपनी ही नहीं, दूसरोंकी चरित्रसम्बन्धी पवित्रताके प्रति भी उनकी अत्यन्त सजग तीक्ष्ण दृष्टि है। शिवनाथके अकस्मात् वापस लौट आनेके कारण शहरकी आब-हवा फिरसे कलुषित न हो जाय, इस आशंकासे उनकी गंभीर शान्ति क्षुब्ध हो गई है। खासकर इस बातकी सम्भावनासे उनका मन बहुत उद्विग्न हो उठा कि

घरमें औरतें आ गई हैं, वे भी परदेकी ओटसे गाना सुनेंगी, चेहरा देखेंगी, और वह उन्हें भी प्रीतिकर लगेगा। वे बोले, "गाना तो सुना था मधु बाबूका! यह गाना आप लोगोंको चाहे जितना भी मीठा लगा हो, पर इसमें प्राण नहीं हैं!"

सब चुप हो रहे। कारण, एक तो अज्ञात मधु बाबूका गाना किसीने सुना नहीं था और दूसरे गानेमें प्राण रहने न रहनेकी सुनिर्दिष्ट धारणा अक्षयकी तरह और किसीके निकट स्पष्ट नहीं थी। गुण-मुग्ध आशु बाबू उत्तेजनावश तर्क करनेको तैयार थे, पर अविनाशने आँखोंके इशारेसे उन्हें रोक दिया।

संगीतहीके विषयमें आलोचना होने लगी। कब, किसने, कहाँ, कैसा गाना सुना था, उसकी व्याख्या और वर्णन किया जाने लगा। बातों ही बातोंमें रात बढ़ने लगी। भीतरसे खबर आई कि औरतें सब जीम चुकीं, और उन्हें घर भेजा जा रहा है। वृद्ध सब-जज साहब रात हो जानेकी वजहसे घर चल दिये और अजीर्ण-रोगग्रस्त मुन्सिफ साहब भी जल और पान-मात्र मुँहमें देकर उनके साथी हुए। रह गया सिर्फ प्रोफेसर-दल। क्रमशः उसकी भी जीमनेकी बुलाहट हुई। ऊपरके खुले बरामदेमें आसन बिछाकर पत्तलें लगाई गई हैं, सबके साथ आशु बाबू भी बैठ गये। मनोरमा औरतोंकी तरफसे छुट्टी पाकर देख-रेखके लिए आ पहुँची।

शिवनाथको भूख भले ही हो, पर खानेमें रुचि नहीं थी; वह बिना खाये ही घर लौटनेको तैयार था; मगर मनोरमाने किसी भी तरह उसे छोड़ा नहीं, कह-सुनकर सबके साथ बिठा दिया। आयोजन बड़े आदमियों-जैसा ही था इस बातका विस्तारके साथ वर्णन करके कि रेलमें आते वक्त टूण्डलामे शिव-नाथके साथ कैसे आशु बाबूका परिचय हुआ और मात्र दो दिनकी बातचीतसे कैसे वह परिचय घनिष्ठ आत्मीयतामें परिणत हो गया, आशु बाबूने अपना कृतित्व प्रमाणित करनेके लिए कहा, "और, सबसे बढ़कर खूबी है मेरे कानोंकी। इनके गलेकी अस्फुट मामूली-सी गुंजन-ध्वनिसे ही मैं निश्चित समझ गया कि कोई गुनी पुरुष, असाधारण व्यक्ति हैं।" इतना कहकर उन्होंने कन्याको साक्षीके तौरपर बुलाकर कहा, "क्यों बेटी, कहा नहीं था तुमसे, शिवनाथ बाबू भारी आदमी हैं? कहा नहीं था मणि, इनके साथ जान-पहचान होना जीवनमें एक सौभाग्यकी बात है?"

लड़कीका मुखड़ा मारे आनन्दके दीप्त हो उठा, बोली, "हाँ बाबूजी, तुमने कहा था। तुमने गाड़ीसे उतरते ही मुझे बताया था कि—"

" मगर देखिए आशु बाबू—"

वक्ता थे अक्षय। सब चकित हो गये। अविनाशने व्यग्र होकर रोकनेकी कोशिश की, " ओ हो, रहने दो अक्षय। रहने दो आज यह सब चर्चा—"

अक्षयने आँखें मीचकर आँखोंके लिहाजकी बला टालकर कई बार सिर हिलाया और कहा, " नहीं अविनाश बाबू, दबानेसे काम नहीं चलेगा। शिवनाथ बाबूकी सारी बातें प्रकट कर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। आप—"

" ओ हो हो,—करते क्या हो अक्षय, कर्तव्यका ज्ञान तो हम लोगोंको भी है, साहब,—और किसी दिन देखा जायगा—" इतना कहकर अविनाशने उसे एक धक्का देकर रोकनेकी कोशिश की, पर सफलता नहीं मिली। धक्केसे अक्षयका शरीर हिल गया, पर कर्तव्य-निष्ठा नहीं हिली। बोले, " आप लोग जानते हैं कि व्यर्थका संकोच मेरे नहीं हैं। अनीतिको प्रश्रय मैं दे ही नहीं सकता। "

असहिष्णु हरेन्द्र बोल उठा, "अरे, सो क्या हम ही प्रश्रय देना चाहते हैं ? लेकिन उसके लिए क्या कोई स्थान काल नहीं ? "

अक्षयने कहा, " नहीं। ये अगर इस शहरमें फिरसे न आते, अगर उच्च परिवारसे घनिष्ठता बढानेकी कोशिश न करते, खासकर कुमारी मनोरमाका अगर कोई सम्बन्ध न होता—"

उद्वेगके कारण आशु बाबू व्याकुल हो उठे और अज्ञात आशंकासे मनोरमाका चेहरा फीका पड़ गया।

हरेन्द्रने कहा, " इट इज़ टू मच ! " (बहुत ज्यादती है।)

अक्षयने जोरके साथ प्रतिवाद किया, " नो, इट इज़ नॉट ! " (नहीं, नहीं है।)

अविनाश बोल उठे, " ओ हो—कर क्या रहे हो तुम लोग ! "

अक्षयने किसी बातपर ध्यान ही नहीं दिया, बोले, " आगरेमें ये भी किसी दिन प्रोफेसर थे। इनको आशु बाबूको बतलाना चाहिए था कि कैसे वह नौकरी छूटी। "

हरेन्द्रने कहा, "अपनी इच्छासे छोड़ दी। पत्थरका कारोबार करनेके लिए।"

अक्षयने खण्डन किया, " झूठी बात है। "

शिवनाथ चुपचाप भोजन कर रहा था, मानो इस सब वितण्डा-वादसे

उसका कोई सम्बन्ध ही न हो। अब उसने मुँह उठाकर देखा और अत्यंत स्वाभाविक भावसे कहा, "बात तो झूठी ही है। कारण, प्रोफेसरी अपनी इच्छासे नहीं छोड़ता तो दूसरोंकी यानी आप लोगोंकी इच्छासे छोड़नी पड़ती। और सो ही हुआ।"

आशु बाबूने आश्चर्यके साथ पूछा, "क्यों?"

शिवनाथने कहा, "शराब पीनेकी वजहसे।"

अक्षयने इस बातका प्रतिवाद किया, "नहीं, शराब पीनेके कुसूरपर नहीं, मतवाले होनेके कुसूरसे।"

शिवनाथने कहा, "जो शराब पीता है वही तो कभी न कभी मतवाला होता है। जो नहीं होता, वह या तो झूठ बोलता है, या शराबके बदले पानी पीता है।" कहकर वह हँसने लगा।

अक्षय मारे क्रोधके कठोर हो उठा, बोला, "निर्लज्जकी तरह आप हँसना चाहें तो हँस सकते हैं; मगर इस कुसूरको हम लोग माफ नहीं कर सकते।"

शिवनाथने कहा, "ऐसी बदनामी तो मैं आपकी करता नहीं कि आप माफ कर सकते हैं। इस सत्यको मैं स्वीकार करता हूँ कि स्वेच्छासे मुझसे नौकरी छुड़ानेके लिए आप लोगोंने स्वेच्छासे काफी परिश्रम किया था।"

अक्षयने कहा, "तो आशा है कि और भी एक सत्य आप इसी तरह स्वीकार कर लेंगे। आपको शायद मालूम नहीं कि हम लोग आपकी बहुत सी बातें जानते हैं।"

शिवनाथने गरदन हिलाकर कहा, "नहीं, मुझे नहीं मालूम। फिर भी इतना अवश्य जानता हूँ कि औरोंके विषयमें आपका कुतूहल जैसा अपरिसीम है, दूसरोंकी बातें जाननेका अध्यवसाय भी वैसा ही विपुल है। क्या स्वीकार करना होगा, फरमाइए?"

अक्षयने कहा, "आपकी स्त्री मौजूद है। उसे छोड़कर आपने फिर व्याह किया है। सच है या नहीं?"

आशु बाबू सहसा गुस्सा हो पड़े, "आप यह सब क्या कह रहे हैं अक्षय बाबू? ऐसा भी कहीं हुआ है, या हो सकता है?"

शिवनाथ खुद ही बीचमें टोककर बोले, "पर ऐसा ही हुआ है आशु-बाबू। उन्हें छोड़कर, मैंने फिरसे व्याह किया है।"

"कहते क्या हैं? क्या हुआ था?"

शिवनाथने कहा, " विशेष बात नहीं। वे हमेशा बीमार रहती हैं, उमर भी तीस हो चली। औरतोंके लिए इतना ही काफी है। उसपर लगातार बीमारी भुगतनेके कारण दाँत गिर गये, बाल पक गये, बिलकुल बूढ़ी हो गई हैं। इसी लिए उन्हें छोड़कर दूसरा ब्याह करना पड़ा। "

आशु बाबू विह्वल दृष्टिसे उसके चेहरेकी तरफ देखते रह गये, " ऐं! सिर्फ इसीलिए? उनका और कोई अपराध नहीं? "

शिवनाथने कहा, " नहीं। कोई झूठा दोष लगानेसे लाभ ही क्या है आशु बाबू? " उसकी इस निर्मल सत्यवादितासे अविनाश मानो पागल हो उठा, " लाभ ही क्या है आशु बाबू! पाखण्डी कहींके! तुम्हारा लाभ-नुकसान चूल्हेमें जाय, एक बार झूठ ही बोल जाते कि उसने गम्भीर अपराध किया था, इसीसे उसे छोड़ दिया है। एक झूठसे तुम्हारा पाप नहीं बढ़ जाता। "

शिवनाथ गुस्सा नहीं हुआ, सिर्फ इतना ही बोला, " मगर ऐसी बेजा बात मैं नहीं कह सकता। " हरेन्द्र सहसा जल-भुन गया, बोला, " विवेक जैसी चीज क्या आपके अन्दर है ही नहीं शिवनाथ बाबू? "

शिवनाथको इतनेपर भी गुस्सा नहीं आया, उसने शान्त भावसे ही कहा, " ऐसा विवेक कोई मानी नही रखता। झूठे विवेककी जंजीर पैरोंमें डाल कर अपनेको पंगु बना डालनेका हिमायती मैं नही हूँ। हमेशा दुःख भोगते चलना ही तो जीवन-धारणका उद्देश्य नहीं है? "

आशु बाबू इस गम्भीर व्यथासे आहत होकर बोले, " मगर आप अपनी स्त्रीका दुःख तो जरा सोच देखिए। उनका रोगी रहना परितापका विषय हो सकता है, लेकिन सिर्फ इसी वजहसे,—बीमार रहना तो कोई कसूर नहीं शिवनाथ बाबू? बिना किसी अपराध—"

" बिना किसी अपराधके मैं ही भला दुःख क्यों सहता रहूँ? ऐसा विश्वास मेरा नहीं है कि एकका दुःख और किसीके सरपर लाद देनेसे न्याय होता है। "

आशु बाबूने आगे बहस नहीं की। वे सिर्फ एक गहरी साँस लेकर चुप हो रहे।

हरेन्द्रने पूछा, " यह ब्याह हुआ कहाँ? "

" गाँवहीमें। "

" सौतके होते हुए लड़की दे दी! शायद इसके मा-बाप नहीं हैं? "

शिवनाथने कहा, " नहीं। हमारे यहाँकी महरीकी विधवा लड़की है। "

" घरकी नौकरानीकी लड़की है ? खूब खूब ! जात क्या है ? "

" ठीक नहीं मालूम । शायद जुलाहिन उलाहिन होगी । "

अक्षय बहुत देरसे बोला नहीं था, अब पूछ उठा, " उसको अक्षर-बोध भी नहीं होगा शायद ? "

शिवनाथने कहा, " अक्षर-बोधके लोभसे तो ब्याह किया नहीं, किया है रूपके लिए । और इस चीजका शायद उसमें अभाव नहीं है । "

इस उक्तिके बाद मनोरमाने फिर एक बार उठनेकी कोशिश की, परन्तु इस बार भी उसके पाँव पत्थरकी तरह भारी हो रहे । कुतूहल और उत्तेजना-वश किसीने उसकी तरफ देखा नहीं । देखते तो शायद डर जाते ।

हरेन्द्रने कहा, " तो, यह शायद सिविल ब्याह ही हुआ ? "

शिवनाथने गरदन हिलाकर जवाब दिया, " नहीं, ब्याह हुआ शैवमतसे । "

अविनाशने कहा, " यानी धोखा देनेका रास्ता दसों दिशाओंसे खुला रक्खा, क्यों न शिवनाथ ? "

शिवनाथने हँसकर कहा, " यह तो क्रोधकी बात है अविनाश बाबू ! नहीं तो, पिताजी खुद अपनी मौजूदगीमें मेरा जो ब्याह कर गये हैं, उसमें तो कोई धोखेबाजीकी गुंजाइश नहीं थी, मगर फिर भी धोखा तो रह ही गया था । उसे ढूँढ निकालनेकी आँखें होनी चाहिए । "

अविनाशसे कोई उत्तर देते न बन पड़ा, सिर्फ उसका चेहरा मारे क्रोधसे सुर्ख हो गया ।

आशु बाबू चुपचाप सिर झुकाये बैठे हुए सोचने लगे—यह क्या हुआ ! यह क्या हुआ !

दो-तीन मिनट किसीके भी मुँहसे कोई बात नहीं निकली, निरानन्द और कलहकी घुटती हुई हवासे घर भर गया । बाहरसे एक जोरका हवाका झोंका आये बिना बेचैनी दूर नहीं हो सकती, ऐसा ही कुछ मनोभाव लिये हुए अविनाश बाबू अकस्मात् बोल उठे, " जाने दो, जाने दो, जाने दो ये सब बातें । हाँ, तो शिवनाथ, अब वही पत्थरका काम कर रहे हो क्या ? "

शिवनाथने कहा, " हाँ । "

तुम्हारे मित्रके नाबालिग लड़के-बालोंका इन्तजाम तो तुम्हींको करना पड़ता होगा ? उनकी मा है न ? हालत कैसी है ? उतनी अच्छी तो नहीं है शायद ? "

" नहीं, बहुत ही खराब है । "

अविनाशने कहा, " उफ्, अचानक मर गये,—हम लोगोंने सोचा था कि रुपया पैसा कुछ छोड़ गये होंगे। लेकिन हाँ, तुम्हारे मित्र जरूर थे। अकृत्रिम सुहृद्, ज़िगरी दोस्त ! "

शिवनाथने गरदन हिलाकर कहा, " हाँ, हम दोनों पाठशालामें एक साथ ही पढ़े थे। "

अविनाशने कहा, " इसीसे उस समय वे तुम्हारे लिए इतना कर सके थे। " जरा ठहरकर कहा, " लेकिन खैर, जो भी कुछ हो शिवनाथ, अब अकेले तुम्हींको जब सारा कारोबार देखना पड़ेगा तो इसमें अपना कुछ हिस्सा रखनेका क्यों नहीं दावा करते ? बतौर मालिकके—"

शिवनाथने बात खतम नहीं होने दी, बोला, " हिस्सा काहेका ? कारोबार तो मेरा अकेलेका है। "

प्रोफेसरोंका दल मानो आसमानसे नीचे आ पड़ा। अक्षयने कहा, " पत्थरका कारोबार अचानक आपका हो गया कैसे शिवनाथ बाबू ? "

शिवनाथसे गम्भीर होकर जवाब दिया, " मेरा तो है ही। "

अक्षयने कहा, " किसी तरह नहीं। हम सभी जानते हैं, योगीन्द्र बाबूका है। "

शिवनाथने जवाब दिया, " जानते हैं तो अदालतमें जाकर गवाही क्यों नहीं दे आये ? कोई डॉकुमेण्ट था ? सुना था ? "

अविनाशने चौंककर प्रश्न किया, " नहीं, सुना तो कुछ भी नहीं। लेकिन मामला क्या अदालत तक पहुँच गया था ? "

शिवनाथने कहा, " हाँ। योगीन्द्रके सालेने नालिश की थी। डिक्री मुझको ही मिली है। "

अविनाश साँस छोड़कर बोला, " अच्छा हुआ। आखिरकर विधवाको कुछ देना नहीं पड़ा। "

शिवनाथने कहा, " नहीं। खालिमने ' चॉप ' तो खूब बनाये हैं भई। और भी दो एक ले आओ। "

आशु बाबू भावाविष्टकी भाँति बैठे थे, चौंककर मुँह उठाके बोले, " यह क्या, आप लोग तो कुछ भी नहीं खा रहे हैं ? "

भोजनकी रुचि और भूख सभीकी गायब हो चुकी थी। मनोरमा चुपकेसे उठी जा रही थी, शिवनाथने बुलाकर कहा, " वाह, हम लोगोंका खाना खतम नहीं हुआ और आप चली जा रही हैं ? "

मनोरमाने इस बातका उत्तर नहीं दिया, मुड़कर देखा तक नहीं, मारे घृणाके उसके सारे शरीरमें काँटे उठ आये।

३

उस घटनाको बीते एक सप्ताह हो चुका। दो दिनसे असमयमें बादल घिर घिर आते हैं और वर्षा शुरू हो गई है, आज भी सवेरेसे बीच-बीचमें पानी पड़ रहा है। दोपहरको कुछ देर बन्द रहा, मगर बादल हटे नहीं। आकाशकी हालत ऐसी है कि किसी भी समय वर्षा शुरू हो सकती है, इतनेमें मनोरमा घूमनेके लिए तैयार होकर अपने पिताके कमरेमें जा पहुँची। आशु बाबू मोटी-सी एक फर्द ओढ़े आरामकुरसीपर बैठे थे, उनके हाथमें एक किताब थी। लड़कीने आश्चर्यके साथ पूछा, "वाह बाबूजी, तुम अभी तक तैयार ही नहीं हुए! आज तो हम लोगोंकी इतवारी खाँकी कब्र देखने जानेकी बात थी!"

"बात तो थी, बिटिया, लेकिन आज मेरी कमरमें बातका दर्द—"

"तो मोटर वापस ले जानेके लिए कह दूँ? फिर कल ही चले चलेंगे, क्यों ठीक है न बापूजी?"

पिताने टोकते हुए कहा, "नहीं, नहीं, नहीं घूमनेसे तेरा सिर दुखने लगेगा। तू, न हो तो तो, थोड़ा घूम-फिर आ, मैं तब तक यह मासिक-पत्रिका देख लूँ। कहानी लिखी अच्छी है।"

"अच्छा, मैं जाती हूँ। पर लौटनेमें मुझे देर नहीं होगी। आकर तुमसे कहानी सुनूँगी, सो अभी कहे जाती हूँ।" यह कहकर वह अकेली ही घूमने निकल गई।

घंटे-भरके अन्दर ही मनोरमा घर लौट आई और पिताके कमरेमें घुसते घुसते बोली, "कैसी कहानी है बापूजी? खतम हो गई? किसने लिखी है?"

मगर बात मुँहसे निकलनेके बाद ही वह चौंक पड़ी, देखा कि कमरेमें पिता अकेले नहीं हैं, सामने शिवनाथ बैठा है।

शिवनाथने उठकर नमस्कार किया, और कहा, "कहाँतक घूम आईं?"

मनोरमाने जवाब नहीं दिया; सिर्फ नमस्कारके बदलेमें जरा-सा सिर हिलाकर उसकी तरफ पूरी तरहसे पीठ करके पितासे कहा, " पूरी पढ चुके बापूजी ? कैसी लगी ? "

आशु बाबूने इतना ही कहा, " नहीं । "

कन्याने कहा, " तो मैं ले जाऊँ, पढके अभी तुम्हें वापस दे जाऊँगी । " इतना कहकर वह पत्रिका हाथमे लेकर चल दी । परन्तु अपने सोनेके कमरेमें आकर वह चुपचाप बैठी रही । कपड़े बदलना, हाथ-मुँह धोना वगैरह सब काम पड़ा रहा, पत्रिका एक बार खोलकर देखी तक नहीं कि कौन-सी कहानी है, किसने लिखी है अथवा कैसी लिखी है ।

इस तरह बैठी बैठी वह क्या क्या सोचने लगी, कोई ठिकाना नहीं । कुछ देर बाद, नौकरको सामनेसे जाते देख उससे पूछा, " अरे, बापूजीके कमरेसे वह आदमी चला गया ? "

बेहराने कहा, " जी हाँ । "

" कब गया ? "

" पानी पड़नेसे पहले ही । "

मनोरमाने खिड़कीका परदा हटाकर देखा, बात ठीक है । फिर वर्षा शुरू हो गई है, पर ज्यादा नहीं । ऊपरकी ओर देखा, पश्चिमके आकाशमें बादल घनघोर होते आ रहे हैं और इस बातकी सूचना दे रहे हैं कि रातको मूसलधार पानी पडेगा । पत्रिका हाथमें लिये पिताकी बैठकमें जाकर देखा कि वे चुपचाप बैठे हैं । पत्रिका उनकी आरामकुरसीके हथेलेपर धीरेसे रखकर बोली, " बापूजी, तुम तो जानते हो, यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता । "

इतना कहकर वह पासकी चौकीपर बैठ गई ।

आशु बाबूने मुँह उठाकर कहा, " क्या सब बेटी ? "

मनोरमाने कहा, " तुम ठीक समझते हो कि मैं क्या कह रही हूँ । गुणीका आदर करना मैं भी कम नहीं जानती बापूजी, लेकिन शिवनाथ बाबू जैसे एक दुष्ट दुश्चरित्र शराबीको क्या समझकर प्रश्रय दे रहे हो ? "

आशु बाबू मारे शरम और संकोचके एकबारगी फक पड़ गये । कमरेके एक कोनेमें टेबिलपर बहुत-सी पुस्तकोंका ढेर पड़ा था, मनोरमा समयके अभावसे उन्हें यथास्थान सजाकर अब तक रख नहीं सकी थी । उस तरफ आँखका इशारा करके वे सिर्फ इतना कह सके, " वे हैं न अभी—"

मनोरमाने भयके साथ उधर मुँह फेरकर देखा, शिवनाथ टेबिलके पास खड़ा हुआ कोई किताब ढूँढ रहा है। नौकरने उसे गलत खबर दी थी। मनोरमा मारे शरमके मानो ज़मीनमें धँसने लगी। शिवनाथके पास आकर खड़े होनेपर वह ऊपर मुँह उठाकर देख न सकी। शिवनाथने कहा, "किताब मुझे मिली नहीं आशु बाबू। तो अब चला।"

आशु बाबूसे और कुछ कहा नहीं गया, सिर्फ कहा, "बाहर मेह जो बरस रहा है।"

शिवनाथने कहा, "बरसने दीजिए। ज्यादा नहीं है।"

इतना कहकर वह जा ही रहा था कि अकस्मात् ठिठक कर खड़ा हो गया। मनोरमाको लक्ष्य करके बोला, "मैंने दैवात् जो सुन लिया है वह मेरा दुर्भाग्य भी है और सौभाग्य भी। इसके लिए आप लज्जित न हों। ऐसी बातें अकसर सुननी पड़ती हैं। फिर भी, यह मैं निश्चित जानता हूँ कि बातें मेरे सम्बन्धमें कही जानेपर भी मुझे सुनाकर नहीं कही गई। इतनी निर्दय आप हरगिज नहीं हैं।"

फिर जरा ठहरकर कहा, "मगर मेरी और एक शिकायत है। उस दिन अक्षय बाबू वगैरह प्रोफेसरोंके गुटने मेरे विरुद्ध इशारा किया था कि मानो मैं किसी खास मतलबको लेकर इस घरसे घनिष्ठता बढानेकी कोशिश कर रहा हूँ। पर एक तो सब लोगोंकी औचित्यकी धारणा एक-सी नहीं होती,—दूसरे बाहरसे कोई एक घटना जैसी दिखाई देती है वह उसका पूर्ण रूप नहीं होता। पर बात जो भी हो, आप लोगोंमें प्रवेश करनेकी कोई गूढ दुरभिसन्धि उस दिन भी मेरे अन्दर नहीं थी और आज भी नहीं है।" फिर सहसा आशु बाबूको लक्ष्य करके कहा, "मेरा गाना सुनना आपको अच्छा लगता है,—घर मेरा ज्यादा दूर नहीं है, अगर किसी दिन सुननेकी तबीयत हो जाय, तो वहाँ चरण-रज दीजिएगा, मुझे खुशी ही होगी।" इतना कहकर फिरसे नमस्कार करके शिवनाथ बाहर चला गया। पिता या कन्या दोनोंमेंसे कोई एक भी बातका जवाब न दे सका। आशु बाबूके हृदयमेंसे बहुत-सी बातें एक साथ निकलनेको धक्कमधक्का करने लगीं, किन्तु निकल न सकीं। बाहर तब वर्षा ज़ोरकी हो रही थी; यह बात भी उनके मुँहसे न निकली कि शिवनाथ बाबू, जरा ठहरकर जाइएगा।

नौकर चायका सामान लेकर हाजिर हुआ। मनोरमाने पूछा, "तुम्हारी चाय क्या यहीं बना दूँ बापूजी?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं, मेरे लिए नहीं, शिवनाथ बाबूने जरा चाय पीनेको कहा था।"

मनोरमाने नौकरको चाय वापस ले जानेके लिए इशारा किया। मनकी चंचलताके कारण आशु बाबू कमरमे दर्द होते हुए भी चौकीसे उठकर कमरेमें चहलकदमी कर रहे थे, इतनेमें सहसा खिड़कीके पास ठिठककर खडे हो गये और क्षण-भर गौरसे देखकर बोले, "उस पेड़के नीचे जो खड़ा है सो शिवनाथ ही है न? जा नहीं सका है, भीग रहा है।" फिर दूसरे ही क्षण बोल उठे, "साथमे कोई स्त्री भी खड़ी है। बंगालियोंके जैसे कपडे पहने,—वह बेचारी और भी भीगी जा रही है।"

इसके बाद तुरत उन्होंने नोकरको बुलाया और कहा, "जदू, देख तो, आ, गेटके पास पेड़के नीचे खड़े भीग कौन रहे हैं? जो बाबू अभी अभी यहाँसे गये हैं, वही हैं क्या?—लेकिन, ठहर ठहर—"

बात उनकी बीचमे ही रुक गई, अकस्मात् मनमे भयानक सन्देह जाग उठा,—यह औरत शिवनाथकी वही स्त्री तो नहीं है?

मनोरमाने कहा, "ठहरे क्यों बापूजी, जाकर शिवनाथ बाबूको बुला ही लावे न।" और वह उठके खुली खिड़कीके किनारे पिताके पास जा खड़ी हुई। बोली, "वह चाय पीना चाहता था, ऐसा जानती तो मै हरगिज उसे जाने नहीं देती।"

लड़कीकी बातके जवाबमे आशु बाबू धीरेसे बोले, "सो तो ठीक है मणि, मगर, मुझे डर है कि वह स्त्री जो साथ खड़ी है, शायद उसकी वही स्त्री हो। बाहर खडी खड़ी बाट देख रही थी।"

बात सुनकर मनोरमाको निश्चित मालूम हुआ कि यह वही स्त्री है। एक बार उसके मनमें दुविधा आई कि इस घरमें उसे किसी बहानेसे बुलाया जा सकता है या नहीं, पर पिताके मुँहकी तरफ देखकर उसने वह सकोच दूर कर दिया। नौकरसे कहा, "जदू, जाकर उन दोनोंको ही बुला लाओ। शिवनाथ बाबू अगर पूछें कि किसने बुलाया है, तो मेरा नाम बता देना।"

नौकर चला गया। आशु बाबूका जी उत्कण्ठासे भर उठा, बोले, "मणि यह काम शायद ठीक नहीं हुआ।"

"क्यो बापूजी?"

आशु बाबूने कहा, "शिवनाथ यों चाहे जैसा हो, पर आखिर एक उच्च शिक्षित और शरीफ़ आदमी है,—उसकी बात और है। पर उसके सिलसिलेमे इस औरतसे भी परिचय करना क्या ठीक हो सकता है? जातिकी ऊँचता-नीचता हम लोग भले ही उतनी न मानते हों, पर भेद तो है ही। नौकर-नौकरानियोंके साथ तो बन्धुत्व नहीं किया जा सकता, बेटी!"

मनोरमाने कहा, "बन्धुत्व करनेकी जरूरत नहीं बापूजी। विपत्तिके समय रास्तेके राहगीरको भी कुछ घण्टोंके लिए आश्रय दिया जाता है। हम लोग सिर्फ उतना ही करेंगे।"

आशु बाबूके मनकी दुविधा नहीं मिटी। कई बार सिर हिलाकर बोले, 'बात ठीक इतनी ही नहीं है। मेरी समझमें यह भी तो नहीं आ रहा है कि उस स्त्रीके आ जानेपर तुम उसके साथ कैसा व्यवहार करोगी।"

मनोरमाने कहा, "मेरे ऊपर क्या तुम्हारा विश्वास नहीं है बापूजी?"

आशु बाबू जरा सूखी हँसी हँसकर बोले, "सो तो है। फिर भी बात जरा ठीकसे समझमें नहीं आ रही है। तुम जानती हो जो तुम्हारी बराबरकी श्रेणीके हैं उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है, और इतना बहुत कम लड़कियाँ ही जानती होंगी। नौकर-नौकरानियोंके प्रति व्यवहार भी तुम्हारा निर्दोष है, मगर यह जरा और बात है।—समझीं बेटी, शिवनाथपर मैं स्नेह करता हूँ, मैं उसके गुणोंका अनुरागी हूँ,—दैवकी विडम्बनासे आज बिना कारण वह बहुत कुछ लाञ्छन सह गया है, अब फिर घरमें बुलाकर मैं उसे और सताना नहीं चाहता।"

मनोरमाने समझा कि यह उसीके प्रति शिकायत है, उसने कहा, "अच्छा बापूजी, वैसा ही होगा।"

आशु बाबूने हँसकर कहा, "होना क्या आसान है, बेटी! कारण, मेरे मनपर भी इसकी खूब स्पष्ट धारणा नहीं रही है, कि उसके साथ क्या व्यवहार होना उचित है। सिर्फ यही खयाल आ रहा है कि शिवनाथको अब हमारे घर और कष्ट न मिले।"

मनोरमा कुछ कहना ही चाहती थी कि अचानक चौंककर बोली, "हाँ, लो, ये आ ही तो गये।"

आशु बाबू व्यस्त-से होकर बाहर आ गये, बोले, "खूब शिवनाथ बाबू,—भीगकर तो बिलकुल—"

शिवनाथने कहा, "हाँ, अचानक पानी जोरका पड़ने लगा,—सो मुझसे भी बहुत ज्यादा ये भीगी हैं।" कहते हुए साथकी स्त्रीको दिखा दिया। मगर वह कौन है, यह परिचय न तो उन्हींने ही साफ दिया और न इन्हीं लोगोंने साफ पूछा।

वस्तुतः, उस स्त्रीकी देहपर सूखा कहनेलायक कहीं भी कुछ नहीं बचा था। सबके सब कपड़े भीगकर भारी हो गये हैं, माथेके घने काले बालोंसे पानीकी धारा गालोंपरसे बह रही है,—पिता और पुत्री इस नवागता रमणीके चेहरेकी तरफ देखकर असीम विस्मयसे निर्वाक् हो रहे। आशु बाबू खुद कवि नहीं हैं; किन्तु उन्हें देखते ही लगा कि ऐसे ही नारी-रूपकी शायद प्राचीन कालके कवि 'शिशिर-धौत पद्म' के साथ तुलना कर गये हैं, और जगतमें इतनी अधिक सच्ची तुलना भी शायद और नहीं है। उस दिन जब अक्षयके नाना तरहके प्रश्नोंके उत्तरमें शिवनाथने अस्थिर होकर यह जवाब दिया था कि उन्होंने शिक्षिता होनेकी वजहसे नहीं, रूपके लिए ब्याह किया है, तब किसीने नहीं सोचा था, कि यह बात कितनी ज्यादा सच है। पर अब स्तब्ध होकर आशु बाबू शिवनाथकी उस बातको बार बार याद करने लगे। उन्हें सचमुच ही ऐसा जान पड़ा कि इनकी जीवन-यात्राकी प्रणाली शिष्ट और नीति-सम्मत भले ही न हो, पति-पत्नी सम्बन्धकी पवित्रता भी इनके बीच भले ही न हो, मगर इस नश्वर जगतमें नर-नारीके नश्वर शरीरोंका ही आश्रय लेकर सृष्टिका यह कैसा अविनश्वर सत्य प्रस्फुटित हुआ है! और परम आश्चर्यकी बात यह है कि जिस देशमें रूप चुन लेनेका कोई विशिष्ट मार्ग नहीं, जिस देशमें अपनी आँखोंको बन्द करके औरोंकी आँखोंपर ही निर्भर रहना पड़ता है, ऐसे अन्धकारमें इन दोनोंको परस्पर एक दूसरेकी खबर लग कैसे गई? परन्तु इस मोहाच्छन्न भावको काट फेंकनेमें उन्हें एक क्षणसे ज्यादा समय नहीं लगा। व्यस्त होकर बोले, "शिवनाथ बाबू, भीगे कपड़े तो बदल लीजिए। जदू, बाबूको हमारे बाथ-रूममे ले जा।"

बेहराके साथ शिवनाथ चला गया। मुश्किल आई अब मनोरमाकी। युवतीकी उमर लगभग मनोरमाके बराबर ही होगी, और भीगे कपड़े बदल डालनेकी उसे भी सख्त जरूरत थी। परन्तु उसके वंश और जन्मका जो परिचय उस दिन शिवनाथके मुँहसे सुना है, उससे मनोरमाकी कुछ समझमे न आया कि वह क्या कहकर इसको सम्बोधन करे। रूप इसमें चाहे कितना

ही क्यों न हो, शिक्षा-संस्कारहीन नीच-जातीय इस दासी कन्याको 'आओ' कहकर बुलानेमें भी पिताके सामने उसे सकोच मालूम हुआ, और 'आइए' कहकर सम्मानके साथ अपने कमरेमें ले जानेमें तो उसे और भी घृणा मालूम होने लगी। किन्तु सहसा इस समस्याकी मीमांसा कर दी स्वयं उस युवतीने। मनोरमाकी तरफ देखकर उसने कहा "मेरा भी सब कुछ भीग गया है, मेरे लिए भी एक धोती मँगा देनी पड़ेगी।"

"देती हूँ।" कहकर मनोरमा उसे भीतर ले गई, और महरीको बुलाकर बोली कि इन्हें नहान-घरमें ले जाकर जो कुछ चाहिए सो सब दे दे।

उस स्त्रीने मनोरमाको ऊपरसे नीचे तक बार बार देखकर कहा, "मुझे एक साफ धोबीकी धुली धोती देनेके लिए कह दीजिए।"

मनोरमाने कहा, "सो ही देगी।"

स्त्रीने महरीसे पूछा, "उस घरमें साबुन है न?"

महरीने कहा, "है।"

"लेकिन मैं किसीका लगाया हुआ साबुन नहीं लगाती।"

इस अपरिचित स्त्रीका मन्तव्य सुनकर पहले तो महरीको आश्चर्य हुआ, फिर वह बोली, "वहाँ नये साबुनोंका बाक्स पड़ा हुआ है। लेकिन, वह जीजीबाईका अपना नहान-घर है। उनका साबुन लगानेमें क्या बुराई है?"

स्त्रीने ओठ सिकोड़कर कहा, "नहीं, यह मुझसे नहीं होता, मुझे बड़ी नफ़रत मालूम होती है। इसके सिवा हर एकका साबुन लगानेसे बीमारी हो जाती है।"

मनोरमाका चेहरा क्रोधसे सुर्ख हो उठा, पर एक क्षणके लिए ही। दूसरे ही क्षण निर्मल हँसीकी छटासे उसकी दोनों आँखें चमकने लगीं। उसके मनपरसे मानों एक मेघ दूर हो गया। हँसकर पूछा, "यह बात तुमने सीखी किससे?"

"स्त्रीने कहा, "सीखूँगी किससे? मैं खुद ही सब जानती हूँ।"

मनोरमाने कहा, "सच? तो जरा हमारी इस महरीको भी कुछ अच्छी बातें सिखा देना। यह बिलकुल ही मूरख है।" कहते कहते उसे फिर हँसी आ गई।

महरी भी हँस दी, बोली, "चलो पण्डितानीजी, साबुन-आबुन लगाकर पहले तैयार हो लो, फिर तुम्हारे पास बैठकर बहुत-सी अच्छी अच्छी बातें सीख लूँगी।—जीजीबाई, कौन हैं ये?"

मनोरमा हँसी दबानेके लिए अगर दूसरी तरफ मुँह न फेर लेती तो सम्भव

है कि वह इस अपरिचिता अशिक्षिता स्त्रीके मुँहपर कौतुक और प्रच्छन्न उपहासका भाव ताड़ जाती।

४

मनोरमा आशु बाबूकी सिर्फ लड़की ही हो, सो बात नहीं; वह उनकी साथी, सगी, मंत्री, मित्र, एक साथ सब कुछ थी। इसीसे, पिताके सम्मान-रक्षार्थ, भारतीय समाजमें जो सकोचसहित दूरत्व सन्तानके लिए अवश्य पालनीय माना जाता है, अधिकाश मौकोंपर उसकी रक्षा न हो पाती थी। बीच-बीचमें ऐसी आलोचनाएँ दोनोंमें होने लगती थीं जो बहुत-से पिताओंको खटकेंगीं; पर इनके कानोंमें नहीं खटकती थीं। लड़कीको आशु बाबू इतना प्यार करते हैं कि उसकी सीमा नहीं। वे स्त्री-वियोगके बाद फिरसे ब्याह करनेकी मनमें कल्पना भी नहीं कर सके,- इसका भी एकमात्र कारण यह लड़की ही है। मगर मित्र-मण्डलीमें बात छिड़नेपर खेदके साथ वे कहते हैं कि "एक तो साढ़े तीन मनका यह भारी शरीर और सो भी वात-रोगके कारण पंगु। अब और क्यों इसके लिए एक लड़कीका सर्वनाश किया जाय भाई! जो दुःख सरपर लेकर मणिकी मा स्वर्ग सिधार गई है, सो मुझे मालूम है। इस आशुके लिए वही काफी है।"

मनोरमा यह बात सुनती तो घोर आपत्ति करती, कहती, "बापूजी, तुम्हारी यह बात मुझे नहीं सुहाती। यहाँ ताजमहल देखकर कितने आदमियोंको न जाने क्या क्या याद आता है, पर मुझे याद आती है तुम्हारी और माकी। मेरी मा स्वर्गमें क्या दुःख सहकर गई हैं?"

आशु बाबू कहते, "तू तो तब कुल दस-बारह सालकी बच्ची थी, तू तो सब जानती है। एकके गलेमे दूसरेकी माला गिरनेका जो किस्सा है सो सिर्फ मैं ही जानता हूँ बिटिया।" कहते कहते उनकी आँखे डबडबा आतीं।

आगरेमें आकर वे बिना किसी संकोचके सबके साथ हिल-मिल गये हैं, पर सबसे बढकर उनकी हार्दिक मत्री हुई है अविनाश बाबूके साथ। अविनाश सहिष्णु और संयत प्रकृतिका आदमी है। उसके चित्तमे ऐसी एक स्वाभाविक शान्ति और प्रसन्नता थी कि वह सहज ही सबकी श्रद्धा आकर्षित कर लेता। मगर आशु बाबू मुग्ध हुए थे एक और ही कारणसे। उनकी तरह उसने भी दूसरी बार ब्याह नहीं किया था और पत्नी-प्रेमके निदर्शनके लिए घरमें

सर्वत्र अपनी स्त्रीके चित्र लगा रखे थे। आशु बाबू उससे कहते, "अविनाश बाबू, लोग हमारी प्रशंसा करते हैं। सोचते हैं हम लोगोंका, कैसा आत्म-संयम है, मानो हम लोगोंने कोई बहुत बड़ा कठिन काम कर डाला हो! पर, मैं सोचता हूँ कि यह प्रश्न उठता ही कैसे है? जो लोग दूसरी बार व्याह करते हैं, वे कर सकते हैं इसीलिए करते हैं। उन्हें मैं दोष भी नहीं देता और न छोटा ही समझता हूँ। मैं सोचता हूँ कि मैं कर नहीं सकता। सिर्फ इतना ही जानता हूँ कि मणिकी माकी जगह और किसीको स्त्रीके रूपमें ग्रहण करना मेरे लिए सिर्फ कठिन ही नहीं, असम्भव भी है। पर इसकी उन्हें क्या खबर? बात ऐसी ही है न अविनाश बाबू? अपने मनसे पूछ देखिए जरा, ठीक बात कहता हूँ या नहीं।"

अविनाश हँस देता, कहता "लेकिन मैं तो जुटा नहीं सका हूँ आशु बाबू। मास्टरी करके गुजर करता हूँ, वक्त भी नहीं मिलता और उमर भी हो चुकी है,—लड़की देगा कौन?"

आशु बाबू खुश होकर कहते, "ठीक यही बात है अविनाश बाबू, यही बात है। मैं भी सबको कहता फिरा हूँ कि देहका वजन साढ़े तीन मन है, वातसे पंगु हूँ, कब कहाँ चलते-फिरते हार्ट फेल हो जाय कोई ठिकाना नहीं, लड़की देगा कौन? लेकिन जानता हूँ कि लड़की देनेवालोंकी कमी नहीं है, सिर्फ लेनेवाला मनुष्य ही मर गया है! हः हः हः हः,—अविनाश भी मर चुका और आशु भी,—हः हः हः हः!—कहकर ठहाका मारकर ऐसे जोरसे हँसते कि घरकी खिड़कियाँ और उनके शीशे तक काँप उठते।

रोज शामको आशु बाबू अपनी कन्याके साथ घूमने निकलते, पर अविनाशके मकानके सामने आकर उतर पड़ते, कहते, "अब शामके वक्त ठंडी हवा लगना मेरे लिए ठीक नहीं बेटी, बल्कि तुम लौटते वक्त मुझे अपने साथ ले जाना।"

मनोरमा हँसकर कहती, "ठंड कहाँ है बापूजी, आज तो काफी गरमी है।"

बापूजी कहते, "सो भी तो अच्छा नहीं बेटी, बूढ़ोंके स्वास्थ्यके लिए गरम हवा भी तो हानिकारक है। तुम जरा घूम फिर आओ, हम दोनों बूढ़े मिलकर तब तक दो-चार बातें ही करें।"

मनोरमा हँसकर कहती, "बातें तुम लोग दो-चार छोड़ दो-चार सौ करते रहो, मुझे उसमें कोई ऐतराज नहीं, लेकिन तुम दोनोंमेंसे कोई अभी बूढ़ा नहीं हुआ, सो मैं याद दिलाये जाती हूँ।" इतना कहकर वह चली जाती।

बातकी वजहसे जिस दिन आशु बाबूसे किसी भी तरह आया नहीं जाता, उस दिन अविनाशको जाना पड़ता। गाड़ी भेजकर, आदमी भेजकर, चायका निमंत्रण देकर,—जैसे भी बनता आशु बाबूका अनिवार्य अनुरोध उनके पास पहुँचता और उसे वे किसी भी तरह टाल नहीं सकते। दोनोंके इकट्ठे होनेपर और और बातोंके साथ शिवनाथका भी अकसर जिक्र छिड़ जाता। इसकी वेदना आशु बाबूके मनसे दूर नहीं होती थी कि उस दिन उसे निमंत्रण देकर घर बुलाया और सबने मिलकर अपमानित करके उसे विदा कर दिया। शिवनाथ विद्वान् आदमी है, गुणी है, उसका सारा शरीर यौवन, स्वास्थ्य और सौन्दर्यसे भरा हुआ है,—यह सब क्या कुछ भी नहीं? तो फिर किस वास्ते इतनी सम्पदा भगवानने उसे दोनों हाथोंसे उठाकर दे दी है? क्या इसीलिए कि मनुष्य समाजसे उसे उठाकर दूर फेंक दिया जाय? शराबी हो गया है, तो इससे क्या? शराब पीकर मतवाले तो बहुतेरे हो जाया करते हैं। यौवनमें यह कसूर तो उनसे भी बन पड़ा है, इसके लिए किसने उन्हें त्याग दिया है?

आदमीकी त्रुटियों, आदमीके अपराधोंपर गौर करनेकी अपेक्षा उसे क्षमा करनेकी तरफ उनके हृदयका झुकाव बहुत ज्यादा होता जाता था; और इसी लिए वे अविनाशके साथ अकसर इस विषयकी बहस किया करते। प्रकट रूपसे शिवनाथको निमंत्रण देनेका अब उन्हें साहस नहीं होता, किन्तु मन उनका हमेशा उसकी संगतके लिए तड़पा करता। अविनाशकी सिर्फ एक बातका उनसे कोई जवाब देते नहीं बनता; कि 'वह जो एक बीमार स्त्रीको छोड़कर दूसरी स्त्री घरमें ले आया है, सो यह क्या है?'

आशु बाबू लज्जित होकर कहते, "यही तो सोचता हूँ, शिवनाथ जैसा आदमी यह काम कर कैसे सका? लेकिन क्या जाने अविनाश बाबू, शायद, भीतर कोई रहस्य हो,—हो सकता है,—और—सभी बातें क्या सबके आगे कही जा सकती हैं, या कहना उचित है?"

अविनाश कहता, "मगर उसकी स्त्री निर्दोष है, यह तो उसने अपनी ही ज़बानसे कबूल किया है?"

आशु बाबू परास्त होकर गरदन हिलाके कहते, "सो तो किया ही है।"

अविनाशने कहा, "और यह जो मरे हुए मित्रकी विधवाको धोखा देना, सारे रोजगारको अपना बताकर उसपर दखल कर लेना,—यह क्या है?"

आशु बाबू मारे-शरमके जमीनमें गड़ जाते, जैसे खुद उन्हींने यह दुष्कार्य कर डाला हो। फिर अपराधीकी तरह धीरेसे कहते, “ लेकिन बात यह है न, अविनाश बाबू, शायद भीतर कोई रहस्य हो,—अच्छा, फिर अदालतने क्या समझ कर उन्हें डिक्री दे दी? उसने क्या कुछ भी विचार नहीं किया होगा?”

अविनाश कहता, “ अंग्रेजी अदालतकी बात छोड़ दीजिए आशु बाबू। आप खुद भी जमींदार हैं,—वहाँ सबलके आगे दुर्बल कब विजयी हो सका है, बता सकते हैं मुझे?”

आशु बाबू कहते, “ नहीं नहीं, यह बात ठीक नहीं, यह बात ठीक नहीं। मगर हाँ, यह भी नहीं कह सकता कि आपकी बात झूठ है। लेकिन बात यह है न—”

अचानक मनोरमा आ जाती तो हँसकर कहती, “ बात जो है सो सभी जानते हैं। बापूजी, तुम खुद भी मन ही मन जानते हो कि अविनाश बाबू मिथ्या तर्क नहीं करते।”

इसके बाद, आशु बाबूके मुँहसे फिर कोई बात नहीं निकलती।

शिवनाथके विषयमें मनोरमाकी ही विमुखता मानो सबसे ज्यादा थी। मुँहसे वह ज्यादा कुछ नहीं कहती थी, पर पिता सबसे ज्यादा डरते थे उसीसे।

जिस दिन शामको शिवनाथ और उसकी स्त्री पानीमें भीगकर इस घरमें आश्रय लेनेको बाध्य हुए थे उसके बाद दो दिनतक आशु बाबू वातके प्रकोपसे एकदम खाटपर पड़े रहे। न तो वे खुद ही कहीं जा सके और न अविनाश ही कामकी झंझटकी वजहसे उनके पास आ सके। परन्तु उनके आते ही आशु बाबू वातके असह्य दर्दको भूलकर आरामकुरसीपर सीधे होकर बैठ गये और बोले, “ अजी अविनाश बाबू, शिवनाथकी स्त्रीके साथ तो हम लोगोंका परिचय हो गया। लड़की है बिलकुल लक्ष्मीकी मूर्ति। ऐसा रूप कभी नहीं देखा भाई। मालूम हुआ, जैसे उन दोनोंको भगवानने किसी उद्देश्यसे ही मिलाया है।”

“ कहते क्या हैं?”

“ हाँ, हाँ। दोनोंको अगल-बगल खड़ा कर दो, तो देखते ही रह जाना पड़ता है! आप आँखें हटा ही नहीं सकते, इतना मैं कह देता हूँ अविनाश बाबू।”

अविनाशने हँसते हुए कहा, “ हो सकता है। लेकिन आप प्रशंसा करने लगते हैं तो उसकी सीमा नहीं रखते।”

आशु बाबू क्षण-भर उनके मुँहकी ओर देखते रहे, फिर बोले, "यह दोष मुझमें है। सीमासे बाहर जा सकता होता तो इस मामलेमें भी जरूर जाता, मगर शक्ति नहीं है। इन दोनोंके बारेमें कितना ही क्यों न कहा जाय, सब सीमाके बाईं तरफ ही रहेगा, दाहनी तरफ नहीं पहुँचनेका।"

अविनाशने इसपर पूरा विश्वास कर लिया हो सो बात नहीं, परन्तु पहलेका परिहासका ढंग भी अब न रहा। बोले, "तो फिर उस दिन शिवनाथने अकारण दम्भ नहीं किया, क्यों? मगर परिचय हुआ किस तरह?"

आशु बाबूने कहा, "बिलकुल दैवी घटना हुई। शिवनाथको काम था मुझसे। स्त्री साथ थी, पर मकानके अन्दर लानेकी हिम्मत नहीं हुई, बाहर ही एक पेड़के नीचे उसे खड़ा कर आया। लेकिन दैव टेढा हो तो आदमीकी चतुराई काम नहीं देती, असम्भव बात भी सम्भव हो जाती है। हुआ वही।" यह कहकर उन्होंने उस दिनकी आँधी-मेहकी सारीकी सारी घटना विस्तारके साथ कह सुनाई; फिर कहा, "हमारी मणि लेकिन खुश नहीं हो सकी। उसकी हम-उम्र ही थी, शायद कुछ बड़ी भी हो;—मगर मणिका कहना है कि उस दिन शिवनाथ बाबूने सच्ची बात ही कही थी,—लड़की वास्तवमें अशिक्षित, किसी दासीकी लड़की है। कमसे कम हमारे शिष्ट-समाजकी तो नहीं है, इसमें कोई सन्देह नहीं।"

अविनाशको कुतूहल हुआ, "सो कैसे जाना?"

आशु बाबूने कहा, "उसने शायद भीगी धोतीके बदले साफ धुली धोती माँगी थी, और कहा था कि मैं किसीका इस्तेमाल किया हुआ साबुन नहीं लगा सकती,—मुझे नफरत मालूम होती है।"

अविनाश समझ नहीं सके कि इसमें शिष्ट-समाजके नियमोंके बाहरकी कौन-सी बात है।

आशु बाबूने भी ठीक यही बात कही, "इसमें असगत कौन-सी बात हुई, मैं अब तक नहीं समझ सका। मगर मणि कहती है, बातमें नहीं बापूजी, कहनेके ढंगमें एक ऐसी बात थी जो बिना सुने नहीं जानी जा सकती। इसके सिवा, स्त्रियोंकी आँखों और कानोंको धोखा नहीं दिया जा सकता। हमारे यहाँकी नौकरानी तक भी समझ गई कि यह उसीकी जातकी है, उसके मालिकोंकी कोई नहीं। बिलकुल नीचेसे अचानक एकदम ऊपर चढा देनेसे जैसा होता है, इसके भी ठीक वैसा हुआ है।"

अविनाशने कुछ देर चुप रहकर कहा, "दुःखकी बात है। मगर आपके साथ परिचय हुआ किस तरह? आपसे बोली थी क्या?"

आशु बाबूने कहा, "जरूर। भीगी धोती बदलकर सीधी मेरे कमरेमें आकर बैठ गई। झिझककी बला थी ही नहीं,—मेरी तबीयत कैसी है, क्या खाता हूँ, क्या इलाज चल रहा है, जगह यह अच्छी लग रही है या नहीं,—पूछनेका क्या ही सहज-स्वच्छन्द भाव था। बल्कि शिवनाथ तो कुछ संकुचित भी हो रहे, मगर उसमें जड़ताका चिह्न तक देखनेमे नहीं आया। न बात-चीतमें, न आचरणमें।"

अविनाशने पूछा, "मालूम होता है, मनोरमा तब न होगी?"

"नहीं। उसे न जाने कैसी अश्रद्धा-सी हो गई है, कहा नहीं जाता। उन लोगोंके चले जानेपर मैंने कहा, 'मणि, उन्हें विदा करने भी एक बार बाहर नहीं आई?' मणिने कहा, 'और जो कुछ कहो कर सकती हूँ बापूजी, लेकिन घरके नौकर-चाकर या दास-दासियोंको 'बैठिए' कहकर अभ्यर्थना नहीं कर सकती और फिर 'आइएगा' कहकर विदा भी नहीं दे सकती। अपने घर आनेपर भी नहीं।' इसके बाद कहनेको और क्या रह जाता है!"

कहनेको और क्या रह जाता है, सो अविनाशको खुद भी ढूँढे न मिला, सिर्फ मृदु कंठसे इतना कहा, "बताना मुश्किल है आशु बाबू। पर मालूम होता है कि मनोरमाने ठीक ही कहा था। इस तरहकी औरतोंसे हम जैसोंके घरोंकी स्त्रियोंकी जान-पहिचान न होना ही अच्छा है।"

आशु बाबू चुप रहे।

अविनाश कहने लगे, "शिवनाथके संकोचका कारण भी शायद यही है। उसे तो सभी बातें मालूम हैं,—उसे डर था कि कहीं कोई भद्दी, न निकालने लायक बात उसकी स्त्रीके मुँहसे न निकल जाय।"

आशु बाबू हँस दिये, बोले, "हाँ, हो भी सकता है।"

अविनाशने कहा, "जरूर यही बात है।"

आशु बाबूने प्रतिवाद नहीं किया, सिर्फ कहा, "लड़की लेकिन लक्ष्मीकी-सी प्रतिमा थी।" कहकर उन्होंने एक छोटी-सी साँस छोड़ी और वे आरामकुरसीसे पीठ लगाकर लेट रहे।

कुछ देर चुप रहकर अविनाशने कहा, "मेरी बातसे क्या आपको क्षोभ हुआ?"

आशु बाबू उठके बैठे नहीं, उसी तरह अधलेटी हालतमें पड़े हुए धीरे धीरे बोले, "क्षोभ नहीं अविनाश बाबू, पर न जाने कैसी एक व्यथा-सी मालूम हुई। इसीसे तो आपसे मिलनेके लिए इस तरह फड़फड़ा रहा था। बातें भी कैसी मीठी थीं उसकी,—सिर्फ रूप ही नहीं।"

अविनाशने हँसते हुए उत्तर दिया, "मगर मैंने तो उसका रूप भी नहीं देखा और बातें भी नहीं सुनीं, आशु बाबू।"

आशु बाबूने कहा, "पर वैसा मौका अगर कभी हाथ आयेगा तो आप समझ जायेंगे कि उन्हें त्याग देनेमें कितना अन्याय हुआ है। और कोई भले ही न समझे, पर मैं निश्चित जानता हूँ कि आप जरूर समझेंगे। जाते वक्त उस लड़कीने मुझसे कहा, 'जब आप मेरे पतिका गाना सुनना पसन्द करते हैं, तब क्यों उन्हें कभी कभी बुलवा नहीं लेते? इस बातका ख़याल ही आप न करें कि मैं कौन हूँ, मैं तो आप लोगोंके बीच आनेका दावा करती नहीं।"

अविनाशको कुछ आश्चर्य हुआ, बोले, "यह तो बिलकुल अशिक्षितों जैसी बात नहीं आशु बाबू। सुननेसे मालूम होता है, इसके निजके सम्बन्धमें हम चाहे जैसी भी व्यवस्था करें पर पतिको वह शिष्ट-समाजमें चला देना चाहती है।"

आशु बाबूने कहा, "वास्तवमें उसकी बात सुनकर मालूम हुआ कि उसे सब मालूम है। हम लोगोंने जो उस दिन उसके पतिको अपमानित करके विदा किया था, इस बातको शिवनाथने उससे छिपाया नहीं है। शिवनाथ ज्यादा छिपा-छिपूकर चलनेवाला शख्स भी नहीं है।"

अविनाशने मंजूर करते हुए कहा, "स्वभावसे वह ऐसा ही है। लेकिन एक चीज उसने जरूर छिपाई है। यह लड़की चाहे जो हो, इससे उसने वास्तवमे ब्याह नहीं किया है।"

आशु बाबूने कहा, "शिवनाथने तो कहा है वह उसकी स्त्री है, और उसने भी ऐसा ही परिचय दिया कि वह उसका पति है।"

अविनाशने कहा, "परिचय दिया करे। मगर वह सच नहीं है। इसके अन्दर जो गम्भीर रहस्य है, अक्षय बाबू उसका भेद किसी न किसी दिन खोले विना न रहेंगे।"

आशु बाबूने कहा, "इसमें तो मुझे भी शक नहीं। कारण, अक्षय बाबू शक्तिशाली पुरुष हैं। मगर, इनकी परस्परकी स्वीकारोक्तिमें सत्य नहीं, सत्य

केवल छिपे हुए रहस्यके दुनियाके सामने उघाड़ देनेमें ही है ? अविनाश बाबू, आप तो अक्षय नहीं हैं। आपसे तो मैं ऐसी प्रत्याशा नहीं करता।"

अविनाश लज्जित होकर बोले, "मगर समाज भी तो है। उसकी भलाईके लिए भी तो—"

परन्तु वक्तव्य उनका खतम नहीं हो पाया था कि पासके दरवाजेको खोलकर मनोरमाने प्रवेश किया। अविनाशको नमस्कार करके उसने कहा, "बापूजी, मैं घूमने जा रही हूँ, तुम शायद आज बाहर निकल नहीं सकोगे ?"

"नहीं बिटिया, तुम जाओ।"

अविनाश उठकर खड़े हुए, बोले, "मुझे भी आज काम है। बाजारके पास जरा नहीं उतार दे सकतीं मनोरमा ?"

"जरूर,—चलिए।"

जाते समय अविनाश कह गये कि बहुत ही जरूरी कामसे उन्हें कल ही दिल्ली जाना पड़ेगा और शायद एक सप्ताहके पहले वहाँसे लौटना नहीं होगा।

५

दसेक दिन बाद अविनाश दिल्लीसे लौट आये। उनके नौ-दस सालके पुत्र जगतने आकर हाथमें एक छोटी-सी चिट्ठी दी। उसमें सिर्फ एक वाक्य लिखा था—"शामको जरूर आइएगा।—आशु।"

जगतकी विधवा मौसीने दरवाजेके परदेको हटाकर खिले हुए गुलाब जैसा मुँह निकालकर कहा, "आशु बाबूके घरके क्या आँखें बिछाये ही बैठे थे जो घरमें आते न आते तलब कर लिये गये।—अभी ही जाना होगा ?"

अविनाशने कहा, "शायद कोई खास काम है।"

"काम खाक है! वे लोग तो जैसे मुखर्जी साहबको निगल ही जाना चाहते हैं।"

अविनाश अपनी छोटी सालीको लाड़से कभी 'छोटी बहू' कहते हैं और कभी उसका नाम 'नीलिमा' लेकर पुकारते हैं। हँसके बोले, "छोटी बहू, अमृत-फल अनादरके साथ पेड़-तले पड़ा हुआ हो तो उसे देखकर बाहरके लोगोंको लोभ जरा हो ही जाता है ?"

नीलिमा हँस दी, बोली, "तब तो यह बात उन लोगोंको जता देना जरूरी हो जाती है कि वह इन्द्रायण फल है, अमृत फल नहीं।"

अविनाशने कहा, " अच्छा, जता देना। पर वे विश्वास नहीं करेंगे,- लोभ और भी बढ़ जायगा। हाथ बढ़ानेमें भी कसर न रक्खेंगे। "

नीलिमाने कहा, " उससे लाभ न होगा मुखर्जी महाशय, सब लोगोंकी पहुँचके बाहर अबकी बार मजबूत-सा बेंड़ा बनवा रखूँगी। " इतना कहकर वह हँसी दबाके परदेकी ओटमें चली गई।

अविनाश जब आशु बाबूके घर जाकर पहुँचे, तब थोड़ा-सा दिन बाकी था। गृहस्वामीने अत्यन्त आदरके साथ उनका स्वागत किया और कृत्रिम क्रोधके साथ कहा, " आप धार्मिक हैं। परदेशमें मित्रको अकेला छोड़कर दस दिनसे गैरहाजिर रहे, इस बीचमें तो इस अनुचरकी दस दशाएँ समुपस्थित हो गईं। "

अविनाश चौंककर बोले, " एक साथ दस दस दशाएँ ? पहले पहली तो बताइए ! "

" बताता हूँ। पहली दशा तो यह हुई कि दोनों टाँगें सिर्फ ताजा ही नहीं हुईं बल्कि उन्होंने अत्यन्त तेज चालसे ऊपरसे नीचे और नीचेसे ऊपर आना-जाना शुरू कर दिया। "

" बेहद भयकी बात है। दूसरीका वर्णन कीजिए। "

" दूसरी यह कि आज किसी पर्वके उपलक्षमें हिन्दुस्तानी नारी-कुल यमुनाके कूलपर इकट्ठा हुआ है और हरेन्द्र-अक्षय आदि पण्डित-समाजने निर्लिप्त निर्विकार चित्तसे वहाँ अभी अभी अभियान किया है। "

" अच्छा, ठीक है। तीसरी दशाका हाल सुनाइए। "

" दर्शनेच्छु आशुतोष अत्यन्त उत्कण्ठित हृदयसे अविनाशकी प्रतीक्षा कर रहा है, प्रार्थना है कि वे अस्वीकार न करें। "

अविनाशने हँसते हुए कहा, " उन्होंने प्रार्थना मंजूर कर ली। अब चौथी दशाका वर्णन कीजिए। "

आशु बाबूने कहा, " यह जरा कुछ-भारी है। चिरजीव महोदयने विलायतसे भारतमें पदार्पण किया है और वे काशी होते हुए परसों इसी आगरा नगरीमें पधारे हैं। सम्प्रति मोटरकी मशीन बिगड़ गई है और चिरंजीव स्वयं मरम्मतके काममें लगे हुए हैं। मरम्मत समाप्तप्राय है और वे अब आते ही होंगे। अभिलाषा है, पहली चाँदनी रातमें सब एक साथ आज ताजमहलका निरीक्षण करें। "

अविनाशका हँसता हुआ चेहरा गम्भीर हो उठा, पूछा, "ये चिरजीवि साहब कौन हैं आशु बाबू ! क्या इन्हींकी बात उस रोज कहते कहते अचानक रुक गये थे ?"

आशु बाबूने कहा, "हाँ । मगर आज कहनेमे, कमसे कम आपसे कहनेमे, कोई रुकावट नहीं । अजितकुमार मेरे भावी जमाई हैं, इन दोनोंका प्रेम ससारकी एक अपूर्व वस्तु है । लड़का क्या है रत्न है ।"

अविनाश स्थिर होकर सुनने लगे और आशु बाबू कहने लगे, "हम ब्रह्मसमाजी नहीं हैं, सनातनी हैं । सब क्रियाकर्म सनातनी-मतानुसार करते हैं । यथासमय, अर्थात् चार साल पहले ही इन दोनोंके ब्याह हो जानेकी बात थी । होता भी यही, मगर नहीं हुआ । जिस तरह इन दोनोंका परिचय हुआ वह भी एक विचित्र घटना है,—विधि-लिपि कहा जाय तो अत्युक्ति नही होगी । पर उस बातको अभी जाने दीजिए ।"

अविनाश पूर्ववत् स्तब्ध बैठे रहे । आशु बाबू बोले, "मणिकी तेल-ताई हो गई थी कि इतनेमें रातकी गाड़ीसे काशीसे छोटे काका आ पहुँचे । पिताकी मृत्युके बाद वे ही घरके बडे थे, बाल-बच्चा कोई था नहीं, काकीको लेकर बहुत दिनोंसे काशीवास कर रहे थे । ज्योतिषपर उनका अखण्ड विश्वास था, आकर बोले, यह ब्याह अभी हो ही नहीं सकता । उन्होंने खुद तथा और और पण्डितोंसे निर्भूल गणना करा देखी है कि इस ब्याहके होनेसे तीन साल तीन महीनेके अन्दर ही मणि विधवा हो जायगी ।

"घरमे एक ऊधम-सा मच गया, सारी तैयारियाँ गुटालेमे पड़ गईं; मगर मैं काकाको जानता था, समझ गया कि इसमे जरा भी इधर-उधर नहीं होनेका । अजित खुद भी एक बहुत बड़े घरका लड़का है, उसके एक विधवा काकीके सिवा ससारमें और कोई न था, वे भी बहुत गुस्सा हुई, अजित मारे दुःख और अभिमानके इञ्जीनियरिंग पढनेके बहाने विलायत चला गया और सबने जान लिया कि यह सम्बन्ध हमेशाके लिए टूट गया ।"

अविनाशने रुकी हुई साँस छोड़कर पूछा, "इसके बाद फिर ?"

आशु बाबूने कहा, "फिर हम सब हताश हो गये, हुई नहीं एक मणि खुद । मुझसे आकर बोली, "बापूजी, ऐसी क्या बड़ी बात हो गई है जिसके लिए तुमने खाना-पीना-सोना छोड़ दिया है ? तीन साल ऐसा क्या बड़ा समय है ?" उसके मनको कितनी जबरदस्त ठेस पहुँची थी, सो मैं जानता था ।

मैंने कहा, 'बेटी, तेरी बात ही सार्थक हो, पर इन सब बातोंमें तीन साल तो दरकिनार, तीन दिनकी रोक भी बुरी होती है।' मणिने हँसकर कहा, 'तुम्हें डरनेकी जरूरत नहीं बापूजी, मैं उन्हें पहचानती हूँ।' अजित हमेशासे जरा कुछ सात्त्विक प्रकृतिका आदमी है, भगवानपर उसका अचल विश्वास है। जाते समय मणिको एक छोटी चिट्ठी लिखकर चला गया। इन चार सालोंमें फिर उसने दूसरी कोई चिट्ठी ही नहीं लिखी। न लिखे, पर मन ही मन मणि सब जानती थी, और तबसे उसने ब्रह्मचारिणीका जीवन ग्रहण कर लिया। देखो तो बाहरसे कोई कुछ समझ ही नहीं सकता। समझे अविनाश बाबू?"

अविनाश श्रद्धासे विगलित-चित्त होकर बोले, "हाँ, वास्तवमें नहीं समझ सकता, मैं आशीर्वाद देता हूँ कि ये लोग जीवनमें सुखी हों।"

आशु बाबूने कन्याकी तरफसे ही मानो सिर झुकाकर उसे ग्रहण किया और कहा, "ब्राह्मणका आशीर्वाद निष्फल नहीं होगा। अजित सबसे पहले काका साहबके पास गया था। उन्होंने अनुमति दे दी है। नहीं तो, यहाँ शायद वह आता ही नहीं।"

इसके बाद, दोनों कुछ देर चुप रहे; फिर आशु बाबू कहने लगे, "अजितके विलायत चले जानेपर जब दो साल तक उसका कोई समाचार नहीं आया तब मैंने भीतर ही भीतर वरकी खोज न की हो सो बात नहीं। पर मणिको अकस्मात् मालूम हो गया और उसने मना कर दिया। कहा, 'बापूजी, इसकी कोशिश तुम मत करो। मेरा तुमने प्रकट रूपसे सम्प्रदान भले ही न किया हो, पर मनसे तो कर ही दिया था।' मैंने कहा, 'ऐसा तो कितने ही विवाहोंमें हुआ करता है, बेटी।' लेकिन लड़कीकी आँखोंमें मानो पानी भर आया। बोली, 'नहीं होता बापूजी। सिर्फ बातचीत ही होती है, उससे ज्यादा कुछ नहीं,—नहीं बापूजी, मेरे भाग्यमें भगवानने जो लिखा है उसे मैं सह सकूँ, यही काफी है; मुझे और कोई आदेश तुम मत देना।' दोनोंकी ही आँखोंसे आँसू गिरने लगे, पोंछकर मैंने कहा, 'कसूर बन गया बेटी, अपने नासमझ बापूको तू क्षमा कर'।"

अकस्मात् पूर्व-स्मृतिके आवेगसे उनका कण्ठ रुद्ध हो गया। अविनाश खुद भी कुछ देर तक बात नहीं कर सके; उसके बाद धीरे धीरे बोले, "आशु बाबू, संसारमें हम लोग न जाने कितनी गलतियाँ किया करते हैं और न जाने कितनी अनुचित धारणाएँ मनमें पालते रहते हैं।"

आशु बाबू ठीक समझ न सके, " कैसी ? "

" यही, जैसे, हममेंसे बहुत-से ऐसा समझा करते हैं कि लड़कियाँ उच्च शिक्षा पाकर मेम-साहबा बन जाती हैं, हिन्दुओंके प्राचीन मधुर संस्कारोंके लिए उनके हृदयमें जैसे स्थान ही नहीं रहता। यह कितना बड़ा भ्रम है, भला ? "

आशु बाबूने गरदन हिलाकर कहा, " भ्रम बहुतेरी जगह होता जरूर है। मगर आप जानते हैं अविनाश बाबू, क्या शिक्षा और क्या अशिक्षा, असल चीज है प्राप्त करना। इस प्राप्त करने न करनेके ऊपर ही सब बातें निर्भर हैं। नहीं तो, एकका अपराध दूसरेपर आरोप करनेसे ही गुटाला होता है।—आ गये अजित, मणि कहाँ है ? "

तीसेक सालका एक सुन्दर बलिष्ठ युवक कमरेके भीतर दाखिल हुआ। उसके कपड़ोंपर कालिखके दाग लग गये थे। उसने कहा, " मणि अब तक मेरी मदद कर रही थीं, उनके कपड़ोंमें भी कालिख लग गई है, कपड़े बदलने गई हैं। मोटर ठीक हो गई है, शोफरसे सामने लाकर खड़ी करनेको कह दिया है। "

आशु बाबूने कहा, " अजित, ये मेरे परम मित्र हैं श्रीयुत अविनाश मुखोपाध्याय। यहाँके कालेजके प्रोफेसर हैं, ब्राह्मण हैं, इन्हें प्रणाम करो। "

आगन्तुक युवकने अविनाशको पाँव छूकर प्रणाम किया। फिर खड़े होकर आशु बाबूको लक्ष्य करके कहा, " मणिके आनेमें पाँचेक मिनटसे ज्यादा देर न लगेगी। मगर आप जरा जल्दीसे तैयार हो लीजिए। देर होनेपर सब कुछ देखनेको समय नहीं मिलेगा। लोग कहते हैं ताजमहल देखते देखते जी ही नहीं भरता। "

आशु बाबूने कहा, " जी न भरनेकी ही चीज है बेटा, पर, हम लोग तो तैयार ही बैठे हैं। बल्कि तुम्हीं लोगोंको देर है, तुम्हींको अभी कपड़े बदलना बाकी है। "

युवकने हँसकर कहा, " सो रहने दीजिए। यह तो हमारा पेशा है। कपड़ोंपर कालिख लगनेसे हम लोगोंका कोई अगौरव नहीं होता। "

बात सुनकर आशु बाबू मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए, और, अविनाश भी युवककी विनम्र सरलतापर मुग्ध हो गये।

इतनेमें मणि आ पहुँची। सहसा उसकी तरफ देखकर अविनाश चौंक

उठे। कई दिनोंसे उन्होंने उसे देखा नहीं था, और इस बीचमें ही यह अप्रत्याशित आनन्दकी घटना हुई थी। खासकर, उसके पिताके मुँहसे अभी अभी जो बातें सुनी थीं उससे उन्होंने समझ लिया था कि मनोरमाके चेहरेपर आज शायद ऐसी कोई बात देखेंगे जो अनिर्वचनीय होगी और जीवनमे कभी देखी न होगी। मगर वहाँ कुछ भी नहीं था, बिलकुल सीधी-सादी पोशाक। छिपे हुए आनन्दका छिपा आडम्बर कहींसे आत्म प्रकाश करता हुआ नहीं दिखाई दिया। सुगम्भीर प्रसन्नताकी शान्त दीप्ति चेहरेपर कहीं भी विकसित होती नहीं दिखाई दी, बल्कि, न जाने कैसी एक क्लान्तिकी छायाने ही आँखोंकी दृष्टिको म्लान कर रखा था। अविनाशको ऐसा जान पड़ा कि पितृ-स्नेहवश शायद आशु बाबूने अपनी कन्याको गलत समझा है, या फिर किसी दिन जो सत्य था वह आज झूठ हो गया है।

थोड़ी देर बाद एक बड़ी भारी मोटरमें बैठकर सब चल दिये। जमुनाके घाट-घाटपर पुण्य-लुब्ध नारियों और रूप लुब्ध पुरुषोंकी भीड़ तब तक लगभग कम हो चुकी थी। सुन्दर और सुदीर्घ मार्गमें सर्वत्र ही उनकी सज-धज और विचित्र रंग-बिरंगी पोशाकें अस्तमान रवि-करोंसे विशेष सुन्दर हो उठी थीं, और उस दृश्यको देखते हुए जब वे विश्वविख्यात अनन्त-सौन्दर्यमय ताजमहलके सिंहद्वारके सामने आ पहुँचे, तब हेमन्तऋतुका छोटा-सा दिन अवसानकी ओर बढ़ा जा रहा था।

यमुना-किनारे जो कुछ देखनेका था सो सब देख-भालकर अक्षयका दल पहलेसे ही वहाँ हाजिर हो गया था। ताज उन लोगोंने बहुत बार देखा है, देखते देखते अरुचि हो गई है, इसीसे वे ऊपर न जाकर नीचेके बागमें एक किनारे बैठ गये थे। इन लोगोंको आते देख उन सबने उच्च कोलाहलके साथ स्वागत किया। वातव्याधि-पीड़ित आशु बाबू अपनी भारी-भरकम देहको घासपर रखते हुए गहरी उसास छोड़कर बोले, "ओःफ, अब जीमें जी आया। अब जिसकी जितनी तबीयत हो, मुमताज बेगमकी कब्र देखकर आनन्द प्राप्त करते रहो बाबा। आशु वैद्य यहींसे बेगम साहबाको कोरनिश बजा लाता है। इससे ज्यादा और उससे कुछ नहीं हो सकता।"

मनोरमाने क्षुब्ध कण्ठसे कहा, "सो नहीं होगा बापूजी, तुम्हें अकेला छोड़कर हममेंसे कोई भी नहीं जा सकता।"

आशु बाबू हँसकर बोले, "डरकी कोइ बात नहीं बेटी, तुम्हारे बूढ़े बापको कोई चुरा नहीं ले जायगा।"

अविनाशने कहा, "नहीं, इसकी आशंका नहीं। बदस्तूर क्रेन और लोहेकी जर्जीर लाये बगैर वह उठा ही कैसे सकेगा?"

मनोरमाने कहा, "मेरे बापूजीको कोई नजर न लगाए। आप लोगोंकी ही नजरसे बापूजी यहाँ आकर बहुत-कुछ दुबले हो गये हैं।"

अविनाशने कहा, "ऐसा अगर हुआ हो तो हम लोगोंसे अन्याय हुआ है, यह बात माननी ही पड़ेगी। कारण, द्रष्टव्यके लिहाजसे इस चीजकी इज्जत ताजमहलसे किसी कदर कम नहीं है।"

सब कोई हँस दिये। मनोरमाने कहा, "सो नहीं होगा बापूजी, तुम्हें साथ साथ चलना होगा। तुम्हारी आँखोंसे देखे बिना इस चीजका आधा सौन्दर्य ढँका ही रह जायगा। कोई कितनी ही बातें क्यो न बतावे पर तुमसे ज्यादा असली बातें और कोई नहीं जानता।"

अविनाशके सिवा इस बातका मर्म और कोई नहीं जानता कि इसके मानी क्या हैं। वे भी यही अनुरोध करने जा रहे थे। इतनेमें सहसा सबकी दृष्टि पड़ी एक अप्रत्याशित चीजपर। ताजके पूर्वकी ओरसे घूम कर अकस्मात् शिवनाथ और उसकी स्त्री सामने आ पड़े। शिवनाथ अनदेखी करके दूसरी तरफ जाना ही चाहता था कि स्त्री उसकी दृष्टि आकर्षित करके खुश हो उठी और बोली, "आशु बाबू और उनकी लड़की भी आई हैं, देखो तो सही।"

आशु बाबूने जोरकी आवाज लगाकर उन्हें पुकारा, "आप लोग कब आये शिवनाथ बाबू? इधर आइए।"

स्त्रीके साथ शिवनाथ पास आ खड़ा हुआ। आशु बाबूने उनका परिचय देकर कहा, "ये हैं शिवनाथकी स्त्री। आपका नाम लेकिन नहीं मालूम।"

"मेरा नाम है कमल। मगर मुझसे 'आप' न कहा करें आशु बाबू।"

आशु बाबू बोले, "कहना उचित भी नहीं है कमल, ये लोग मेरे मित्र हैं, तुम्हारे पतिके भी परिचित हैं। बैठो।"

कमलने अजितकी तरफ इशारा करके कहा, "मगर इनका परिचय तो दिया ही नहीं?"

आशु बाबूने कहा, "क्रमशः दूँगा। ये मेरे,—ये मेरे परम आत्मीय हैं। नाम अजितकुमार राय। कुछ ही दिन हुए, विलायतसे वापस आकर हम लोगोंसे मिलने आये हैं। कमल, तुमने क्या आज पहले पहल ताजमहल देखा?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "हाँ।"

आशु बाबूने कहा, "तब तो तुम भाग्यवती हो। पर अजित तुमसे भी भाग्यवान् है, क्योंकि यह परम आश्चर्यकी चीज उसने अभी तक देखी नहीं, अब देखेगा। लेकिन उजाला घटता आता है, ज्यादा देर करना तो अब ठीक नहीं, अजित।"

मनोरमाने कहा, "देर तो सिर्फ तुम्हारे लिए ही हो रही है, बापूजी, उठो।"

"उठना तो आसान काम नहीं बेटी, उसके लिए तो आयोजन करना पड़ेगा।"

"तो फिर वही आयोजन करो न, बापूजी।"

"करता हूँ। अच्छा कमल, देखकर कैसा मालूम हुआ?"

कमलने कहा, "आश्चर्यकी चीज ही मालूम हुई।"

मनोरमा उसके साथ बोली नहीं, यहाँ तक कि उससे परिचय है, इस बातका आभास भी उसके आचारणसे प्रकट नहीं हुआ। पितासे ताकीद करते हुए उसने कहा, "शाम हुई आ रही है बापूजी, उठो अब।"

"उठता हूँ बेटी।" कहकर आशु बाबू उठनेका जरा भी उद्योग न करके बैठे ही रहे। कमल जरा हँसी, मनोरमाकी तरफ देखकर बोली, "इनकी तबीयत भी अच्छी नहीं है, और चढ़ना उतरना भी आसान नहीं। इससे बल्कि हम लोग बैठे बैठे बातें करें, आप लोग देख आइए।"

मनोरमाने इस प्रस्तावका जवाब तक नहीं दिया, सिर्फ पितासे ही जिदके साथ कहा, "नहीं बापूजी, सो नहीं होनेका। उठो अब तुम।"

मगर, देखा गया कि उठनेकी कोशिश लगभग किसीने भी नहीं की। जो जीवित आश्चर्य इस अपरिचित रमणीके सर्वांगमें व्याप्त होकर अकस्मात् मूर्तिमान् हो उठा, उसके सामने वह निकट ही खड़ा हुआ संगमरमरका अव्यक्त आश्चर्य मानो एक क्षणमें धुँधला-सा पड़ गया।

अविनाशकी अन्यमनस्कता दूर हो गई। बोले, "इनके बिना गये काम न चलेगा। मनोरमाकी धारणा है कि पिताकी आँखोंसे देखे बगैर ताजका आधा सौन्दर्य भी हृदयंगम नहीं किया जा सकता।"

कमलने अपनी सरल आँखें उठाकर पूछा, "क्यों?" फिर आशु बाबूसे कहा, "आप शायद इस विषयके विशेषज्ञ हैं? और शायद सब बातें जानते हैं?"

मनोरमा मन ही मन विस्मित हुई; बातें ठीक अशिक्षित दासी-कन्या जैसी तो नहीं मालूम होतीं !

आशु बाबू पुलकित होकर बोले, " मैं कुछ भी नहीं जानता। विशेषज्ञ तो हूँ ही नहीं, और सौन्दर्य-तत्त्वका सिर पैरतक नहीं जानता। उस तरफसे तो मैंने इसे देखा तक नहीं कमल। मैं देखता हूँ बादशाह. शाहजहाँको। मैं देखता हूँ उनकी असीम व्यथाको जो मानो इसके हर पत्थरके अंग-अंगमें समाई हुई है। मैं देखता हूँ उनके एकनिष्ठ पत्नी-प्रेमको, जो इस मर्मर-काव्यकी सृष्टि करके चिरकालके लिए अपनी प्रियतमाको विश्वके सामने अमर कर गया है।"

कमलने अत्यन्त स्वाभाविक कण्ठसे उनके चेहरेकी तरफ देखकर कहा, " मगर उनकी तो, सुना है, और भी बहुत-सी बेगमें थीं। बादशाहको मुमताजपर जैसा प्रेम था, वैसा औरोंपर भी था। हो सकता है कि उससे कुछ ज्यादा हो, पर एकनिष्ठ प्रेम तो उसे नहीं कहा जा सकता आशु बाबू। उनमें वह बात नहीं थी।"

इस अप्रचलित भयानक मन्तव्यसे सब चौंक उठे। आशु बाबू या और कोई इसका जवाब खोजकर भी न पा सका।

कमलने कहा, " बादशाह कवि थे, वे अपनी शक्ति, सम्पदा और धैर्यसे इतनी बड़ी विराट् सौन्दर्यकी वस्तु प्रतिष्ठित कर गये हैं। मुमताज तो एक आकस्मिक उपलक्ष्य-मात्र थी। वह न होती तो भी ऐसा सौन्दर्य-सौध वे किसी भी घटनाको लेकर रच जा सकते थे। धर्मके नामपर होता तो भी कोई नुकसान नहीं था और हजारों-लाखों आदमियोंकी हत्या करके दिग्विजय-प्राप्तिकी स्मृतिके रूपमें होता तो भी इसी तरह चल जाता। यह एकनिष्ठ प्रेमका दान नहीं है, यह तो बादशाहका निजी आनन्द-लोकका अक्षय दान है। बस, इतना ही हमारे लिए काफी है।"

आशु बाबूके दिलपर चोट-सी लगी। बार बार सिर हिलाकर कहने लगे, " काफी नहीं कमल, हरगिज ऐसा नहीं था। तुम्हारी बात ही अगर सच हो, बादशाहके मनमें एकनिष्ठ प्रेम अगर न था तो इस विलास स्मृति-मन्दिरका कोई मानी ही नहीं रह जाता। फिर वे चाहे जितनी बड़ी सौन्दर्यकी सृष्टि क्यों न कर जाते, मनुष्यके हृदयमें वैसी श्रद्धाका आसन उनके लिए नहीं रह जाता।"

कमलने कहा, "अगर न रहे तो वह मनुष्यकी मूढता है। मैं नहीं कहती कि निष्ठाका कोई मूल्य ही नहीं, पर जो मूल्य युग-युगसे लोग उसे देते आये हैं वह उसका प्राप्य मूल्य नहीं है। एक दिन जिससे प्रेम किया है, फिर किसी दिन किसी भी कारणसे उसमें किसी परिवर्तनका अवकाश नहीं हो सकता : मनका यह अचल-अडिग जड़ धर्म न तो स्वस्थ है और न सुन्दर ही।"

सुनकर मनोरमाके विस्मयकी सीमा न रही। मूर्ख दासी-कन्या कहकर इसकी उपेक्षा करना कठिन है, मगर इतने पुरुषोंके सामने उसी जैसी एक नारीके मुँहसे निकली हुई इस तरहकी लज्जाहीन बातने उसे जबरदस्त चोट पहुँचाई। अब तक वह कुछ बोली नहीं थी; पर अब वह अपनेको रोक न सकी; कठोर किन्तु दबी जबानसे बोली, "मैं मानती हूँ, ऐसी मनोवृत्ति और किसीके न सही, पर आपके लिए स्वाभाविक है। मगर औरोंकी दृष्टिमें न तो यह सुन्दर है और न शोभन।"

आशु बाबू मन ही मन अत्यन्त क्षुण्ण होकर बोले, "छिः, बेटी।"

कमल गुस्सा नहीं हुई, बल्कि जरा हँस दी। बोली, "बहुत दिनोंके बद्ध-मूल संस्कारपर आघात लगनेसे आदमी सहसा सह नहीं सकता। आपने सच ही कहा है, हमारे निकट यह बात बहुत ही स्वाभाविक है क्योंकि हमारे शरीर और मनमें यौवन परिपूर्ण है, हमारे मनमें प्राण हैं। जिस दिन जानूँगी कि आवश्यकता होनेपर भी उसमें परिवर्तनकी कोई शक्ति बाकी नहीं रही उस दिन समझ लूँगी कि उसका खातमा हो चुका है,—वह मर चुका है।" कहकर ज्यों ही उसने आँखें उठाईं त्यों ही देखा कि अजितकी आँखोंसे जैसे चिन-गारियाँ निकल रही हैं। मालूम नहीं वह दृष्टि मनोरमाने देखी या नहीं, किन्तु वह बातके बीचहीमें अकस्मात् बोल उठी, "बापूजी, अब दिन नहीं है, मुझसे जितना बनेगा मैं अजित बाबूको तब तक कुछ थोड़ा दिखा लाती हूँ।"

अजितकी अन्यमनस्कता दूर हो गई। उसने कहा, "चलो, हम लोग देख आएँ।"

आशु बाबू खुश होकर बोले, "अच्छी बात है, जाओ बेटी, हम लोग यहीं बैठे हैं। लेकिन जरा जल्दी ही लौट आना, न होगा तो कल फिर जरा जल्दी आ जायँगे।"

६

अजित और मनोरमा जब 'ताज' देखकर लौटे तब सूर्य अस्त हो चुका था, पर उजाला खतम नहीं हुआ था। सब खूब गिरोह बाँधकर जमे थे, और तर्क घोरतर हो उठा था। ताजमहलकी बात, घर लौटनेकी बात, यहाँ तक कि अजित-मनोरमाकी बातका भी उन्हें खयाल नहीं था। अक्षय चुप बैठा उफन रहा था। देखकर मालूम होता था कि इसके पहले वह काफी शोर मचा चुका है और अब दम ले रहा है। आशु बाबू देहके अधोभागको चक्रके बाहरकी ओर पसार कर और ऊर्ध्व भागको दोनों हाथोंपर रखकर, गुरु-भार वहन करनेका एक तरीका निकालकर अत्यन्त दिलचस्पीके साथ सुन रहे हैं। अविनाश सामनेकी ओर झुककर तीव्र दृष्टिसे कमलके चेहरेकी तरफ देख रहे हैं। समझमें आया कि फिलहाल सवाल-जवाब इन्हीं दोनोंके दरम्यान चालू है। सबने आगन्तुकोंकी ओर मुँह उठाकर देखा। किसीने जरा गरदन हिलाई और किसीको उतनी भी फुरसत नहीं मिली। कमल और शिवनाथ,—इन दोनोंने भी मुँह उठाकर देखा। किन्तु आश्चर्य यह है कि एककी आँखोंकी दृष्टि जैसे शिखाकी तरह जल रही है, दूसरेकी दृष्टि वैसे ही क्लान्त और मलिन हो रही है। मानो वह कुछ देख ही नहीं रहा है, न कुछ सुन ही रहा है। इस दलमें बैठा हुआ भी शिवनाथ जैसे न जाने कहाँ कितनी दूर चला गया है।

आशु बाबूने कहा, "बैठो।" पर वे कहाँ बैठे, और बैठे या नहीं, यह देखनेकी भी उन्हें फुरसत नहीं मिली।

अविनाशने शायद अक्षयकी युक्ति-मालाका छिन्न सूत्र हाथमें ले लिया और कहा, "बादशाह शाहजहाँका प्रसङ्ग अभी रहने दो। मैं मानता हूँ कि उनके सम्बन्धमें विचार करनेकी जरूरत है और प्रश्न जरा जटिल है। मगर प्रश्न जहाँ उस सामनेके संगमरमरके समान सफेद, पानीकी तरह साफ, सूर्यके प्रकाशकी तरह स्वच्छ और सीधा है,—ले लीजिए हमारे आशु बाबूका जीवन, किसी भी दिशामें भी कोई कमी नहीं थी, बन्धु बान्धवोंकी कोशिशमें भी कोई त्रुटि नही थी, मालूम तो है ही सब,—लेकिन यह बात ये सोच ही न सके कि अपनी मृत स्त्रीकी जगह और किसीको लाकर किसी तरह बिठाया जा सकता है। यह बात इनकी कल्पनासे भी बाहर है। बताइए, नर-नारीके प्रेमका यह कितना बड़ा आदर्श है! कितना ऊँचा स्थान है इसका?"

कमल कुछ कहना ही चाहती थी कि पीछेसे एक मृदु स्पर्शका अनुभव करके उधर देखने लगी। शिवनाथने कहा, "अब यह अलोचना बन्द करो।"

कमलने पूछा, "क्यों?"

शिवनाथने उत्तरमें सिर्फ इतना कहा, "ऐसे ही कह रहा हूँ।" और वे चुप हो गये। उनकी बातपर किसीने विशेष ध्यान नहीं दिया,—उन उदास अन्य-मनस्क आँखोंके अन्तरालमें कौन-सी बात दबी रह गई, किसीको मालूम भी न हुई, और न किसीने जाननेकी कोशिश ही की।

कमलने कहा, "अच्छा, ऐसे ही। तुम्हें घर चलनेकी जल्दी पड़ी है शायद? पर घर तो साथ ही मौजूद है।" और हँस दी।

आशु बाबू सहम गये, हरेन्द्र और अक्षय ओठों ही ओठोंमें मुसकराये, मनोरमाने दूसरी तरफ आँखे फेर लीं; किन्तु जिसको लक्ष्य करके यह बात कही गई थी, उस शिवनाथके आश्चर्यजनक सुन्दर चेहरेपर एक रेखाका भी परिवर्तन नहीं हुआ,—मानो वह बिलकुल पत्थरका बना हो,—न तो उसे कुछ दिखाई देता है और न सुनाई।

अविनाशसे देर नहीं सही जा रही थी, उन्होंने कहा, "मेरे सवालका जवाब दो।"

कमलने कहा, "पर पतिकी मनाही है जो। उनकी मंशाके खिलाफ चलना क्या उचित है?". यह कहकर वह हँसने लगी। अविनाशसे स्वयं भी बिना हँसे न रहा गया। बोले, "इस मामलेमें अपराध न माना जायगा। हम इतने आदमी मिलकर तुमसे अनुरोध कर रहे हैं, जवाब दो।"

कमलने कहा, "आशु बाबूको आज मिलाकर दो दिन देखा है सिर्फ, पर इसी बीचमे मन ही मन मैं उन्हें चाहने लगी हूँ।" फिर शिवनाथकी तरफ इशारा करके कहा, "अब समझमें आया न, कि क्यों ये मुझे बोलनेके लिए मना कर रहे थे?"

आशु बाबूने खुद इसमें रुकावट डाली, बोले, "पर मेरी तरफसे तुम्हें संकोच या दुविधा करनेका कोई कारण नहीं। बूढ़ा आशु वैद्य बड़ा निरीह आदमी है कमल। सिर्फ दो ही दिन देखकर तुमने उसे बहुत-कुछ समझ लिया होगा, और दो दिन और भी देखोगी तो समझ जाओगी कि उससे डरने जैसी भूल संसारमें शायद ही कोई हो। तुम स्वच्छंदतासे कहो,—ये सब बातें सुननेमे वास्तवमे मुझे बहुत आनन्द आता है।"

कमलने कहा, " मगर ठीक इसीलिए तो ये मना कर रहे थे, और इसीलिए अविनाश बाबूकी बातका जवाब देनेमें अब तक मेरी जवान रुकती थी कि नर नारीके प्रेमके व्यापारमें न तो मैं इसे बड़ी चीज़ समझती हूँ और न आदर्श ही मानती हूँ। "

अब अक्षयका मुँह खुला। उसके प्रश्नके ढंगमें श्लेष था, बोला, " सम्भव यही है कि आप लोग नहीं मानते, मगर क्या मानते हैं, जरा बताएँगी क्या ? "

कमलने उसकी तरफ देखा जरूर; पर ठीक उसीको उत्तर दिया हो, सो बात नहीं। वह बोली, " एक दिन आशु बाबू अपनी स्त्रीसे प्रेम करते थे, जो इस समय जीवित नहीं हैं। पर अब उन्हें न तो कुछ दिया ही जा सकता है और न उनसे कुछ पाया ही जा सकता है। उन्हें अब न तो सुखी किया जा सकता है और न दुःख दिया जा सकता है। वे हैं ही नहीं, प्रेम-पात्रका निशान तक पुछ गया है। उन्हें किसी दिन प्रेम किया था, मनमें सिर्फ यह घटना-मात्र रह गई है। मनुष्य नहीं है, उसकी केवल स्मृति है। उसीको अहोरात्र मनमे पालते रहकर वर्तमानकी अपेक्षा अतीतको ही ध्रुव जानकर जीवन बितानेमें कौन-सा बड़ा भारी आदर्श है, मेरी तो कुछ समझमें नहीं आता। "

कमलके मुँहसे ऐसी बात सुनकर आशु बाबूको फिर चोट पहुँची। वे बोले, " मगर, हमारे देशकी विधवाओंके हाथमें सिर्फ यही एक चरम पूँजी रहती है। पति चल बसता है, पर उसकी स्मृतिको लेकर ही तो विधवा-जीवनकी पवित्रता बनी रहती है। इसे क्या तुम नहीं मानतीं ? "

कमलने कहा, " नहीं। एक बड़ा नाम दे देनेसे ही तो कोई चीज संसारमें सचमुच बड़ी नहीं हो जाती। बल्कि यों कहिए कि इस देशमें इसी तरह वैधव्य-जीवन बितानेका रिवाज है, इसे मैं अस्वीकार नहीं करूँगी। "

अविनाशने कहा, " अगर ऐसा ही हो, लोग अगर उन्हें ठगते ही आ रहे हों, विधवाके ब्रह्मचर्यमें,—खैर जाने दो, ब्रह्मचर्यका नाम अब न लूँगा,—लेकिन उसके आमरण संयत जीवनको क्या हम विराट् पवित्रताका भी सम्मान न देंगे ? "

कमल हँस दी, बोली, " अविनाश बाबू, यह भी एक उसी शब्दका मोह है। 'संयम' शब्द बहुत दिनोंसे बहुत ज्यादा इज्जत पा पा-कर ऐसा फूल उठा है कि उसके लिए अब स्थान-काल कारण-अकारण नहीं रह गया है। उसके उच्चारण-मात्रसे सम्मानके बोझसे आदमीका सिर झुक जाता है।

परन्तु, अवस्था-विशेषमें यह भी एक थोथी आवाज़से ज्यादा कुछ नहीं है। यह शब्द मुँहसे निकालते ही साधारण लोगोंको भले ही डर लगे, पर मुझे नहीं लगता। मैं उस दलकी नहीं हूँ। सिर्फ इसी लिए कि बहुत-से लोग बहुत दिनोंसे कोई एक बात कहते आ रहे हैं, मैं उसे मान नहीं लेती। पतिकी स्मृतिको छातीसे चिपटाये रहकर विधवाओंको दिन काटने चाहिए, इसके समान स्वतःसिद्ध पवित्रताकी धारणाको स्वीकार करनेमें मुझे तब तक हिच-किचाहट रहेगी जब तक कि उसे कोई प्रमाणित नहीं कर देता।"

अविनाशको जवाब ढूंढे न मिला और वे क्षण-भर विमूढ़की भाँति देखते रह गये, फिर बोले, "तुम कहती क्या हो?"

अक्षयने कहा, "दो और दो चार होते हैं, इसे भी शायद प्रमाणित किये बगैर आप नहीं मानेंगीं?"

कमलने न तो जवाब दिया और न गुस्सा ही हुई; सिर्फ हँस दी।

और भी एक सज्जन जो गुस्सा नहीं हुए, वे थे आशु बाबू। किन्तु कमलकी बातसे सबसे ज्यादा व्यथित भी वे ही हुए।

अक्षय फिर बोला, "आपकी ये सब गन्दी धारणाएँ हमारे शिष्ट-समाजमें नहीं हैं। वहाँ ये चल नहीं सकतीं।"

कमलने पूर्ववत् हँसते चेहरेसे ही उत्तर दिया, "शिष्ट समाजमें चलती नहीं हैं, यह मैं जानती हूँ।"

इसके बाद कुछ देर तक सबके सब मौन रहे। आशु बाबू धीरे धीरे बोले, "और एक बात तुमसे पूछता हूँ कमल। पवित्रता-अपवित्रताके लिए नहीं कह रहा, किन्तु स्वभावतः जो और कुछ कर नहीं सकता,—जैसे मुझको ही ले लो, मणिकी स्वर्गीय माकी जगह और किसीको ला बिठानेकी तो मैं कभी कल्पना ही नहीं कर सकता।"

कमलने कहा, "आप बूढे जो हो गये हैं आशु बाबू।"

आशु बाबूने कहा, "मानता हूँ, आज बूढा हो गया हूँ; किन्तु उस दिन तो बूढ़ा नहीं था। पर तब भी तो यह बात नहीं सोच सकता था?"

कमलने कहा, "उस दिन भी ऐसे ही बूढ़े थे। देहसे नहीं, मनसे। कोई कोई आदमी होते हैं जो बूढा मन लिये ही पैदा होते हैं। उस बूढेके शासनके नीचे उनका जीर्ण-शीर्ण विकृत यौवन हमेशा लज्जासे सिर नीचा किये रहता है। बूढा मन खुश होकर कहता है, अहा! यही तो अच्छा है, कोई हंगामा

नहीं, उन्माद नहीं,—यही तो शान्ति है, यही तो मनुष्यके लिए चरम तत्त्वकी बात है। उसके लिए कितने तरहके अच्छे अच्छे विशेषण हैं, कितनी वाहवाहीका आडम्बर है। ऊँचे स्वरसे उसकी ख्यातिका बाजा बजता है, पर इस बातको वह जान भी नहीं पाता कि यह उसके जीवनका जय-वाद्य नहीं, आनन्द-लोकके विसर्जनका बाजा है।"

सभीको मन ही मन लगा कि इसका एक कड़ा जवाब देना जरूरी है। एक स्त्रीके मुँहसे यौवनके उन्मादकी इस निर्लज्ज स्तुतिसे सभीके कान जलने लगे, पर जवाब देने लायक बात किसीको ढूँढे नहीं मिली।

तब आशु बाबूने मृदु कण्ठसे पूछा, "कमल, बूढा मन तुम किसे कहती हो? देखूँ अपने साथ जरा मिलाकर। यह सचमुच ही वही है या नहीं।"

कमलने कहा, "मनका बुढ़ापा मैं उसीको कहती हूँ आशु बाबू, जो अपने सामनेकी ओर नहीं देख सकता, जिसका हारा-थका जराग्रस्त मन भविष्यकी समस्त आशाओंको जलांजलि देकर सिर्फ अतीतके अन्दर ही जिन्दा रहना चाहता है। और मानो उसे कुछ करनेकी, कुछ पानेकी चाह ही नहीं है,—वर्तमान उसकी दृष्टिमें लुप्त है, अनावश्यक है, और भविष्य अर्थहीन। अतीत ही उसके लिए सब कुछ है। वही उसका आनन्द, वही उसकी वेदना और वही है उसका मूल-धन। उसीको भुना भुनाकर गुजर करके जीवनके बाकी दिन बिता देना चाहता है। देखिए तो आशु बाबू, अपने साथ जरा तुलना करके।"

आशु बाबू हँसे, बोले, "यथासमय एक बार जरूर देखूँगा।"

अजितकुमारने अब तककी इतनी बातचीतके बीचमें एक भी बात नहीं कही थी, वह सिर्फ निष्पलक दृष्टिसे कमलाके मुँहकी तरफ देख रहा था; सहसा न जाने उसे क्या हो गया, अपनेको वह सम्हाल न सका, बोल उठा, "मेरा एक प्रश्न है, देखिए मिसेज़—"

कमलने सीधे उसकी तरफ देखकर कहा, "मिसेज़ किस लिए? मुझे आप कमल ही कहिए न।"

अजित मारे शरमके सुर्ख हो उठा—"नहीं नहीं, सो कैसे,—ऐसा कैसे—"

कमलने कहा, "ऐसा-वैसा कुछ भी नहीं। मा-बापने मेरा यह नाम रखा था पुकारनेके लिए ही तो! इससे मैं नाराज नहीं होती।" अकस्मात् मनोरमाके मुँहकी ओर देखकर बोली, "आपका नाम मनोरमा है,—मनोरमा कहकर बुलानेसे आप नाराज होती हैं क्या?"

मनोरमाने सिर हिलाकर कहा, " हाँ, मैं नाराज होती हूँ। "

ऐसे जवाबकी उससे किसीने भी उम्मीद नही की थी, आशु बाबू तो मारे संकोचके म्लान हो गये।

सिर्फ संकुचित नहीं हुई कमल स्वयं। बोली, " नाम तो और कुछ नहीं, एक शब्द है, जिससे समझा जाता है कि एक आदमी बहुतोंमेंसे किसी एक आदमीको बुला रहा है। पर हाँ, यह सच है कि बहुतोंके अभ्याससे यह खटकता है। वे इस शब्दको नाना रूपसे अलंकृत करके सुनना चाहते हैं। देखते नहीं, राजा लोग अपने नामके आगे न जाने कितने निरर्थक शब्द जोड़कर, कितने 'श्री' जोड़कर, तब कहीं उसे दूसरेको उच्चारण करने देते हैं। नहीं तो उनकी मर्यादा नष्ट होती है। " इतना कहकर वह सहसा हँस पड़ी, और शिवनाथकी तरफ इशारा करके बोली, " जैसे ये। कभी इनसे कमल कहते नहीं बनता, कहते हैं शिवानी। अजित बाबू, आप बल्कि मुझे मिसेज़ शिवनाथ न कहकर शिवानी कहिए। शब्द भी छोटा है, और सब समझ भी लेंगे। कमसे कम मैं तो समझ ही जाऊँगी। "

परन्तु न जाने क्या हुआ कि ऐसा सुस्पष्ट आदेश पाकर भी अजितसे कुछ बोला नहीं गया, प्रश्न उसके मुँहमें ही अटक रहा।

तब संध्या खतम हो चुकी थी और कातिक-पूनोंके वाष्पाच्छन्न आकाशमे स्वच्छ चाँदनी छिटक रही थी। उस तरफ देखकर पिताकी दृष्टि आकर्षित करते हुए मनोरमाने कहा, " बापूजी, ओस पड़ना शुरू हो गया है, बस, उठिए अब। "

आशु बाबू बोले, " यह लो, उठता हूँ बिटिया। "

अविनाशने कहा, " शिवानी नाम बहुत अच्छा है। शिवनाथ गुणी पुरुष है, इसीसे नाम भी मीठा दिया है, अपने नामके साथ मेल भी खूब मिलाया है। "

आशु बाबू खिल उठे, बोले, "अजी ये शिवनाथ नहीं अविनाश, ऊपरके वे। " और एक बार आकाशकी ओर देखकर बोले, " आदि-कालके उस बूढ़े घटकने इन दोनोंका सब तरफसे मेल करानेके लिए आहार-निद्रा तक छोड़ दी थी। जीते रहो। "

अकस्मात् अक्षय सीधा होकर बैठ गया और दो तीन बार सिर हिलाकर अपनी छोटी छोटी आँखोंको यथाशक्ति फाड़कर बोला, " अच्छा, आपसे एक प्रश्न कर सकता हूँ क्या ? "

कमलाने कहा, " क्या प्रश्न ? "

अक्षयने कहा, " आपके लिए संकोच नामकी तो कोई बला है नहीं, इसीसे पूछता हूँ,—शिवानी नाम तो अच्छा है, मगर, शिवनाथ बाबूके साथ क्या आपका वास्तवमें ब्याह हुआ है ? "

आशु बाबूका चेहरा स्याह पड़ गया, बोले " यह क्या कह रहे हो अक्षय बाबू ! "

अविनाशने कहा, " तुम पागल हो गये हो ! "

हरेन्द्रने कहा, " ब्रूट " (जंगली)

अक्षयने कहा, " आप तो जानते हैं, मेरे आँखोंका झूठा लिहाज नहीं। "

हरेन्द्रने कहा, " झूठा सच्चा किसी तरहका भी नहीं। पर हम लोगोंके तो है। "

कमल लेकिन हँसने लगी। जैसे यह कोई बड़े विनोदकी बात हो। उसने कहा, " इसमें नाराज होनेकी कौन-सी बात है हरेन्द्र बाबू ! मैं बताती हूँ अक्षय बाबू। बिलकुल कुछ हुआ ही न हो, सो बात नहीं। ब्याह जैसी कोई बात हुई जरूर थी। जो लोग देखने आये थे, वे लगे हँसने। बोले, यह ब्याह ब्याह ही नहीं,—धोखा है। इनसे पूछनेपर इन्होंने कहा, " शैव मतसे ब्याह हुआ है। ' मैंने कहा, ' यही ठीक है। शिवके साथ अगर शैव मतसे ही ब्याह हुआ तो इसमें चिन्ताकी कौन-सी बात है ! "

अविनाश सुनकर दुःखित हुए, उन्होंने कहा, " लेकिन शैव-विवाह तो अब हमारे समाजमे होता नहीं न, इसलिए अगर ये किसी दिन ' नहीं हुआ ' कहकर उसे उड़ा देना चाहें, तो प्रमाणित करने लायक तुम्हारे पास कुछ रह नहीं जाता कमल ! "

कमलने शिवनाथकी तरफ देख कर कहा, " क्यों जी, करोगे क्या तुम ऐसा किसी दिन ! "

शिवनाथने कुछ जवाब नहीं दिया, वह पहलेकी तरह उदास और गम्भीर चेहरा लिये बैठा रहा। तब कमलने हँसीके बहाने माथेपर हाथ मारकर कहा, " हाय रे भाग्य ! ये जायेंगे ' नहीं हुआ ' कहकर अस्वीकार करने और मैं जाऊँगी उसीको ' हुआ है ' कहकर दूसरोंके पास न्याय कराने ? उसके पहले गलेमें फाँसी डालने लायक एक रस्सी भी न जुटेगी क्या ! "

अविनाशने कहा, " जुट सकती है, मगर आत्म-हत्या तो पाप है ! "

कमलने कहा, " पाप नहीं खाक है। मगर ऐसा होगा नहीं। मैं आत्म-हत्या करने जाऊँगी, यह मेरे विधाता भी नहीं सोच सकते। "

आशु बाबू कह उठे, " यह तो मनुष्यकी-सी बात है कमल। "

अविनाशने प्रतिवादके तौरपर कहा, "यह दूसरी बात है। उसकी सब बाते औरतोंके मुँहसे ठीक शोभन न लगें पर उन्हें अश्लील नहीं कह सकते अक्षय।"

अक्षयने कठोर होकर कहा, "वे दोनों ही एकसे हैं अविनाश बाबू। देखा नहीं, ब्याह इन लोगोंके लिए तमाशेकी चीज बन गई है। जब सबने आकर कहा कि यह ब्याह नहीं है, धोखेबाजी है, तब उन्होंने सिर्फ हँसके कहा, ऐसी बात है क्या? उनका एब्सोल्यूट इण्डिफरेन्स (सम्पूर्ण उपेक्षा-भाव) आप लोगोंने क्या नोटिस नहीं किया? यह क्या कभी कुलीन कन्याके लिए शोभा दे सकता है, या कभी सम्भव हो सकता है?"

बात उसकी सच थी, इसीसे सब चुप रहे। आशु बाबू अब तक कुछ बोले नहीं थे। सब कुछ वे सुन रहे थे, किन्तु थे अपनी ही उधेड़-बुनमें। सहसा इस स्तब्धतासे उनका ध्यान भंग हुआ। धीरे धीरे बोले, "विवाहके प्रति नहीं बल्कि उसके 'फार्म' (=तरीके) पर शायद कमलकी उतनी आस्था नहीं है। अनुष्ठान कुछ भी हो, जो हो गया सो उसके लिए ठीक है। पतिसे कहा, 'ये लोग कहते हैं, यह ब्याह धोखेबाजी है।' पतिने कहा, 'विवाह हुआ है हम लोगोंका शैव मतसे।' कमल खुश होकर बोली, 'शिवके साथ ब्याह अगर शैव मतसे हुआ हो तो वही अच्छा है।' बात मुझे ऐसी मीठी लगी अविनाश बाबू, कि पूछिए नहीं।"

भीतर ही भीतर अविनाशका मन भी इसी स्वरमें बँधा था, वे बोले, "और उसी शिवनाथके मुँहकी तरफ देखकर हँसते हँसते पूछना 'क्योंजी, करोगे क्या तुम ऐसा? दोगे क्या मुझे धोखा?' उसके बाद तो कितनी ही बातें हो गईं आशु बाबू, लेकिन उसकी गूँज अभी तक मेरे कानोंमें गूँज रही है।"

प्रत्युत्तरमें आशु बाबूने हँसकर सिर्फ सिर हिला दिया।

अविनाशने कहा, "और उसका वह शिवानी नाम? वह क्या कम मीठा है?"

अक्षयसे मानो सहा नहीं गया, वह बोला, "आप लोगोंने तो मुझे दंग कर दिया अविनाश बाबू! उनका जो कुछ है सब मधुर है। यहाँ तक कि शिवनाथके नामके साथ एक 'नी' जोड देनेसे भी मधु झरने लगा।"

हरेन्द्रने कहा, "सिर्फ 'नी' जोड़ देनेसे ही नहीं होता अक्षय बाबू। आपकी स्त्रीको 'अक्षयनी' कहकर पुकारनेसे ही क्या मधु झरने लगेगा?"

उसकी बात सुनकर सभी हँस पड़े, यहाँ तक कि मनोरमाने भी रास्तेकी तरफ मुँह फेरकर हँसी छिपाई।

अक्षय मारे क्रोधके पागल-सा हो उठा। गरजकर बोला, " हरेन्द्र बाबू, 'डोण्ट यू गो टू फार' (बहुत ज्यादा मत बढो।) किसी उच्चवंशीय महिलाके साथ ऐसी स्त्रियोंकी तुलना इशारेमें करनेको भी मैं अत्यन्त अपमानजनक समझता हूँ, सो आपसे स्पष्ट कहे देता हूँ।"

हरेन्द्र चुप रहा। बहस करनेका उसका स्वभाव न था और न अपनी युक्तियोंसे प्रमाणित करनेकी ही उसकी आदत थी। बीचमें अचानक कुछ कहकर वह ऐसा नीरव हो जाता कि हजार कोंचनेपर भी कोई उसके मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकलवा सकता। हुआ भी ऐसा ही। अक्षय बचे हुए रास्तेमें शिवानीको छोड़कर हरेन्द्रके पीछे पड़ गया। वह कहता रहा कि उसने शिष्ट महिलाका शिष्टताहीन गन्दा मजाक उड़ाया है। शिवनाथकी शैवमतसे विवाहिता स्त्रीकी बातमे और व्यवहारमें आभिजात्यकी बू तक नहीं, बल्कि उसकी शिक्षा और सस्कारसे जघन्य हीनताका ही परिचय मिलता है,—आदि बातोंको वह अत्यन्त अप्रिय तरीकेसे बार बार प्रमाणित करने लगा। इतनेमें गाड़ी आशु बाबूके दरवाजेपर आकर खड़ी हो गई; फिर अविनाश तथा और सबोंको उतारकर हरेन्द्र अक्षय आदिको पहुँचाने चली गई।

आशु बाबू उद्विग्न होकर बोले, " गाड़ीमें दोनोंके दोनों कहीं मार-पीट न कर बैठें।"

अविनाशने कहा, " इसका कोई डर नहीं। यह तो रोजमर्राकी बात है, और इनसे उनकी मित्रतामें कोई फर्क नहीं आता।"

भीतर जाकर चाय पीने बैठे तो आशु बाबूने धीरेसे कहा, " अक्षय बाबूकी प्रकृति बड़ी कठोर है। इससे बढकर कठोर बात उनकी जबानपर और क्या आती?" सहसा लड़कीकी ओर देखकर बोले, " अच्छा मणि, कमलके सम्बन्धमें तुम्हारी पहलेकी धारणा क्या आज भी नहीं बदली?"

" कैसी धारणा बापूजी?"

" यही, जैसे,—जैसे—"

" मगर मेरी धारणासे तुम लोगोंको क्या काम बापूजी?"

पिताने फिर कुछ नहीं कहा। वे जानते थे कि इस स्त्रीके सम्बन्धमें मनोरमाका चित्त अत्यन्त विमुख है। यह बात उन्हें पीड़ा पहुँचाती है; पर

इस बातको लेकर नई तरहसे आलोचना करने बैठना उनके लिए जिस तरह अप्रिय है, वैसे ही निष्फल भी है।

अकस्मात् अविनाश बोल उठे, "मगर एक विषयपर आप लोगोंने शायद ध्यान नहीं दिया। वह है शिवनाथके अन्तिम शब्द। कमलका सब कुछ ही अगर दूसरेकी प्रतिध्वनि मात्र होता तो यह बात शिवनाथको कहनेकी जरूरत नहीं पड़ती कि वह आपपर श्रद्धा रखना सीखे।" इतना कहकर उसने खुद भी गम्भीर श्रद्धाके साथ आशु बाबूके मुँहकी तरफ देखकर कहा, "कहनेमें क्या हर्ज है, वास्तवमें आप जैसे भक्तिके पात्र संसारमें हैं कितने? सिर्फ इसीके लिए मैं उसके अनेक अपराध क्षमा कर सकता हूँ आशु बाबू, कि इतने-से मामूली परिचयमें शिवनाथने इतने बड़े सत्यको हृदयंगम कर लिया।"

सुनकर आशु बाबू चंचल हो उठे। उनका विपुल कलेवर लज्जासे मानो संकुचित हो गया। मनोरमाने कृतज्ञतासे दोनों आँखें भरकर वक्ताके मुँहकी तरफ मुँह उठाकर देखा और कहा, "अविनाश बाबू, यहींपर उनके साथ उनकी स्त्रीका सचमुचका भेद है। आज मैं जान गई कि उस दिन धोती और साबुन माँगनेके बहाने वह मेरा सिर्फ उपहास ही कर गई थी। उस दिनका उसका अभिनय मैं समझ नहीं सकी थी।—पर उसका यह सब छल-छन्द, सब व्यंग्य व्यर्थ है बापूजी, अगर तुम्हें वह आज सबसे बड़ा जानकर न पहचान सकी हो।"

आशु बाबू व्याकुल हो उठे, "तू यह सब क्या कह रही है बेटी?"

अविनाशने कहा, "अतिशयोक्ति तो इसमें कहीं भी नहीं आशु बाबू! जाते वक्त शिवनाथने यही बात अपनी स्त्रीसे कहनेकी कोशिश की थी। आज उसने बात नहीं की, पर उसकी इस एक ही बातसे मुझे मालूम हो गया है कि उन दोनोंमें परस्पर यहीं सबसे बड़ा मतभेद है।"

आशु बाबूने कहा, "ऐसा अगर हो तो शिवनाथका ही दोष है, कमलका नहीं।"

मनोरमा सहसा बोल उठी, "यह तो तुम्हीं जानो बापूजी, कि तुमने किन आँखोंसे उसे देखा है, मगर तुम जैसे मनुष्यको जो श्रद्धा नहीं कर सकती उसे क्या कभी क्षमा किया जा सकता है?"

आशु बाबूने लड़कीके चेहरेकी तरफ देखकर कहा, "क्यों बेटी? मुझपर अश्रद्धा करनेका भाव तो उसके एक भी आचरणसे जाहिर नहीं हुआ!"

"पर श्रद्धा तो नहीं दिखाई दी?"

आशु बाबूने कहा, "दिखाई देनेकी कोई बात भी नहीं थी मणि। बल्कि दिखाई देती तो उसका यह मिथ्याचार होता। मेरे अन्दर जिस चीज़को तुम लोग शक्तिकी बहुलता समझकर मुग्ध होते हो, उसकी नज़रमें वह खालिस शक्तिकी कमी है। यही बात उसने मुझसे कही है कि कमज़ोर आदमीको स्नेहके सहारे प्यार किया जा सकता है,—परन्तु मेरा जो मूल्य उसकी दृष्टिमें नहीं है, जबरदस्ती उसे देकर उसने मुझे भी नीचे नहीं गिराया और न अपना ही अपमान किया। यही तो ठीक है, इसमें व्यथित होनेकी तो कोई बात ही नहीं मणि।"

अब तक अजित अन्यमनस्क-सा था, इस बातपर उसने इधर देखा। वह कुछ भी जानता नहीं था और जान लेनेकी फुरसत भी उसे नहीं मिली थी। सारी बातें उसके लिए धुँधली-सी थीं,—अब आशु बाबूने जो कुछ कहा, उससे भी कुछ स्पष्ट नहीं हुआ, फिर भी उसका मन मानो जाग उठा।

मनोरमा चुप रही, किन्तु अविनाश बाबू उत्तेजनाके साथ पूछ उठे, "तो क्या फिर स्वार्थत्यागका कोई मूल्य ही नहीं?"

आशु बाबू हँस दिये, बोले, "प्रश्न ठीक प्रोफेसरों जैसा नहीं हुआ। जो भी हो,—उसके लिए उसका मूल्य नहीं है।"

"तो फिर आत्म-संयमकी भी कोई कीमत नहीं?"

"उसकी दृष्टिमें नहीं है। संयम जहाँ अर्थहीन है वहाँ सिर्फ निष्फल आत्म-पीडन है। और, उसीको लेकर अपनेको बड़ा मानना सिर्फ अपनेको ठगना नहीं, बल्कि दुनियाको भी ठगना है। कमलके मुँहसे जो कुछ सुना उससे मुझे लगा कि वह इसी बातको बार बार कहना चाहती है।" इतना कहकर वे क्षण-भर मौन रहे, फिर बोले, "मालूम नहीं उसे कहाँसे यह धारणा मिली, पर सहसा सुननेसे बड़ा आश्चर्य होता है।"

मनोरमा बोल उठी, "केवल आश्चर्य होता है! सारे शरीरमें जलन नहीं होने लगती? बापूजी, क्या कभी कोई भी बात तुम जोरके साथ नहीं कह सकोगे? जो जिसके मनमें आवेगा, कहेगा और तुम उसपर हाँ कह दोगे?

आशु बाबूने कहा, "हाँ तो नहीं कहा बेटी। लेकिन मनमें राग-द्वेष भरकर विचार करनेसे सिर्फ एक ही नहीं ठगाया जाता, दूसरा पक्ष भी ठगाया जाता है। जो बातें हम कमलके मुँहमें ठूँस देना चाहते हैं, ठीक वे ही बातें उसने नहीं कही। उसने जो कुछ कहा उसका निष्कर्ष शायद यही है कि इन

लम्बे संस्कारोंमें सत्य समझकर जिस तत्त्वको हमने अपने खूनके अन्दर प्राप्त किया है, वह प्रश्नका सिर्फ एक ही पहलू है। मगर उसका दूसरा पहलू भी है। आँख मीचकर सिर्फ सिर हिला देनेसे ही कैसे चल सकता है मणि?"

मनोरमाने कहा, "बापूजी, इतना काल बीत गया, भारतवर्षमें क्या उस पहलूको देखनेवाला दूसरा कोई हुआ ही नहीं?"

उसके पिता जरा हँसकर बोले, "यह अत्यन्त क्षोभकी बात है बेटी। नहीं तो तुम खुद भी अच्छी तरह जानती हो कि सिर्फ एक हमारे देशके ही नहीं, दुनियाके किसी भी देशके पुरखा 'शेष प्रश्न' का जवाब नहीं दे गये हैं। दे गये हों ऐसा हो भी नहीं सकता। क्योंकि तब तो फिर सृष्टि ही रुक जाती। इसके चलनेका कोई अर्थ ही नहीं रह जाता।"

सहसा उन्होंने देखा, अजित एकटक देख रहा है। बोले, "तुम शायद कुछ भी समझ नहीं पा रहे हो,—क्यों?"

अजितके गरदन हिलानेपर आशु बाबूने घटनाका पूर्वापर समझाकर कहा, "अक्षयने न जाने कैसी एक होमकुण्डकी-सी पवित्र आग जला दी कि लोग उसकी तरफ देखना तो दूर रहा धुएँके मारे आँख तक नहीं खोल सके। और, मजा यह कि हम लोगोंका मामला है शिवनाथके विरुद्ध, और दण्ड दिया गया है कमलको। वे थे यहाँके एक प्रोफेसर, शराब पीनेके अपराधमें उनकी नौकरी गई, रुग्ण स्त्रीको त्यागकर घर ले आये कमलको। बोले 'विवाह हुआ है शैव मतसे।' अक्षय बाबूने भीतर ही भीतर पता लगाकर जाना कि सब धोखा है। पूछा गया, 'लड़की क्या कुलीन घरानेकी है?' शिवनाथने कहा, 'वह उनके घरकी दासीकी कन्या है।' पूछा गया, 'लड़की क्या शिक्षित है?' शिवनाथने जवाब दिया, 'शिक्षाके लिए विवाह नहीं किया, किया है रूपके लिए।' बात सुनी। कमलका अपराध मुझे कहीं ढूँढ़े नहीं मिला अजित, और फिर भी उसीको हम लोगोंने सब संसर्गोंसे दूर कर दिया। हम लोगोंकी घृणा जाकर पड़ी सबसे बढ़कर उसीपर। और, यही हुआ समाजका न्याय!"

मनोरमाने कहा, "उसे क्या समाजके अन्दर बुला लेना चाहते हो बापूजी?"

आशु बाबूने कहा, "मेरे ही चाहनेसे आ जायगी क्या बेटी? समाजमें अक्षय बाबू भी तो मौजूद हैं,—उन्हींका तो पक्ष प्रबल है।"

लड़कीने पूछा, "तुम अकेले होते तो बुला लेते शायद?"

पिताने इसका स्पष्ट जवाब नहीं दिया, बोले, "बुलानेसे ही क्या सब आ जाया करते हैं बेटी ?"

अजितने कहा, "आश्चर्य तो यह है कि आपके साथ ही उनका सबसे ज्यादा विरोध है, और मजा यह कि आपका ही स्नेह उन्हें सबसे ज्यादा मिला है।"

अविनाशने कहा, "इसका कारण है अजित बाबू। कमलके बारेमें हम लोग कुछ जानते नहीं, जानते हैं तो सिर्फ उसके विद्रोही मतको। और जानते हैं उसके अखण्ड बुराईके पहलूको। इसीसे उसकी बातें सुननेसे हमें डर भी लगता है और गुस्सा भी आता है कि अब गया शायद सब-कुछ।"

फिर आशु बाबूको उद्देश करके कहने लगे, "इनका शरीर निष्पाप है, मन निष्कलुष है, सन्देहकी छाया तक इसपर नहीं पड़ती, न भयका दाग ही लगता है। महादेवके लिए चाहे विष हो, चाहे अमृत, एक ही बात है,—गलेमें ही हिलगा रहेगा, पेटमें नहीं जायगा। चाहे देवताओंका दल आ जाय और चाहे दैत्य-दानव आकर घेर लें, ये निर्लिप्त निर्विकार-चित्त रहेंगे,—सिर्फ गठियाके पंजेसे बचे रहें तो ये खुश हैं। मगर हम लोगोंको तो—"

बात पूरी न हो पाई कि अचानक आशु बाबूने दोनों हाथ उठाकर उन्हें रोक दिया, बोले, "आगे अब और कुछ न कहिएगा, आपके पैरों पड़ता हूँ। लगातार एक युगका युग विलायतमें बिता आया हूँ, वहाँ क्या किया है क्या नहीं, सो खुद मुझे भी याद नहीं,—पर यह बात अक्षयके कानों तक पहुँच गई तो खैर नहीं। एकदम नाड़ी-नक्षत्र तक ढूँढकर निकाल लायेगा। तब क्या होगा ?"

अविनाशने आश्चर्यके साथ कहा, "आप क्या विलायत भी गये थे ?"

आशु बाबूने कहा, "हाँ, वह कुकर्म भी मुझसे हो चुका है।"

मनोरमाने कहा, "बचपनसे ही बापूजीका सारा एजुकेशन योरोपमें हुआ है। बापूजी बैरिस्टर हैं। बापूजी डाक्टर हैं।"

अविनाशने कहा, "कहती क्या हो ?"

आशु बाबू उसी तरह कह उठे, "डरनेकी कोई बात नहीं, डरनेकी कोई बात नहीं प्रोफेसर, लिखा-पढा सब भूल गया हूँ। दीर्घकालसे यायावर-वृत्ति×

× वह भ्रमणवृत्ति जिसमें घर-बार साथ रहता है; Nomad=बनजारा या तद्रूप भ्रमणकारी।

अवलम्बन करके लड़कीके साथ जहाँ तहाँ लोटा-डोर लिये घूमा किया हूँ, और जैसा कि आपने कहा, सारा चित्त-पट बिलकुल धुल-पुछकर निष्पाप निष्कलुष हो गया है। धब्बा-अब्बा कहीं कुछ भी बाकी नहीं है। खैर, जो भी हो, इस बातको अक्षय बाबूके कर्णगोचर न कीजिएगा।"

अविनाशने हँसते हुए कहा, "अक्षयसे आपको बड़ा डर है!"

आशु बाबूने उसी वक्त स्वीकार किया, "हाँ। एक तो गठियाके मारे यों ही जीना कठिन है, उसपर उनका कहीं कुतूहल जाग्रत हो गया तो बिलकुल ही मारा जाऊँगा।"

मनोरमा गुस्सेमें भी हँस दी, बोली, "बापूजी, यह तुम्हारा बड़ा अन्याय है।"

बापूजीने कहा, "अन्याय भले ही हो बेटी, पर आत्म-रक्षाका सभीको अधिकार है।"

सुनकर सबके सब हँस पड़े। मनोरमाने पूछा, "अच्छा बापूजी, मनुष्य-समाजमें क्या अक्षय बाबू जैसे आदमीकी तुम जरूरत ही नहीं समझते?"

आशु बाबूने कहा, "तुम्हारा यह 'जरूरत' शब्द तो बेटी संसारमें सबसे ज्यादा गुटालेकी चीज है। पहले इसकी मीमांसा हो जाय, तब तुम्हारे प्रश्नका यथार्थ उत्तर दिया जाय। मगर वह तो कभी होनेका नहीं। हमेशासे उसको लेकर तर्क चलता आ रहा है, मीमांसा अब तक हुई ही नहीं।"

मनोरमा क्षुण्ण होकर बोली, "तुम सब बातोंके जवाबमें ऐसे ही बचकर निकल जाते हो बापूजी, कभी साफ साफ कुछ कहते ही नहीं। यह तुम्हारा बड़ा अन्याय है।"

आशु बाबू हँसते हँसते बोले, "साफ साफ कहने लायक विद्या-बुद्धि तेरे बापमें नहीं है, मणि,—यह तेरी तकदीर है। अब खामखा मेरे ऊपर गुस्सा करनेसे क्या लाभ है, बता?"

अजित अचानक उठ खड़ा हुआ, बोला, "सिरमें दर्द हो रहा है, जरा बाहर घूम आऊँ।"

आशु बाबू चंचल होकर बोल उठे "सिरका इसमें कोई अपराध नहीं बेटा,—मगर इतनी ओसमें? ऐसे अँधेरेमें?"

दक्षिणकी एक खुली खिड़कीसे बहुत-सी स्निग्ध ज्योत्स्ना नीचेके कार्पेटपर बिखर रही थी, अजितने उसकी ओर उनका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, "ओस शायद थोड़ी बहुत पड़ती होगी, पर अँधेरा नहीं है। जाऊँ, जरा घूम आऊँ।"

"पर पैदल मत घूमना।"

"नहीं। गाड़ीमें ही जाऊँगा।"

"गाड़ीका ढकना चढ़ा देना अजित, कहीं ओस न लग जाय।"

अजित राजी हो गया। आशु बाबूने कहा, "तो फिर अविनाश बाबूको भी उधरके उधर पहुँचाते जाना। लेकिन लौटनेमें देर न हो।"

"अच्छा," कहकर अजित अविनाश बाबूको साथ लेकर बाहर चला गया। उसके चले जानेपर आशु बाबूने मुसकराते हुए कहा, "देखता हूँ, इस लड़केकी मोटरमें घूमनेकी सनक अभी गई नहीं है। ऐसी ठंडमें चल दिया घूमनेको।"

८

पन्द्रहेक दिन बादकी बात है। शाम होनेमें देर नहीं है, आशु बाबू और मनोरमाको अविनाश बाबूके घर उतारकर अजित अकेला घूमने निकला है। ऐसा वह अकसर किया करता है। जो सड़क शहरके उत्तरसे आकर कालेजके सामनेसे कुछ दूर जाके सीधी पश्चिमकी ओर चली गई है, उसीपर एक निराली जगहमें सहसा उच्च नारी-कण्ठसे अपना नाम सुनकर अजित चौंक पड़ा। गाड़ी रोक दी। देखा, शिवनाथकी स्त्री है। सड़कके किनारे टूटा-फूटा पुराने जमानेका एक दुमंजिला मकान है, सामने उसके वैसा ही श्रीहीन फूलोंका बगीचा है और उसीके एक किनारे खड़ी कमल हाथ उठाकर उसे पुकार रही है। मोटर ठहरनेपर वह उसके पास आ गई, बोली, "एक दिन और भी आप ऐसे ही अकेले जा रहे थे, मैंने कितना पुकारा, पर आप सुन ही नहीं पाये। पायेंगे कैसे? बाप रे बाप! इतने जोरसे जाते हैं,—देखनेसे मालूम होता है जैसे दम रुक जायगा। आपको डर नहीं लगता?"

अजित गाड़ीसे नीचे उतर आया, बोला, "आप अकेली कैसे? शिवनाथ बाबू कहाँ हैं?"

कमलने कहा, "वे घरपर नहीं हैं। पर आप भी अकेले कैसे निकले? उस दिन भी देखा था, साथमें कोई नहीं था।"

अजितने कहा, "नहीं। इधर कई दिनोंसे आशु बाबूकी तबीयत ठीक नहीं थी, इसीसे वे कोई निकले नहीं। आज उन लोगोंको अविनाश बाबूके यहाँ उतारकर मैं घूमने निकला हूँ। शामको तो मुझे घरमें रहना अच्छा नहीं लगता।"

कमलने कहा, "मेरा भी यही हाल है। मगर 'अच्छा नहीं लगता,' कहनेसे ही तो नहीं चलता,—गरीबोंको तो बहुत-कुछ अच्छा 'लगाना' पड़ता है।" कहकर वह अजितके मुँहकी तरफ देखने लगी; फिर सहसा बोल उठी, "ले चलिएगा मुझे साथमें? जरा घूम आऊँगी।"

अजित मुसीबतमें पड़ गया। साथमें आज शोफर तक नहीं था और यह वह पहले ही सुन चुका था कि शिवनाथ बाबू भी घरपर नहीं हैं, मगर 'ना' भी कहते नहीं बनता। जरा कुछ दुविधाके साथ बोला, "यहाँ आपका साथी-सङ्गी भी शायद कोई नहीं है?"

कमलने कहा, "सुनो इनकी बात! साथी-संगी कहाँ पाऊँ? देख नहीं रहे हैं मुहल्लेकी दशा! यह स्थान शहरके बिलकुल बाहर ही समझिए। पास ही शाहगंजमें, या कुछ ऐसा ही नाम है, कहीं चमड़ेका कारखाना है,—हमारे पड़ोसी सब मोची ही मोची हैं। कारखाने जाते हैं, आते हैं, शराब पीते हैं और सारी रात हल्ला मचाते हैं;—यही मेरा मुहल्ला है।"

अजितने पूछा, "इधर शरीफ लोग हैं ही नहीं क्या?"

कमलने कहा, "शायद नहीं हैं। और हों भी तो क्या,—मुझे वे अपने घर क्यों जाने आने देंगे? तब तो कभी कभी जब बहुत सूना सूना-सा मालूम होता था आप लोगोंके यहाँ भी चली जा सकती थी।"—कहते कहते वह गाड़ीके खुले दरवाजेसे खुद ही भीतर जाकर बैठ गई और बोली, "आइए, मैं बहुत दिनोंसे मोटरपर नहीं चढ़ी। लेकिन आज मुझे बहुत दूर तक घुमा लाना होगा।"

अजितको कुछ सूझा नहीं कि क्या करना चाहिए। संकोचके साथ बोला, "ज्यादा दूर जानेसे रात बहुत हो जायगी। शिवनाथ बाबू घर लौटकर आपको न देखेंगे तो शायद कुछ खयाल करेंगे।"

कमलने कहा, "नः, खयाल करनेकी कोई बात ही नहीं।"

अजितने कहा, "ड्राइवरके पास न बैठकर पीछे बैठिए न?"

कमलने कहा, "ड्राइवर तो आप खुद ही हैं। पास बिना बैठे बातें कैसे करूँगी? इतनी दूर पीछे बैठकर मुँह बन्द करके कहीं जाया जाता है? आप बैठिए; अब देर न कीजिए।"

अजित बैठ गया और गाड़ी चलाने लगा। रास्ता सुन्दर और निर्जन है, कदाचित् एक-आध आदमी दिखाई दे जाता है,—बस। गाड़ीकी तेज चाल

क्रमशः और भी तेज होने लगी। कमलने कहा, "आप तेज चलाना पसन्द करते हैं, न ?"

अजितने कहा, "हाँ।"

"डर नहीं लगता ?"

"नहीं। मुझे आदत पड़ गई है।"

"आदत ही सब कुछ है।" कहकर कमल क्षण-भर मौन रही, फिर बोली, "मगर मुझे तो आदत नहीं, फिर भी यह मुझे अच्छा लग रहा है। शायद स्वभाव है, इसीलिए न ?"

अजितने कहा, "हो सकता है।"

कमलने कहा, "जरूर। हालाँ कि विपत्ति आ सकती है,—जो चढ़ते हैं उनपर भी और जो दब जाते हैं उनपर भी,—ठीक है न ?"

अजितने कहा—"नहीं, दबेंगे क्यों ?"

कमलने कहा, "दब भी जायँ तो क्या नुकसान है अजित बाबू ? तेजीका भी एक भारी आनन्द है,—क्या गाड़ीकी और क्या इस जीवनकी। मगर जो डरपोक हैं वे नहीं चल सकते। वे सावधानीसे धीरे धीरे चलते हैं। सोचते हैं, पैदल चलनेका कष्ट जो बच गया वही उनके लिए काफी है। मार्गको धोखा देकर वे खुश हैं, अपनेको धोखा देनेका उन्हें भान ही नहीं होता। ठीक है न अजित बाबू ?"

बात अजितके कुछ समझमें नहीं आई, उसने कहा, "इसके मानी ?"

कमल उसके मुँहकी तरफ देखकर जरा हँस दी। क्षण-भर बाद सिर हिलाकर बोली, "मानी नहीं, यों ही।"

इतना-भर समझमें आया कि बात वह खुलासा नहीं समझाना चाहती और कुछ नहीं।

अँधेरा और भी गाढ़ा होता आ रहा है; अजितने लौटना चाहा; कमलने कहा, "अभीसे ? चलिए और थोड़ा जायँ।"

अजितने कहा, "बहुत दूर आ गये हैं, वापस पहुँचनेमें काफी रात हो जायगी।"

कमलने कहा, "हो जाय तो क्या हर्ज है ?"

"लेकिन शिवनाथ बाबू नाखुश होंगे।"

कमलने कहा, "हो जाने दीजिए।"

अजित मन ही मन विस्मित हुआ, बोला, " मगर आशु बाबू वगैरहको घर ले जाना है। देर हो जानेसे अच्छा नहीं होगा। "

कमलने जवाब दिया, " आगरा शहरमें तो गाड़ियोंकी कमी है नहीं, वे आसानीसे जा सकते हैं। चलिए और भी जरा। " इस तरह कमल मानो उसे जबरदस्ती क्रमशः आगेकी ओर धकेल धकेल कर ले जाने लगी।

क्रमशः सुनसान रास्ता अत्यन्त जनशून्य और रातका अँधेरा गाढ़से गाढ़तर होने लगा, और चारों तरफका दिगन्त-विस्तृत मैदान अत्यन्त स्तब्ध हो उठा। सहसा अजितने एक क्षणमें उद्विग्न चित्तसे गाड़ीकी रफ्तार रोक दी; और कहा, " अब और नहीं, लौट चलिए। "

कमलने कहा, " चलिए। "

वापस लौटते हुए उसने धीरे धीरे कहा, " सोच रही थी, मनुष्य झूठके साथ समझौता करके जीवनकी कितनी सम्पदा नष्ट कर डालता है। मुझे अकेली ले जानेमें आपको कितना असीम संकोच हो रहा था। मैं भी अगर उसी डरसे पीछे हट जाती तो मेरे भाग्यमें ऐसा आनन्द थोड़े ही बदा था। "

अजितने कहा, " पर अन्त तक विना देखे निश्चयपूर्वक तो कुछ कहा नहीं जा सकता। घर जाकर आनन्दके बदले निरानन्द भी तो भाग्यमें बदा हो सकता है। "

कमलने कहा, " इस अन्धकारमय निर्जन पथमें अकेली आपके पास बैठकर ऊर्ध्वश्वाससे न जाने कितनी दूरतक घूम आई। आज मुझे कितना अच्छा लगा है, कुछ कह नहीं सकती। "

अजितने समझा, कमलने उसकी बातपर ध्यान नहीं दिया, मानो वह अपनी बात अपनेको ही सुनाती जा रही है। सुनकर वास्तवमें शरमानेकी बात उसमें शायद कुछ भी न हो, किन्तु फिर भी पहले वह मानो संकुचित-सा हो उठा। इस स्त्रीके सम्बन्धमें विरुद्ध कल्पना और अशुभ जनश्रुतिके सिवा शायद कोई भी कुछ नहीं जानता,—जितना जानते हैं वह भी संभव है बहुत कुछ झूठ हो,—और सत्य जो कुछ है उसमें भी शायद असत्यकी छाया ऐसी घनघोर पड़ गई हो कि पहचाननेका कोई रास्ता ही न रहा हो। और, जो जी चाहे तो जाँचकर बता सकते हैं वे बताते नहीं, उनके लिए सबका सब बिलकुल खालिस मज़ाक है।

अजित चुप रहा, इसीसे कमलको मानो चैतन्य-सा हो आया। बोली,

"हाँ, क्या कह रहे थे, घर जाकर आनन्दके बदले निरानन्द भाग्यमें बदा हो सकता है ? हो क्यों नहीं सकता !"

अजितने कहा, "तब फिर ?"

कमलने कहा, "तब भी उससे यह साबित नहीं होता कि जो आनन्द आज मिला है वह नहीं मिला।"

अबकी बार अजित हँस दिया। बोला, साबित नहीं होता; मगर यह साबित जरूर होता है कि आप कम तार्किक नहीं हैं। आपके साथ बातोंमें जीतना मुश्किल है।"

"अर्थात् जिसको कि कूट-तार्किक कहते हैं, मैं वही हूँ ?"

अजितने कहा, "नहीं, सो बात नहीं; किन्तु यह तो आप जरूर ही मानती होंगी कि अन्तिम फल जिसका दुःखमें ही समाप्त होता है, उसके आरंभमें चाहे कितना ही आनन्द क्यों न हो, उसे सचमुचका आनन्द-भोग नहीं कहा जा सकता ?"

कमलने कहा, "नहीं, मैं नहीं मानती। मैं मानना चाहती हूँ कि जब जितना पाऊँ उसीको सच्चा समझकर मान सकूँ। दुःखका दाह मेरे बीते हुए सुखकी ओसकी बूँदोंको सुखा न डाले। वह चाहे कितना भी क्यों न हो और परिणाम उसका संसारकी दृष्टिमें चाहे कितना ही तुच्छ क्यों न गिना जाय, फिर भी मैं उसे अस्वीकार न करूँ। एक दिनका आनन्द दूसरे दिनके निरानन्दके सामने शरमाये नहीं।" इतना कहकर वह क्षण-भर स्तब्ध रही, फिर कहने लगी, "इस जीवनमें सुख-दुःख दोनोंमेंसे कोई भी सत्य नहीं अजित बाबू, सत्य हैं सिर्फ उनके चंचल क्षण, सत्य है सिर्फ उनके चले जानेका छन्द-मात्र। बुद्धि और हृदयसे उनको पाना ही तो यथार्थका पाना है। क्या यही ठीक नहीं है ?"

इस प्रश्नका उत्तर अजित न दे सका; किन्तु उसे लगा कि अन्धकारमें भी दूसरेकी दोनों आँखें अत्यन्त आग्रहके साथ उसकी तरफ देख रही हैं। मानों वह निश्चित कोई बात सुनना चाहती है।

"क्यों, जवाब नहीं दिया ?"

"आपकी बातें खूब साफ समझमें नहीं आईं।"

"नहीं आईं ?"

"नहीं।"

उसने एक दबी साँस ली, और फिर धीरे धीरे कहा, "इसके मानी यह कि साफ साफ समझनेका अभी आपका समय नहीं आया। अगर कभी आये तो उस समय मेरी याद कर लीजिएगा। करेंगे?"

अजितने कहा, "करूँगा।"

गाड़ी आकर टूटे-फूटे फूल-बागके सामने खड़ी हो गई। अजित दरवाजा खोलकर खुद सड़कपर खड़ा हो गया। घरकी तरफ देखकर बोला, "कहीं भी जरा उजाला नहीं मालूम होता। मालूम होता है, सब सो गये।"

कमलने उतरते हुए कहा, "शायद।"

अजितने कहा, "देखिए, आपकी ज्यादती है न! किसीको जता भी नहीं गई,—शिवनाथ बाबू न जाने कितनी दुश्चिन्तामें पड़े होंगे।"

कमलने कहा, "हाँ, वे दुश्चिन्ताके बोझसे सो गये हैं।"

अजितने पूछा, "ऐसे अँधेरेमें जायँगी कैसे? गाड़ीमें एक हाथ-लालटेन है, उसे जलाकर साथ चलूँ?"

कमलने अत्यन्त खुश होकर कहा, "तब तो फिर कहना ही क्या है अजित बाबू। आइए आइए, आपको जरा चाय पिला दूँ।"

अजितने अनुनयके स्वरमें कहा, "और जो भी हुक्म करेंगी, तामील करूँगा; मगर इतनी रातमें चाय पीनेकी आज्ञा न कीजिए। चलिए, अपको पहुँचाए आता हूँ।"

बाहरका दरवाजा हाथ लगाते ही खुल गया। भीतरके बरामदेमें वहींकी एक दासी सो रही थी, वह आहट पा जागकर बैठ गई। दोमंजिला मकान है। ऊपर छोटे छोटे दो कमरे हैं। अत्यन्त संकीर्ण जीना है, उसके नीचे हरीकेन लालटेन टिमटिमा रही है। उसे हाथमें उठाकर कमलने अजितको ऊपर बुलाया। वह मारे संकोचके व्याकुल होकर बोला, "नहीं नहीं, अब जाता हूँ। बहुत रात हो गई है।"

कमल जिद करने लगी, "सो नहीं होनेका, आइए।"

अजित फिर भी दुबिधा कर रहा है, देखकर कमलने कहा, "आप सोच रहे हैं, आनेसे शिवनाथ बाबूके सामने बड़ी शर्मकी बात होगी। मगर यह क्यों नहीं सोचते कि नहीं आनेसे मेरे लिए तो और भी ज्यादा लज्जाकी बात होगी? आइए। नीचेसे ही इस तरह अनादरके साथ आपको जाने देनेसे रातको मुझे नींद न आयेगी।"

अजितने ऊपर आकर देखा कि घरमें चीज-वस्त नहींके बराबर है। एक कम कीमतकी आराम-कुरसी, एक छोटी-सी टेबिल, एक स्टूल, कई ट्रंक, एक किनारे पुरानी लोहेकी खाट और उसपर बिस्तर-तकियोंका ढेर पड़ा हुआ है,—ऐसे बेढंगे तौरपर रखे हैं, जैसे साधारणतः उन सबकी कोई जरूरत ही नहीं पड़ती। घर सूना है, शिवनाथ बाबू नहीं हैं।

अजितको आश्चर्य हुआ, किन्तु मन ही मन उसने सन्तोषकी साँस ली, बोला—"कहाँ, वे तो अभी तक आये नहीं?"

कमलने कहा, "नहीं।"

अजितने कहा, "आज शायद हम लोगोंके यहाँ उनका गाना-बजाना खूब जोरसे चल रहा होगा।"

"कैसे जाना?"

"कल-परसों दो दिन गये नही हैं। आज उन्हें पाकर आशु बाबू शायद सारी क्षति पूर्ति कराये ले रहे हैं।"

कमलने पूछा, "रोज जाते हैं, इधर दो दिन गये क्यों नहीं?"

अजितने कहा, "इसकी खबर हम लोगोंसे आपको ही ज्यादा होगी। सम्भवतः आपने छोड़ा नहीं होगा, इसीसे नहीं जा पाये होंगे। नहीं तो उन्हें देखनेसे ऐसा तो नहीं मालूम होता कि अपनी इच्छासे गैरहजिर हुए हों।"

कमल कुछ क्षण उसके चेहरेकी तरफ देखकर अकस्मात् हँस दी। बोली, "यह किसे मालूम कि वे वहाँ जाते हैं गानेके लिए। वास्तवमें, किसी आदमीको पकड़कर रखना बड़ा अन्याय है। है न?"

अजितने कहा, "जरूर।'

कमलने कहा, "वे भले आदमी हैं, इसीसे। अच्छा, आपको अगर कोई पकड़के रखता, तो आप रहते?"

अजितने कहा, "नहीं। इसके सिवा मुझे पकड़के रखनेवाला भी तो नहीं है?"

कमल हँसती हुई दो-तीन बार सिर हिलाकर बोली, "यही तो मुश्किल है। पकड़के रखनेवाला कौन कहाँ छिपा रहता है, जाननेका उपाय ही नहीं। यही देखिए न, मैंने जो शामसे आपको पकड़ रक्खा है, इसकी आपको खबर ही नहीं। खैर रहने दीजिए, सभी बातोंपर तर्क करनेसे लाभ क्या होगा? मगर बातों ही बातोंमें देर हुई जा रही है। जाऊँ मैं, उस कमरेमेंसे

आपके लिए चाय बना लाऊँ ?"

"और यहाँ मैं अकेला चुप मारे बैठा रहूँ ? सो नहीं होनेका।"

"होनेकी जरूरत भी क्या है ?" इतना कहकर कमल उसे अपने साथ दूसरे कमरेमें ले गई और उसके बैठनेके लिए नया आसन बिछाकर बोली, "बैठिए। पर विचित्र हैं इस दुनियाकी बातें, अजित बाबू। उस दिन इस आसनको अपनी पसन्दसे खरीदते वक्त सोचा था, कि इसे बिछाकर किसीसे बैठनेके लिए कहूँगी,—लेकिन वह बात तो और किसीसे कही नहीं जा सकती, अजित बाबू, फिर भी आपको बैठनेके लिए बिछा ही दिया। भला बतलाइए, कितने-से समयका अन्तर है यह!"

इसके मानी क्या हुए, सोचना बड़ा मुश्किल है। हो सकता है कि बहुत ही आसान हो, और यह भी सम्भव है कि उससे भी ज्यादा दुरूह हो। फिर भी, अजित मारे शरमके सुर्ख हो उठा। कहनेमें हिचकिचाया, मगर फिर भी बोला, "उन्हें बैठनेको दिया क्यों नहीं ?"

कमलने कहा, "यही तो आदमीकी जबरदस्त भूल है। सोचता है, सब कुछ उसीके अपने हाथमें है, लेकिन कहाँ बैठा हुआ कौन सारा हिसाब-किताब उलट-पलट देता है, कोई पता ही नहीं। आपकी चायमें क्या चीनी ज्यादा डालूँ ?"

अजितने कहा, डाल दीजिए। चीनी और दूधके लोभसे ही तो मैं चाय पीता हूँ, नहीं तो उससे मुझे कोई दिलचस्पी नहीं।"

कमलने कहा, "मैं भी ऐसी ही हूँ। क्यों लोग यह पीया करते हैं, मेरी तो कुछ समझमें ही नहीं आता। और मजा यह कि इसीके देशमें मेरा जन्म है।"

"आपकी जन्म-भूमि क्या आसाममें है ?"

"सिर्फ आसाममें ही नहीं, एकदम चायके बगीचेमें।"

"तो भी चायमें रुचि नहीं ?"

"बिलकुल नहीं। लोग दे देते हैं तो पी लेती हूँ सिर्फ शराफतके खातिर।"

अजित चायका प्याला हाथमें ले चारों तरफ देखकर बोला, "यह शायद आपका रसोईघर है ?"

कमलने कहा, "हाँ।"

अजितने पूछा, "आप खुद ही बनाती होंगी ? मगर कहाँ, आज तो बनानेका वक्त नहीं मिला ?"

कमलने कहा, "नहीं।"

अजित बगलें झाँकने लगा। कमल उसके मुँहकी ओर देखकर हँसती हुई बोली, "अब पूछिए कि तब आप खायँगी क्या? उसके जवाबमें मैं कहूँगी, रातको मैं खाती ही नहीं। दिनमें सिर्फ एक ही बार खाती हूँ।"

"सिर्फ एक ही बार?"

कमलने कहा, "हाँ। मगर इसके बाद ही आपको खयाल होना चाहिए कि 'तो फिर शिवनाथ बाबू घर आकर क्या खायेंगे? उनका तो कोई एक-आध बार खानेका मामला नहीं! तब फिर?' इसके उत्तरमें मैं कहूँगी कि 'वे तो आप ही लोगोंके यहाँ खा-पी आते हैं,—उन्हें क्या फिकर है?' आप कहेंगे, 'सो तो ठीक है, मगर रोज तो ऐसा नहीं होता?' सुनके मैं सोचूँगी, 'इस बातका जवाब दूसरोंको देनेसे लाभ ही क्या?' पर इससे आपको सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता। तब मजबूर होकर कहना ही पड़ेगा, 'अजित बाबू, आप लोगोंके लिए डरनेकी कोई बात नहीं। वे यहाँ अब नहीं आते। शैव-विवाहकी शिवानीका मोह शायद अब दूर हो चुका है।"

अजित वास्तवमें इस बातके मानी नहीं समझ सका। गमीर विस्मयके साथ उसके मुँहकी तरफ देखकर पूछने लगा, "इसके मानी? आप क्या गुस्सेमें कह रही हैं?"

कमलने कहा, "नहीं गुस्सेमें नहीं। गुस्सा करने लायक शायद आज मुझमें जोर भी नहीं रहा। मैं समझती थी, पत्थर खरीदनेके लिए वे जयपुर गये हैं, आपसे ही पहले-पहल यह खबर मिली कि वे आगरा छोड़कर अब तक कहीं नहीं गये हैं। चलिए, उस कमरेमें चलकर बैठें।"

उस कमरेमें जाकर कमलने कहा, "यही हम लोगोंका सोनेका कमरा है। तब भी इससे ज्यादा एक भी चीज यहाँ नहीं थी,—आज भी नहीं है। किन्तु उस दिन इन सब चीजोंका चेहरा देखते तो आज मुझे कहना भी नहीं पड़ता कि मैं गुस्सा नहीं हुई। लेकिन आपको तो बहुत ज्यादा रात हो रही है अजित बाबू, अब तो देर करनेसे काम नहीं चलेगा।"

अजित उठके खड़ा हो गया, बोला, "हाँ, तो फिर आज चलता हूँ मैं।"

कमल साथ साथ उठ खड़ी हुई।

अजितने कहा, "अगर आज्ञा हो तो कल आऊँ?"

"हाँ, आइएगा।" कहती हुई वह पीछे पीछे नीचे उतर आई।

अजित कुछ देर तक बगलें झाँककर बोला, "अगर कुछ कसूर न समझें तो एक बात पूछूँ—शिवनाथ बाबू कितने दिन हुए नहीं आये?"

"हो गये बहुत दिन।" कहती हुई वह हँस दी। अजितको लालटेनके उजालेमें स्पष्ट दिखाई दिया कि इस हँसीकी जात ही न्यारी है। उसके पहले-की हँसीसे इसका कहीं भी कोई सादृश्य नहीं।

९

अजित जब घर लौटा तब रात गहरी हो गई थी। सड़क सुनसान थी; सन्नाटा छाया हुआ था, दुकानें सब बन्द हो चुकी थीं,—आदमीका कहीं नामनिशान तक न था। घड़ी खोलकर देखा तो मालूम हुआ कि वह चाबीके अभावमें आठ ही बजे बन्द हो चुकी है। अभी शायद एक बजा होगा, या दो बजे होंगे,—ठीक कितने बजे हैं, कुछ अन्दाज नहीं कर सका। यह निश्चित है कि आशु बाबूके घर अब तक सब अत्यन्त चिन्तित हो रहे होंगे, सोनेकी बात तो दूर रही, खाना-पीना तक शायद बन्द होगा। घर पहुँचकर वह क्या कहेगा, कुछ सोच न सका। सत्य घटना तो कही नहीं जा सकती। यह तर्क व्यर्थ है कि क्यों नहीं कही जा सकती।—बल्कि झूठ कहा जा सकता है, मगर, झूठ बोलनेकी उसे आदत नहीं थी। नहीं तो, मोटरमें अकेले निकलकर देर होनेका कारण ढूँढ़ निकालनेमें इतनी चिन्ता नहीं करनी पड़ती।

गेट खुला था। दरवानने सलाम करके कहा कि शोफर नहीं है, वह आपको ढूँढ़ने गया है। गाड़ी अस्तबलमें रखकर अजित आशु बाबूकी बैठकमें गये। घुसते ही देखा कि वे अभी तक सोने नहीं गये हैं, अस्वस्थ शरीर लिये अकेले बैठे उसकी बाट देख रहे हैं। वे उद्वेगसे सीधे होकर बैठ गये और बोले, "आ गये। मैं बार बार यही सोच रहा था कि कोई ऐक्सिडेंट हो गया होगा। कितनी बार तुमसे कह चुका हूँ कि दूरके रास्तेमें कभी अकेले नहीं निकलना चाहिए। बूढ़ेकी बात आखिर सामने आई न! शिक्षा तो मिली?"

अजित शरमिन्दा होकर जरा हँस दिया, बोला, "आप लोगोंको इतनी दुश्चिन्तामें डाल दिया, इसके लिए मैं अत्यन्त दुःखित हूँ।"

"दुःख कल करना। घड़ीकी तरफ नजर उठाकर देखो, दो बज रहे हैं। थोड़ा-बहुत खा-पीकर सो जाओ जाके। कल सुनूँगा सारी बातें। जदु, ओ जदुआ!—वह भी नालायक चला गया क्या तुम्हें ढूँढ़ने?"

अजितने कहा, "देखिए तो आप लोगोंकी कितनी ज्यादती है! इतने बड़े शहरमें भला वह कहाँ मुझे गली गली ढूँढ़ता फिरेगा?"

आशु बाबूने कहा, " तुमने तो कह दिया 'ज्यादती है'; मगर हम लोगोंको कैसा लग रहा था सो हम ही जानते हैं। ग्यारह बजे शिवनाथका गाना खतम हुआ, तबसे,—मणि गई कहाँ? उसे भी तो तबसे नहीं देख रहा हूँ?"

अजितने कहा, " शायद सो गई होगी।"

" सोयेगी कैसे जी? अभीतक उसने खाया भी नहीं है।" कहते कहते सहसा उन्हें एक बात याद आ गई, बोले " अस्तबलमें कोचवानको देखा था क्या?"

आजितने कहा, " नहीं तो।"

" तब तो हो गया!" कहकर वे दुश्चिन्ताके मारे फिर एक बार उठके सीधे बैठ गये, बोले, " जो सोचा था वही हुआ। मालूम होता है, गाड़ी लेकर वह भी गई ढूँढने। देखो तो कैसी परेशानीमें डाल गई। इस डरसे कि कहीं मैं मना न कर दूँ, जरा कुछ कह तक नहीं गई, चुपके-से चली गई। कौन जाने कब लौटेगी! आजकी रात, मालूम होता है, कोरी आँखों ही बीतेगी।"

" मैं देखता हूँ जाके, गाड़ी है या नहीं।" कहता हुआ अजित बाहर चला गया। अस्तबलमे जाकर देखा कि गाडी मौजूद है और घोड़े बीच-बीचमें पैर पटकते हुए मजेमे घास खा रहे हैं। उसकी एक दुश्चिन्ता मिटी।

नीचेके बरामदेके उत्तरकी तरफ कुछ विलायती झाऊ और पामके पेड़ जबरदस्त लापरवाहीके साथ खड़े थे।—उनके ऊपर ही मनोरमाका सोनेका कमरा है। यह देखनेके लिए कि अब तक कमरेमें बत्ती जल रही है या नहीं, अजित उस तरफसे घूमकर आशु बाबूके पास आ रहा था। इतनेमें झाड़ीमेंसे किसीकी आवाज सुनाई दी। अत्यन्त परिचित कण्ठ था। बात हो रही थी किसी एक गानेके स्वरके विषयमें। कोई बुरी बात नहीं थी,—किन्तु फिर भी उसके लिए पेड़-पौधोके झुरमुटमें बैठनेकी जरूरत नहीं थी। क्षण-भरके लिए अजितके दोनों पैर निर्जीव-से हो गये, पर क्षण-भरके लिए ही। आलोचना चलने लगी और वह जैसे चुपचाप आया था वैसे ही चुपकेसे चल दिया। उन दोनोंमेंसे कोई भी न जान सका कि उनके इन निशीथकालीन विश्रम्भालापका कोई साक्षी है।

आशु बाबूने व्यग्र होकर पूछा, " पता लगा?"

अजितने कहा, " गाड़ी-घोड़ा अस्तबलमें ही है। मणि बाहर नहीं गई।"

" खैर जानमें जान आई, " कहकर आशु बाबूने निश्चिन्त परितृप्तिका दीर्घ श्वास लिया, फिर कहा, " रात बहुत हो चुकी है, शायद वह थक थकाकर घरमें जाके सो गई होगी। देखता हूँ कि आज लड़कीका खाना नहीं हुआ। जाओ बेटा, थोड़ा-बहुत खाकर तुम भी सो जाओ।"

अजितने कहा, " इतनी रात गये मैं अब न खाऊँगा, आप सोने जाइए।"

" जाता हूँ। पर तुम कुछ भी न खाओगे ? जरा कुछ खा-पीकर—"

" नहीं, कुछ नहीं। आप देर न करें। सोने जायँ।" इतना कहकर उ.. रुग्ण आदमीको भीतर भेजकर अजित अपने कमरेमें चला गया और वहाँ खुली हुई खिड़कीके पास जाकर खड़ा रहा। वह निश्चित जानता था कि स्वर-सम्बन्धी आलोचना खतम होनेपर पिताकी खबर लेनेको मनोरमा इधर एक बार जरूर ही आयेगी।

मणि आई, पर लगभग आध घंटे बाद। पहले उसने पिताकी बैठकके सामने जाकर देखा, कमरेमें अँधेरा है। यदु शायद पास ही कहीं जाग रहा था; मालिकके पुकारनेपर उसने जवाब तो नहीं दिया था, पर उनके चले जानेपर बत्ती बुता दी थी। मनोरमाने क्षण-भर इधर उधर करके मुँह फेरा तो देखा कि अजित अपने कमरेमें खुली खिड़कीके पास चुपचाप खड़ा है। उसके कमरेमे भी बत्ती नहीं जल रही थी, लेकिन सहनके ऊपरके बरामदेसे क्षीण प्रकाशकी किरणें आकर उसकी खिड़कीपर पड़ रही थीं।

" कौन ? "

" मैं हूँ, अजित। "

" वाह ! कब आ गये ? बापूजी शायद सोने चले गये। " कहकर मनोरमाने मानो जरा चुप रहनेकी कोशिश की, परन्तु असमाप्त बातकी रफ्तारने उसे रुकने रहीं दिया। कहने लगी, " देखो तो तुम्हारा कैसा अविचार है ! घर-भरके लोग मारे फिक्रके परेशान होते रहे,—जरूर कुछ न कुछ हुआ होगा। इसीसे बापूजी बार बार मना करते हैं अकेले जानेके लिए। "

इन सब प्रश्नों और मन्तव्योंका अजितने कुछ भी जवाब नहीं दिया।

मनोरमाने कहा, " मगर उन्हें नींद हरगिज न आई होगी। जरूर जगा रहे होंगे। उन्हें जरा खबर तो कर दूँ। "

अजितने कहा, "जरूरत नहीं। वे मुझे देखके ही सोये हैं।"
"देखके सोये हैं? तो फिर मुझे खबर क्यों नहीं दी?"
"उन्होंने समझा कि तुम सो गई हो।"
"सो कैसे जाती? अब तक तो मैंने खाया भी नहीं है।"
"तो खाके सो जाओ। रात अब ज्यादा नहीं है।"
"तुम नहीं खाओगे?"
"नहीं।" कहकर अजित खिड़कीके पाससे हट गया।
"वाह, अच्छे रहे!" इससे ज्यादा बात उसके मुँहसे न निकली। मगर भीतरसे भी फिर कोई जवाब न आया। बाहर मनोरमा स्तब्ध खड़ी रही। उसमें मनामुनूकर, गुस्सा होकर अपनी जिद कायम रखने लायक जोर नहीं रहा,—न मालूम किसने उसका मुँह कसके बन्द कर दिया। अजित रात खतम करके घर लौटा है, घर-भरमें सबकी दुश्चिन्ताका अन्त नहीं। उसीने खुद इतना बड़ा अपराध करके उसके अपमानकी हद कर दी; और फिर भी जरा-सा प्रतिवाद करनेकी भाषा तक उसकी ज़बानपर न आई। और, सिर्फ जीभ ही निर्वाक् नहीं हुई, बल्कि सारी देह ही मानो कुछ क्षणोंके लिए लाचार हो रही। खिड़कीपर कोई वापस नहीं आया। यह जाननेकी भी किसीने ज़रूरत नहीं समझी कि वह रही या चली गई। गहरी निशीथ रात्रिमें उसी तरह चुपचाप खड़ी रहकर बहुत देर बाद वह धीरे धीरे चली गई।
सवेरे ही नौकरके जरिए आशु बाबूको मालूम हुआ कि कल रातको अजित या मनोरमा दोनोंमेंसे किसीने भी नहीं खाया। चाय पीते वक्त उन्होंने उत्कण्ठाके साथ पूछा, "कल जरूर ही कोई जबदस्त ऐक्सिडेण्ट हो गया था, हुआ था न?"
अजितने कहा, "नहीं।"
"तो फिर अचानक तेल निबट गया होगा?"
"नहीं, तेल काफी था।"
"तो फिर इतनी देर कैसे हो गई?"
अजितने सिर्फ कहा, "ऐसे ही।"
मनोरमा खुद चाय नहीं पीती। उसने पिताको चाय देकर एक प्याला चाय और नाश्तेकी तश्तरी अजितकी ओर बढ़ा दी; पर न तो कोई बात पूछी और न मुँह उठाकर उसकी ओर देखा। दोनोंके इस भाव-परिवर्तनको पिता

ताड़ गये। नाश्ता करके अजित जब नहाने चला गया तब लड़कीको एकान्तमें पाकर उद्विग्न कण्ठसे बोले, "नहीं बेटी, यह बात अच्छी नहीं। अजितके साथ हम लोगोंका सम्बन्ध चाहे जितना भी घनिष्ठ क्यों न हो, फिर भी घरमें वे अतिथि हैं। अतिथिके योग्य सम्मान उनका होना ही चाहिए।"

मनोरमाने कहा, "मैंने तो नहीं कहा बापूजी, कि नहीं होना चाहिए।"

"नहीं नहीं, 'नहीं कहा' यह सच है; लेकिन हमारे आचरणसे किसी तरहकी विरक्ति या लापरवाही होना भी अपराध है।"

मनोरमाने कहा, "सो मानती हूँ। पर तुमने किससे सुना कि मेरे आचरणसे अपराध बन पड़ा है?"

आशु बाबू इस प्रश्नका जवाब न दे सके। उन्होंने सुना कुछ भी नहीं, न कुछ जानते ही हैं, सब कुछ उनका अनुमान-मात्र है। फिर भी मन उनका प्रसन्न न हुआ। कारण, इस तरहसे बहस की जा सकती है किन्तु उत्कण्ठित पिताके चित्तको निःशङ्क नहीं किया जा सकता। थोड़ी देर बाद उन्होंने धीरे धीरे कहा, "उतनी रातमें अजितने फिर खाना नहीं चाहा, और मैं भी सोने चला गया; तुम तो पहले ही सो गई थीं,—न जाने कहाँसे, हो सकता है, हम लोगोंकी तरफसे ही कोई लापरवाही जाहिर हुई हो। उनका मन आज वैसा प्रसन्न नहीं मालूम होता।"

मनोरमाने कहा, "वे अगर सारी रात राहमें बिताना चाहें तो हम लोगोंको भी क्या उनके लिए घरमें जगते रहना होगा? यही क्या अतिथिके प्रति गृहस्थका कर्तव्य है बापूजी?"

आशु बाबू हँस दिये। अपनी तरफ इशारा करके बोले, "गृहस्थके मानी अगर यह गठियाका रोगी हो बेटा, तो उसका कर्तव्य है कि आठ बजेके अन्दर ही सो जाय। नहीं तो, वह भी बहुत बड़े सम्मानित अतिथि गठियाके प्रति असम्मान दिखाना होगा। और, उसके मानी अगर और किसीके हो, तो उसका कर्तव्य बतानेवाला मैं कोई नहीं। आज बहुत दिन पहलेकी एक घटना याद आ गई मणि, तुम्हारी मा तब जिन्दा थीं। एक बार मैं मछली पकड़ने गुप्तिपाड़ा जो गया सो लौट नहीं सका। सिर्फ एक रात ही नहीं,— तुम्हारी माने उसीपर पूरीकी पूरी तीन रातें खिड़कीमें बैठे बैठे बिता दीं। उसको यह कर्तव्य किसने सुझाया था, तब पूछा नहीं जा सका; मगर यदि फिर कभी मुलाकात हुई तो यह बात पूछना भूलूँगा नहीं।" इतना कहकर उन्होंने क्षण-भरके लिए मुँह फेरकर लड़कीकी निगाहसे अपनी आँखोंको छिपा लिया।

यह कहानी कोई नई नहीं। किस्सेके तौरपर इस घटनाका वे बहुत बार लड़कीके सामने उल्लेख कर चुके हैं; मगर फिर भी वह पुरानी नहीं होती। जब कभी याद आ जाती है तभी वह नई बनकर दिखाई दे जाती है।

इतनेमें नौकरानी आकर दरवाजेके पास खड़ी हो गई। मनोरमा उठ खड़ी हुई, बोली, "बापूजी, तुम जरा बैठो, मैं रसोईका इन्तज़ाम कर आऊँ।" और वह जल्दीसे चली गई। बातचीत बहुत आगे न बढ़ पाई, इससे उसे आराम मालूम हुआ।

दिन-भरमें आशु बाबूने कई कई बार अजितके बारेमें पूछा; एक बार मालूम हुआ कि वह किताब पढ़ रहा है, फिर खबर मिली कि वह अपने कमरेमें बैठा चिट्ठी-पत्री लिख रहा है। दोपहरके भोजनके समय उसने लगभग बात ही नहीं की और खाना खतम होते ही वह उठकर चल दिया। और और दिनके देखे वह जितना रूखा था उतना ही आश्चर्यजनक।

आशु बाबूके क्षोभकी सीमा नहीं रही। बोले, "बात क्या है मणि?"

मनोरमा आज बराबर पिताकी दृष्टिसे बचकर चल रही थी, अब भी खासकर किसी तरफ बिना देखे ही बोली, "मालूम नहीं बापूजी!"

वे क्षण-भर अपने मनमें कुछ सोच-विचारकर मानो अपने आपसे ही कहने लगे, "उसके वापस आने तक मैं जाग ही रहा था। खानेके लिए भी कहा था, पर बहुत रात हो जानेसे उसने खुद ही नहीं खाया। तुम्हारा सो जाना ठीक नहीं हुआ बेटी,—लेकिन इसमें ऐसा क्या अपराध हो गया, मेरी तो कुछ समझमें नहीं आता। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा कि इस तुच्छ कारणको उसने इतना बड़ा मान लिया।"

मनोरमा चुप रही। आशु बाबू खुद भी कुछ देर मौन रहकर भीतरकी लज्जाको दबाते हुए बोले, "बात तुमने उससे पूछी क्यों नहीं?"

मनोरमाने जवाब दिया, "पूछनेकी कौन-सी बात है,—बापूजी?"

पूछनेकी बहुत-सी बातें हैं; पर पूछना भी कठिन है,—खासकर मणिके लिए। इसे वे समझते थे, फिर भी उन्होंने कहा, "यह तो बिलकुल साफ़ है कि वह नाराज़ है। शायद उसने सोचा है कि तुमने उसकी उपेक्षा की है। इस तरहकी बेजा धारणा तो उसके मनमें रहने नहीं दी जानी चाहिए बेटी।"

मनोरमाने कहा, "मेरे बारेमें अगर बेजा धारणा उन्होंने कर ली हो तो यह उनका अपराध है। एक आदमीके अपराधको सुधारनेकी गरज क्या दूसरे आदमीको अपने ऊपर ले लेनी चाहिए बापूजी?"

पिता इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे सके। लड़कीको वे जिस ढंगसे पालते आये हैं उससे उसके आत्मा-सम्मानपर चोट पहुँचे, ऐसा कोई आदेश वे नहीं कर सकते। उसके उठ जानेपर इसी बातपर भीतर ही भीतर ऊहापोह करते करते वे अत्यन्त उदास हो गये। बार बार इस बातको दुहराते हुए भी कि ऐसा हुआ ही करता है और यह भ्रम क्षणिक है, उन्हें भीतरसे जोर नहीं मिला। अजितको भी वे जानते थे। वह सिर्फ सब तरहसे सुशिक्षित ही नहीं है, बल्कि उसमें ऐसी एक चारित्रिक सत्यपरता उन्होंने पाई थी कि आजके अकारण विरागसे किसी तरह भी उसका सामंजस्य नहीं बैठता था। इसका निर्णय करना कठिन हो गया कि क्यों सबके असीम उद्वेगका कारण बनकर भी वह शरमिन्दा होनेके बदले नाराज़ हो गया और ऐसी असम्भव बात कैसे उसमें सम्भव हुई।

शामके समय एक ताँगेको गेटके अन्दर घुसते देख आशु बाबूने दर्यांफ्त किया तो मालूम हुआ कि वह अजितके लिए आया है। अजितको उन्होंने बुला भेजा और उसके आनेपर मुश्किलसे जरा-सा हँसकर पूछा, "ताँगेका क्या होगा अजित?"

"जरा एक दफे घूमने निकलूँगा।"

"क्यों, मोटर क्या हुई? फिर बिगड़ गई क्या?"

"नहीं। लेकिन उसकी आप लोगोंको जरूरत पड़ सकती है।'

"अगर पड़े भी तो उसके लिए बग्घी मौजूद है" और फिर क्षण-भर चुप रहकर बोले, "बेटा अजित, मुझे सच बता दो। मोटरके बारेमें कोई बात हुई है क्या?"

अजितने कहा, "कहाँ, मुझे तो नहीं मालूम। लेकिन, आज भी तो आपके यहाँ गाने-बजानेका आयोजन है। उन लोगोंको लानेके लिए, सबको घर पहुँचानेके लिए मोटरकी ही ज्यादा जरूरत है। बग्घीमें ठीक न रहेगा।"

सवेरेसे तरह तरहकी दुश्चिन्ताओंके कारण आशु बाबू इस बातको भूलसे गये थे। अब याद आई कि कल सभा भङ्ग होनेके बाद आजके लिए भी उन सबको आमन्त्रित कर दिया गया था और शामके बाद ही मजलिस बैठेगी। साथ साथ यह भी खयाल आ गया कि सबको खिलाने-पिलानेकी कल्पना भी मनोरमाके मनमें उदित हुई थी पर वे मन ही मन जरा हँसकर रह गये। कारण, ढँकी हुई कलहकी मानसिक अस्वच्छन्दताकी वजहसे इस

बातका खयाल उन्हें खुद ही नहीं रहा था और जब याद भी आई तो उससे तबीयत प्रसन्न नहीं हुई। उस समय लड़कीके लिए ये सब बातें कितनी विरक्तिकर हैं, इस बातको स्वतःसिद्धकी भाँति अनुमान करके वे बोले, "आज वह सब कुछ नहीं होगा अजित।"

अजितने कहा, "क्यों ?"

"क्यों ? मणिको ही पूछ देखो एक बार।" कहकर उन्होंने बेहराको जोरसे पुकारकर लड़कीको बुलाने भेज दिया, और फिर जरा हँसकर कहा, "तुम नाराज़ हो बेटा, गाना-आना सुनेगा कौन ? मणि ? अच्छा, वह सब और किसी दिन होगा, अभी जाओ तुम मोटर लेकर जरा घूम आओ। लेकिन ज्यादा देर नहीं लगा सकते। और कहे देता हूँ कि तुम्हारा अकेले जाना भी नहीं होगा। ड्राइवर नालायक बिलकुल आलसी हुआ जा रहा है। इतना कहकर वे एक कठिन समस्याकी अचिन्तनीय मीमांसा करके उज्ज्वल आनन्दसे आराम-कुरसीपर चित पड़ गये और जोरकी एक सन्तोषकी साँस छोड़नेके साथ साथ बोले, "तुम जाओगे ताँगा किराये करके घूमने ? छिः।"

मनोरमा कमरेमें पैर रखते ही अजितको देख गरदन टेढ़ी करके खड़ी हो गई। आहट पाकर आशु बाबू फिर सीधे होकर बैठ गये और सकौतुक स्निग्ध हँसीसे चेहरेको चमकाकर बोले, "मैं पूछता हूँ, आजकी बात याद तो है बेटी, या बिलकुल भूल-भालके निश्चिन्त बैठी हो ?"

"क्या बापूजी ?"

"आज जो सबको निमन्त्रण दे रखा है ? तुम लोगोंका गाना-आना खतम होनेके बाद, उन लोगोंको जो आज जिमाना है,—सो भी कुछ खयाल है ?"

मनोरमाने सिर हिलाकर कहा, "है क्यों नहीं। मोटर भेज दी है उन लोगोंको ले आनेके लिए।"

"मोटर भेज दी है ले आनेके लिए ? मगर खाने-पीनेका इन्तज़ाम ?"

मणिने कहा, "सब ठीक है, कोई त्रुटि न होगी।"

"अच्छा।" कहकर वे फिर कुरसीपर पड़ रहे। उनके मुँहपर मानो किसीने स्याही-सी पोत दी।

मनोरमा चली गई। अजित भी बाहर जा रहा था कि आशु बाबूने उसे इशारेसे मना किया और वे बहुत देरतक चुप रहे। बादमें उठके बैठे और कहने लगे, "अजित, लड़कीकी तरफसे क्षमा माँगनेमें मुझे लज्जा आती है।

पर उसकी मा ज़िन्दा नहीं हैं,—वे होतीं तो मुझे यह बात कहनी नहीं पड़ती।"

अजित चुप रहा। आशु बाबू बोले, "यह बात वे ही तुम्हारे मुँहसे निकाल लेतीं कि उससे तुम क्यों गुस्सा हो, मगर वे तो हैं नहीं,—मुझसे क्या वह बात कही नहीं जा सकती?"

उनका स्वर ऐसा करुण था कि सुनकर हृदय व्यथित हो उठे। फिर भी अजित चुप रहा।

आशु बाबूने पूछा, "उससे क्या तुम्हारी कोई बातचीत नहीं हुई?"

अजितने कहा, "हुई थी।"

आशु बाबू व्यग्र हो उठे, "हुई थी! कब हुई? मणि अचानक कल जो सो गई थी, सो क्या तुमसे उसने कहा था?"

अजितने कुछ देर चुप रहकर शायद यही सोच लिया कि क्या जवाब देना चाहिए, फिर आहिस्तेसे कहा, "उतनी रात तक जागते रहना न आसान ही था, और न उचित। सो जातीं तो अविचार न होता, मगर वे सोईं नहीं थीं। आपके सोने चले जानेपर थोड़ी देर बाद ही उनसे भेंट हुई थी।"

"फिर?"

"फिर और कोई बात आपसे नहीं कहूँगा।" कहकर वह चल दिया। दरवाजेके बाहरसे वह कहता गया, "शायद कल-परसों तक मैं यहाँसे चला जाऊँगा।"

आशु बाबू कुछ भी समझ न सके, सिर्फ इतना ही उनकी समझमें आया कि कोई भयङ्कर दुर्घटना हो गई है।

अजितको लेकर ताँगा बाहर चला गया और उसकी आवाज उन्होंने सुन ली। कुछ मिनटोंके बाद जोरका शोर मचाती हुई मोटर निमंत्रितोंको लेकर आ पहुँची। उसका शोर भी उन्होंने सुन लिया। पर वे हिले-डुले नहीं, जहाँके तहाँ मूर्तिकी तरह निश्चल बैठे रहे। बैठक बैठनेपर नौकरने जाकर संवाद दिया, "बाबू साहबकी तबीयत ठीक नहीं है, वे सो गये हैं।"

उस दिन गाना नहीं जमा, खाने-पीनेका उत्साह भी म्लान हो गया;—सबको बार बार यही खयाल आने लगा कि घरका एक व्यक्ति घूमनेके बहाने बाहर चला गया है और दूसरा व्यक्ति अपने विपुल शरीर और प्रसन्न स्निग्ध हास्यके साथ सभाकी जिस जगहको उज्ज्वल बनाये रखता था, आज वह सूनी पड़ी है।

१०

इधर अजितका ताँगा आकर कमलके घरके सामने खड़ा हो गया। कमल सड़कवाले सकीर्ण बरामदेपर खड़ी थी, आँखें चार होते ही हाथ उठाकर उसने नमस्कार किया। ताँगेको इशारेसे बताते हुए चिल्लाकर बोली, " उसे विदा कर दीजिए। सामने खड़ा खड़ा बार बार लौटनेकी जल्दी मचाएगा।"

जीनेमें सामने ही फिर भेंट हुई। अजितने कहा, " विदा तो कर दिया, पर लौटते वक्त दूसरा मिल तो जायगा ? "

कमलने कहा, " नहीं। ऐसी कितनी दूरी है, पैदल ही चले जाइएगा। "

" पैदल जाऊँगा ? "

" क्यों डर लगेगा क्या ? न हो तो मैं खुद जाकर आपको घर तक पहुँचा आऊँगी। आइए।" कहकर वह उसे साथ लेकर रसोई-घरमें गई और बैठ-नेके लिए कलवाला वही आसन बिछाकर बोली, " जरा देखिए तो सही, सारे दिन मैंने कितने व्यंजन बनाये हैं। आप न आते तो मैं गुस्सेमें यह सब मोचियोंको बुलाकर बाँट देती। "

अजितने कहा, " आपको गुस्सा तो कम नहीं है। मगर उससे इन व्यंज-नोंका इसकी अपेक्षा विशेष अच्छा उपयोग होता। "

" इसके मानी ? " कहकर कमल कुछ देर तक अजितके चेहरेकी तरफ देखती रही और फिर अन्तमें खुद ही बोली, " अर्थात् आपके तो किसी चीज़की कमी नहीं,—शायद इसमेंसे ही बहुत कुछ फेकना पड़ेगा,—लेकिन उन लोगोंके बडी भारी कमी है। वे तो इसे खाकर जैसे नया जीवन प्राप्त करेंगे। लिहाजा, उन्हें खिलाना ही रसोईका सर्वोत्तम उपयोग है, यही न ? "

अजितने गरदन हिलाकर कहा, " इसके सिवा और क्या मानी हो सकते हैं ? "

कमलने कहा, " यह हुआ साधु-सज्जनोंका भलाई-बुराईका विचार,—पुण्यात्माओंकी धर्म-बुद्धिकी युक्ति। परलोकके खातेमें वे लोग इसीको सार्थक व्यय मानकर लिखा रखना चाहते हैं। यह नहीं समझते कि असलमें यही अन्तःसारशून्य थोथा व्यय है। इस बातको वे कहाँसे जानेंगे कि सच्चे आनन्दका सुधा-पात्र तो अपव्ययके अविचारसे ही ऊपर तक भर उठता है ? "

अजितने आश्चर्यके साथ कहा, "मनुष्यके कर्तव्यकी भावनाके अन्दर क्या आनन्द है ही नहीं ? '

कमलने कहा, " नहीं, नहीं है। कर्तव्यके अन्दर जो आनन्द मालूम होता है वह आनन्द नहीं, आनन्दका भ्रम है, वास्तवमें वह दुःखका ही नामान्तर है। उसे बुद्धिके शासनसे जबरदस्ती आनन्द मानना पड़ता है। पर वह तो बन्धन है। नहीं तो, यह जो शिवनाथका आसन लाकर आपको बिठाया है, प्रेमके इस अपव्ययमें मैं आनन्द कहाँसे पाती? यह जो दिनभर भूखे रहकर मैंने इतनी चीजें बनाई हैं,—आप आकर खायँगे इसीलिए ही तो? फिर इतने बड़े अकर्तव्यके अन्दर मुझे तृप्ति कहाँसे मिलती? अजित बाबू, आज मेरी सब बातें आप नहीं समझेंगे, समझनेकी कोशिश करनेसे भी कुछ फायदा नहीं होगा; मगर इतनी बड़ी उलटी बातके मानी अगर कभी अपने आप आपकी समझमें आ जाय तो उस दिन मेरी याद कीजिएगा। पर यह सब जाने दीजिए, आप खाने बैठिए।" और उसने थाल भर कर बहुत तरहके व्यंजन उसके सामने रख दिये।

अजितने बहुत देरतक चुप रहकर कहा, " यह ठीक है कि आपके कुछ अन्तिम शब्दोंका अर्थ मैं कयासमें नहीं ला सका, लेकिन मालूम होता है कि वे बिलकुल ही अबोध्य हों सो बात नहीं। समझा देनेसे समझ भी सकता हूँ।"

कमलने कहा, " कौन समझा देगा अजित बाबू? मैं? मुझे जरूरत?" और हँसते हुए उसने बाकी पात्र उसके आगे बढ़ा दिये।

अजित खानेमें मन लगाकर बोला, " आपको शायद मालूम नहीं कि कल मेरा खाना नहीं हुआ।"

कमलने कहा, " जानती तो नहीं, पर मुझे डर था कि इतनी रातमें जाकर शायद आप खायेंगे नहीं। यही हुआ। मेरे अपराधसे ही कल आपने तकलीफ पाई।"

" लेकिन आज व्याज-समेत वसूल हो रहा है।" बात करते ही उसे याद आ गई कि कमल अभी तक भूखी है। मन ही मन लज्जित होकर बोला, " पर मैं बिलकुल जानवरों जैसा स्वार्थी हूँ। दिन-भर आपने कुछ खाया नहीं, उसका मैंने ज़रा भी खयाल नहीं किया और मजेसे खाने बैठ गया।"

कमलने हँसते चेहरेसे जवाब दिया, पर यह तो मेरे अपने खानेसे भी बढ़कर है। इसीसे तो झटपट आपको बिठा दिया है अजित बाबू।" फिर ज़रा ठहरकर कहा, "और यह सब मांस-मछलीका मामला,—मैं तो खाती नहीं।"

" फिर खायँगी क्या आप?"

" यह है न । " उसने एक ओर ढककर रखे हुए एनामेलके कटोरेको हाथके इशारेसे दिखाते हुए कहा, " और उसके अन्दर मेरे लिए चावल-दाल-आलू उबले हुए रखे हैं । वही मेरा राज-भोग है । "

इस विषयमें अजितका कुतूहल दूर नहीं हुआ, साथ ही उसे संकोचने रोका भी । इस डरसे कि कहीं वह गरीबीका जिक्र न कर बैठे, उसने दूसरी ही बात छेड़ दी, कहा, " आपको देखकर मुझे शुरूसे ही ऐसा आश्चर्य हुआ कि कुछ कह नहीं सकता । "

कमल हँस पड़ी, बोली, " वह तो मेरा रूप है । पर उसने भी हार कबूल कर ली अक्षय बाबूके आगे । वह उन्हें परास्त नहीं कर सका । "

अजित शर्मिन्दा होकर भी हँस दिया, बोला, " मालूम तो नहीं होता । वे गोलकुण्डाके माणिक हैं । उनके ऊपर खरोंच नहीं पड़ती । लेकिन मुझे तो सबसे बढ़कर आश्चर्य हुआ था आपकी बात सुनकर । सहसा मानो धैर्य-सा छूट जाता है,—गुस्सा आ जाता है । मालूम होता है, किसी भी सत्यको आप टिकने नहीं देना चाहतीं । हाथ बढ़ाकर रास्ता रोकना ही जैसे आपका स्वभाव हो । "

कमल शायद क्षुब्ध हुई । बोली, " हो सकता है । पर मुझसे भी बड़ा एक आश्चर्य वहाँ था,—वह था दूरका पहलू । जैसी विपुल देह थी, वैसी ही विराट् शान्ति । धैर्यका जैसे हिमाचल हो । उत्तापकी भाप तक वहाँ नहीं पहुँचती । ऐसा जी होता है कि मैं अगर उनकी लड़की होती—"

बात अजितको बहुत ही अच्छी लगी । आशु बाबूके प्रति वह अन्तःकरणमें देवताकी भाँति भक्ति रखता है । फिर भी उसने कहा, " आप दोनोंकी ऐसी विपरीत प्रकृति मिली कैसे ? "

कमलने कहा, " मालूम नहीं । मैंने सिर्फ अपनी इच्छाकी ही बात कही है । मणिकी तरह मैं भी अगर उनकी लड़की होकर पैदा होती ! " फिर कुछ देर चुप रहकर बोली, " मेरे अपने पिताजी भी कम नहीं थे । वे ऐसे ही धीर, ऐसे ही शान्त आदमी थे । "

कमल दासीकी कन्या है, छोटी जातकी लड़की है,—सबके मुँहसे अजितने यही बात सुनी थी । अब स्वयं कमलके मुँहसे उसके पिताके गुणोंका उल्लेख सुनकर उसका जन्म-रहस्य जाननेकी आकांक्षा प्रबल हो उठी । मगर इस डरसे कि पूछने ताछनेसे कहीं उसके व्यथाके स्थानपर असावधानीसे चोट न,

पहुँचे, वह कुछ पूछ न सका परन्तु मन उसका भीतर ही भीतर स्नेह और करुणासे ऊपर तक भर आया।

खाना खतम हुआ; किन्तु उठनेके लिए कहनेपर अजितने इनकार कर दिया, बोला, "पहले आप खा लें। उसके बाद।"

"क्यों तकलीफ पा रहे हैं अजित बाबू, उठिए। बल्कि हाथ-मुँह धो आइए, फिर बैठिए,—मैं खा रही हूँ।"

"नहीं, सो नहीं होगा। बगैर खाये मैं आसन छोड़कर एक कदम भी इधर-उधर न होऊँगा।"

"अच्छे आदमी हैं आप।" कहकर कमल हँसती हुई अपना भोजन उघाड़कर खाने बैठ गई। अजितने देखा कि उसने रंच मात्र भी अत्युक्ति नहीं की थी। चावल, दाल और उबले हुए आलू ही थे। सूखकर बदरंग हो गये थे। और दिन वह क्या खाती-पीती है उसे नहीं मालूम। पर आज इतनी तरहकी और काफी तैयारियोंके बीच भी उसके इस स्वेच्छाकृत आत्म-पीड़नसे अजितकी आँखोंमें पानी भर आया। कल उसने सुना था कि दिनमें वह सिर्फ एक बार ही खाती है और आज जाना कि वह यही है जो सामने दीख रहा है। लिहाजा, युक्ति और तर्कके छलसे कमल मुँहसे चाहे जो भी कहे, वास्तवमें भोगके क्षेत्रमें उसके इस कठोर आत्म-संयमसे अजितकी अभिभूत और मुग्ध आँखें माधुर्य और श्रद्धासे अपूर्व-सुन्दर हो उठीं और वंचना, असम्मान और अनादरसे जिन व्यक्तियोंने उसे लांछित किया था उन सबके प्रति उसकी घृणाकी सीमा न रही। कमलके खानेकी तरफ देख देखकर अपने इस भावको वह दबा न सका। उफनते हुए आवेगके साथ कहने लगा, "अपनेको बड़ा मानकर जो लोग अपमान करके आपको दूर रखना चाहते हैं, जो लोग अकारण ग्लानि करते फिरते हैं, वे तो आपके पाँव छूने भी योग्य नहीं। संसारमें देवीका आसन अगर किसीके लिए हो तो वह आपके लिए है।"

कमलने अकृत्रिम विस्मयके साथ मुँह उठाकर पूछा, "क्यों?"

"क्यों, सो मैं नहीं जानता, मगर शपथके साथ कह सकता हूँ।"

कमलका विस्मयका भाव दूर नहीं हुआ, मगर वह चुप रही।

अजितने कहा, "अगर क्षमा करें तो एक बात पूछूँ।"

"क्या बात?"

" पापिष्ठ शिवनाथके द्वारा आपमान और वंचना पानेके बाद ही क्या आपने यह कृच्छ्र-व्रत लिया है ? "

कमलने कहा, " नहीं तो। मेरे पहले पतिके मरनेके बादसे ही मैं यह खाया करती हूँ। इससे मुझे कष्ट नहीं होता। "

अजितके मुँहपर जैसे किसीने स्याही पोत दी। उसने कुछ देर स्तब्ध रह-कर अपनेको सम्हालते हुए धीरे धीरे पूछा, " आपका एक बार पहले और भी विवाह हुआ था क्या ? "

कमलने कहा, " हाँ। वे एक आसामी क्रिश्चियन थे। उनके मरनेके बाद ही मेरे पिता भी मर गये अकस्मात् घोड़ेसे गिरकर। उस समय, शिवनाथके एक चाचा थे चाय-बगीचेके हेड-क्लार्क। उनकी स्त्री नहीं थी, माको उन्होंने अपने यहाँ आश्रय दिया। मैं भी उनके घरमें आ गई। इस तरह तरह तरहके दुःख-कष्टोंके बीच रहते रहते एक वक्त खानेकी ही मेरा आदत पड़ गई है। कृच्छ्र-व्रत तो क्या, पर इससे शरीर और मन दोनो अच्छे रहते हैं। "

अजितने एक साँस लेकर कहा, " मैंने सुना है, जाति आपकी जुलाहा है ? "

कमलने कहा, " लोग तो यही बताते हैं। पर मा कहती थीं कि उनके पिता आप लोगोंकी जातिके ही एक कविराज थे। अर्थात् मेरे वास्तविक मातामह जुलाहे नहीं, वैद्य थे। " और वह जरा हँस कर बोली, " सो वे चाहे जो भी रहे हों, अब गुस्सा होना भी व्यर्थ है और अफसोस करनेसे भी कोई लाभ नहीं। "

अजितने कहा, " सो तो ठीक है। "

कमलने कहा, " माके रूप था, पर रुचि नहीं थी। ब्याहके बाद कोई बदनामी हो जानेके कारण उनके पति उन्हें लेकर आसामके चाय-बगी-चेमें भाग गये थे। पर वहाँ वे जीये नहीं,—कुछ ही महीनोंमें बुखार ही बुखारमें मर गये। तीनेक साल बाद मेरा जन्म हुआ बगीचेके बड़े साहबके घर। "

कमलके वंश और जन्मका वर्णन सुनकर अजितका क्षण-भर पहलेका स्नेह और श्रद्धासे खिला हुआ हृदय अरुचि और सकोचके मारे सिकुड़कर बूँद-सा रह गया। उसे सबसे ज्यादा यह बात अखरी कि अपनी और माकी इतनी बड़ी शर्मकी बात कहनेमें भी इसे रत्ती-भर लज्जा नहीं आई। अनायास

ही कह गई, माके रूप था, पर 'रुचि' नहीं थी। जिस अपराधपर एक स्त्री मारे शर्मके जमीनमें धँस जाती है, वह इसके निकट 'रुचिका विकास' मात्र है। इससे ज्यादा कुछ नहीं।

कमल कहने लगी, "पर मेरे पिता थे साधु-सज्जन आदमी। चरित्रमें, पाण्डित्यमें, सचाईमें,—ऐसे आदमी मैंने बहुत कम देखे हैं अजित बाबू। जीवनके उन्नीस साल मैंने उन्हींके पास बिताये हैं।"

अजितको एक बार सन्देह हुआ था कि शायद यह परिहास कर रही है। पर यह कैसा तमाशा? बोला, "यह सब क्या आप सच कह रही हैं?"

कमलने जरा कुछ आश्चर्यके साथ ही जवाब दिया, "मैं तो कभी झूठ बोलती नहीं अजित बाबू।" पिताकी स्मृति लहमे-भरके लिए उसके चेहरेपर एक स्निग्ध-दीप्ति फैला गई। फिर कहा, "इस जीवनमें कभी किसी भी कारण झूठी चिन्ता, झूठा अभिमान, झूठी बातका सहारा मुझे न लेना पड़े,—पिताजी यही शिक्षा मुझे बार बार दे गये हैं।"

अजित फिर भी मानो विश्वास न कर सका। बोला, "आप एक अँग्रेजके पास ही अगर इतनी बड़ी हुई हैं तो आपको अँग्रेजी भी आनी चाहिए?"

उत्तरमें कमल सिर्फ जरा मुस्करा दी। बोली, "मेरा खाना हो गया. चलिए उस कमरेमें चलें।"

"नहीं, अब मैं जाऊँगा।"

"बैठेंगे नहीं? आज इतनी जल्दी चले जायँगे?"

"हाँ, आज अब और बैठनेका समय नहीं है।"

इतनी देर बाद कमलने मुँह उठाकर उसके चेहरेकी अत्यन्त कठोरतापर ध्यान दिया। शायद, कारणका भी अनुमान कर लिया। वह कुछ देर निर्निमेष दृष्टिसे देखती रही, फिर धीरेसे बोली, "अच्छा जाइए।"

इसके बाद अजित क्या कहे, कुछ समझमें न आया। अन्तमें बोला, "आप क्या अब आगरेमें ही रहेंगी?"

"क्यों?"

"मान लीजिए, शिवनाथ बाबू आइन्दा अगर नहीं आये। उनपर तो आपका जोर है नहीं?"

कमलने कहा, "नहीं।" फिर जरा स्थिर रहकर कहा, "आप लोगोंके यहाँ तो वे रोज जाते हैं, गुप्तरूपसे जानकर क्या मुझे जता नहीं सकते?"

" उससे क्या होगा ? "

कमलने कहा, " होगा और क्या, घरका किराया इस महीनेका दिया ही हुआ है;—फिर मैं कल-परसों तक चली जा सकती हूँ । "

" कहाँ जायँगी ? "

कमलने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया, चुप रही ।

अजितने पूछा, " आपके हाथमें शायद रुपये नहीं हैं ? "

कमलने इस प्रश्नका भी कोई उत्तर नहीं दिया ।

अजित खुद भी कुछ देर मौन रहकर बोला, " आते वक्त आपके लिए कुछ रुपये साथ लेता आया था, लीजिएगा ? "

" नहीं । "

" नहीं क्यों ? मुझे निश्चित मालूम है कि आपके हाथमें कुछ नहीं है । जो भी कुछ था, सो आज मेरे ही लिए खतम हो गया । "

इसका भी कुछ उत्तर न पाकर वह फिर बोला, " जरूरत पड़नेपर क्या मित्रोंसे कोई कुछ लेता नहीं ? "

कमलने कहा, " पर मित्र तो आप नहीं हैं ? "

" न सही । पर अ-मित्रोंसे भी लोग कर्ज लिया करते हैं और फिर चुका देते हैं । तो आप वैसे ही ले लीजिए । "

कमलने गरदन हिलाकर कहा, " आपको कह चुकी हूँ, मैं कभी झूठ नही बोलती । "

बात कोमल थी, किन्तु तीरके फलकी तरह तीक्ष्ण । अजितने समझ लिया कि इसमें कुछ रद्दोबदल नहीं-हो सकता । उसकी तरफ गौरसे देखा तो मालूम हुआ कि पहले दिन उसके शरीरपर जो मामूली-सा जेवर था वह भी आज नहीं है । सम्भवतः घरका किराया चुकानेमें और इधर कई दिनोंका खर्च चलानेमें वह खतम हो चुका है । सहसा व्यथाके मारसे उसका मन भीतरसे रो उठा । उसने पूछा, " पर जाना ही आपने तय कर लिया है क्या ? "

कमलने कहा, " इसके सिवा और उपाय क्या है ? "

उपाय क्या है, यह उसे नहीं मालूम, और इसीलिए उसे कष्ट होने लगा । अन्तिम चेष्टाके तौरपर उसने कहा, " दुनियामें क्या कोई भी ऐसे नहीं हैं जिनसे इस समय आप कुछ सहायता ले सकें ? "

कमलने जरा सोचकर कहा, " हैं और लड़कीकी तरह सिर्फ उन्हींके पास

जाकर हाथ पसारकर माँग सकती हूँ। पर आपको तो रात हुई जा रही है। साथ चलकर पहुँचा दूँ क्या ?"

अजित चंचल होकर बोला, "नहीं नहीं, मैं अकेला ही जा सकूँगा।"

"तो जाइए। नमस्कार।" कहकर वह अपने सोनेके कमरेमें चली गई।

अजित दो-एक मिनट वहाँ स्तब्ध होकर खड़ा रहा। फिर चुपचाप धीरे धीरे नीचे उतर गया।

११

दिनका तीसरा पहर है। शीतकी सीमा नहीं। आशु बाबूकी बैठककी काँचकी खिड़कियाँ सारे दिन बन्द रहतीं हैं। वे आरामकुरसीके दोनों हथेलों-पर पैर फैलाकर गहरे मनोयोगके साथ पड़े पड़े कुछ पढ़ रहे थे। हाथके कागज़पर पीछेके दरवाजेकी तरफसे एक छाया पड़ते ही वे समझ गये कि अब उनके नौकरकी दिवा-निद्रा समाप्त हुई है। बोले, "कच्ची नींदमें तो नहीं उठ बैठे जदु, नहीं तो सिर दुखेगा। खास तकलीफ़ न मालूम हो तो रजाईसे जरा इस गरीबके पैर ढक दो।"

नीचे कार्पेटपर रजाई पड़ी थी, आगन्तुकने उसे उठाकर उनके पैर नीचे तलवों तक अच्छी तरह ढक दिये।

आशु बाबूने कहा, "हो गया, हो गया, ज्यादा जतनकी जरूरत नहीं। अब एक चुरट देकर और थोड़ा सो लो,—अभी तो दिन बाकी है। पर समझ रखना कि—कल, हाँ, कल।"

अर्थात् कल तुम्हारी नौकरी चली ही जायगी। कोई जवाब नहीं आया, कारण मालिकके इस तरहके मन्तव्यसे नौकर अभ्यस्त हो चुका है। जैसे उसका प्रतिवाद करना व्यर्थ है वैसे ही विचलित होना भी फिजूल है।

आशु बाबूने हाथ बढ़ाकर चुरट ले लिया और दियासलाई जलनेके शब्दके साथ ऊपर मुँह उठाकर देखा। कुछ क्षण अभिभूतकी तरह दंग रहकर बोले, "यही तो सोच रहा था कि यह क्या जदुआका हाथ है! इस तरह पैर ढकना तो उसकी चौदह पीढ़ियाँ भी न जानती होंगी।"

कमलने कहा, "पर इधर जो हाथ जला जा रहा है!"

आशु बाबूने व्यस्तताके साथ उसके हाथसे जलती हुई दियासलाई लेकर फेंक दी और उस हाथको अपने हाथमें लेकर उसे जोरसे सामने खींच लिया। बोले, "इतने दिनोंसे तुम्हें देखा क्यों नहीं बेटी ?"

यह उन्होंने पहले-पहल उसे 'बेटी' कहकर पुकारा। परन्तु यह उन्हें बात कहनेके बाद स्वयं मालूम हो गया कि उनके प्रश्नके कोई मानी नहीं होते।

कमल एक कुरसी खींचकर जरा दूर बैठना चाहती थी, पर उन्होंने उसे ऐसा नहीं करने दिया, कहा, "वहाँ नहीं बेटी, तुम मेरे बिलकुल पास आकर बैठो।" और उसे बिलकुल पास खींचकर बोले, "आज अचानक कैसे कमल?" कमलने कहा, "आज बहुत जी चाहने लगा आपको देखनेका,—इसीसे चली आई।"

आशु बाबूने उत्तरमे सिर्फ कहा, "अच्छा किया।" और इससे ज्यादा वे न बोल सके। अन्यान्य सभी लोगोंके समान उन्हें भी मालूम था कि कमलका कोई संगी-साथी नहीं है, कोई उसको चाहता नहीं, किसीके घर जानेका उसे अधिकार नाहीं,—नितान्त निःसंग जीवन ही इस लड़कीको बिताना पड़ता है; फिर भी यह बात उनके मुँहसे न निकली कि 'कमल, तुम्हारी जब तबीयत हो, खुशीसे चली आया करो, और चाहे जिससे हो, पर मेरे पास तुम्हें कोई संकोच नहीं होना चाहिए।' इसके बाद शायद शब्दोंके अभावसे ही वे दो-तीन मिनट तक मानो अन्यमनस्ककी तरह मौन रहे। उनके हाथके कागज नीचे खिसक जानेपर कमलने उन्हें उठा लिया और उनके हाथमें देते हुए कहा, "आप पढ़ रहे थे, मैंने असमयमें ही आकर शायद विघ्न डाल दिया।"

आशु बाबूने कहा, "नहीं। मैं पढ़ चुका। जो कुछ थोड़ा-बहुत बाकी है उसे बगैर पढ़े भी काम चल सकता है, और पढ़नेकी इच्छा भी नहीं है।" जरा ठहरकर फिर कहा, "इसके सिवा तुम्हारे चले जानेपर मुझे अकेला रहना पड़ेगा; उससे अच्छा तो यह है कि तुम बातें करो, मैं सुनूँ।"

कमलने कहा, "मैं आपसे दिन-भर बातें कर सकूँ तो कहना ही क्या है। पर और सब जो नाराज होंगे?"

उसके मुँहपर हँसी होनेपर भी आशु बाबूको चोट पहुँची, बोले, "बात तुम्हारी झूठ नहीं कमल। पर जो लोग नाराज होंगे उनमेंसे यहाँ कोई मौजूद नहीं है। यहाँके नये मजिस्ट्रेट एक बंगाली हैं। उनकी स्त्रीसे मणिकी मित्रता है, दोनों एक साथ कालेजमें पढ़ी हैं। दो दिन हुए वे यहीं पतिके पास आई हैं,—मणि उन्हींके यहाँ घूमने गई है, शायद रातको लौटेगी।"

कमलने हँसते हुए पूछा "आपने कहा, कि जो लोग नाराज होंगे—सो एक तो मनोरमा हुई, और बाकीके और कौन हैं?"

आशु बाबूने कहा, " सभी हैं। यहाँ ऐसोंकी कोई कमी नहीं। पहले मालूम होता था कि अजितकी तुम्हारे प्रति नाराजगी नहीं है, पर अब देखता हूँ कि उसका विद्वेष ही सबसे बढ़कर है। उसने तो अक्षय बाबूको भी मात कर दिया है। "

यह देखकर कि कमल चुपचाप सुन रही है, वे कहने लगे, " जब आया था तब उसे ऐसा नहीं देखा था, अचानक दो ही तीन दिनमें मानो वह बिलकुल बदल गया है। अब अविनाशको भी ऐसा ही देख रहा हूँ। इन सबोंने मिलकर मानो तुम्हारे विरुद्ध षड्यन्त्र-सा रच रखा है। "

अबकी बार कमल हँस दी, बोली, " अर्थात्, कुशांकुरके ऊपर वज्राघात! पर मुझ जैसी समाज और दुनियासे बहिष्कृत एक तुच्छ औरतके विरुद्ध षड्यन्त्र किसलिए? मैं तो किसीके घर जाती नहीं। "

आशु बाबूने कहा, " सो तो ठीक है। शहरमें यह भी कोई नहीं जानता कि तुम्हारा घर कहाँ है, पर इसलिए तुम तुच्छ नहीं हो कमल। और इसी-लिए ये लोग न तुम्हें भूल ही सकते हैं और न माफ ही कर सकते हैं। तुम्हारी चर्चा बगैर किये, तुम्हें कोंचे बगैर इन्हें न चैन मिलता है न शान्ति " कहते कहते वे अकस्मात् हाथके कागजोंको उठाकर बोले, " यह क्या है, जानती हो? अक्षय बाबूकी रचना है। अँग्रेजीमें नहीं होती तो तुम्हें सुनाता। नाम-धाम नहीं है, पर शुरूसे आखिर तक सिर्फ तुम्हारी ही बातें हैं, तुम्हींपर हमला है। कल मॅजिस्ट्रेट साहबके घरपर, सुनते हैं, नारी-कल्याण-समितिका उद्घाटन होगा, यह उसीका मंगल अनुष्ठान है। " यह कहकर उन्होंने उसे दूर फेंक दिया और कहा, " यह सिर्फ निबन्ध ही नहीं है, बीच-बीचमें किस्सेके तौर-पर पात्र-पात्रियोंके मुँहसे इसमें तरह-तरहकी बातें भी कहलवाई गई हैं। इसकी मूल नीतिके साथ किसीका विरोध नहीं,—विरोध हो भी नहीं सकता। पर इसमें वही बात नहीं है, व्यक्ति विशेषपर कदम-कदमपर आघात करते रहनेमें ही मानो इसका आनन्द है। पर अक्षयका आनन्द और मेरा आनन्द एक नहीं है, कमल। इसे तो मैं अच्छा नहीं कह सकता। "

कमलने कहा, " पर मैं तो इस लेखको सुनने नहीं जाऊँगी,—फिर मुझपर चोट करनेकी सार्थकता क्या हुई? "

आशु बाबूने कहा, " कुछ भी सार्थकता नहीं, इसीसे शायद उन लोगोंने मुझे पढ़नेको दिया है। सोचा होगा ' डूबतेमेंसे मुट्ठी-भर ही सही। ' इस बूढ़ेको दुःख देकर जितना क्षोभ मिटाया जा सके उतना ही अच्छा। " कहते

हुए उन्होंने हाथ बढ़ा कर फिर एक बार कमलको अपनी ओर खींचा। इस स्पर्श-मात्रमें कितनी बातें थीं, कमल सबकी सब तो नहीं समझ सकी फिर भी उसका अन्तःकरण न जाने कैसा हो उठा। वह जरा ठहरकर बोली, "आपकी कमजोरीको तो उन लोगोंने ताड़ लिया, पर आपके भीतरके असल आदमीको वे नहीं पहचान सके।"

"क्या तुमने पहचान लिया है बेटी?"

"शायद उन लोगोंसे ज्यादा।"

आशु बाबूने इसका उत्तर नहीं दिया, बहुत देर तक नीरव रहकर वे धीरे-धीरे कहने लगे, "सभी सोचते हैं कि हमेशा खुश रहनेवाले इस बूढ़ेके समान सुखी कोई नहीं। बहुत रुपया है, काफी जमीन-जायदाद—

"पर यह तो झूठ नहीं।"

आशु बाबूने कहा, "झूठ नहीं। धन और सम्पत्ति मेरे काफी है, पर यह आदमीके लिए कितना-सा है कमल?"

कमल हँसती हुई बोली, "बहुत है आशु बाबू।"

आशु बाबूने गरदन फेर कर उसकी तरफ देखा, फिर कहा, "अगर कुछ खयाल न करो तो तुमसे एक बात कहूँ,—"

"कहिए?"

"मैं बुड्ढा आदमी हूँ, और तुम मेरी मणिकी उमरकी हो। तुम्हारे मुँहसे अपना नाम मेरे खुदके कानोंमें न जाने कैसा खटकता है कमल। तुम्हें कोई एतराज न हो तो तुम मुझे 'चाचाजी' कहा करो।"

कमलके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। आशु बाबू कहने लगे, "कहावत है कि बिल्कुल मामा न होनेसे तो काना मामा ही अच्छा; मैं काना न सही, पर लँगड़ा जरूर हूँ, गठियासे लाचार। बाजारमें आशु वैद्यकी कानी कौड़ी भी कीमत नहीं।" फिर उन्होंने हँसकर कौतुकके साथ हाथका अँगूठा हिलाते हुए कहा, "न हो तो क्या है, बेटी, लेकिन जिसके पिता जिन्दा नहीं उसके इतने बाकी होनेसे काम नहीं चलेगा। उसके लिए तो लँगड़ा चाचा भी अच्छा।"

दूसरे पक्षसे जवाब न पाकर वे फिर कहने लगे, "कोई अगर चिढ़ाये कमल, तो उसे विनयके साथ कहना, 'मेरे लिए इतना ही बहुत है।' कहना, 'गरीबके लिए राँग ही सोना है'।"

उनकी कुरसीके पीछे बैठी कमल छतकी ओर आँखें किये आँसू रोकनेकी कोशिश करने लगी, कुछ जवाब न दे सकी। इन दोनोंमें कहींसे भी कोई मेल नहीं; और सिर्फ अनात्मीय-अपरिचयका ही जबर्दस्त फासला नहीं है,

बल्कि शिक्षा, संस्कार, रीति-नीति, गार्हस्थिक और सामाजिक व्यवस्थामें भी दोनोंमें कितनी जबरदस्त जुदाई है! जहाँ कोई सम्बन्ध ही नहीं, वहाँ सिर्फ एक सम्बोधनके छलसे ही उसे बाँध रखनेकी चतुराईको देख कमलकी आँखोंमें बहुत दिनों बाद आज आँसू भर आये।

आशु बाबूने पूछा, "क्यों बिटिया, कह सकोगी?"

कमलने उमड़ते हुए आँसुओंको सम्हालते हुए सिर्फ इतना कहा, "नहीं।"

"नहीं? नहीं क्यों?"

कमलने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया, दूसरी बात छेड़ दी। बोली, "अजित बाबू कहाँ हैं?"

आशु बाबू कुछ देर चुप रहकर बोले, "क्या मालूम, शायद घरपर ही होगा।" फिर कुछ देर मौन रहकर धीरे धीरे कहने लगे, "कई दिनसे मेरे पास विशेष आता-जाता नहीं और शायद वह यहाँसे जल्दी ही चला जायगा।"

"कहाँ जायँगे?"

आशु बाबूने हँसनेका प्रयास करते हुए कहा, "बूढ़े आदमीको सब लोग क्या सब बातें बताते हैं, बिटिया? नहीं बताते। शायद जरूरत ही नहीं समझते बतानेकी।" जरा ठहरकर बोले, "सुना होगा शायद, मणिके साथ उसका सम्बन्ध बहुत दिनोंसे तय था, सहसा मालूम हो रहा है कि दोनोंमें किसी बातपर झगड़ा हो गया है। कोई किसीके साथ अच्छी तरह बात ही नहीं करता।"

कमल चुप हो रही। आशु बाबू एक गहरी साँस लेकर बोले, "जगदीश्वर मालिक हैं, उनकी इच्छा। एक गाने-बजानेमें उन्मत्त है और दूसरा अपने पुराने अभ्यासोंको मय ब्याजके ठीक करनेमें लग गया है। इस समय यही तो चल रहा है।"

कमलसे अब चुप नहीं रहा गया, कुतूहलके मारे पूछ बैठी, "पुराने अभ्यास क्या?"

आशु बाबूने कहा, "बहुत-से हैं। पहले गेरुआ पहनकर संन्यासी हुआ, फिर मणिसे प्रेम किया, देशोद्धारके काममें जेल गया, विलायत जाकर इंजीनिअर हुआ, वहाँसे वापस आनेके बाद गृहस्थ होनेकी इच्छा हुई,—पर फिलहाल शायद वह कुछ बदल गई है। पहले मांस मछली नहीं खाता था, उसके बाद खाने लगा था, अब देखता हूँ कि कल-परसोंसे फिर छोड़ बैठा है। जदु

कहता है, बाबू घण्टे घण्टे भर कमरेमें बैठे नाक मूँदकर योगाभ्यास किया करते हैं!"

"योगाभ्यास करते हैं?"

"हाँ। नौकर ही कह रहा था, देश लौटते समय शायद काशी उतरकर समुद्र-यात्राके लिए प्रायश्चित्त करता जायगा।"

कमलने अत्यन्त आश्चर्यके साथ कहा, "समुद्र-यात्राके लिए प्रायश्चित्त करेंगे? अजित बाबू?"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए कहा, "वह कर सकता है। उसमें सर्वतोमुखी प्रतिभा है!"

कमल हँस दी। कुछ कहना ही चाहती थी कि इतनेमें दरवाजेके पास किसी आदमीकी छाया दीख पड़ी और जिस नौकरने इतने विभिन्न प्रकारके संवाद मलिकको पहुँचाये थे वही सशरीर आ खड़ा हुआ, और उसीने सबसे बढ़कर कठोर संवाद यह दिया कि अविनाश, अक्षय, हरेन्द्र, अजित आदि बाबुओंका दल आ रहा है।—सुनकर सिर्फ कमलका ही नहीं, बल्कि, बन्धुवर्गके आगमन होनेपर उच्छ्वसित उल्लाससे अभ्यर्थना करना जिनका स्वभाव है उन आशु बाबू तकका मुँह सूख गया। क्षण-भर बाद आगन्तुक शिष्टसमुदाय कमरेमे घुसते ही आश्चर्यचकित हो गया। कारण, यह बात उनकी कल्पनाके बाहर थी कि यह औरत यहाँ इस तरह मिल सकती है। हरेन्द्रने हाथ उठाकर कमलको नमस्कार करके कहा, "अच्छी तो हैं? बहुत दिनोंसे आपको देखा नहीं।"

अविनाशने हँसने जैसी मुखाकृति करके एक बार इधर और एक बार उधर गरदन हिलाई जिसका कोई अर्थ ही समझमें नहीं आया। अक्षय सीधा आदमी ठहरा। वह सीधे मार्गसे आया और सीधे अभिप्रायसे पत्थरकी तरह क्षण-भर सीधे खड़े रह कर एक आँखसे अवज्ञा और दूसरीसे विरक्ति बरसाता हुआ एक कुरसी खींचकर बैठ गया। आशु बाबूसे उसने पूछा, "मेरा आर्टिकल पढ़ा?" यह पूछनेके बाद ही उसकी नजर मिट्टीमें लोटते हुए अपने लेखपर पड़ी। उसे वह खुद ही उठाने जा रहा था कि हरेन्द्रने उसे रोकते हुए कहा, "रहने दीजिए न अक्षय बाबू, झाड़ू लगाते वक्त नौकर ही फेंक देगा।"

उसका हाथ अलग करके अक्षयने कागज उठा लिये।

"हाँ, पढ लिया।" कहते हुए आशु बाबू उठके बैठ गये। आँख उठाकर देखा कि अजितने उधरके सोफेपर बैठकर कलके अखबारोंपर नजर दौड़ाना शुरू कर दिया है! अविनाशने कुछ कहनेका मौका पा जानेसे एक सन्तोषकी साँस ली और कहा, "मैंने भी अक्षयका लेख शुरूसे आखिर तक ध्यानसे पढा है, आशु बाबू। अधिकांश बातें सच और मूल्यवान् हैं। देशकी सामाजिक व्यवस्थाका अगर सुधार किया जाय तो उसे अच्छी तरह जाने हुए और पक्के मार्गपर ही करना चाहिए। हम मानते हैं कि योरोपके समागमसे हमने बहुत-सी अच्छी चीजें पाई हैं और अपनी बहुतेरी त्रुटियोंको हमने देखा है, परन्तु हमारा सुधार हमारे अपने मार्गपर ही होना चाहिए। दूसरोंके अनुकरणसे हमारा कल्याण नहीं हो सकता। भारतीय नारीकी जो विशिष्टता है, जो उसकी अपनी चीज़ है, अगर लोभ और मोहके वश होकर हम उससे उसे भ्रष्ट करें, तो हम हर तरफसे असफल होंगे।—ठीक है कि नहीं, अक्षय बाबू?"

बातें अच्छी हैं और सब अक्षय बाबूके लेखकी हैं। विनय-वश उन्होंने मुँहसे और कुछ नहीं कहा, पर आत्म-गौरवकी अनिर्वचनीय तृप्तिसे मुँदे नेत्रोंसे कई बार सिर हिलाया।

आशु बाबूने निष्कपटतासे स्वीकार करते हुए कहा, "इस विषयमें तो कोई तर्क नहीं, अविनाश बाबू। अनेक मनीषी अनेक दिनोंसे यह बात कहते आये हैं, और शायद भारतका कोई भी आदमी इसका विरोध नहीं करता।"

अक्षय बाबूने कहा, "करनेका रास्ता ही नहीं, और इसके अलावा और भी एक विषय है जो इस लेखमें लिखा नहीं गया है, किन्तु कल नारी-कल्याण समितिमें मैं अपने भाषणमें कहूँगा।"

आशु बाबूने कमलकी तरफ मुँह फेरकर कहा, "तुम्हारे लिए तो समितिकी तरफसे निमंत्रण आया नहीं है, तुम वहाँ नहीं जाओगी। मैं भी गंठियासे लाचार हूँ। मैं भले ही न जाऊँ, पर है यह तुम्हीं लोगोंकी भलाई-बुराईकी बात। अच्छा कमल, तुम्हें तो इस बातपर आपत्ति नहीं होगी?"

और किसी समय होता तो आजके दिन कमल चुप ही रहती, पर, एक तो उसका मन यों ही ग्लानिसे भरा हुआ था, दूसरे इतने आदमियोंकी इस पौरुष-हीन संघबद्धता और दम्भपूर्ण प्रतिकूलतासे उसके मनमें एक आग-सी जल उठी। परन्तु अपनेको यथासाध्य संयत करके वह मुँह उठाकर हँसती हुई बोली, "कौन-सी बातपर आशु बाबू? अनुकरणपर या भारतीय विशिष्टतापर?"

आशु बाबूने कहा, "मान लो कि दोनों ही पर!"

कमलने कहा, "अनुकरण चीज [illegible] बाहरकी नकल हो, तो वह

धोखा है, अनुकरण है ही नहीं; क्यों कि तब वह आकृतिसे मेल खाते हुए भी प्रकृतिसे नहीं मिलती। मगर, भीतर-बाहरसे वह अगर एक-सी हो तो 'अनुकरण' होनेके कारण लज्जित होनेकी उसमें कोई भी बात नहीं।"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए कहा, "है क्यों नहीं कमल, है। उस तरह सर्वाङ्गीण अनुकरणमें हम अपनी विशेषता खो बैठते हैं। उसके मानी है अपनेको बिल्कुल ही खो बैठना। इसमें अगर दुःख और लज्जा नहीं, तो किसमें है बताओ?"

कमलने कहा, "भले ही खो बैठें आशु बाबू! भारतके वैशिष्ट्य और योरोपके वैशिष्ट्यमें बड़ा भारी भेद है; परन्तु किसी देशके किसी वैशिष्ट्यके लिए मनुष्य नहीं है, बल्कि मनुष्यके लिए ही उस वैशिष्ट्यका आदर है। असल बात विचारनेकी यह है कि वर्तमान समयमें वह वैशिष्ट्य उसके लिए कल्याणकर है या नहीं। इसके सिवा और सब बातें सिर्फ अन्ध-मोह हैं।"

आशु बाबूने व्यथित होकर कहा, "सिर्फ अन्ध-मोह ही हैं कमल, उससे ज्यादा कुछ नहीं?"

कमलने कहा, "नहीं, उससे ज्यादा कुछ नहीं। सिर्फ इसीलिए कि किसी एक जातिकी कोई एक विशेषता बहुत दिनोंसे चली आ रही है क्या उस देशके मनुष्योंको अपने कल्याण-अकल्याणका ख्याल किये बगैर उसी साँचेमें हमेशा ढलते रहना होगा? इसके क्या मानी? मनुष्यसे बढ़कर मनुष्यकी विशेषता नहीं हो सकती, और इस बातको जब हम भूल जाते हैं तब विशेषता भी जाती रहती है और मनुष्यको भी हम खो बैठते हैं। यहींपर तो वास्तविक लज्जा है आशु बाबू।"

आशु बाबू मानो हतबुद्धि-से हो गये, बोले, "तब तो फिर सब एकाकार हो जायगा? भारतीयके रूपमें तो फिर हमें पहचाना भी नहीं जा सकेगा? इतिहासमें ऐसी घटनाओंकी साक्षी भी मौजूद है।"

आशु बाबूके कुण्ठित और विक्षुब्ध चेहरेकी तरफ देखकर कमलने हँसते हुए कहा, "तब मुनि-ऋषियोंके वंशधरके रूपमें भले ही न पहचाना जाय, पर मनुष्यके रूपमें तो हमें पहचाना ही जायगा और जिसे आप ईश्वर कहा करते हैं, वह भी पहचान लेगा, उससे भी गलती न होगी।"

अक्षयने उपहासके ढंगसे चेहरेको कठोर बनाकर कहा, "ईश्वर सिर्फ हम ही लोगोंका है! आपका नहीं?"

कमलने जवाब दिया, "नहीं।"

अक्षयने कहा, "यह सिर्फ शिवनाथकी प्रतिध्वनि है, सिखाई हुई बात है।"
हरेन्द्र बोल उठा, "ब्रूट!" (हिंस्र पशु!)
देखिए हरेन्द्र बाबू—"
"देख रहा हूँ। बीस्ट!" (पशु!)

आशु बाबू सहसा मानो स्वप्नोत्थितकी भाँति जाग उठे। बोले, "देखो कमल, दूसरोंकी बात मैं नहीं कहना चाहता, पर, हमारा भारतीय वैशिष्ट्य सिर्फ बात ही बात नहीं है। इसका चला जाना कितनी जबरदस्त क्षति है, उसका हिसाब लगाना दुःसाध्य है। कितने धर्म, कितने आदर्श, कितने पुराण-इतिहास, काव्य, उपाख्यान, शिल्प,—कितनी कितनी अमूल्य सम्पदाएँ,—सब कुछ इसी वैशिष्ट्यपर ही तो आजतक जीवित हैं। फिर इनमेंसे तो कुछ भी नहीं रह जायगा!"

कमलने कहा, "रहने रखनेके लिए आखिर इतनी व्याकुलता क्यों? जो जानेके नहीं, सो नहीं जायँगे। मनुष्यकी आवश्यकताओंके अनुसार फिर वे नवीन रूप, नवीन सौन्दर्य, नवीन मूल्य लेकर दिखाई देंगे। वही होगा उनका सच्चा परिचय। अन्यथा, सिर्फ इसीलिए कि बहुत दिनोंसे कोई चीज है, उसे और भी बहुत दिनोंतक पकड़े रहना होगा,—यह कैसी बात है!"

अक्षयने कहा, "इसके समझनेकी शक्ति नहीं है आपमें।"

हरेन्द्रने कहा, "आपके अशिष्ट व्यवहारपर मुझे आपत्ति है अक्षय बाबू!"

आशु बाबूने कहा, "यह मैं नहीं कहता कमल, कि तुम्हारी युक्तियोंमें सत्य नहीं, पर जिसकी तुम अवज्ञासे उपेक्षा कर रही हो उसके भीतर भी बहुत-सा सत्य है। नाना कारणोंसे हमारे सामाजिक विधि-विधानोंपर तुम्हारी अश्रद्धा हो गई है। मगर एक बात मत भूलो कमल, कि बाहरके बहुत-से उत्पात हमें सहने पड़े हैं, फिर भी जो आजतक हम अपनी सम्पूर्ण विशेषताओंको लिए जिन्दा हैं सो केवल इसीलिए कि हमारा आधार सत्य था। संसारकी बहुत-सी जातियाँ बिलकुल लुप्त हो चुकी हैं।"

कमलने कहा, "तो इसमें भी दुःख किस बातका है? हमेशा उन्हें जगह घेरे बैठे रहनेकी भी क्या आवश्यकता है?"

आशु बाबूने कहा, "यह दूसरी बात है कमल।"

कमल कहने लगी, "भले ही हो। पिताजीसे मैंने सुना था कि आर्योंकी एक शाखा योरोपमें जाकर रहने लगी थी, आज वह नहीं है। मगर उनके बदले जो हैं, वे और भी बड़े हैं। ऐसा ही अगर यहाँ होता, तो उनकी तरह

ही हम लोग भी आज पूर्व-पितामहोंके लिए शोक करने न बैठते, और न अपने सनातन वैशिष्ट्यपर दम्भ करते हुए दिन ही गुजारते। आप कह रहे थे अतीतके उपद्रवोंकी बात, पर यह भी तो सत्य नहीं कहा जा सकता कि उनसे भी बढ़कर उपद्रव भविष्यमें हमारे भाग्यमें नहीं बदे हैं या हमारी सारी ही अलफें कट चुकी हैं। तब हम लोग जीवित रहेंगे किसके बलपर, बताइए भला ?"

आशु बाबूने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया; मगर अक्षय बाबू उद्दीप्त हो उठे, बोले, "तब भी हम जीवित रहेंगे अपने उस आदर्शकी नित्यताके बलपर जो कि हजारों युगोंसे हमारे मनमें अविचलित बना हुआ है। जो आदर्श हमारे दानमें, हमारे पुण्यमें, हमारी तपस्यामें मौजूद है, जो आदर्श हमारी नारी-जातिके अक्षय सतीत्वमें निहित है, हम उसीके बलपर जीवित रहेंगे। हिन्दू कभी नहीं मरते।"

अजित हाथका अखबार फेंककर उनकी तरफ आँखें फाड़ फाड़ कर देखता रहा, और क्षण-भरके लिए कमल भी चुप हो रही। उसे ख्याल आ गया कि निबन्ध लिखकर इसी आदमीने उसपर अकारण आक्रमण किया है। उसे वह कल नारी जातिके कल्याणके लिए अनेक नारियोंके समक्ष दंभके साथ पढ़ेगा, और उसमें सारेके सारे कटाक्ष सिर्फ उसीको लक्ष्य करके किये हैं। दुर्जय क्रोधसे उसका चेहरा सुर्ख हो उठा, परन्तु इस बार भी उसने अपनेको सम्हाल लिया और स्वाभाविक स्वरमें कहा, "आपके साथ बात करनेकी मेरी इच्छा नहीं होती अक्षय बाबू, मेरे आत्म-सम्मानमें चोट लगती है।" यह कहकर वह आशु बाबूकी तरफ मुँह फेरकर कहने लगी, "यही बात मैंने आपसे कहना चाही थी कि कोई भी आदर्श सिर्फ इसीलिए कि वह बहुत काल तक स्थायी रहा है, नित्य स्थायी नहीं हो सकता और उसके परिवर्तनमें भी लज्जाकी कोई बात नहीं, उससे जातिकी विशिष्टता भी अगर जाती हो तो भी। एक उदाहरण देती हूँ। अतिथि-सत्कार हमारा एक बड़ा आदर्श है। कितने काव्य, कितने कथानक, कितनी धर्म-कथाएँ इसपर रची जा चुकी हैं। अतिथिको खुश करनेके लिए दाता कर्णने अपने पुत्र तककी हत्या कर दी थी। इस बात-पर न जाने कितने आदमियोंने आँसू बहाये होंगे। फिर भी, यह कार्य आज सिर्फ कुत्सित ही नहीं बल्कि बीभत्स माना जायगा। एक सती स्त्रीने पतिको कंधेपर रखकर गणिकालय पहुँचा दिया था,—सतीत्वके इस आदर्शकी भी किसी

दिन तुलना नहीं थी,—मगर आज ऐसी घटना कहीं हो जाय तो वह मनुष्यके हृदयमें सिर्फ घृणा ही उत्पन्न करेगी। आपका अपने जीवनका जो आदर्श, जो त्याग, लोगोंके मनमें श्रद्धा और विस्मयका कारण हो रहा है, किसी दिन ऐसा भी आ सकता है जब यह सिर्फ अनुकम्पाकी बात रह जायगी और उस निष्फल आत्म-निग्रहकी ज्यादतीपर लोग उपहास करके चले जायँगे।"

इस आघातकी निर्ममतासे लहमे भरके लिए आशु बाबूका चेहरा वेदनासे पीला पड़ गया। वे बोले, "कमल, इसे निग्रहके रूपमें ले क्यों रही हो, यह तो मेरा आनन्द है। यह तो मेरा उत्तराधिकार-सूत्रसे प्राप्त अनेक युगोंका धन है।"

कमलने कहा, "हो अनेक युगोंका। सिर्फ वर्ष गिनकर ही आदर्शका मूल्य नहीं आँका जाता। अचल, अटल गलतियोंसे भरे समाजके हजारो वर्ष भी, सम्भव है, भविष्यके दस वर्षके गति-वेगमें बह जायँ। वे दस वर्ष ही उन हजारों वर्षोंसे बहुत ज्यादा बड़े हैं, आशु बाबू!"

अजित अकस्मात् धनुष्यसे छोड़े हुए तीरकी तरह सीधा खड़ा हो गया, बोला, "आपकी बातोंकी उग्रतासे इन लोगोंके शायद आश्चर्यका ठिकाना न रहा होगा; मगर मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। मैं जानता हूँ कि इस विजातीय मनोभावका मूल स्रोत कहाँ है? किस लिए हमारे समस्त मंगल-आदर्शोंके प्रति आपको इतनी जबरदस्त घृणा है? मगर चलिए, अब हमारे पास व्यर्थ देर करनेका वक्त नहीं है, पाँच बज गये।"

अजितके पीछे पीछे सबके सब चुपचाप कमरेसे बाहर निकल गये। किसीने उससे अभिवादन तक नहीं किया, और न किसीने उसकी तरफ मुड़कर देखा ही। युक्तियाँ जब हार मानने लगीं तब इस तरहसे पुरुषोंके दलने विजय-घोषणा करके अपने पौरुषको कायम रखा। उन लोगोंके चले जानेपर आशु बाबूने धीरे धीरे कहा, "कमल, मुझपर ही आज तुमने सबसे ज्यादा चोट पहुँचाई है, किन्तु मैंने ही आज तुम्हें मानो सम्पूर्ण हृदयसे प्यार किया है। मेरी मणिसे मानो किसी अंशमें भी तुम कम नहीं हो बेटी।"

कमलने कहा, "इसका कारण यह है कि आप सचमुचमें महान् पुरुष हैं चाचाजी। आप तो इन सबों जैसे मिथ्या नहीं हैं। पर मेरा भी समय निकला जा रहा है, मैं जाती हूँ।" इतना कहकर उसने उनके पाँवोंके पास जाकर झुकके प्रणाम किया।

प्रणाम वह साधारणतः किसीको भी नहीं करती। आज उसके इस अनहोने आचरणसे आशु बाबू चंचल हो उठे। आशीर्वाद देते हुए बोले, "अब कब आओगी बेटी?"

"अब शायद मेरा आना न होगा चाचाजी।" इतना कहकर वह कमरेसे बाहर चली गई और आशु बाबू उसकी तरफ देखते हुए चुपचाप बैठे रहे।

१२

आगरेके नये मजिस्ट्रेटकी स्त्रीका नाम है मालिनी। उन्हींके प्रयत्नसे और उन्हींके मकानपर नारी-कल्याण समितिकी स्थापना हुई। प्रथम अधिवेशनकी तैयारियाँ जरा कुछ समारोहके साथ ही हुई थीं; किन्तु अधिवेशन अच्छी तरह सम्पन्न तो हुआ नहीं, बल्कि उसमें नजाने कैसी एक विशृङ्खला-सी पैदा हो गई। बात मुख्यतः यह थी कि यद्यपि आयोजन सब स्त्रियोंके लिए ही था पर पुरुषोंके शरीक होनेकी भी मनाही नहीं थी, बल्कि देखा जाय, तो इस आयोजनमें पुरुष ही कुछ विशेषतासे निमंत्रित हुए थे। इसका भार था अविनाशपर। मननशील लेखकके तौरपर अक्षयका नाम था; और लेखोंका दायित्व उन्हींने ग्रहण किया था। अतएव, उन्हींके परामर्शके अनुसार एक शिवनाथके सिवा और किसीको भी छोड़ा नहीं गया था। अविनाशकी छोटी साली नीलिमा घर घर जाकर धनीसे लेकर गरीब तक शहरकी सभी बंगाली शिष्ट महिलाओंसे, आनेके लिए अनुरोध कर आई थी। सिर्फ, जानेकी इच्छा नहीं थी आशु बाबूकी; पर गठियाके दर्दने आज उनकी रक्षा नहीं की, मालिनी खुद आकर उन्हें पकड़ ले गई। अक्षय अपना व्याख्यान हाथमें लिये तैयार था, मामूली विनय-भाषणके प्रचलित दो-चार शब्दोंके बाद वह सीधा और कठोर होकर खड़ा हो गया और व्याख्यान पढ़ने लगा। थोड़ी ही देरमें ऐसा लगा कि उसका वक्तव्य विषय जैसा अरुचिकर है वैसा ही लम्बा भी। साधारणतः जैसा हुआ करता है, प्राचीन कालकी सीता-सावित्री आदिका उल्लेख करके उसने आधुनिक नारी-जातिकी आदर्श-हीनतापर कटाक्ष किये थे। एक आधुनिक और शिक्षिता महिलाके घरपर उन्हींकी 'तथाकथित' शिक्षाके विरुद्ध कड़वी बातें कहनेमें उसे संकोच नहीं हुआ। कारण अक्षयको गर्व था कि अप्रिय सत्य कहनेमें वह डरता नहीं। लिहाजा, व्याख्यानमें सत्य हो चाहे न हो, अप्रिय वचनोंकी कमी नहीं थी।

और उस 'तथाकथित' शब्दकी व्याख्याके लक्ष्यमें विशिष्ट उदाहरणकी नजीर थी कमल। इस अनिमंत्रित स्त्रीके प्रति अक्षयके व्याख्यानमें इतना अपमान था कि जिसकी हद नहीं। अन्तके अंशमें वह गहरे दुःखके साथ ये शब्द कहनेके लिए मजबूर हो गया कि इसी शहरमें ठीक ऐसी ही एक स्त्री मौजूद है, जो शिष्ट समाजमें बराबर प्रश्रय पा रही है। ऐसी स्त्री, जिसने अपने दाम्पत्य-जीवनको अवैध जानकर भी लज्जित होना तो दूर रहा, सिर्फ उपेक्षाकी हँसी हँसी है, जिसके लिए विवाह-अनुष्ठान सिर्फ अर्थहीन संस्कार मात्र है और पति-पत्निका अत्यन्त एकनिष्ठ प्रेम जिसकी दृष्टिमें महज मानसिक कमजोरी है। उपसंहारमें अक्षयने इस बातका भी उल्लेख किया कि नारी होकर भी जो नारीके गम्भीरतम आदर्शको अस्वीकार करती है, तथाकथित उस शिक्षिता नारीके उपयुक्त विशेषण और वास-स्थानके निर्णयमें वक्ताको अपनी तरफसे कोई संशय न होनेपर भी सिर्फ संकोचवश वह उसे बतानेमें असमर्थ है। इस त्रुटिके लिए वह सबसे क्षमा चाहता है।

वर्तमान महिला-समाजमें मनोरमाके सिवा और किसीने उसे आँखोंसे नहीं देखा था। परन्तु उसके रूपकी ख्याति और चरित्रकी अख्यातिने हरेक पुरुषके मुँहपर चढ़कर व्याप्त होनेमें कसर नहीं रखी थी। यहाँतक कि इस नव-प्रतिष्ठित नारी-कल्याण-समितिकी सभानेत्री मालिनीके कानोंमें भी वह पहुँच चुकी थी, और इस विषयको लेकर नारी-मण्डलमें परदाके भीतर और बाहर कुतूहलकी सीमा न रही थी। इसलिए, रुचि और नीतिके सम्यक् विचारके उत्साहसे उद्दीप्त प्रश्नमालाकी प्रखरतासे व्यक्तिगत आलोचना तीव्र हो उठनेमें शायद देर न लगती, किन्तु वक्ताका परम मित्र हरेंद्र ही इसमें कठोर प्रतिबन्धक हो उठा। वह सीधा उठके खड़ा हो गया और बोला, "अक्षय बाबूके इस निबन्धका मैं पूर्णतः प्रतिवाद करता हूँ। सिर्फ अप्रासंगिक होनेकी वजहसे ही नहीं,—किसी भी महिलापर उसकी गैरमौजूदगीमें आक्रमण करनेकी रुचि बीस्टली (पाशविक) और उसके चरित्रका अकारण उल्लेख करना अशिष्ट और हेय है। नारी-कल्याण-समितिकी तरफसे इस निबन्ध-लेखकको धिक्कार देना चाहिए।"

इसके बाद ही एक महामारीका-सा काण्ड उठ खड़ा हुआ। अक्षय हिता-हितज्ञानशून्य होकर जो मनमें आया, कहने लगा और उसके उत्तरमें स्वल्प-भाषी हरेन्द्र बीच-बीचमें 'बीस्ट' और 'ब्रूट' कहकर जवाब देने लगा।

मालिनी नई नई ही इनके सम्पर्कमें आई थी, सहसा इस तरहके वाक्-वितण्डाकी उग्रतासे बड़ी आफतमें पड़ गई; और उस उत्तेजनाके प्रवाहमें अपना मतामत प्रकट करनेमें किसीने भी कंजूसीसे काम नहीं लिया। चुप रहे सिर्फ एक आशु बाबू। निबन्ध पढ़े जानेके प्रारम्भसे ही जो वे गरदन झुकाकर बैठे सो सभा खतम होने तक फिर उन्होंने मुँह नहीं उठाया। और भी एक आदमीने इस तर्कयुद्धमें साथ नहीं दिया, और वे थे हरेन्द्र-अक्षयकी बातचीतके नित्य-अभ्यस्त अविनाश बाबू।

इस बातको मालिनी जानती थी कि व्यक्ति विशेषके चरित्रकी भलाई-बुराईका निरूपण करना इस समितिका लक्ष्य नहीं है और इस प्रकारकी आलोचनासे नर-नारीमेंसे किसीका भी कल्याण नहीं होता। इस बातको भी किसी तरह मालिनी समझ गई कि निबन्धमें आशु बाबूपर भी विशेष कटाक्ष किया गया है और इससे उनको अत्यन्त क्लेश हुआ है। सभा भंग होनेके बाद वह चुपकेसे अपना आसन छोड़कर इस प्रौढ़ व्यक्तिके पास आकर बैठ गई और लज्जित मृदु कण्ठसे बोली, "निरर्थक आज आपकी शान्ति नष्ट करनेके लिए दुःखित हूँ आशु बाबू।"

आशु बाबूने हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "घरमें भी मैं अकेला ही बैठा रहता। यहाँ कमसे कम समय तो कट गया।"

मालिनीने कहा, "वह इससे अच्छा था।" फिर जरा ठहरकर कहा, आज वे हैं नहीं यहाँ, मणि यहाँसे खा-पीकर जायगी।"

"अच्छी बात है, मैं यहाँसे जाकर गाड़ी भेज दूँगा। लेकिन और सब स्त्रियाँ?"

"वे भी सब आज यहीं जीमेंगी?"

अविनाश और अजितके साथ आशु बाबू गाड़ीमें बैठ ही रहे थे कि हरेन्द्र और अक्षय आ धमके। उन्हें भी पहुँचा देना होगा। राजी होना पड़ा। रास्ते-भर आशु बाबू मौन रहे। निरन्तर उन्हें इस बातका खयाल होता रहा कि कमलको लक्ष्य करके स्त्रियोंके बीच अक्षयने उनपर अशिष्ट कटाक्ष किया है।

गाड़ी घरपर पहुँची। नीचेके बरामदेमें एक अपरिचित आदमी बैठा था। बम्बईवालों जैसी उसकी पोशाक थी। पास जाकर आशु बाबूका उसने अँग्रेजीमें अभिवादन किया।

"क्या है?"

जवावमे उसने एक परचा हाथमें देते हुए कहा, " चिट्ठी है।"

चिट्ठी उन्होंने अजितके हाथमें दे दी। अजितने उसे मोटरकी बत्तीके सामने ले जाकर पढ़ा, बोला, " कमलकी चिट्ठी है।"

" कमलकी ? क्या लिखा है कमलने ?"

" लिखा है, पत्र ले जानेवालेसे सब मालूम होगा।"

आशु बाबूके जिज्ञासु चेहरेसे उसकी तरफ देखते ही उसने कहा, "उनकी इच्छा नहीं थी कि यह चिट्ठी और किसीके हाथ पड़े। आप उनके अपने आदमी हैं। मेरे उनपर कुछ रुपये चाहिए थे—"

बात खतम भी न हुई थी कि आशु बाबू सहसा अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे, बोले, " मैं उसका अपना आदमी नहीं हूँ, असलमें वह मेरी कोई नहीं होती, उसकी तरफसे मैं क्यों रुपये देने लगा ?"

गाड़ीमेंसे अक्षयने कहा, " जस्ट लाइक हर !" (ठीक उसीकी तरह)

बात सभीके कानमें पड़ी। पत्रवाहक भला आदमी था। लज्जित होकर बोला, " रुपये आपको नहीं देने होंगे, वे ही देंगी। आप सिर्फ कुछ दिनोंके लिए जामिन हो जायँ तो—"

आशु बाबूका गुस्सा और भी बढ़ गया। उन्होंने कहा, " जामिन होनेकी गर्ज़ मेरी नहीं है, उनके पति हैं, कर्जकी बात उन्हींसे करिएगा।"

भला आदमी अत्यन्त विस्मित हुआ, बोला, " उनके पतिकी बात तो मैंने सुनी नहीं।"

" पता लगानेसे सुन लेंगे। गुड्नाइट्। आओ अजित, अब देर न करो।" कहकर वे उसे लेकर ऊपर चले गये। ऊपरके सहनवाले बरण्डेसे झाँककर फिर एक बार ड्रायवरको याद दिला दिया कि मजिस्ट्रेट साहबकी कोठीपर गाड़ी पहुँचनेमें देर नहीं होनी चाहिए। अजित सीधा अपने कमरेमें जा रहा था, पर आशु बाबू उसे अपनी बैठकमें ले गये, बोले, " बैठो। देख लिया मज़ा ?"

इस बातके मानी क्या हुए, अजित समझ गया। वास्तवमें उनकी स्वाभाविक सहृदयता, शान्तिप्रियता और चिराभ्यस्त सहिष्णुताके साथ उनकी इस क्षण-भर पहलेकी अकारण और अनचेती रूक्षताने एक अक्षयके सिवा शायद और किसीको भी आघात पहुँचानेमें कसर नहीं रखी। बगैर कुछ जाने एक दिन इस रहस्यमयी तरुणीके प्रति अजितका अन्तःकरण श्रद्धा और विस्मयसे

भर उठा था। मगर जिस दिन कमलने निशीथ रात्रिमें अपने विगत नारी-जीवनका कच्चा चिट्ठा अनयास ही खोलकर रख दिया, उस दिनसे अजितके विराग और घृणाकी सीमा न रही। इसी तरह उसके ये कई दिन बीते हैं, और इसीसे आज नारी-कल्याण-समितिके उद्घाटनके अवसरपर आदर्शवादी अक्षयने जो नारीत्वका आदर्श दिखानेके बहाने इस स्त्रीपर जितने भी कटाक्ष और कटूक्तियाँ की थीं, उनसे अजितको दुःख नहीं हुआ था। मानों उसने ऐसी ही आशा कर रखी थी। फिर भी, अक्षयकी क्रोधान्ध बर्बरतामें चाहे जितना भी तीक्ष्ण शूल क्यों न हो, आशु बाबू अभी अभी जो कर बैठे उससे कमलके मानो कान मल दिये गये,—केवल अनचेती होनेके कारण ही नहीं, पुरुषके अयोग्य होनेके कारण भी। कमलको वह अच्छा नहीं कहता। उसके मतामत और सामाजिक आचरणकी सुतीव्र निन्दामें अजितने अन्याय नहीं देखा। वह अपने अन्दर इस रमणीके विरुद्ध कठोर घृणाका भाव ही परिपुष्ट होता देख रहा है। वह कहता है, शिष्ट समाजमें जो चलता नहीं उसे छोड़ देनेमें अपराध छूता तक नहीं। मगर इससे क्या हुआ!—दुर्दशामे पड़ी एक कर्ज़दार स्त्रीकी बुरे दिनोंमें माँगी गई मामूली-सी कुछ रुपयोंकी भीखको लात मार देनेमें मानो वह पुरुषमात्रके चरम असम्मानका अनुभव करके मन ही मन जमीनमें गड़ गया। उस रातकी सारी बातचीत उसे याद आ गई। उसे बड़े जतनसे खिलाते वक्त कमलने जो उसे चाय-बगीचेकी आप-बीती सारी घटनाएँ सुनाई थीं: उसकी माका किस्सा, उसका अपना इतिहास, अँग्रेज-मैनेजर साहबके घर पैदा होनेका वर्णन,—सब बातें उसके दिमागमें घूमने लगीं। वे जितनी अद्भुत थीं, उतनी ही अरुचिकर। मगर वह सब कहनेकी उसे जरूरत क्या थी? और छिपा रखती तो नुकसान ही क्या होता? मगर दुनियाकी इस सहज सुबुद्धिके जमा-खर्चका हिसाब शायद कमलके खयालमें नहीं आया। अगर आया भी हो तो उसने उसकी परवाह नहीं की।

और सबसे बढ़कर आश्चर्यजनक उसका कठोरसे कठोर धैर्य है। दैवक्रमसे उसीके मुँहसे उसे पहले-पहल मालूम हुआ कि शिवनाथ कहीं बाहर नहीं गया, इसी शहरमें छिपा हुआ है। और सुनकर वह चुप रही। चेहरेपर न तो वेदनाका आभास दिखाई दिया और न ज़बानसे शिकायतकी भाषा निकली। इतने बड़े मिथ्याचारके विरुद्ध उसने दूसरेके सामने शिकायत करनेका नाम

तर्क नहीं लिया।—उस दिन सम्राट्-महिषी मुमताजके स्मृति-सौधके किनारे बैठ कर जो बातें उसने हँसते हुए हँसी-हँसीमे मुँहसे निकाली थीं उनका बिलकुल अक्षरशः पालन किया।

आशु बाबू खुद भी शायद क्षण-भरके लिए अनमने हो गये थे, सहसा सचेत होकर पहले प्रश्नकी पुनरावृत्ति करते हुए बोले, "मजा देख लिया न अजित ? मैं निश्चयके साथ कहता हूँ कि यह उस शिवनाथकी ही चालाकी है।"

अजितने कहा, "नहीं भी हो। बिना जाने कुछ कहा नहीं जा सकता।"

आशु बाबूने कहा, "हाँ, हो सकता है। मगर मेरा विश्वास है कि यह चाल शिवनाथकी है। मुझे वह बड़ा आदमी जानता है न ?"

अजितने कहा, "यह तो सभीको मालूम है। कमल खुद भी न जानती हो, सो बात नहीं।"

आशु बाबूने कहा, "तब तो और भी ज्यादा बुरा है। पतिसे छिपाना तो अच्छी बात नहीं।"

अजित चुप रहा। आशु बाबू कहने लगे, "पतिसे छिपाकर और शायद उनकी रायके खिलाफ दूसरेसे रुपये उधार लेना स्त्रीके लिए कितनी बुरी बात है ! इसे हरगिज प्रश्रय नहीं दिया जा सकता।"

अजितने कहा, "उन्होंने रुपये तो माँगे नहीं, सिर्फ जामिन होनेके लिए अनुरोध किया था।"

आशु बाबूने कहा, "दोनो बातें एक ही हैं।" क्षण-भर मौन रहकर वे फिर बोले, "और फिर मुझे अपना आदमी बताकर उस आदमीको धोखा किस लिए दिया ? वास्तवमें मैं तो उसका कोई लगता नहीं।"

अजितने कहा, "शायद वे आपको सचमुच ही अपना समझती हों। मालूम होता है, उनका किसीको धोखा देनेका स्वभाव नहीं है।"

"नहीं नहीं, मैंने ठीक वैसी कोई बात नहीं कही अजित।" कहकर मानो उन्होंने अपने तईं जवाबदेही की। उस आदमीको सहसा झोंकमें आकर विदा कर देनेसे उन्हें भी मन ही मन बड़ी भारी ग्लानि-सी हो रही थी। बोले, "अगर वह मुझे अपना ही समझती थी और दो-चार सौ रुपयोंकी जरूरत ही आ पड़ी थी, तो वह सीधी खुद आकर ले जाती। खामखाह एक बाहरके आदमीको सबके सामने भेजनेकी क्या जरूरत थी ? और चाहे जो हो, पर उस लड़कीमें विवेक बिलकुल नहीं।"

नौकरने आकर कहा कि भोजन तैयार है। अजित उठना चाहता था कि आशु बाबूने कहा, " तुमने उस आदमीको मार्क किया था अजित, कैसा भद्दा चेहरा था,—मनी-लैण्डर ठहरा न ! वहाँ जाकर शायद तरह तरहकी बातें बनाकर कहेगा। "

अजितने हँसकर कहा, " बनानेकी जरूरत ही नहीं पड़ेगी,—सच सच कह देना ही काफी है। " यह कहकर ज्यों ही वह जानेको तैयार हुआ कि आशु बाबू सचमुच विचलित हो उठे, बोले, " यह अक्षय तो बिलकुल ही नुईसान्स मालूम होता है। आदमीकी सहन-शक्तिकी सीमा लाँघ जाता है। बल्कि एक काम न करो अजित, जदुको बुलाकर उस ड्रॉअरको खोलके देखो तो क्या है। कमसे कम पाँच-सात सौ रुपया,—फिलहाल जो हो, भेज दो। अपना ड्राइवर शायद उन लोगोंका घर जानता है,—शिवनाथको कभी कभी पहुँचा आया है। " कहकर उन्होंने खुद ही जोर जोरसे नौकरको पुकारना शुरू कर दिया।

अजितने रोकते हुए कहा, " जो होना था सो हो चुका,—अब रातमें यह रहने दीजिए, कल सवेरे विचार कर देखिएगा। "

आशु बाबूने प्रतिवाद किया, " तुम समझते नहीं अजित, कोई खास जरूरतके बिना रातहीको वह आदमी हरगिज न भेजती। "

अजित क्षण-भर स्थिर खड़ा रहा। अन्तमें बोला; " ड्राइवर तो अभी है नहीं यहाँ, मनोरमाको लेकर न जाने कबतक लौटे। इस बीच कमलको सब मालूम हो ही जायगा। उसके बाद रुपया भेजना उचित न होगा। शायद आपसे अब वे सहायता लेंगी भी नहीं। "

" मगर वह तो सिर्फ तुम्हारा अनुमान ही है अजित ? "

" हाँ, अनुमान तो है ही। "

" लेकिन, परदेसमे रुपयेकी जरूरत तो उसके लिए इससे भी ज्यादह हो सकती है ? "

" सो हो सकती है, मगर वह जरूरत शायद आत्म-सम्मानसे बढ़कर न भी हो। "

आशु बाबूने कहा, " लेकिन यह भी तो तुम्हारा सिर्फ अनुमान ही है। "

अजितने सहसा कोई उत्तर नहीं दिया। क्षण-भर सिर झुकाये चुप रहकर वह बोला, " नहीं, यह अनुमानसे भी बढ़कर है। यह मेरा विश्वास है। " इतना कहकर वह धीरे धीरे कमरेसे बाहर निकल गया।

आशु बाबूने अबकी उसे रोका नहीं, सिर्फ वेदनासे दोनों आँखें फैलाकर वे उसकी ओर देखते रहे। इस बातको वे खुद भी जानते हैं कि कमलके सम्बन्धमें ऐसा विश्वास होना न असम्भव है और न असङ्गत। निरुपाय पश्चात्ताप उनके अन्तःकरणको मानो खरोंचने लगा।

१३

नारी-कल्याण-समितिसे लौटनेपर नीलिमा अविनाश बाबूको ले बैठी, "मुकर्जी महाशय, कमलसे एक दफे मिलूँगी। मेरी बड़ी इच्छा है, उसे निमंत्रण देकर खिलाऊँ।"

अविनाशने आश्चर्यके साथ कहा, "तुम्हारी हिम्मत तो कम नहीं है छोटी मालिकिन! सिर्फ जान-पहचान ही नहीं, एकबारगी निमंत्रण तक कर देना चाहती हो?"

"क्यों, वह कोई बाघ-भालू है? उससे इतना डर किस लिए?"

अविनाशने कहा, "बाघ-भालू इस प्रान्तमें नहीं मिलते, नहीं तो तुम्हारे हुक्मसे उन्हें भी निमंत्रण दे आता। मगर इन्हें नहीं दे सकता। अक्षय सुन लेगा तो फिर खैर नहीं। मुझे देश-निकाला देकर ही पिण्ड छोड़ेगा।"

नीलिमा बोली, "अक्षय बाबूसे मैं नहीं डरती।"

अविनाशने कहा, "तुम्हारे न डरनेसे कोई नुकसान नहीं; उसका काम मेरे अकेलेके डरनेसे चल जायगा।"

नीलिमाने जिद करते हुए कहा, "नहीं, सो नहीं होगा। तुम न जाओगे, तो मैं खुद जाकर उन्हें लिवा लाऊँगी।"

"मगर मैं तो उनका घर जानता नहीं।"

नीलिमा बोली, "लालाजी जानते हैं। मैं उनके साथ चली जाऊँगी। वे तुम जैसे डरपोक नहीं हैं।"

फिर जरा सोचकर कहने लगी, "तुम लोगोंके मुँहसे जो सुना करती हूँ, उससे तो मालूम होता है कि शिवनाथ बाबूका ही कुसूर है। सो उन्हें तो मैं न्योतना नहीं चाहती। मैं चाहती हूँ कमलको देखना, उनसे बातचीत करना। कमल अगर आनेको राजी हो जाय तो मजिस्ट्रेट साहबकी स्त्री,—वे भी आनेके लिए कहती हैं, समझे?"

अविनाश समझ तो सब गये, पर साफ साफ सम्मति न दे सके और न

उनको रोकनेकी ही हिम्मत हुई। नीलिमापर वे सिर्फ स्नेह और श्रद्धा ही करते हों सो बात नहीं, मन ही मन उससे डरते भी थे।

दूसरे दिन सवेरे हरेन्द्रको बुलवाकर नीलिमाने कहा, "लालाजी, तुम्हें एक काम और करना होगा। तुम कुँआरे आदमी ठहरे, 'घरमें बहू तो है नहीं जो सदाचारके नामपर तुम्हारे कान ऐंठ देगी। बासेमें रहते हो, बिना मा-बापके अनाथ लड़कोंके झुण्डमें,—तुम्हे डर किस बातका है?"

हरेन्द्रने कहा, "डरकी बात पीछे होती रहेगी, पहले बताइए, काम क्या करना होगा?"

नीलिमाने कहा, "कमलसे मैं मिलूँगी, बातचीत करूँगी, घर बुलाकर खिलाऊँगी। तुम उनका घर जानते हो क्या? मुझे साथ लेकर उन्हें निमंत्रण दे आना होगा। किस वक्त चलोगे, बताओ?"

हरेन्द्रने कहा, "जिस वक्त हुक्म करोगी उसी वक्त। लेकिन घर-मालिक, भाई साहबका अभिप्राय क्या है?" कहकर उसने बरामदेके उस तरफ बैठे हुए अविनाशकी तरफ इशारा किया। वे इज़ी चेयरपर पड़े हुए 'पायोनियर' पढ रहे थे। सुना सब कुछ, पर बोले कुछ नहीं।

नीलिमाने कहा, "वे अपना अभिप्राय अपने पास रक्खें,—मुझे उसकी जरूरत नहीं। मैं उनकी साली हूँ, सालीकी बहन नहीं जो 'पति परमगुरु'की गदा घुमाकर मुझपर शासन करेंगे। मेरे जीमें जिसे आयेगा, उसे खिलाऊँगी। मजिस्ट्रेटकी बहूने कहा है कि उन्हें खबर मिल गई तो वे भी आयेंगीं। उन्हें अच्छा न लगे, तो उतना समय वे और कहीं जाकर बिता आवें।"

अविनाशने अखबारपरसे दृष्टि बिना हटाये ही जवाब दिया, "लेकिन यह काम अच्छा नहीं होगा, हरेन्द्र, कलकी बात याद है न? आशु बाबू जैसे सदाशिव आदमीको भी सावधान होना पड़ता है।"

हरेन्द्रने कुछ जवाब नहीं दिया और इस डरसे, कि कहीं कलकी वह रुपयोंवाली बात न उठ खड़ी हो और नीलिमाको भी न मालूम हो जाय, उसने इस प्रसङ्गको चटसे दबाकर कहा, "इससे तो बल्कि एक काम न करें भाभी, उन्हें मेरे घरपर आनेका निमंत्रण दे आइए और आप हो जाइए उस घरकी मालिकिन। लक्ष्मीहीन घरमें कमसे कम एक दिन तो लक्ष्मीका आविर्भाव हो जाय। मेरे लड़के भी थोड़ी बहुत बुरी-भली चीजें खाकर खुशी मना लें।"

नीलिमाने अभिमानके स्वरमें कहा, "अच्छी बात है, ऐसा ही सही,—मैं भी भविष्यमें उलहनोंसे बच जाऊँगी।"

अविनाश उठके बैठ गये, बोले, "अर्थात् छीछालेदर होनेमें फिर कोई कसर ही न रह जायगी। कारण, शिवनाथको छोड़कर सिर्फ उन्हींको तुम्हारे घर निमंत्रित करनेकी फिर कोई कैफियत ही नहीं दी जा सकेगी। इससे तो बल्कि, यही सुननेमें बहुत अच्छा लगेगा कि औरतें आपसमें जान-पहचान करना चाहती हैं।"

बात सचमुच ही युक्तिसंगत थी। इसलिए यही तय हुआ कि कालेजकी छुट्टी होनेके बाद हरेन्द्र नीलिमाको साथ ले जाकर कमलको न्योता दे आवे।

शामको हरेन्द्रने आकर कहा कि अब तकलीफ उठाकर वहाँ जानेकी कोई जरूरत नहीं। कल रातको न्योतेकी बात उनसे कही जा चुकी है और वे आनेको राजी हो गई हैं।

नीलिमा उत्सुक हो उठी। हरेन्द्र कहने लगा, "कल घर लौटते वक्त अचानक उनसे रास्तेमें भेंट हो गई। साथमें पल्लेदारके सरपर एक भारी-भरकम बकस था। मैंने पूछा कि इसमें क्या है? कहाँ जा रही हो? उन्होंने कहा, जा रही हूँ जरा कामसे। तब फिर मैंने आपका परिचय देते हुए कहा, भाभीने आपको कल शामके लिए न्योता भेजा है। औरतोंका मामला ठहरा, आपको जाना ही पड़ेगा। जरा चुप रहकर उन्होंने कहा, अच्छा। मैंने कहा, तय हुआ है कि मेरे साथ चलकर वे आपको बाकायदा न्योता दे आयें,—अब उनके आनेकी जरूरत है क्या? जरा हँसकर उन्होंने कहा, नहीं। मैंने पूछा, अकेली तो आप आ नहीं सकेंगी, कब किस वक्त आकर मैं आपको लिवा जाऊँ? सुनकर वे वैसे ही हँसने लगीं। बोलीं, अकेली ही मैं पहुँच जाऊँगी, अविनाश बाबूका मकान मैं जानती हूँ।"

नीलिमा पिघल गई, बोली, "लड़की ऐसे तो बहुत अच्छी मालूम होती है। घमंड बिलकुल नहीं।"

बगलके कमरेमें अविनाश बाबू कपड़े बदलते हुए कान लगाके सब सुन रहे थे, वहींसे पूछने लगे, "और कुलीके सिरपरका वह भारी बकस? उसका इतिहास तो बताया ही नहीं भाई साहब?"

हरेन्द्रने कहा, "पूछा नहीं।"

"पूछते तो अच्छा करते। शायद बेचने या गिरवी रखने जा रही होंगी।"

हरेन्द्रने कहा, "हो सकता है। आपके पास गिरवी रखने आवें तो आप इतिहास पूछ लीजिएगा।" इतना कहकर वह चला ही जा रहा था कि सहसा दरवाजेके पास खड़ा होकर बोला, "भाभी, अपनी नारी-कल्याण-समितिमें अक्षयका व्याख्यान तो आपने सुन ही लिया होगा? हम लोग उसे 'ब्रूट' कहा करते हैं। मगर उस बेचारेमे और थोड़ी-सी पाखण्ड-बुद्धि होती तो वह समाजमें बड़ी आसानीसे साधु-महंतके रूपमे चल जाता, क्यों, ठीक है न भाई साहब?"

अविनाश भीतरसे ही गरज उठे, "हाँ जी, नित्यानन्द श्रीगौराङ्ग महाप्रभुजी, इसमे सन्देह ही क्या है? बन्धुवरको वह कौशल्य सिखा दो न जाकर।"

"कोशिश करूँगा। लेकिन अब चल दिया भाभीजी, कल फिर यथासमय हाजिर होऊँगा।" कहकर वह चला गया।

नीलिमाने तैयारीमें कोई कसर नहीं उठा रखी। मनोरमा शुरूसे ही कमलके बहुत खिलाफ थी। यह जानकर कि वह किसी भी हालतमें नहीं आयेगी, आशु बाबूके घरमें किसीसे भी नहीं कहा गया था। मालिनीको खबर भेजी गई थी, पर अचानक अस्वस्थ हो जानेसे वे भी नहीं आ सकीं।

कमल ठीक वक्तपर आ गई। यान-वाहनपर नहीं, अकेली और पैदल आ पहुँची। घर-मालिकिनने उसे आदरके साथ बिठाया। अविनाश सामने खड़े थे। कमलको उन्होने बहुत दिनोंसे देखा नहीं था, आज उसके चेहरे और कपड़ोंकी तरफ देखकर आश्चर्यचकित रह गये। गरीबीकी छाप उनपर साफ पड़ी हुई थी। आश्चर्य प्रकट करते हुए बोले, "रातको अकेली हो पैदल चली आ रही हो क्या, कमल?"

कमलने कहा, "इसका कारण अत्यन्त साधारण है अविनाश बाबू, समझनेमें जरा भी कठिनाई नहीं।"

अविनाश बाबू लज्जित हो गये, और लज्जा छिपानेके लिए चटसे बोल उठे, "नहीं नहीं, क्या कह रही हो तुम? काम ठीक नहीं हुआ लेकिन,—छोटी बहू, ये ही हैं कमल। इन्हींका दूसरा नाम है शिवानी। इन्हींको देखनेके लिए तुम इतनी उतावली कर रही थीं। चलो, भीतर चल कर बैठो। तैयारी तो तुम्हारी सब हो चुकी होगी छोटी मालिकिन, फिर निरर्थक देर करनेसे क्या फायदा? ठीक समयपर इन्हें फिर घर भी तो पहुँचना है।"

इस सब उपदेश और पूछ-ताछमें बहुत कुछ ज्यादती थी। न तो इसमें जवाबकी कोई जरूरत थी और न इसकी कोई उम्मीद ही करता था।

हरेन्द्रने आकर कमलको नमस्कार किया। बोला "अतिथिको स्वागतके साथ ग्रहण करते वक्त मैं पहुँच नहीं पाया भाभीजी, कसूर हो गया। अक्षय आया था, उसे यथोचित मीठे वाक्योंसे परितुष्ट करके विदा करनेमें देर हो गई।" और वह हँसने लगा।

भीतर जाकर कमलने जो भोजन-सामग्रियोंका प्राचुर्य देखा तो क्षण-भर चुपचाप खड़ी रह गई और बोली, "मेरे लिए चीजें तो ये खूब बनाई हैं, लेकिन मैं तो यह सब खाती नहीं।" इसपर सब व्यस्त हो उठे तो वह बोली, "आप लोग जिसे हविष्यान्न कहते हैं, मैं सिर्फ वही खाती हूँ।"

सुनकर नीलिमा दंग रह गई, बोली, "यह क्या बात कही आपने? आप हविष्य खायेंगीं किस दुःखके कारण?"

कमलने कहा, "बात ठीक है। दुःख नहीं है, सो बात नहीं; लेकिन यह सब खाती नहीं हूँ, इसलिए मेरी जरूरतें भी कम हैं। आप कुछ खयाल न करें।"

"पर बिना खयाल किये काम भी तो नहीं चलता।" नीलिमाने क्षुण्ण होकर कहा, "नहीं खानेसे इतनी चीजें मेरी नष्ट जो होंगी?"

कमल हँस दी। बोली, "जो होना था सो तो चुका, उसे लौटाया नहीं जा सकता। उसपर फिर खाकर खुद क्यों नष्ट होऊँ?"

नीलिमाने विनयके साथ अन्तिम चेष्टा करते हुए कहा, "सिर्फ आज-भरके लिए, सिर्फ एक दिनके लिए भी क्या नियम भंग नहीं कर सकतीं?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

उसके हँसते हुए मुँहके सिर्फ एक ही शब्दको सुनकर सहसा किसीको कुछ भी ठीक खयाल नहीं आ सकता कि उसमें दृढ़ता कितनी जबरदस्त थी। परंतु इस दृढ़ताकी भनक पड़ी हरेन्द्रके कानमें और सिर्फ वही समझा कि इसमें किसी तरहकी फेरफार नहीं हो सकता। इसीसे घरमालिकिनकी तरफसे अनुरोधकी पुनरुक्ति होते ही उसने टोक दिया, बोला, "रहने दो भाभी, अब मत कहो। चीज आपकी कोई बिगड़ेगी नहीं, मेरे यहाँके लड़के आकर पोंछ-पाँछके सब साफ कर जायँगे। पर इनसे अब आग्रह मत करो। बल्कि जो कुछ खायँ उसका इन्तजाम करो।"

नीलिमा गुस्सा होकर बोली, "सो किये देती हूँ। पर मुझे अब तसल्ली देनेकी जरूरत नहीं लालाजी, तुम रहने दो। यह घास-फूस नहीं है जो तुम अपने झुण्डके झुण्ड भेड़-बकरोंको चरा दोगे। इसे मैं रास्तेमें फेंक दूँगी, पर उन्हें न खिलाऊँगी।"

हरेन्द्रने हँसते हुए कहा," क्यों, उनपर आपकी इतनी नाराज़गी क्यों है ?"

नीलिमाने कहा," उन्हींकी बदौलत तो तुम्हारी यह दुर्गति है। बाप रुपया छोड़ गये हैं, खुद भी पैदा कम नहीं करते;—अब तक बहू आती तो लड़के-बालोंसे घर भर जाता। ऐसा अभागा काण्ड तो न होता। खुद भी जैसे कुँआरे कार्तिक महाराज हो, दल भी वैसा ही लायक तैयार हो रहा है। तुमसे कहे देती हूँ, उन्हें मैं हर्गिज न खिलाऊँगी।—जाने दो, मेरा सब बिगड़ जाने दो!"

कमल कुछ भी न समझ सकी, आश्चर्यसे देखती रह गई। हरेन्द्र लज्जित होकर बोला," भाभीजीकी बहुत दिनोंसे मुझपर जो नालिश चल रही है, यह उसीकी सजा है।" कहते हुए उसने संक्षेपमें मामला सुलझाना चाहा, बोला, " वे विना मा-बापके मेरे अनाथ छात्र हैं। मेरे पास रहकर स्कूल और कालेजमें पढ़ते हैं। उन्हींपर इनका साराका सारा गुस्सा जा पड़ा है।"

कमलने अत्यन्त आश्चर्यके साथ कहा," यह बात है क्या? कहाँ, मैंने तो आज तक कभी सुना नहीं!"

हरेन्द्रने कहा," सुनने लायक इसमें कुछ नहीं। लेकिन वे हैं सब चरित्रवान् अच्छे लड़के। उनपर मेरा स्नेह है।"

नीलिमा क्रुद्ध स्वरमें बोल उठी," उनका प्रण है कि बड़े होकर वे सब देश-सेवा करेंगे।—अर्थात् गुरु जैसे ही ब्रह्मचारी वीर बनकर दिग्विजय करेंगे।"

हरेन्द्रने कहा," चलेंगी एक दिन उन्हें देखने? देखके प्रसन्न होंगी।"

कमल उसी वक्त राजी होकर बोली, " अगर आप ले जायँ तो मैं कल ही जा सकती हूँ।"

हरेन्द्रने कहा, " नहीं, कल नहीं, और किसी दिन। हमारे आश्रमके राजेंद्र और सतीश काशी गये हैं, उन लोगोंके आ जानेपर आपको ले जाऊँगा। मैं दावेके साथ कह सकता हूँ, उन्हें देखकर आप खुश हो जायँगी।"

अविनाश अभी अभी आके खड़े हुए थे। उसकी बात सुनकर वे आँखें फाड़कर बोले, " कुछ अभागे आवारोंका अड्डा अभीसे आश्रम भी हो गया क्या? न जाने कितना पाखण्ड रचना तुझे आता है रे हरेन्द्र।"

नीलिमा नाराज हो गई। बोली, " यह तुम्हारी बेजा बात है मुखर्जी साहब! लालाजी तो तुमसे आश्रमके लिए चन्दा माँगने आये नहीं जो पाखण्डी कहके गाली दे रहे हो? अपने खरचेसे पराये लड़कोंको आदमी

बनाना पाखण्ड नहीं है। बल्कि जो ऐसा आक्षेप करते हैं, उन्हींको पाखण्डी कहना चाहिए। ”

हरेन्द्र हँसता हुआ बोला, “ भाभी, अभी अभी आप ही तो उन्हें भेड़-बकरोंका झुण्ड बताकर तिरस्कार कर रही थीं, अब आपकी ही बातकी प्रति-ध्वनि करनेमें भाई साहबको यह पुरस्कार मिल रहा है ? ”

नीलिमाने कहा, “ मैं कह रही थी गुस्सेमें। लेकिन इन्होंने ऐसा क्या सोचकर कहा ? पाखण्ड किसे कहते हैं, पहले अपने अन्दर स्पष्ट कर लो, फिर दूसरेसे कहो। ”

कमलने पूछा, “ आपके तो सभी लड़के स्कूल-कालेजमें पढ़ते होंगे ? ”

हरेन्द्रने कहा, “ हाँ, बाहरसे तो ऐसा ही है। ”

अविनाश बोल उठे, “ और भीतरसे क्या सब प्राणायाम और रेचक कुम्भककी चर्चा करते हैं ? उसे भी साथ साथ क्यों नहीं कह देते ? ”

सुनके सब हँस दिये। नीलिमाने अनुनयके स्वरमें कमलसे कहा, “ मुखर्जी महाशयका आजका मिजाज देखकर उनके विषयमें कोई धारणा न बना लीजिएगा। कभी कभी इनका दिमाग़ बहुत ठण्डा रहता है, नहीं तो बहुत पहले ही मुझे यहाँसे भागकर जान बचानी पड़ती। ” कहकर वह हँसने लगी।

कहींपर जरा-कुछ उत्तापकी भाप जमती जा रही थी, इस स्निग्ध परिहासके बाद मानो वह उड़ गई। इतनेमें महाराजने आकर खबर दी कि कमलका भोजन तैयार है। अतएव, वर्तमान आलोचना स्थगित रखकर सबको उठना पड़ा।

* * * *

करीब दो घण्टे बाद भोजनादि हो चुकनेपर सब आकर जब बाहरके कमरेमें बैठे, कमलने तब पूर्व-प्रसंगके सिलसिलेमें पूछा, “ लड़के आपके रेचक कुम्भक नहीं करते तो न सही, पर कालेजकी पुस्तकें कण्ठस्थ करनेके सिवा और जो भी कुछ करते हैं सो क्या है ? ”

हरेन्द्रने कहा, “ करते जरूर हैं। इस बातकी कोशिशमें भी वे लापरवाही नहीं करते जिससे कि भविष्यमें वास्तवमें आदमी बन सकें। मगर जिस दिन आपके पाँवोंकी धूल वहाँ पड़ेगी उस दिन सब बातें समझा दूँगा। आज नहीं। ”

इस स्त्रीका इतना ज्यादा सम्मान किया जा रहा था कि अविनाशका सारा बदन ईर्ष्यासे जलने लगा, मगर वे चुप ही बने रहे।

नीलिमाने कहा, “ आज कहनेमें आखिर अड़चन क्या है, लालाजी ? ”

अपनी शिक्षा-पद्धतिको सबके सामने नहीं खोलना चाहते तो न सही, पर यह बतानेमें क्या दोष है कि प्राचीन कालके भारतीय आदर्शपर अपनी तरह सबको ब्रह्मचारी बननेकी शिक्षा दे रहे हो ? तुमसे तो मैंने आभासके रूपमें यही सुना था ?"

हरेन्द्रने विनयके साथ कहा, "झूठ सुना है, यह तो मैं नहीं कह रहा भाभीजी !" कहते कहते उसे उस दिनकी बहसकी बात याद आ गई। कमलको देखकर बोला, "आपको भी शायद मेरे कामसे सहानुभूति न होगी ?"

कमलने कहा, "काम आपका क्या है, बगैर ठीकसे मालूम किये तो कुछ कहा नहीं जा सकता हरेन्द्र बाबू ! मगर यह तो कोई युक्ति नहीं है कि प्राचीन-कालके ढॉचेमें ढाल देना ही वास्तवमें मनुष्य बना देना है—"

हरेन्द्रने कहा, "परन्तु वही तो हमारे भारतवर्षका आदर्श है।"

कमलने जवाब दिया "पर यह किसने तय कर दिया कि भारतका आदर्श ही चिर-युगका चरम-आदर्श है—बताइए ?

अविनाश अब तक कुछ बोले नहीं थे, अब गुस्सेको दबाकर बोले, "हो सकता है कि चरम आदर्श नहीं भी हो, लेकिन कमल, यह हमारा पूर्व पुरुषोंका आदर्श जो है। भारतवासियोंका यह हमेशाका लक्ष्य है, यही उन लोगोंके चलनेका एक-मात्र मार्ग है। हरेन्द्रके आश्रमकी बात मैं नहीं जानता, लेकिन उसने यही लक्ष्य अगर ग्रहण किया है तो मैं उसे आशीर्वाद देता हूॅ।"

कमल कुछ देरतक चुप बैठी उनके मुॅहकी तरफ देखती रही, फिर बोली, "मालूम नहीं, क्यों आदमीसे यह गलती होती है। अपने सिवा मानो वे और किसी भारत-वासीको ऑखोंसे देखते ही नहीं। भारतमे और भी तो बहुत-सी जातियॉ रहती हैं, वे इस आदर्शको भला क्यो अपनानें चलीं ?"

अविनाश कुपित हो उठे, बोले, "चूल्हेमें जायॅ वे। मेरे पास ऐसा आवेदन निष्फल है। मैं तो सिर्फ अपना ही आदर्श अगर स्पष्टतासे देख सका तो उसीको काफी समझूॅगा।"

कमलने धीरेसे कहा, "यह आपकी बहुत ही गुस्सेकी बात है अविनाश बाबू। नहीं तो, आपको इतना बड़ा अन्धभक्त समझनेकी मेरी प्रवृत्ति नहीं होती।" फिर जरा ठहरकर कहने लगी, "मगर, क्या मालूम, शायद पुरुष सबके सब इसी तरह विचार किया करते हों। उस दिन अजित बाबूके सामने भी अकस्मात् यही प्रसग छिड़ गया था। भारतकी सनातन विशिष्टता और

उसकी स्वतंत्रता नष्ट होनेके उल्लेखसे उनका तमाम चेहरा मारे वेदनाके सफेद फक पड़ गया था। किसी दिन वे उत्कट स्वदेशी थे,—आज भी भीतर ही भीतर शायद वही हैं,—यह बात उनके लिए सिर्फ प्रलयका दूसरा नाम है।" इतना कहकर उसने एक लम्बी साँस ली और चुप रह गई। अविनाश शायद कुछ जवाब देनेको थे, पर कमल उधर बिना देखे ही कहने लगी, "लेकिन मैं सोचती हूँ कि इसमें डर किस बातका है? किसी एक देश-विशेषमें पैदा होनेकी बजहसे ही उसका आचार-व्यवहार छातीसे क्यों चिपटाये रहना पड़ेगा? चली ही गई उसकी अपनी विशेषता, तो इसमें हर्ज किस बातका? इतनी ममता क्यों? विश्वके समस्त मानव अगर एक ही विचार, एक ही भाव, एक ही विधि-विधानकी ध्वजा थामके खड़े हो जायँ, तो इसमें हानि ही क्या है? यही डर है न कि फिर भारतीयके तौरपर हम पहचाने नहीं जायँगे? न पहचाने जायँ, न सही। इस परिचयपर तो कोई आपत्ति नहीं करेगा कि विश्वकी मानव-जातिमेंके हम एक हैं, उसका गौरव क्या कुछ कम है?"

अविनाशको सहसा कोई जवाब ढूँढ़े न मिला, बोले, "कमल, तुम जो कह रही हो, खुद ही उसका अर्थ नहीं समझतीं। इससे मनुष्यका सर्वनाश हो जायगा।"

कमलने जवाब दिया, "मनुष्यका नहीं होगा अविनाश बाबू, जो लोग अभिमानमें अन्धे हो रहे हैं उनके अहंकारका सर्वनाश होगा।"

अविनाशने कहा, "ये सब कोरी शिवनाथकी बातें हैं।"

कमलने कहा, "यह तो मुझे नहीं मालूम कि वे भी यही बात कहते हैं।"

अबकी बार अविनाश अपनेको सम्हाल न सके। व्यंगसे चेहरेको स्याह करके बोले, "खूब मालूम है। सब बातें कण्ठस्थ कर रक्खी हैं, और जानतीं नहीं कि किसकी हैं!"

उनके इस भद्दे अशिष्ट व्यवहारका कमलने कोई जवाब नहीं दिया, जवाब दिया नीलिमाने। बोली, "बातें चाहे जिसकी भी हों मुखर्जी साहब, मास्टरीके काममें कड़ी बातकी धमकी देकर छात्रोंका मुँह बन्द किया जा सकता है, पर उससे समस्याका हल नहीं होता। प्रश्नका जवाब न दे सकते हों लालाजी, तो इसमें शरमानेकी कोई बात नहीं, पर शिष्टताको लाँघ जानेमें जरूर शरम आनी चाहिए!—एक गाड़ी बुलवाने भेजो किसीको भइया। तुम्हें इन्हें

घरतक पहुँचा आना पड़ेगा। तुम ब्रह्मचारी आदमी ठहरे, तुम्हें साथ भेजनेमें तो कोई डर है ही नहीं।" कहते हुए उसने कटाक्षसे अविनाशकी तरफ देखा, और बोली, "मुकर्जी साहबका चेहरा जैसा मीठा हो उठा है, उसको देखकर अब ज्यादा देर करना ठीक नहीं।"

अविनाश गम्भीर होकर बोले, "अच्छी बात है, तुम लोग बैठी गप्पें करो, मैं सोने जा रहा हूँ।" और वे उठके चल दिये।

नौकर गाड़ी बुलाने गया था। हरेन्द्रने कमलके प्रति लक्ष्य करके कहा, "मेरे आश्रममें मगर एक दिन आना ही होगा। उस दिन लिवाने जाऊँ तो आप 'ना' नहीं कर सकेंगी।"

कमलने हँसते हुए कहा, "ब्रह्मचारियोंके आश्रममें मुझे क्यों घसीट रहे हैं हरेन बाबू? मैं न गई तो न सही।"

"नहीं, सो नहीं होगा। ब्रह्मचारी होनेसे हम लोग ऐसे भयानक नहीं, बिलकुल सीधे-सादे हैं। गेरुआ नहीं पहनते, जटा-वल्कल वगैरह भी कुछ नहीं। सर्वसाधारणके बीचमें हम उन्हींके साथ मिले हुए हैं।"

"मगर यह भी तो अच्छा नहीं। असाधारण होकर साधारणमें आत्मगोपनकी कोशिश करना भी एक तरहका अयुक्त आचरण है। शायद अविनाश बाबूने इसीको पाखण्ड कहा होगा। इससे तो बल्कि जटा-वल्कल, गेरुआ वगैरह कहीं अच्छा। उससे आदमीके पहचाननेमें सहूलियत होती है, और ठगाये जानेकी भी कम सम्भावना है।"

हरेन्द्रने कहा, "आपके साथ तर्कमें जीतना मुश्किल है,—हारना ही पड़ेगा। मगर वास्तवमें क्या आप हमारी संस्थाको अच्छा नहीं समझतीं? सफल होऊँ चाहें न होऊँ, इसका आदर्श तो महान् है?"

कमलने कहा, "सो तो मैं नहीं कह सकती हरेन्द्र बाबू। अन्य सभी संयमोंकी तरह यौन-संयममें भी सत्य है, मगर वह गौण सत्य है। धूमधाम या समारोहके साथ उसे जीवनका मुख्य सत्य बना देनेसे वह भी एक तरहका असंयम हो जाता है। उसका दण्ड भी है। आत्म-निग्रहके उग्र दम्भसे आध्यात्मिकता क्षीण होने लगती है।—तो ठीक है, मैं आऊँगी आपके आश्रममें एक दिन।"

हरेन्द्रने कहा, "आना ही होगा, न आनेसे मैं छोड़ूँगा नहीं। लेकिन एक बात कहे देता हूँ, हमारे यहाँ आडम्बर नहीं है, प्रदर्शनके तौरपर हम कुछ नहीं करते।" कहते कहते सहसा नीलिमाकी तरफ इशारा करके बोला,

"मेरी आदर्श तो ये हैं। इन्हींकी तरह हम लोग स्वाभाविकताके पथिक हैं। वैधव्यका कोई बाह्य प्रकाश इनमें नहीं है,—बाहरसे मालूम होगा कि मानो विलासितामें ये मग्न हो रही हैं; मगर मैं जानता हूँ इनका दुःसाध्य आचार-विचार, इनका कठोर आत्म-शासन—"

कमल मौन रही। हरेन्द्र भक्ति और श्रद्धासे विगलित होकर कहने लगा, "आप भारतके अतीत युगके प्रति श्रद्धासम्पन्न नहीं हैं, भारतका आदर्श आपको मुग्ध नहीं करता; परन्तु बताइए तो भला कि नारीत्वकी इतनी बड़ी महिमा,—इतना बड़ा आदर्श और किस देशमें है? इस घरकी ये गृहिणी हैं, भाईसाहबकी मातृहीन सन्तानकी ये जननीके समान हैं। इस घरकी सारी जिम्मेवारी इन्हींपर है। यह सब होते हुए भी, इनका कोई स्वार्थ नहीं, कोई बन्धन नहीं। बताइए न, किस देशकी विधवाएँ इस तरह पराये काममें अपनेको खपा सकती हैं?"

कमलका चेहरा स्मित हास्यसे विकसित हो उठा; उसने कहा, "इसमें भलाईकी कोन-सी बात है हरेन बाबू? हो सकता है कि पराये घरकी निःस्वार्थ गृहिणी और पराये बच्चोंकी निःस्वार्थ जननी होनेका दृष्टान्त संसारमें और कहीं न हो। नहीं होना अद्भुत हो सकता है, मगर अद्भुत होनेके कारण ही अच्छा हो जायगा किस तरह?"

सुनकर हरेन्द्र दंग रह गया; और नीलिमा मारे आश्चर्यके एकटक उसके चेहरेकी तरफ देखती रह गई। कमलने उसीको लक्ष्य करके कहा, "वाक्योंकी छटासे, विशेषणोंके चातुर्यसे लोग इसे चाहे जितना गौरवान्वित क्यों न कर डालें, पर गृहिणीपनेके इस मिथ्या अभिनयमें सन्मान नहीं है। इस गौरवको छोड़ देना ही अच्छा है।"

हरेन्द्रने गभीर वेदनाके साथ कहा, "यह तो एक सुशृंखल घर-गृहस्थीको नष्ट करके चले जानेका उपदेश है। इस बातकी तो आपसे कोई आशा नहीं रखता था।"

कमलने कहा, "मगर घर-गृहस्थी तो इनकी अपनी है नहीं, होती तो ऐसा उपदेश न देती। और मज़ा यह कि इसी तरहसे कर्म-भोगके नशेमें पुरुष हमें मतवाली बनाये रखते हैं। उनकी वाहवाहीकी तेज़ शराब पीकर हमारी आँखोंपर नशा छा जाता है। सोचती हैं, यही शायद नारी-जीवनकी चरम सार्थकता है। हमारे यहाँके चायके बगीचोंके हरीश बाबूकी बात याद

आ गई। उनकी जब सोलह सालकी छोटी बहिनका पति मर गया तब उसे घर लाकर वे अपने झुण्डके झुण्ड बाल-बच्चे दिखाके रोते हुए बोले, 'लक्ष्मी, बहन मेरी, अब ये ही तेरे बाल-बच्चे हैं। फिकर किस बातकी बहन,—इन्हें पाल-पोसकर आदमी बनाओ, इनकी अपनी माकी तरह।—इस घरकी सर्वे-सर्वा बनकर आजसे तू सार्थक हो, यही मेरा आशीर्वाद है।' हरीश बाबू बड़े भले आदमी हैं, बगीचे-भरमें सब लोग धन्य धन्य कर उठे।—सभीने कहा, लक्ष्मीके भाग्य अच्छे हैं।—अच्छे तो हैं ही। सिर्फ स्त्रियाँ ही समझ सकती हैं कि इतना बड़ा दुर्भाग्य,—इतनी बड़ी धोखेबाजी और कुछ हो ही नहीं सकती। मगर एक दिन जब यह विडम्बना पकड़ी जाती है, तब प्रतीकारका समय निकल जाता है।"

हरेन्द्रने कहा, "फिर?"

कमलने कहा, "फिरकी बात मुझे नहीं मालूम हरेन्द्र बाबू। लक्ष्मीकी सार्थकताका अन्त मैं नहीं देख पाई,—उसके पहले ही वहाँसे मुझे चला आना पड़ा था।—लेकिन बस, अब तो गाड़ी आके खड़ी हो गई। चलिए, रास्तेमें जाते जाते बताऊँगी। नमस्कार।" कहकर वह उसी क्षण उठके खड़ी हो गई।

नीलिमा चुपचाप नमस्कार करके खड़ी रही। उसकी आँखोंके तारे मानो अंगारोंकी तरह जलने लगे।

१४

'आश्रम' शब्द कमलके सामने हरेन्द्रके मुँहसे अचानक ही निकल गया था। उसे सुनकर अविनाशने जो मज़ाक उड़ाया था वह बेजा नहीं था। लोगोंको यही मालूम था कि कुछ गरीब विद्यार्थी वहाँ रहकर बिना खर्चके स्कूल-कालेजमें पढते हैं। वास्तवमे अपने वासस्थानको बाहरवालोंके सामने इतने बड़े गौरवके पदपर प्रतिष्ठित करनेका संकल्प हरेन्द्रके मनमें नहीं था। वह बिलकुल ही एक मामूली बात थी और शुरू शुरूमें उसका श्रीगणेश भी साधारण तौरपर ही हुआ था। परन्तु इन सब चीजोंका स्वभाव ही ऐसा है कि दाताकी कमजोरीसे अगर एक बार भी इनमें गति पैदा हो गई तो फिर उस गतिमें विराम नहीं आता। कठोर जंगली पौधेकी तरह मिट्टीका साराका सारा रस खींचकर जड़से लेकर पत्तों तक व्याप्त होनेमें फिर देर नहीं लगती। हुआ भी यही। इस विषयमें यहाँ कुछ और कह देना ठीक होगा।

हरेन्द्रके कोई भाई-बहन नहीं है। पिता वकालत करके धन-संचय कर गये थे। उनकी मृत्युके बाद घर-भरमें रह गई सिर्फ हरेन्द्रकी विधवा मा। वे भी तब परलोक सिधार गईं जब हरेन्द्रकी पढाई खतम हुई। लिहाजा अपना कहने लायक घरमें ऐसा कोई न रहा जो उसे ब्याह करनेके लिए तंग करता, अथवा स्वयं मेहनत और आयोजन करके उसके पाँवोंमें बेड़ी डाल देता। इसलिए पढ़ाई जब खतम हो गई तब महज कोई काम न रहनेके कारण ही हरेन्द्रने देश और देशवासियोंकी सेवामें मन लगाया। काफी साधु-संगति की, बेंकमें पड़ी रकमका ब्याज निकाल निकाल कर एक दुर्भिक्ष-निवारण-समिति कायम की, बाढ़-पीड़ितोंकी सहायताके लिए आचार्यदेवके दलमें शामिल हो गया, सेवक-संघमें मिलकर लूले-लँगड़े काने-बहरे, गूंगें-भूखोंको ला-लाकर उनकी सेवा करने लगा। इस तरह जैसे जैसे उसका नाम जाहिर होने लगा वैसे वैसे भले आदमियोंका दल आ-आकर उससे कहने लगा 'रुपया दो, परोपकार करें।' बढ़ती रुपये खतम होनेको थे, पूँजीमें हाथ लगाये विना अब कोई चारा नहीं था। ऐसी अवस्था जब आ पहुँची, तब अकस्मात् एक दिन अविनाशके साथ उसकी भेंट हुई और परिचय हो गया। सम्बन्ध चाहे जितनी दूरका हो, पर उसी दिन उसे पहले पहल पता चला कि उसकी दुनियामें अब भी एक आदमी ऐसा है जिसे वह आत्मीय कह सकता है। अविनाशके कालेजमें तब एक अध्यापककी जगह खाली थी; कोशिश करके वे उस कामपर उसकी नियुक्त कराकर अपने साथ आगरा ले गये। इस प्रान्तमें आनेका यही उसका इतिहास है। पछाँहकी तरफ मुसलमानी राज्यके शहरोंमें पुराने जमानेके बहुतसे बड़े बड़े मकान अब भी कम किरायेपर मिल जाया करते हैं; और उन्हींमेंसे एक हरेन्द्रने ले लिया। यही उसका आश्रम है।

मगर यहाँ आकर जो कई दिन उसने अविनाशके घर बिताये उन्हींके बीच नीलिमाके साथ उसका परिचय हो गया। उस रमणीने उसे विना जान-पहचानका आदमी समझकर एक दिन भी ओटमें रहकर नौकर-नौकरानीके मारफत आत्मीयता दिखलानेकी कोशिश नहीं की।—एकबारगी पहले ही दिन सामने निकल आई। बोली, "तुम्हें कब क्या चाहिए लालाजी, मुझसे कहनेमें शरमाना मत। मैं घरकी गृहिणी नहीं हूँ, मगर गृहिणी-पनेका भार सब मेरे ही ऊपर है। तुम्हारे भाई साहब कहते थे, छोटे बाबूकी खातिरदारीमें

कमी रह गई तो तनखा कट जायगी। सो इस गरीबिनीका नुकसान मत करा देना भाई, अपनी जरूरतोंसे वाकिफ करते रहना। "

हरेन्द्र क्या जवाब दे, उसकी कुछ समझमें न आया। मारे शरमके वह ऐसा सिकुड़ गया कि जो इन मीठी बातोंको अनायास ही हँसती हुई कह गई, उसके मुँहकी तरफ देख भी नहीं सका। पर शरम दूर होनेमें भी उसे दो-एक दिनसे ज्यादा देर न लगी। मालूम हुआ, जैसे उसे बिना दूर किये दूसरा कोई चारा ही नहीं। इस रमणीकी जैसी स्वच्छन्द और अनाडम्बर प्रीति है वैसी ही सहज-स्वाभाविक सेवा। एक तरफ जैसे यह बात उनके चेहरे-मोहरे, ओढाव-पहनाव और मधुर आलाप-आलोचनासे नहीं मालूम हो सकती कि वें विधवा हैं, इस घरमे उनका कोई वास्तविक आश्रय नहीं, वे भी इस घरमें गैर हैं,—वैसे ही यह भी नहीं मालूम पड़ता कि उनका यही सब कुछ है जो बाहरसे दीख रहा है।

उमर भी उनकी बिलकुल कम हो, सो बात भी नहीं है। शायद तीसके लगभग पहुँच चुकी है। उस उमरके योग्य गम्भीरता उनमें खोज निकालना मुश्किल है,—ऐसा हलका उनका हँसी-खुशीका मेला है। और मजा यह कि जरा-सा ध्यान देनेसे ही यह बात साफ समझी जा सकती है कि एक ऐसा अदृश्य आच्छादन उन्हें दिन-रात घेरे रहता है जिसके भीतर प्रवेश करनेका कोई रास्ता ही नहीं। न तो घरके नौकर-चाकर या दास-दासी ही वहाँ घुस सकते हैं और न मालिक ही।

इस घरमें, इसी आब-हवाके बीच हरेन्द्रके दो सप्ताह बीत गये। सहसा एक दिन यह सुनकर कि उसने अलग एक मकान किरायेपर ले लिया है, नीलिमाने नाराज होकर कहा, " इतनी जल्दी क्यों कर डाली लालाजी, यहाँ ऐसा कौन तुम्हें पकड़ रखना चाहता था ? "

हरेन्द्रने लज्जित होकर कहा, " एक दिन तो जाना ही पड़ता भाभीजी ! "

नीलिमाने जवाब दिया, " सो तो शायद जाना पड़ता। मगर देश-सेवाके नशेका रग अभी तक तुम्हारी आँखोंसे गया नहीं लालाजी, और भी कुछ दिन भाभीकी हिफाजतमें रह लेते तो अच्छा था। "

हरेन्द्रने कहा, " सो तो रहूँगा ही भाभीजी। यहीं तो हूँ, दसेक मिनटका रास्ता है यहाँसे, आपकी निगाह बचाके जाऊँगा कहाँ ? "

अविनाश घरके भीतर बैठे काम कर रहे थे; वहींसे बोले, " जाओगे

जहन्नुममें । बहुत मना किया कि और कहीं मत जा रे, यहीं रह । मगर सो कैसे हो ?—इज्जत बड़ी है या भाई साहबकी बात बड़ी है ? जा, नये अड्डेमें जाकर दरिद्र-नारायणकी सेवामें चढ़ा जो कुछ पास है सो ।—छोटी-मालिकिन, उससे कहना-सुनना व्यर्थ है । वह ठहरा चक्रका संन्यासी,—पीठ छिदाकर चरखीकी तरह घूमे बगैर इन लोगोंका जीना ही गलत है । "

नये मकानमें आकर हरेन्द्रने नौकर, रसोइया वगैरह रखकर अत्यन्त शान्त शिष्ट निरीह मास्टरोंकी तरह कालेजके काममें मन लगाया । बहुत बड़ा मकान है, उसमें बहुतसे कमरे हैं । दो-एक कमरोंके सिवा बाकीके सब यों ही खाली पड़े रहे । महीने-भर बाद ही ये सूने कमरे उसे पीड़ा देने लगे । किराया देना ही पड़ता है और काम कुछ आते नहीं । लिहाजा चिट्ठी गई राजेन्द्रके पास । वह था उसकी दुर्भिक्ष-निवारिणी-समितिका मंत्री । देशोद्धारके लिए विशेष आग्रहके कारण दो सालकी सजा भुगतकर पाँच छै महीने हुए छूटा था और पुराने बन्धु-बान्धवोंकी तलाशमें घूम रहा था । हरेन्द्रकी चिट्ठी और रेलका किराया पाकर वह उसी वक्त चला आया । हरेन्द्रने कहा, 'देखूँ, अगर तुम्हारे लिए कोई नौकरी-औकरी दिला सकूँ ।' राजेन्द्रने कहा, 'अच्छी बात है ।' उसका परम मित्र था सतीश । वह किसी तरह हवालातसे बचकर मेदिनीपुर जिलेके किसी एक गाँवमें ब्रह्मचर्याश्रम खोलनेकी उधेड़बुनमें लगा था; राजेन्द्रका पत्र पाते ही वह एक हफ्तेके अन्दर अपने साधु-संकल्पको स्थगित रख सीधा आगरे चला आया और अकेला ही नहीं आया, कृपा करके गाँवसे एक भक्तको भी साथ लेता आया । सतीशने इस बातको युक्ति और शास्त्र-वचनोंके बलपर बड़ी खूबीके साथ साबित कर दिया कि भारतवर्ष ही एकमात्र धर्म-भूमि है । मुनि-ऋषिगण ही इसके देवता हैं । हम लोग ब्रह्मचारी होना भूल गये हैं; इसीसे हमारा सब कुछ चला गया है । इस देशके साथ संसारके किसी भी देशकी तुलना नहीं हो सकती । कारण, हम ही लोग एक दिन थे जगतके शिक्षक और हम ही लोग थे मनुष्यके गुरु । लिहाजा, वर्तमानमें भारतवासियोंके लिए एकमात्र करने लायक काम है गाँव-गाँव और नगर नगरमें असंख्य ब्रह्मचर्याश्रम स्थापित करना । देशोद्धार करना अगर कभी सम्भव हुआ, तो वह इसी रास्तेसे सम्भव होगा ।

उसकी बातें सुनकर हरेन्द्र मुग्ध हो गया । सतीशका नाम तो उसने सुन रखा था, परन्तु परिचय न था; इसलिए इस सौभाग्यके लिए उसने मन ही

मन राजेन्द्रको धन्यवाद दिया; और इसके लिए भी अपनेको धन्य समझा कि पहले उसका व्याह नहीं हो गया। सतीश सर्ववादि-सम्मत अच्छी अच्छी बातें जानता था और कई दिनों तक वही बातें चलती रहीं : हम ही लोग इस पुण्यभूमिके मुनि-ऋषियोंके वंशधर हैं, हमारे ही पूर्वपुरुष एक दिन संसारके गुरु थे,—अत एव फिर एक दिन गुरु-पदके हम ही उत्तराधिकारी हो सकते हैं। कौन आर्य-रक्तसे उत्पन्न पाखण्डी इस बातका विरोध कर सकता है?—नहीं कर सकता। और कर सकने लायक दुर्मतिसम्पन्न आदमी भी वहाँ कोई न था।

हरेन्द्र उन्मत्त-सा हो गया परन्तु तपस्या और साधनाकी चीज होनेके कारण आश्रमकी सारी बातें यथासाध्य गुप्त रखी जाने लगीं, सिर्फ राजेन्द्र और सतीश बीच-बीचमें बाहर जाकर लड़के संग्रह करके ले आने लगे। जो उमरमें छोटे थे वे स्कूलमें भरती हो जाते और जो स्कूलकी शिक्षा पूरी करके उत्तीर्ण हो जाते वे हरेन्द्रकी कोशिशसे किसी न किसी कालेजमें दाखिल करा दिये जाते। इस तरह थोड़े ही समयमें लगभग सारा मकान नाना उमरके लड़कोंसे भर गया। बाहरके लोग विशेष कुछ जानते भी न थे और न कोई जाननेकी कोशिश ही करता था। उड़ती हुई खबरसे सिर्फ इतना ही सुन लेते थे कि हरेन्द्रके घरमें रहकर कुछ गरीब बंगाली लड़के पढते लिखते हैं। इससे ज्यादा अविनाशको भी मालूम न था और न नीलिमाको पता था।

सतीशके कठोर शासनमें घरमें मांस-मछली आनेका कोई रास्ता न था; ब्राह्म मुहूर्तमें उठकर सबको स्तोत्र-पाठ, ध्यान, प्राणायाम आदि शास्त्र-विहित प्रक्रियाएँ करनी पड़ती थीं; उसके बाद पढना लिखना और नित्य-कर्म। मगर अधिकारियोंका इससे भी मन नहीं भरा, और साधन-मार्ग क्रमशः कठोरतर हो गया। रसोइया महाराज भाग खड़े हुए, नौकरको बरखास्त कर दिया गया और उनका काम पारी-पारीसे लड़कोंपर आ पड़ा। किसी दिन एक ही तरकारी होती तो किसी दिन वह भी नहीं; लड़कोंका पढ़ना-लिखना जाता रहा,—स्कूलमें उनपर फटकार भी पड़ने लगी, किन्तु कठोर बँधे हुए नियमोंमें शिथिलता नहीं आई। सिर्फ एक विषयमें अनियम था और वह बाहरसे कहीं निमंत्रण आनेपर। नीलिमाके किसी एक व्रत-उद्यापनके उपलक्षमें इस व्यतिक्रमको हरेन्द्रने जबरदस्ती कायम किया था। इसके सिवा और कहीं भी किसी विषयमें क्षमाके लिए स्थान न था। लड़के नंगे पाँव रहते और बाल

रूखे रखते। इस विषयमें सतीशकी अत्यन्त सतर्क आँखें हरदम पहरा देने लगीं कि कहीं किसी छिद्र-पथसे उनमें विलासिताका अनधिकार प्रवेश न हो जाय। इसी तरह आश्रमके दिन बीत रहे थे। सतीशका तो कहना ही क्या, हरेन्द्रके मनमें भी आत्म-गौरवकी सीमा न रही थी। बाहरके किसी आदमीके सामने वे विशेष कोई बात प्रकट नहीं करते थे, परन्तु अपने अन्दर हरेन्द्र आत्म-प्रसाद और परितृप्तिके उच्छ्वसित आवेगमें अक्सर यह कह दिया करते कि इनमेंसे एक भी लड़केको अगर वे आदमी बना सके तो समझेंगे कि इस जीवनकी चरम सार्थकता उन्हें प्राप्त हो गई। यह सुनकर सतीश कुछ बोलता नहीं, विनयसे सिर्फ अपना सिर झुका लेता।

सिर्फ एक विषयमें हरेन्द्र और सतीश दोनोंको पीड़ाका अनुभव होता था। दोनों ही इस बातका अनुभव कर रहे थे कि कुछ दिनोंसे राजेन्द्रका आचरण पहले जैसा नहीं रहा है। आश्रमके किसी काममें अब वह उतनी दिलचस्पी नहीं लेता, सवेरेके साधन-भजनमें भी अब वह प्रायः अनुपस्थित रहता है और पूछनेपर कहता है कि तबीयत ठीक नहीं है। इसपर मजा यह कि तबीयत खराब होनेके कोई लक्षण नहीं दिखाई देते। क्या उसको शिकायत है, क्यों वह ऐसा हुआ जा रहा है,—पूछनेपर भी कुछ जवाब नहीं मिलता। किसी दिन सुबह ही उठकर कहीं चला जाता है, दिन-भर आता ही नहीं, और रातको जब घर लौटता है तब उसका चेहरा ऐसा होता है कि हरेन्द्र उसको कारण पूछनेकी हिम्मत नहीं पड़ती। और मजा यह कि ये सब बातें आश्रमके नियमोंके सर्वथा विरुद्ध हैं। इस बातको राजेन्द्र अच्छी तरह जानता था कि एक हरेन्द्रके सिवा शामके बाद और किसीको भी बाहर रहनेका अधिकार नहीं है,—फिर भी उसे कोई परवाह नहीं। आश्रमका सेक्रेटरी था सतीश, उसीपर शृंखला-रक्षाका भार है। इन सब अनाचारोंके विरुद्ध वह हरेन्द्रसे ठीक शिकायतके तौरपर तो कुछ कह सकता नहीं; किन्तु बीच-बीचमें आभास और इशारेसे वह भाव प्रकट कर देता है कि उसे आश्रममें रखना अब उचित नहीं है।—लड़के बिगड़ सकते हैं। यह बात नहीं कि हरेन्द्र खुद भी न समझता हो, किन्तु मुँह खोलकर कुछ कहनेकी हिम्मत उसमें नहीं थी। एक दिन सारी रात वह लापता रहा, सवेरे जब वह घर लौटा तब उसीकी बातको लेकर खूब जोरकी आलोचना होने लगी; हरेन्द्रने आश्चर्यके साथ उससे पूछा, "बात क्या है, राजेन, कल रात-भर थे कहाँ?"

उसने जरा हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "एक पेड़के नीचे पड़ा था।"

"पेड़के नीचे ? पेड़के नीचे क्यों ?"

"बहुत रात हो गई थी। उस वक्त शोर मचा आप लोगोंको जगाकर परेशान नहीं किया।"

"अच्छा। इतनी रात कैसे हो गई ?"

"ऐसे ही घूमते-घामते।" कहकर वह अपने कमरेमें चला गया।

सतीश पास ही बैठा था। हरेन्द्रने पूछा, "क्या, बात क्या है, बताओ तो ?"

सतीशने कहा, "आपकी बात टालकर चला गया। कुछ परवाह ही नहीं की। फिर भला मैं कैसे जान सकता हूँ ?"

"बात तो ठीक है भई, इतनी ज्यादती तो ठीक नहीं।"

सतीश मुँह भारी करके कुछ देर तक चुप रहा, फिर बोला, "आप एक बात तो जानते होंगे कि पुलिसने उसे दो साल जेलमें रखा था ?"

हरेन्द्रने कहा, "जानता हूँ, लेकिन वह तो झूठे सन्देहपर रक्खा था। उसका कोई अपराध नहीं था।"

सतीशने कहा, "मैं सिर्फ उसका मित्र होनेकी वजहसे ही जेल जाते जाते बच गया था। पुलिसकी दृष्टिने उसे आज भी छुटकारा नहीं दिया है।"

हरेन्द्रने कहा, "असम्भव कुछ नहीं।"

उत्तरमें सतीशने जरा विषभरी हँसी हँसकर कहा, "मैं सोचता हूँ, उसके कारण कहीं हमारे आश्रमपर पुलिसको मोह न हो जाय !"

सुनकर हरेन्द्र चिन्तित चेहरेसे चुप रहा। सतीश खुद भी कुछ देर चुप रहकर सहसा पूछ बैठा, "आपको शायद मालूम होगा कि राजेन्द्र ईश्वरका अस्तित्व तक नहीं मानता !"

हरेन्द्र दंग रह गया, बोला, "नहीं तो !"

सतीशने कहा, "मुझे मालूम है, वह नहीं मानता। आश्रमके काम-काज और विधि-निषेधोंपर उसकी रंचमात्र श्रद्धा नहीं। इससे तो बल्कि उसकी कहीं नौकरी-औकरी लगा दीजिए तो अच्छा।"

हरेन्द्रने कहा, "नौकरी तो पेड़का फल नहीं सतीश, कि जब चाहूँ तब तोड़कर हाथमें दे दूँ। उसके लिए काफी कोशिश करनी पड़ती है।"

सतीशने कहा, "तो वही कीजिए। आप जब कि आश्रमके प्रतिष्ठाता और प्रेसिडेण्ट हैं और मैं सेक्रेटरी हूँ, तब सभी विषय आपको जताते रहना मेरा कर्तव्य है। आप उससे अत्यन्त स्नेह करते हैं और मेरा भी वह मित्र है।

इसीसे उसके विरुद्ध कोई बात कहनेकी अब तक मेरी प्रवृत्ति नहीं हुई, मगर अब आपको सावधान कर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।"

हरेन्द्र मन ही मन डरकर बोला, "लेकिन मैं जानता हूँ कि उसका चरित्र निर्मल है—"

सतीशने गरदन हिलाकर कहा, "हाँ। इस तरफसे तो उसको, उसका बड़ेसे बड़ा शत्रु भी दोषी नहीं ठहरा सकता। राजेन्द्र आजीवन कुँवारा है, लेकिन वह ब्रह्मचारी भी नहीं है। असल कारण यह है कि इस बातको सोचनेका भी उसके पास वक्त नहीं कि स्त्री नामकी कोई चीज भी संसारमें है।" फिर क्षण-भर चुप रहकर बोला, "उसके चरित्रकी शिकायत मैं नहीं करता, वह अस्वाभाविक रूपसे निर्मल है, लेकिन—"

हरेन्द्रने पूछा, "आखिर तुम्हारे 'लेकिन' का मतलब क्या?"

सतीशने कहा, "कलकत्तेके बासेमें हम दोनों एकसाथ रहा करते थे। वह तब कैम्बेल मेडिकेल कॉलेजका छात्र था और घरपर बी० एस-सी० पढ़ता था। सभी जानते थे कि वही फर्स्ट पास होगा, लेकिन परीक्षाके पहले अकस्मात् न जाने वह कहाँ चला गया—"

हरेन्द्रने विस्मित होकर पूछा, "वह डाक्टरी पढ़ता था क्या? मगर मुझसे तो कहता था कि वह शिवपुर इंजीनियरिंग कालेजमें भरती हुआ था, पर वहाँकी पढ़ाई बड़ी सख्त होनेसे उसे भाग आना पड़ा।"

सतीशने कहा, "लेकिन तलाश करें तो मालूम होगा कि कालेजमें थर्ड ईयरमें वही अव्वल आया था और बिना कारण चले आनेके कारण वहाँके सभी शिक्षक अत्यन्त दुःखित हुए थे। उसकी बुआ धनी घरमें ब्याहीं हैं, वे ही पढ़नेका खर्च दे रही थीं। इस तरहकी हरकतोंसे नाराज होकर उन्होंने खर्च देना बन्द कर दिया, उसके बाद ही शायद आपसे उसका परिचय हुआ है। लगभग दो साल घूम-फिरकर जब वह घर पहुँचा तब उसकी बुआने उसीकी रायसे उसे डाक्टरी स्कूलमें भरती कर दिया। क्लासमें प्रत्येक विषयमें वह फर्स्ट हो रहा था; फिर भी तीनेक साल बाद सहसा एक दिन सब छोड़-छाड़ अलग हो गया। यही उसमें एक ऐब है। बड़ा कठोर है। मैं उससे पार नहीं पा सकता। वहाँसे छोड़-छोड़कर हमारे यहाँ आके खूँटा गाड़ा है। मुझसे बोला, लड़के पढ़ाकर बी० एस-सी० पास करूँगा और कहीं किसी गाँवमें जाकर मास्टरी करके जीवन बिताऊँगा। मैंने कहा, अच्छी

बात है, यही करो। उसके बाद, पन्द्रह-बीस दिन पढ़नेमें ऐसी मेहनत की कि न नहानेका ठीक न खानेका, आँखोंकी नींद तक गायब हो गई,—ऐसी मेहनत की कि देखकर आश्चर्य होता है। सब कहने लगे, ऐसा बगैर किये क्या कोई प्रत्येक विषयमें फर्स्ट हो सकता है?"

हरेन्द्रको पूरा हाल मालूम न था; उसने साँस रोके हुए ही कहा, "फिर?"

सतीश कहने लगा, "उसके बाद जो कुछ उसने शुरू किया वह भी अद्भुत है। किताबें तो फिर उसने छुई ही नहीं। न जाने कहाँ रहता है,—कुछ पता ही नहीं। जब लौटकर आता है तब उसका चेहरा देखनेसे डर लगने लगता है। मानो इतने दिनोंतक उसने नहाया-खाया ही न हो।"

"फिर?"

"फिर एक दिन दलबलके साथ पुलिस आ धमकी और उसने मकान-भरमे जैसे दक्ष-यज्ञ शुरू कर दिया। इसे छोड़कर उसे बखेरती, उसे खोलकर इसे बन्द करती. किसीको डाँटती, किसीको रोकती,—ऐसा ऊधम मचाया कि बिना अपनी आँखों देखे कोई उसका अनुमान भी नहीं कर-सकता। मेसमें रहनेवाले प्रायः सभी क्लर्कीका काम करते थे, मारे डरके दो जनोंको तो जुकाम हो गया। सभीने सोच लिया कि अब बचना मुश्किल है, पुलिसवाले आज सभीको पकड़के फाँसीपर लटका देंगे।"

"फिर क्या हुआ?"

"फिर लगभग तीसरे पहर पुलिस राजेनको और राजेनका मित्र होनेके कारण मुझे पकड़के ले गई। मुझे चारेक दिन बाद छोड़ दिया, पर उसका फिर कोई पता नहीं लगा। छोड़ते वक्त साहबने मेहरबानी करके मुझे बार बार सावधान कर दिया कि 'वन स्टेप, ऑन्ली वन स्टेप!—तुम्हारे घरसे इस जेलका फासला सिर्फ एक कदमका रहा है! गो।' मैं गंगा-स्नान करके, मा कालीके दर्शन करके, घर लौट आया। सबने कहा, 'सतीश, तुम बड़े भाग्यवान् हो।' आफिस पहुँचा, साहबने दो महीनेकी तनखा हाथमें थमाकर कहा, 'गो'। सुना कि इस बीचमें मेरी बहुत-कुछ तलाशी हो चुकी है।"

हरेन्द्र स्तब्ध रह गया। कुछ देर उसी तरह रहकर अन्तमें धीरे धीरे बोला, "तो क्या तुम्हें निश्चित मालूम हो रहा है कि राजेन—"

सतीशने विनतीके स्वरमें कहा, "मुझसे मत पूछिए। मेरा वह मित्र है।"

हरेन्द्र खुश नहीं हुआ, बोला, "मेरा भी तो वह भाईकी तरह है।"

सतीशने कहा, "एक बात विचार देखनेकी यह है कि उन लोगोंने मुझे बेकसूर पकड़कर परेशान जरूर किया था, पर छोड़ भी दिया।"

हरेन्द्रने कहा, "बेकसूर परेशान करनेका भी तो कानून नहीं है। जो लोग वह कर सकते हैं वे यह क्यों नहीं कर सकेंगे?" यह कहकर वह उस समय तो कालेज चला गया, परंतु मनमें उसके अशान्ति बनी रही। सिर्फ राजेन्द्रके भविष्यकी चिन्ता करके ही नहीं, बल्कि इसलिए भी कि देश-सेवाके काममें देशके लड़कोंको आदमी बनानेका यह जो आयोजन चल रहा है, कहीं विना कारण नष्ट न हो जाय। हरेन्द्रने तय किया कि बात झूठ हो या सच, पुलिसकी दृष्टि अकारण आश्रमपर आकर्षित करना हरगिज उचित नहीं। खासकर जब कि वह साफ साफ यहाँके नियम भंग करता जा रहा है, तब कहीं नौकरी लगवाकर या और किसी बहाने उसे अन्यत्र हटा देना ही वांछनीय है।

इसके कई दिन बाद ही मुसलमानोंके किसी त्योहारपर दो दिनकी छुट्टी थी। सतीश काशी जानेकी अनुमति लेने आया। भारतमें सर्वत्र आगरा-आश्रमके अनुरूप आदर्शपर संस्थाएँ संगठित करनेकी विशाल कल्पना हरेन्द्रके मनमें थी और उसी उद्देश्यको लेकर सतीश काशी जा रहा था। राजेन्द्रने सुना तो वह भी आकर कहने लगा, "हरेन्द्र भइया, सतीशके साथ मैं भी कुछ दिनोंके लिए काशी घूम जाऊँ।"

हरेन्द्रने कहा, "उसे काम है, इसलिए जा रहा है।"

राजेन्द्रने कहा, "मुझे काम नहीं है, इसीसे जाना चाहता हूँ। जानेका रेलभाड़ा मेरे पास है।"

हरेन्द्रने पूछा, "लेकिन वापस आनेका?"

राजेन्द्र चुप रहा। हरेन्द्रने कहा, "राजेन्द्र, कुछ दिनसे तुम्हें एक बात कहना चाहता हूँ, पर कह नहीं पाता।"

राजेन्द्रने जरा हँसकर कहा, "कहनेकी जरूरत नहीं हरेन्द्र-भइया, मैं जानता हूँ।" कहकर वह चला गया।

रातकी गाड़ीसे वे जानेवाले थे। घरसे निकलते वक्त हरेन्द्रने दरवाजेके पास आकर अकस्मात् उसके हाथमें एक कागजकी पुड़िया थमाते हुए चुपकेसे कहा, "तुम वापस न आओगे तो मैं बहुत दुःखित होऊँगा राजेन्द्र।" और इतना कहकर वह लहमे-भरमें अपने कमरेमें चला गया।

इसके दस-बारह दिन बाद दोनों ही जने लौट आये। हरेन्द्रको एकान्तमें बुलाकर सतीशने प्रफुल्ल चेहरेसे कहा, "उस दिन आपका उतना ही कहा काम कर गया हरेन्द्र-भइया। काशीमें आश्रम स्थापित करनेके लिए राजेनने इन कुछ दिनोंमें अमानुषिक परिश्रम किया है।"

हरेन्द्रने कहा, "परिश्रम करता है तो वह अमानुषिक ही करता है।"

"हाँ, यही किया उसने। पर उसका चौथाई हिस्सा भी अगर हमारे इस आश्रमके लिए मेहनत करे तो क्या कहने हैं!"

हरेन्द्रने आशान्वित होकर कहा, "करेगा भई, करेगा। अब तक शायद वह ठीक बातको ध्यानमें नहीं ला सका था। मैं निश्चयसे कहता हूँ, तुम देख लेना, अबसे उसके कामकी हद न रहेगी।"

सतीशने खुद भी यह विश्वास कर लिया।

हरेन्द्रने कहा, "तुम्हारे वापस आनेकी बाटमें एक काम स्थगित पड़ा हुआ है। जानते हो, मैंने मन ही मन क्या तय किया है? हमारे आश्रमका अस्तित्व और उद्देश्य छिपाये रखनेसे अब काम नहीं चल सकता। देशकी और दस जनोंकी सहानुभूति प्राप्त करना हमारे लिए जरूरी है। इसकी विशिष्ट कार्यपद्धतिका जन-साधारणमें प्रचार करना आवश्यक है।"

सतीशने सन्दिग्ध कण्ठसे कहा, "परन्तु उससे क्या काममें विघ्न न आयेगा?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। इसी रविवारको मैंने कुछ लोगोंको आमंत्रित किया है, वे सब देखने आयेंगे। ऐसा करना होगा कि आश्रमकी शिक्षा, साधना, संयम और विशुद्धताके परिचयसे उस दिन हम उन्हें मुग्ध कर दे सकें,—तुम्हारे ही ऊपर सब दायित्व है।"

सतीशने पूछा, "कौन कौन आयेंगे?"

हरेन्द्रने कहा, "अजितबाबू, अविनाश-भइया, भाभीजी। शिवनाथबाबू फिलहाल यहाँ हैं नहीं, सुना है कि किसी कामसे जयपुर गये हैं। पर उनकी स्त्री कमलका नाम सुना होगा, वे आयेंगी, और तबीयत ठीक हुई तो शायद आशु बाबूको भी पकड़ ला सकूँगा। जानते तो हो, ये लोग कोई ऐसे-वैसे आदमी नहीं हैं। इस बातका खयाल रखना है कि उस दिन इन लोगोंसे हम वास्तविक श्रद्धा वसूल कर सकें। इसका भार तुम्हींपर है।"

सतीश विनयसे सिर हिलाता हुआ बोला, "आशीर्वाद दीजिए कि ऐसा ही हो।"

* * *

रविवारको शामके पहले ही अभ्यागत लोग आ पहुँचे। आये नहीं सिर्फ आशु बाबू। हरेन्द्र दरवाजेसे उन सबको सम्मानके साथ स्वागत-पूर्वक भीतर ले आया। लड़के उस समय आश्रमके नित्य-कार्योंमें लगे हुए थे। कोई बत्ती जला रहा था, कोई झाड़ू लगा रहा था, कोई चूल्हा सुलगा रहा था, कोई पानी भर रहा था और कोई रसोईकी तैयारियाँ कर रहा था। हरेन्द्रने अविनाशके प्रति लक्ष्य करके हँसते हुए कहा, "भाई साहब, आप जिन्हें अभागे आवारोंका दल कहा करते हैं, ये ही हैं वे हमारे आश्रमके लड़के। हमारे यहाँ नौकर-रसोइया नहीं हैं, ये ही लोग सब काम अपने हाथसे करते हैं।—भाभीजी, चलिए हमारी भोजनशालामें। आज हमारे यहाँ पर्वका दिन है, वहाँका आयोजन देख आइए, एक बार चलिए।"

नीलिमाके पीछे पीछे सब रसोई-घरके सामने जा खड़े हुए। एक दस-बारह सालका लड़का चूल्हा सुलगा रहा था और उसी उमरका दूसरा लड़का हँसियासे आलू बना रहा था। दोनोंने उठकर नमस्कार किया। नीलिमाने लड़कोंसे स्नेहसे सम्बोधन करते हुए पूछा, "आज तुम लोगोंके यहाँ क्या क्या रसोई बनेगी, बेटा?"

एक लड़केने प्रसन्न मुखसे उत्तर दिया, "आज रविवारके दिन हमारे यहाँ दम-आलू* बनते हैं।"

"और क्या क्या बनता है?"

"और कुछ नहीं।"

नीलिमाने व्याकुल होकर पूछा, "सिर्फ दम-आलू, बस? दाल, झोल या और कुछ—"

लड़केने कहा, "दाल हमारे यहाँ कल बनी थी।"

सतीश पास ही खड़ा था, उसने समझाते हुए कहा, "हमारे आश्रममें एक चीजसे ज्यादा बनानेका नियम नहीं है।"

हरेन्द्रने हँसते हुए कहा, "होनेकी गुंजाइश भी नहीं भाभीजी, होगा

---

* आलूका एक व्यंजन।

कहाँसे ? हमारे भाई साहब इसी तरह दूसरोंके आगे आश्रमका गौरव बढाया करते हैं । ”

नीलिमाने पूछा, “ नौकर चाकर भी नहीं होंगे शायद ? ”

हरेन्द्रने कहा, “ नहीं । उन्हें रखा जायगा तो दम-आलूको विदा कर देना पड़ेगा । लड़के उसे पसन्द नहीं करेंगे । ”

नीलिमाने आगे कुछ नहीं पूछा; उन लड़कोंकी सूरतकी तरफ देखकर उसकी आँखे डबडबा आई । बोली, “ लालाजी, और कहीं चलो । ”

सबने इस बातके मानी समझे । हरेन्द्र पुलकित होकर बोला, “ चलिए, मैं निश्चयके साथ जानता था भाभी, कि यह आपसे सहा नहीं जायगा । ” फिर उसने कमलकी तरफ देखकर कहा, “ लेकिन, आप तो खुद ही इसमें अभ्यस्त हैं,—सिर्फ आप ही समझेंगी इस संयमकी सार्थकताको । इसीसे उस दिन इस ब्रह्मचर्याश्रममें आनेका विनयके साथ आपको आमंत्रण दिया था । ”

हरेन्द्रके गम्भीर चेहरेकी तरफ देखकर कमल हँस पड़ी, बोली, “ मेरी खुदकी बात और है, लेकिन इन सब बच्चोंको इतने आडम्बरके साथ इस तरहकी निष्फल दरिद्रताका आचरण करानेका नाम क्या आदमी बनाना है हरेन्द्र बाबू ? ये ही हैं शायद यहाँके ब्रह्मचारी ? इन्हें आदमी बनाना हो तो साधारण और स्वाभाविक मार्गसे बनाइए । झूठे दुःखका बोझ सिरपर लादकर असमयमें ही इन्हें बौना या कुबड़ा न बना डालिए । ”

कमलके शब्दोंकी कठोरतासे हरेन्द्र तिलमिला गया; अविनाशने कहा, “ कमलको बुलाना तुम्हारा ठीक नहीं हुआ हरेन्द्र । ”

कमल शरमा गई, बोली, “ सचमुच, मुझे बुलाना किसीके लिए भी ठीक नहीं । ”

नीलिमाने कहा, “ मगर मैं उन किसीमें शामिल नहीं हूँ कमल । मेरे घरमें कभी तुम्हारा अनादर न होगा । चलो, हम लोग ऊपर चलके बैठें । देखें, लालाजीके आश्रममें और क्या क्या अतिशबाजियाँ निकलती हैं ? ” यह कहकर उसने अपने स्निग्ध हास्यके आवरणसे कमलकी लज्जा ढक दी ।

दूसरे मंजिलपर काफी लम्बा-चौड़ा आश्रमका खास कमरा था । पुराने जमानेका नकाशीका काम छतके नीचे और दीवारोंपर अब भी मौजूद है । बैठनेके लिए एक बेञ्च और चार-पाँच कुर्सियाँ हैं, पर साधारणतः उनपर बैठता कोई नहीं । फर्शपर एक बड़ी सतरंजी बिछी हुई है । आज खास दिन

होनेके कारण उसपर सफेद चादर बिछा दी गई है और उसपर पड़ोसी लालाजीके यहाँसे बड़े बड़े तकिये मँगाकर रख दिये हैं। बीचमें उन्हींके यहाँसे लाया हुआ बेल-बूटेदार बारह डालियोंवाला शमादान और एक कोनेमें सब्ज रंगके शेडसे ढकी हुई दीवारगीरी जल रही है। नीचेकी अन्धकारमय और आनन्दहीन आब-हवामेंसे इस कमरेमें आकर सबके सब खुश हुए।

अविनाशने एक तकियेका सहारा लिया और दोनों पैर सामनेकी ओर पसार कर सन्तोषकी साँस लेते हुए कहा, "उफ्! जानमें जान आई।"

हरेन्द्र पुलकित होकर बोला, "हमारे आश्रमका यह कमरा कैसा है भाई साहब?"

अविनाशने कहा, "यही तो तुमने मुश्किलमें डाल दिया हरेन्द्र। कमल मौजूद है, उसके सामने किसी चीजको अच्छा बतानेकी हिम्मत नहीं पड़ती,—हो सकता है कि तीव्र प्रतिवादके जोरसे वह अभी साबित कर दे कि इसके छतकी नक्काशीसे लेकर फर्शतक सब कुछ बुरा है।" इतना कहकर वे कमलके मुँहकी तरफ देखकर जरा हँस दिये और बोले, "इसे तो तुम भी मानोगी कि मेरे पास और कोई पूँजी भले ही न हो, पर उमरकी पूँजी मैंने खूब जमा कर रखी है। उसीके बलपर तुमसे एक बात कहता हूँ। मैं अस्वीकार नहीं करता कि सच बात बहुधा अप्रिय होती है, पर इसके मानी यह नहीं कि प्रिय बात-मात्र सत्य नहीं होती कमल। तुम्हें बहुत-सी बातें शिवनाथने सिखाई हैं, सिर्फ यही एक बात सिखाना बाकी रख छोड़ा है।"

कमलका चेहरा सुर्ख हो उठा, पर इसका जवाब दिया नीलिमाने। बोली, "शिवनाथकी जो इतनी त्रुटि रह गई है मुखर्जी साहब, हम उनपर जुरमाना करके उसका बदला लेंगे, मगर गुरुगीरीमें तो कोई भी पुरुष कम नहीं मालूम होता। इसलिए, प्रार्थना है कि अब आप अपनी उमरकी पूँजीमेंसे और भी दो-एक प्रिय वाक्य बाहर निकालें।—हम लोग सुनकर धन्य हों।"

अविनाश भीतरसे जल-भुन गये। इतने आदमियोंके बीच उनका जो अपमान किया गया केवल उसीके कारण नहीं, बल्कि इस वक्रोक्तिके तीरके भीतर जो तीक्ष्ण फल छिपा हुआ था उसने विद्ध करके ही दम नहीं लिया, अपमान भी किया। कुछ दिनोंसे एक तरहके असन्तोषकी गरम हवा न जाने कहाँसे आकर दोनोंके बीचमें बह रही थी। वह आँधीकी तरह भीषण नहीं थी, परन्तु

घास-तिनके, धूल-रेत उड़ाकर कभी कभी दोनोंकी आँखोंमें झोंक देती थी। कम हिलते हुए दाँतोंकी तरह चबानेका काम तो चलता था परन्तु चबानेके आनन्दसे दोनों वंचित थे। हरेन्द्रको लक्ष्य करके उन्होंने कहा, "नाराज़ तो नहीं हो सकता हरेन्द्र, तुम्हारी भाभीने बिलकुल झूठ नहीं कहा कि मुझे पहचाननेमें तो अब उनके लिए कुछ बाकी नहीं है,—उन्हें ठीक ही मालूम है कि मेरी पूँजी जो कुछ है; पुराने जमानेकी सीधी-सादी है, उसमें वस्तु होनेपर भी रस-कस कुछ नहीं।"

हरेन्द्रने पूछा, "इसके मानी क्या भाई साहब?"

अविनाशने कहा, "तुम संन्यासी आदमी ठहरे, मानी ठीक समझोगे नहीं। मगर छोटी मालिकिन अचानक कमलकी जैसी भक्त हो उठी हैं, उससे आशा की जाती है कि अगर वे उनके अनुभवसे काम लेंगी तो धन्य होनेका रास्ता अपने आप साफ हो जायगा।"

इस व्यंगकी कदर्यता स्वयं उन्हें अपने कानोंमें भी खटकी थी, और दुर्विनयकी स्पर्धासे वे और भी कुछ कहना चाहते थे कि हरेन्द्रने उन्हें रोक दिया। उसने व्यथित-कण्ठसे कहा, "भाई साहब, आज आप सभी यहाँके अतिथि हैं। इस बातको अगर आप लोग भूल गये कि कमलको हम आश्रमकी तरफसे सम्मानके साथ निमंत्रित करके लाये हैं, तो फिर हमारे दुःखकी सीमा न रहेगी।"

नीलिमाने कहा, "तो फिर मेरे सम्बन्धमें कृपाकर उन्हें स्मरण करा दो लालाजी, कि अगर कोई किसीको छोटी-मालिकिन कहकर पुकारने लग जाय तो वह उसकी सचमुचकी गृहिणी नहीं हो जाती। उसे उसपर शासन करनेकी मात्राका भी ज्ञान रहना चाहिए। मेरी तरफसे मुखर्जी साहबके अनुभवके भाण्डारमें इतना आज और जमा करा दिया जाय,—भविष्यमें वह काममें आ सकता है।"

हरेन्द्रने हाथ जोड़कर कहा, "रक्षा कीजिए भाभी साहिबा, सारीकी सारी अनुभव-अभिज्ञताकी लड़ाई क्या आज मेरे ही यहाँ आकर लड़ी जायगी? जितनी बाकी बची है उतनी रहने दीजिए, घर जाकर पूरी कर लीजिएगा; नहीं तो हम लोग तो वैसे ही मारे जायेंगे। जिस बातके डरसे अक्षयको नहीं बुलाया, आखिर क्या वही बात तकदीरमें बदी है?"

सुनकर अजित और कमल दोनों ही हँस पड़े। हरेन्द्रने पूछा, "अजित बाबू, सुना है, कल आप अपने घर जायेंगे?"

"पर आपने सुना किससे ?"

"आशु बाबूको बुलाने गया था, उन्हींने कहा कि शायद कल आप जा रहे हैं।"

अजितने कहा, "शायद। पर-कल नहीं, परसों। यह भी निश्चित नहीं कि घर जाऊँगा या और कहीं। हो सकता है कि शाम तक स्टेशन पहुँच जाऊँ और उत्तर-दक्षिण पूरब-पश्चिम जिस तरफकी गाड़ी मिल जाय उसीपर यात्रा शुरू कर दूँ।"

हरेन्द्रने हँसते हुए कहा, "लगभग बैरागी होनेके ढँगपर। अर्थात् गन्तव्य स्थानका कोई निश्चय नहीं।"

अजितने कहा, "नहीं।"

"लेकिन लौटनेका ?"

"नहीं, उसका भी फिलहाल कोई निश्चय नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "अजित बाबू, आप भाग्यवान् आदमी हैं। परंतु बोरिया-बसना ढोनेके लिए अगर चाहिए तो मैं एक आदमी दे सकता हूँ; परदेसके लिए ऐसा मित्र मिलना मुश्किल है।"

कमलने कहा, "और रसोइयेकी जरूरत हो तो मैं भी एक ऐसा व्यक्ति दे सकती हूँ जिसकी जोड़ी मिलना मुश्किल है। आप भी स्वीकार करेंगे कि हाँ, है तो अहंकार करने लायक ही।"

अविनाशको कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था, वे बोले, "हरेन्द्र, अब देर काहेकी है, चलनेकी तैयारी करो न। क्या कहते हो ?"

हरेन्द्रने विनयके साथ कहा, "लड़कोंके साथ जरा परिचय न कीजिएगा ? थोड़ा बहुत उपदेश उन्हें न दे जाइएगा, भाई साहब ?"

अविनाशने कहा, "उपदेश देने तो मैं आया नहीं, आया था सिर्फ इन लोगोंका साथी बनकर। सो उसकी भी अब शायद जरूरत नहीं रही।"

सतीश बहुतसे लड़कोंके साथ ऊपर आ पहुँचा। दस-बारह वर्षसे लेकर उन्नीस-बीस वर्षके युवक तक उसमें थे। जाड़ेके दिन और बदनपर सिर्फ एक कुड़ता, पाँवमें जूते तक नहीं,—शायद इसलिए कि जीवन-धारणके लिए उनका कोई विशेष प्रयोजन नहीं। खाने-पीनेकी व्यवस्था पहले ही दिखा दी गई है। ब्रह्मचर्याश्रममें यह सब शिक्षाके ही अंग हैं। हरेन्द्रने आज एक सुन्दर भाषण रच रखा था, वह मन ही मन उसीको दुहराते हुए यथोचित

गाम्भीर्यके साथ बोला, "इन लड़कोंने देशके काममें जीवन अर्पण कर दिया है। यही आशीर्वाद आप लोग हमें दीजिए कि आश्रमका यह महान् आदर्श भारतके नगर नगर और गाँव गाँवमें ये प्रचार कर सकें।"

सबने मुक्त कंठसे आशीर्वाद दिया।

हरेन्द्रने कहा, "अगर समय मिला तो अपना वक्तव्य मैं पीछे सुनाऊँगा।" यह कहकर उसने कमलको लक्ष्य करके कहा, "आपको ही आज खास तौरसे आमंत्रण देकर हम लोगोंने बुलाया है, कुछ सुननेकी आशासे। लड़के आशा लगाये हुए हैं कि आपके मुँहसे आज वे ऐसी कोई बात सुनेंगे जिससे उनके जीवनका व्रत अधिकतर उज्ज्वल हो उठे।"

मारे संकोच और दुविधाके कमल सुर्ख हो उठी। बोली, "मैं तो व्याख्यान नहीं दे सकती हरेन बाबू।"

इसका उत्तर दिया सतीशने, बोला, "व्याख्यान नहीं, उपदेश चाहते हैं हम। देशके काममें जो चीज इनके सबसे ज्यादा काममें आयेगी, सिर्फ उसीके बारेमें।"

कमलने उसीसे पूछा, "देशके कामसे आपका तात्पर्य क्या है, पहले यह बताइए?"

सतीशने कहा, "जिससे देशका सर्वाङ्गीण कल्याण हो वही तो देशका काम है।"

कमलने कहा, "मगर कल्याणकी धारणा तो सबकी एक-सी होती नहीं। आपके साथ मेरी धारणाका अगर मेल न बैठा तो मेरा उपदेश आपके काम नहीं आ सकता।"

सतीश सकटमें पड़ गया। इस बातका ठीक उत्तर उसे ढूँढे न मिला। उसका इस संकटसे उद्धार करनेके लिए हरेन्द्रने कहा, "देशकी मुक्ति जिससे मिले वही है देशका एकमात्र कल्याण। देशमें ऐसा कौन होगा जो इस सत्यको न मानता हो?"

कमलने कहा, "कहनेमें डर लगता है हरेन बाबू, कि सबके सब भड़क उठेंगे। नहीं तो मैं ही कहती कि अपने आपको और दूसरोंको भूलभुलैयामें डालनेवाला इस 'मुक्ति' शब्दके समान और कोई छल ही नहीं। किससे मुक्ति हरेन बाबू? त्रिविध दुःखसे या भव-बन्धनसे? बताइए कि किसे देशका एकमात्र कल्याण समझकर आश्रम-प्रतिष्ठामें आप लोग नियुक्त हुए हैं? यही क्या आपकी स्वदेश-सेवाका आदर्श है?"

हरेन्द्र व्यस्त होकर बोल उठा, "नहीं नहीं नहीं, यह सब नहीं, यह सब नहीं, यह कामना हमारी नहीं है।"

कमलने कहा, "तो फिर ऐसा कहिए कि यह हमारी कामना नहीं, कहिए कि हमारा आदर्श इससे भिन्न है। कहिए कि संसार-त्याग और वैराग्य-साधन हमारा लक्ष्य नहीं। हमारी साधना है संसारका सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण सौन्दर्य, सम्पूर्ण जीवन लेकर जीवित रहना। मगर उसकी शिक्षा क्या यही है? बदनपर कपड़े नही, पाँवोंमें जूते नहीं, फटे-पुराने कपड़े पहन रखे हैं, रूखे बाल हैं, एक छाक अध-पेट खाकर जो लड़के अस्वीकारके बीच बढ़ रहे हैं, प्राप्तिके आनन्दका जिनके भीतर चिह्नतक नहीं रहा है, देशकी लक्ष्मी क्या उन्हींके हाथ अपने भाण्डारकी चाबी सौंप देगी? हरेन्द्र बाबू, संसारकी तरफ एक बार मुँह उठाकर देखिए तो सही। जिन्हें बहुत मिला है, उन्होंने ही आसानीसे दिया है। उन लोगोंको ऐसी अकिंचनताका स्कूल खोलकर त्यागका ग्रेजुएट नहीं बनाया गया था।"

सतीश हतबुद्धि-सा हो गया, बोला, "क्या आप कहना चाहती हैं कि देशके मुक्ति-संग्राममें धर्मकी साधना और त्यागकी दीक्षाकी कतई जरूरत नहीं?"

कमलने कहा, "मुक्ति-संग्रामका अर्थ तो पहले स्पष्ट हो जाय?"

सतीश बगलें झाँकने लगा। कमल हँसती हुई बोली, "आपके भावोंसे मालूम होता है कि आप विदेशी राजशक्तिके बन्धनसे मुक्त होनेको ही देशका मुक्ति-संग्राम कह रहे हैं। अगर यही हो सतीश बाबू, तो मैंने न तो कर्म धर्मकी साधना की है और न त्यागकी दीक्षा ही ली है, फिर भी आपसे कहे देती हूँ कि मुझे आप सबसे आगे सामना करनेवालोंके दलमें पाइएगा,— आप लोग तब ढूँढ़े भी न मिलेंगे।"

सतीश कुछ बोला नहीं, वह न जाने कैसा घबरा-सा गया, और उसके चंचल दृष्टिका अनुसरण करती हुई कमल कुछ देरके लिए जिस व्यक्तिकी ओरसे आँखें न फेर सकी वह था राजेन्द्र। सतीशके सिवा किसीने उस लक्ष्य ही नहीं किया था कि कब वह चुपकेसे दरवाजेके पास आ खड़ा हुआ था। वह भावाच्छन्नकी भाँति निष्पलक दृष्टिसे अब तक कमलकी ही ओर देख रहा था, और अब भी ठीक उसी तरह देखता रहा। उसका चेहरा एक बार देख कर फिर भूलना मुश्किल था। उमर शायद पचीस-छब्बीसके लगभग होगी, रंग बिलकुल साफ गोरा, सहसा देखनेसे अस्वाभाविक-सा मालूम पड़

है। ऊँचा प्रशस्त ललाट इसी उमरमें बाल उड़ जानेके कारण सामनेकी तरफ बहुत बड़ा दिखाई देता है। आँखें गहरीं और खूब छोटी छोटी हैं जैसे अँधेरे बिलमेंसे चूहेकी आँखें चमक रही हों। नीचेका मोटा ओठ सामनेकी ओर झुककर मानो अन्तःकरणके कठोर सङ्कल्पको किसी तरह दबाये हुए है। सहसा देखनेसे ऐसा लगता है कि इस आदमीसे बचकर चलना ही अच्छा है।

हरेन्द्रने कहा, "ये ही मेरे मित्र हैं राजेन्द्र,—सिर्फ मित्र नहीं बल्कि छोटे भाई जैसे। इतना कर्मठ कार्यकर्ता, इतना बड़ा स्वदेश-भक्त, इतना निडर और साधुचित्त पुरुष मैंने दूसरा नहीं देखा। भाभीजी, इन्हींका जिक्र मैं उस रोज आपसे कर रहा था। यह जैसे हँसते-खेलते पाता है वैसे ही हँसते-खेलते फेंक देता है। आश्चर्यजनक आदमी है। अजित बाबू, इन्हींको मैं आपके साथ दे रहा था भार वहन करनेके लिए।

अजित कुछ कहना ही चाहता था कि एक लड़केने आकर खबर दी, "अक्षय बाबू आये हैं।"

हरेन्द्र विस्मित होकर बोला, "अक्षय बाबू?"

अक्षयने घरमें घुसते हुए कहा, "हाँ जी, हाँ,—तुम्हारा परम मित्र अक्षय कुमार।" फिर सहसा चौंककर कहा, "ऐं! आज बात क्या है? यहाँ तो सभी जनें इकट्ठे हैं! आशु बाबूके साथ कारमें घूमने निकला था, सहसा खयाल आया, हरि घोष*की गोशाला तो जरा देखते जायँ। इसीसे चला आया, चलो, अच्छा ही हुआ।"

इन सब बातोंका किसीने जवाब नहीं दिया; कारण उसमें न तो कुछ जवाब देने लायक था और न उसपर किसीने विश्वास ही किया। अक्षयका न तो यह रास्ता ही है और न इधर वह कभी आता ही है।

अक्षयने कमलकी तरफ देखकर कहा, "तुम्हारे यहाँ कल सवेरे ही जानेकी सोच रहा था, लेकिन मकान तो मुझे मालूम नहीं,—अच्छा ही हुआ जो भेंट हो गई। एक शुभ सवाद है।"

कमल चुपचाप देखती रही; हरेन्द्रने पूछा, "शुभ संवाद क्या है, सुनाओ तो सही। यह निश्चय है खबर जब शुभ है तो गोपनीय तो होगी ही नहीं।"

अक्षयने कहा, "नहीं, छिपाने लायक अब रह ही क्या गया है! रास्तेमें

---

* घोष=ग्वाला।

आज उस सिलाईकी मशीन बेचनेवाले कमबख्त पारसीसे भेंट हो गई जो उस दिन कमलकी तरफसे रुपये उधार लेने गया था। गाड़ी रोककर मामला पूछा गया।" फिर कमलकी तरफ इशारा करके कहा, "आप उधारमें एक मशीन खरीदकर फतूई-वतूई सींकर खर्च चला रही थीं।—शिवनाथ तो मौजसे लापता है।—मगर इकरारके मुताबिक किस्त तो वक्तपर चुकनी ही चाहिए, इसीसे वह मशीन छीन ले गया। आशु बाबूने आज उसे पूरी कीमत देकर खरीद लिया है।—कमल, कल सवेरे ही आदमी भेजकर मशीन मँगा लेना। खाने पहरनेसे भी तंग हो, हम लोगोंसे तो यह बात कहनी थी!"

उसके कहनेकी बर्बर निष्ठुरतासे सबके सब मर्माहत हुए। कमलके लावण्यहीन शीर्ण चेहरेका कारण जानकर मारे शरमके अविनाश तकका चेहरा लाल हो उठा।

कमलने मृदु कंठसे कहा, "मेरी तरफसे कृतज्ञता जताकर उन्हें मशीन वापस कर देनेको कह दीजिएगा। अब मुझे उसकी जरूरत नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "अक्षय बाबू, आप चले जाइए इस घरसे। आपको मैंने बुलाया नहीं था और न चाहा ही था कि आप यहाँ आयें। फिर भी, आप चले आये। आदमीकी ब्रूटैलिटी (पशुता) की क्या कहीं कोई हद ही नहीं?"

कमलने सहसा मुँह उठाते ही देखा कि अजितकी दोनों आँखें आँसुओंसे भर आई हैं। बोली, "अजित बाबू, क्या आपकी गाड़ी साथ है, कृपाकर मुझे पहुँचा दीजिएगा?"

अजित कुछ बोला नहीं, उसने सिर्फ सिर हिलाकर हाँ कर दी।

कमलने नीलिमाको नमस्कार करके कहा, "अब शायद जल्दी भेंट न होगी, मैं यहाँसे जा रही हूँ।"

पूछनेका किसीको साहस नहीं हुआ कि कहाँ? नीलिमाने सिर्फ उसका हाथ लेकर अपने हाथमें दबा दिया और दूसरे ही क्षण कमल हरेन्द्रको नमस्कार करके अजितके पीछे पीछे कमरेसे बाहर निकल गई।

१५

मोटरमें बैठकर कमल अन्यमनस्क-सी होकर आकाशकी ओर देख रही थी। गाड़ी थमते ही इधर-उधर देखकर उसने पूछा, "यह कहाँ आ गये अजित बाबू, मेरे घरका रास्ता तो यह नहीं है?"

अजितने उत्तर दिया, "नहीं, यह घरका रास्ता नहीं।"

"नहीं है! तो लौटना पड़ेगा शायद?"

"सो आप जानें। हुक्म करते ही लौट पड़ूँगा।"

सुनकर कमल आश्चर्यमें पड़ गई। इस अद्भुत उत्तरके कारण उतनी नहीं जितनी उसके कण्ठकी अस्वाभाविकतासे वह विचलित हो उठी। क्षण-भर मौन रहकर उसने अपनेको दृढ़ किया और फिर हँसते हुए कहा, "राह भूलनेका अनुरोध तो मैंने किया नहीं अजित बाबू, जो संशोधनका हुक्म मुझको ही देना होगा! ठीक जगह पहुँचा देनेका दायित्व आपका है,— मेरा कर्तव्य है सिर्फ आपपर विश्वास किये रहना।"

"मगर दायित्व-बोधकी धारणामें अगर भूल कर बैठा होऊँ कमल तो?"

"'मगर'के ऊपर तो कोई विचार चल नहीं सकता अजित बाबू। भूलके बारेमें पहले निःसंशय हो जाने दो, उसके बाद इसका विचार करूँगी।"

अजितने अस्फुट स्वरमें कहा, "तो विचार ही कीजिए,—मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" इसके बाद वह क्षण-भर स्तब्ध रहकर सहसा बोल उठा, "कमल, उस दिनकी बात याद है तुम्हें! उस दिन भी ठीक ऐसा ही अन्धकार था।"

"हाँ, ऐसा ही अन्धकार था।" कहकर कमलने गाड़ीका दरवाजा खोला, वह पीछेसे उतरी और अजितके बगलमें सामनेकी सीटपर जा बैठी। सुनसान अन्धकार, रात्रि बिलकुल नीरव थी। कुछ देरतक दोनोंमेंसे कोई कुछ बोला नहीं।

"अजित बाबू?"

"हूँ।"

अजितकी छातीके भीतर आँधी उठ रही थी, जबाब देनेमें बात उसकी मुँहकी मुँहमें ही हिलग रही।

कमलने फिर पूछा, "क्या सोच रहे हैं, बताइए न?"

अजितका कंठ काँपने लगा, बोला, "उस दिनका आशु बाबूके मकानका मेरा आचरण तुम्हें याद है? उस दिन सोचा था कि तुम्हारा अतीत ही शायद तुम्हारा सबसे बड़ा अंग है, मैं उसके साथ समझौता कैसे कर सकता हूँ? पीछेकी ही छायाको सामने बढ़ाकर मैंने तुम्हारा चेहरा ढक लिया था और इस बातको भूल गया था कि सूर्य घूमा करता है। मगर उसे जाने दो।—लेकिन आज क्या सोच रहा हूँ, तुम नहीं समझ सकतीं?"

कमलने कहा, " स्त्री होकर इसके बाद भी न समझ सकूँगी, मैं क्या इतनी निर्बोध हूँ ? राह जब भूले, मैंने तो तभी समझ लिया था ।"

अजित धीरे धीरे उसके कंधेपर बायाँ हाथ रखकर चुप हो रहा। कुछ देर बाद उसने कहा, " कमल, मालूम होता है, आज अब मैं अपनेको सम्हाल नहीं सकूँगा ।"

कमल हटकर नहीं बैठी। उसके आचरणमें विस्मय या विह्वलताका नाम तक न था। सहज-स्वाभाविक शान्त-कण्ठसे बोली, " इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं अजित बाबू, ऐसा तो हुआ ही करता है। लेकिन आप तो सिर्फ पुरुष ही नहीं हैं, न्याय-निष्ठ शिष्ट पुरुष हैं। इसके बाद फिर मुझे कंधेसे उतारिएगा कैसे ? इतना छोटा काम तो आप कर नहीं सकेंगे।"

अजित गाढ़े स्वरमें बोला, " ऐसी आशंका तुम करती ही क्यों हो कमल, कि ऐसा काम करना ही पड़ेगा ? "

कमल हँस दी और बोली, " आशंका मैं अपने लिए नहीं करती अजित बाबू, करती हूँ सिर्फ आपके लिए। आपसे करते बनता तो मुझे कोई डर न था, सोच यही है कि करते नहीं बनेगा। सिर्फ एक रातकी गलतीके बदले इतनी बड़ी सजा आपके सिर लाद देनेमें मुझे तरस आता है। अब नहीं, चलिए लौट चलें।"

बात अजितके कानतक पहुँची, पर हृदय तक नहीं पहुँची। लहमें-भरमें उसकी नसोंका खून पागल हो उठा,—अपनी छातीके पास जोरसे उसे खींचकर मत्त कंठसे बोल उठा, " मुझपर क्या तुम विश्वास नहीं कर सकतीं कमल ? "

क्षण-भरके लिए कमलकी साँस रुक गई, बोली, " कर सकती हूँ।"

" तो किस लिए लौटना चाहती हो कमल ? चलो, हम चले चलें।"

" चलिए।"

गाड़ी चलाते वक्त अजितने सहसा रुककर पूछा, " घरसे साथ लेने लायक क्या तुम्हारे पास कुछ भी नहीं ? "

" नहीं। लेकिन आपके ? "

अजितको सोचना पड़ा। जेबमें हाथ डालकर बोला, " रुपये-पैसे तो कुछ साथमें हैं नहीं,—उनकी तो जरूरत पड़ेगी।"

कमलने कहा, " गाड़ी बेच देनेसे आसानीसे रुपये आ जायँगे।"

अजितने आश्चर्यके साथ कहा, " गाड़ी बेचूँगा ? मगर यह तो मेरी नहीं है,—आशु बाबूकी है।"

कमलने कहा, " इससे क्या ? आशु बाबू मारे लज्जा और घृणाके गाड़ीका नामतक जबानपर न लायेंगे। कोई चिन्ता मत कीजिए,—चले चलिए।"

सुनकर अजित स्तब्ध हो रहा। उसका बायाँ हाथ अब भी कमलके कंधेपर था, वह खिसककर नीचे जा पड़ा। बहुत देर चुप रहकर वह बोला; " तुम क्या मेरा मजाक उड़ा रही हो ?"

" नहीं तो, सच कह रही हूँ।"

" सच कह रही हो और सच ही समझ रही हो कि मैं गाड़ी चुरा सकता हूँ ? यह काम तुम खुद कर सकतीं ?"

कमलने कहा, " मेरे सकने न सकनेपर अगर आप निर्भर करते अजित बाबू, तो मैं इसका जवाब देती। पराई चीज हड़प लेनेकी हिम्मत आपमें नहीं है। चलिए, गाड़ी घुमाकर मुझे घर पहुँचा दीजिए।"

लौटते वक्त अजितने धीरेसे पूछा, " पराई चीज हड़प लेनेको क्या बहुत बड़ी बात समझती हो तुम ?"

कमलने कहा, " बड़ी-छोटीकी बात नहीं की मैंने। यह साहस आपमें नहीं है, बस यही कहा है।"

" नहीं, नहीं है, और उसके लिए मैं लज्जाका अनुभव भी नहीं करता।" यह कहकर अजित जरा रुका और फिर बोला, " बल्कि होता तो उसे मैं लज्जाकी बात समझता और मेरा तो विश्वास है कि सभी शिष्ट व्यक्ति इस बातको स्वीकार करेंगे।"

कमलने कहा, " क्योंकि स्वीकार करना बहुत आसान है। उसमें वाहवाही जो मिलती है।"

" सिर्फ वाहवाही ही ? उससे ज्यादा कुछ नहीं ? शिक्षा और संस्कार नामकी क्या कोई चीज ही नहीं देखी तुमने कभी ?"

" अगर देखी भी हो, तो उसकी आलोचना अगर कभी मौका आया तो और किसी दिन करूँगी, आज नहीं।" और वह क्षण-भर मौन रहकर बोली, " आपके तर्कपर अगर और कोई होता तो व्यंगसे कहता कि 'कमलको हड़प लेनेकी कोशिशमें तो शिक्षा और संस्कारको संकोच हुआ नहीं ?' मगर मैं ऐसा नहीं कह सकती, क्योंकि, कमल किसीकी सम्पत्ति नहीं है। वह सिर्फ अपनी ही है, और किसीकी भी नहीं।"

" किसी दिन शायद हो भी नहीं सकतीं ? "

" यह तो भविष्यकी बात है अजित बाबू,—आज कैसे इसका जवाब दूँ ?"

" जवाब शायद किसी भी दिन नहीं दे सकोगी। मालूम होता है, इसीलिए शिवनाथकी इतनी बड़ी निर्ममता भी तुम्हें नहीं खटकी। बहुत ही आसानीसे उसे तुमने झाड़ फेंका। " कहकर अजितने जोरकी एक साँस ले ली।

मोटरके उजालेमें दीखा कि सामने कई एक बैलगाड़ियाँ पड़ी हैं। पास ही शायद गाँव है, किसान जैसीकी तैसी गाड़ियाँ सड़कपर ढीलकर, बैल लेकर घर चले गये हैं।

अजित सावधानीसे उस जगहको पार करके बोला, " कमल, तुम्हें समझना कठिन है। "

कमलने हँसकर कहा, " कठिन कैसे ? ठीक ही तो समझे थे कि राह भूलते ही मुझे भुलाकर ले जाया जा सकता है। "

" शायद वह समझना मेरी भूल थी। "

कमलने फिर हँसते हुए कहा, " रास्ता भूलना भूल, मुझे भुलाकर ले जानेकी कोशिश भूल, और फिर अपनी भी भूल ? इतना बड़ा भूलका बोझा आपका दूर होगा कब ? अजित बाबू, अपनेपर जरा श्रद्धा रखना सीखिए। इस तरहसे अपने सामने अपनेको छोटा मत बनाइए। "

" मगर अपनी भूलको अस्वीकार करना ही क्या अपनेपर श्रद्धा रखना है, कमल ? "

" नहीं, सो नहीं। पर अस्वीकार करनेकी भी एक रीति है। संसार सिर्फ अपनेको लेकर ही तो है नहीं। ऐसा होता तो फिर सब झंझट ही मिट जाता। यहाँ और भी दस जनोंका वास है, उनकी भी इच्छा-अनिच्छा,—उनके भी कामकी धारा हमारी देहसे आ टकराती है। इसीसे, अन्तिम फलाफल अगर मनके माफिक न हो, तो उसे भूल जानकर धिक्कार देते रहना अपना ही अपमान करना है। अपने प्रति इससे बढ़कर अश्रद्धा, बताइए, और क्या प्रकट की जा सकती है ? "

अजितने क्षण-भर चुप रहकर पूछा, " लेकिन जहाँ सचमुचकी भूल हो ? शिवनाथके सम्बन्धमें भी क्या तुम्हें आत्म-पश्चात्ताप नहीं हुआ कमल ? और यही क्या मुझे तुम विश्वास करनेको कहती हो ? "

कमलने इस प्रश्नका शायद ठीकसे उत्तर नहीं दिया, बोली, " विश्वास

करने न करनेकी गर्ज तो आपकी है। उनके विरुद्ध तो किसीके पास किसी दिन मैंने शिकायत की नहीं।"

"शिकायत करनेवाली तुम स्त्री ही नहीं। पर भूलके लिए क्या अपने आप भी कभी अपनेको नहीं धिक्कारा?"

"नहीं।"

"तो इतना ही सिर्फ मैं कह सकता हूँ कि तुम अद्भुत हो, तुम असाधारण हो।"

इस मन्तव्यका कमलने कोई जवाब नहीं दिया, वह चुप हो रही।

दसेक मिनट बीत जानेके बाद अजित सहसा पूछ बैठा, "कमल, ऐसी भूल अगर फिर भी कर बैठूँ, तो भी क्या तुमसे भेंट होगी?"

"'अगर'का जवाब तो 'अगर' से ही दिया जा सकता है अजित बाबू। अनिश्चित प्रस्तावके निश्चित समाधानकी आशा नहीं करनी चाहिए।"

"अर्थात्, यही तुम्हारा विश्वास है कि यह मोह मेरा कल तक टिकेगा नहीं?"

"मुझे लगता है, ऐसा होना कमसे कम असम्भव तो नहीं।"

अजित मन ही मन आहत होकर बोला, "मैं और चाहे जो भी होऊँ कमल, शिवनाथ नहीं हूँ।"

कमलने जवाब दिया, "सो मैं जानती हूँ अजित बाबू, और शायद आपसे भी ज्यादा जानती हूँ।"

अजितने कहा, "जानती होतीं तो यह विश्वास न कर लेतीं कि आज मैंने तुम्हें झूठसे बहकाना चाहा था, इसमें सत्य कुछ भी नहीं था।"

कमलने कहा, "झूठकी बात तो हो नहीं रही अजित बाबू, मोहकी बात हो रही थी। ये दोनों एक चीज नहीं। आज मोहके वश होकर अगर आपने किसीको बहकाना चाहा हो तो वह अपनेको ही बहकाना चाहा है। मुझको बहकाना नहीं चाहा,—जानती हूँ।"

"पर अन्तमें ठगाई तो तुम ही जातीं कमल। इसे निश्चित समझकर भी कि मेरा रातका मोह दिनके उजालेमें कट जायगा तुमने साथ चलनेसे इनकार नहीं किया! यह क्या सिर्फ उपहास ही था?"

कमल जरा हँस दी "जाँच कर देख क्यों नहीं लिया? रास्ता खुला था, एक बार भी तो मैंने मना नहीं किया था।"

अजित जोरकी एक साँस छोड़कर बोला, "अगर नहीं किया तो मैं यही कहूँगा कि तुम्हें समझना वास्तवमें ही कठिन है। एक बात मैं तुमसे कहता हूँ कमल, कि जैसे नारीका प्रेम हृदयको आच्छन्न कर देता है, वैसे ही उसके रूपका मोह भी बुद्धिको बेहोश कर डालता है। किया करे, पर इनमेंसे एक जितना बड़ा सत्य है, दूसरा उतना ही बड़ा असत्य है। तुम तो जानती थीं कि यह मेरा प्रेम नहीं है, सिर्फ क्षणिक मोह है। फिर कैसे तुम इसे बढ़ावा देनेको तैयार हो गईं? कमल, कुहरा चाहे जितने बड़े समारोहके साथ सूर्यके प्रकाशको ढक दे, फिर भी, वह असत्य है। ध्रुव सत्य तो सूर्य ही है।"

कमल अन्धकारमें क्षण-भर निर्निमेष दृष्टिसे उसकी तरफ देखती रही, उसके बाद शान्त कण्ठसे बोली, "यह तो कविकी उपमा है अजित बाबू, कोई युक्ति नहीं, सत्य भी नहीं। मालूम नहीं, किस आदिम कालमें कुहरेकी सृष्टि हुई थी, पर आज भी वह उसी तरह मौजूद है। सूर्यको उसने बार बार ढका है, और बार बार ढकता रहेगा। मालूम नहीं सूर्य ध्रुव है या नहीं, पर कुहरा भी असत्य प्रमाणित नहीं हुआ। दोनों ही नश्वर हैं, और हो सकता है कि दोनों ही नित्य हों। इसी तरह, भले ही मोह क्षणिक हो, पर क्षण भी तो असत्य नहीं। क्षण-भरका सत्य लेकर ही वह बार बार वापस आया करता है। मालती फूलकी आयु सूर्यमुखीकी तरह लम्बी नहीं, पर उसे असत्य कहकर कौन उड़ा सकता है? यही अगर आपकी शिकायत हो कि मैंने एक रातके मोहको बढ़ावा क्यों देना चाहा था, तो मैं पूछती हूँ कि आयुष्य-कालकी लम्बाई ही क्या जीवनका इतना बड़ा सत्य है?"

यह जानकर भी कि ये बातें अजित समझ नहीं रहा है, वह कहने लगी, "आपके लिए मेरी बातें समझनेका दिन अब भी नहीं आया। इसीसे शिवनाथके प्रति आपके क्रोधकी सीमा नहीं, मगर मैंने उन्हें क्षमा कर दिया है। इसकी मुझे जरा भी शिकायत नहीं कि जितना उनसे मैंने पाया है उससे ज्यादा मुझे क्यों नहीं मिला।"

अजितने कहा, "यानी मनको इतना निर्विकार बना डाला है! अच्छा, संसारमें किसीके विरुद्ध क्या तुम्हें कोई भी शिकायत नहीं?"

कमल उसके मुँहकी ओर देखकर बोली, "है सिर्फ एकके विरुद्ध।"

"किसके विरुद्ध, बताओ तो सही कमल?"

"क्या करेंगे आप पराई बात सुनकर?"

"पराई बात? कोई भी हो, फिर भी कमसे कम निश्चिन्त तो हो सकूँगा कि मुझपर तुम्हारा गुस्सा नहीं है?"

कमलने कहा, "निश्चिन्त होनेसे ही क्या आप खुश हो जायँगे? पर उसके लिए अब समय नहीं रहा, हम लोग आ पहुँचे, गाड़ी रोकिए, मैं उतर जाऊँ।"

गाड़ी रुक गई। अँधेरेमें सड़कके किनारे कोई खड़ा था, पास आते ही दोनों चौंक पड़े। अजित डरता हुआ बोला, "कौन?"

"मैं हूँ, राजेन्द्र। वही, जिसे आज हरेन्द्र-भइयाके आश्रममें देखा था।"

"अच्छा, राजेन्द्र? इतनी रातमें यहाँ कैसे?"

"आप लोगोंकी ही बाट देख रहा था। आप लोगोंके आनेके बाद ही आशु बाबूके यहाँसे आदमी आया था आपको ढूँढ़ने।" यह कहकर वह कमलकी तरफ देखने लगा।

कमलने कहा, "मुझे ढूँढनेका कारण?"

उसने कहा, "आपने शायद सुना होगा कि चारों तरफ जोरका इन्फ्लुएञ्जा फैल रहा है; और बहुतसे लोग मर रहे हैं। शिवनाथ बाबू बहुत ज्यादा बीमार हैं। अचानक उन्हें मैं डोलीमें लिटाकर आशु बाबूके घर पहुँचा आया हूँ। आशु बाबूने सोचा होगा कि आप आश्रममें होंगी, इसीसे वहाँ बुलाने भेजा था।"

"अभी क्या वक्त होगा?"

"शायद तीन बज चुके हैं।"

कमलने हाथ बढ़ाकर गाड़ीका दरवाजा खोला और कहा, "भीतर बैठिए, रास्तेमें आपको आश्रममें उतारते चलेंगे।"

अजितने एक शब्द भी मुँहसे नहीं निकाला। काठके पुतलेकी तरह चुप-चाप गाड़ी चलाता हुआ हरेन्द्रके घरके सामने जाकर ठहर गया। राजेन्द्रके उतरनेपर कमलने कहा, "आपको धन्यवाद। मुझे खबर देनेके लिए आज आपको बहुत कष्ट हुआ।"

"यह तो मेरा काम ही है। जरूरत होते ही खबर दीजिएगा।" कहकर वह चला गया। न कोई भूमिका, न कोई आडम्बर,—सीधे-सादे शब्दोंमें जता गया कि यह उसके कर्तव्यके अन्तर्गत है। आज ही शामको हरेन्द्रके मुँहसे इस लड़केके विषयमें जो कुछ उसने सुना था, सब याद आ गया

एक तरफ उसकी परीक्षा पास करनेकी असाधारण दक्षता, और दूसरी तरफ सफलताके सामने पहुँचते ही उसे त्याग देनेकी असीम उदासीनता। उमर भी कम, हाल ही यौवनमें कदम रखा है,—और इसी उमरमें 'अपना' कहनेको कुछ भी हाथमें नहीं रखा, पराये काममें सब बाँट दिया।

अजित तबसे चुप ही था। यह सुननेके बाद कि रातके तीन बज चुके हैं, किसी बातपर ध्यान देने लायक शक्ति उसमें नहीं थी। एक असम्बद्ध काल्पनिक प्रश्नोत्तर-मालाके आघात-प्रतिघातके नीचे इस निशीथ अभियानकी निरवच्छिन्न कुत्सिततासे उसका अन्तःकरण काला हो उठा। जहाँतक सम्भव है, कोई भी उससे कुछ पूछेगा नहीं, और हो सकता है कि पूछनेकी हिम्मत भी किसीकी न पड़े; पर, सिर्फ अपनी इच्छा, अभिरुचि और विद्वेषकी तूलिकासे लोग अज्ञात घटनाकी कहानी आद्योपान्त पूरीकी पूरी बना लेंगे। और इससे भी ज्यादा उसे व्याकुल कर रखा था इस लज्जाहीन नारीकी निर्भय सत्यवादिताने। इस दुनियामें झूठ बोलनेकी इसे आवश्यकता ही नहीं। यह मानो सारी दुनियाको संकटमें डालने और लांछित करनेके लिए ही पैदा हुई है।

उधर उसे नहीं मालूम कि शिवनाथकी बीमारीमें कौन और कैसे कैसे लोग आये होंगे। यह कल्पना करके कि इस स्त्रीसे सब लोग इतनी देर होनेका कारण पूछ रहे हैं, उसका खून ठंडा हो गया। सहसा उसे खयाल आया कि वह कमलसे घृणा करता है और इसीके लुब्ध आश्वाससे उसने आत्म-विस्मृत उन्मत्तकी तरह क्षण-भरके लिए ही सही, अपना होश खो दिया था। मन ही मन यह कहकर वह बार बार अपनेको अभिशाप देने लगा कि जरूर इसकी उसे सजा मिलनी चाहिए।

गेटके अन्दर घुसते ही उसकी नजर पड़ी खुली खिड़कीके सामने खड़े हुए आशु बाबूपर। शायद वे उसीकी प्रतिक्षामें उत्कंठित हैं। गाड़ीकी आहटसे नीचेकी ओर देखकर बोले, "अजित, आ गये? साथमें कौन है, कमल?"

"हाँ।"

"जदु, कमलको शिवनाथके कमरेमें ले जाओ।—सुना होगा शायद, वे बीमार हैं?" कहते कहते वे खुद ही उतर आये, और बोले, "यह ऋतु बदलनेका समय ऐसा खराब है कि अचानक चारों तरफ बीमारी शुरू हो गई है, और काफी लोग मर रहे हैं। मेरी अपनी तबीयत भी आज सवेरेसे ठीक नहीं, हरारत-सी मालूम पड़ रही है।"

कमल उद्विग्न होकर बोली, "तो आप जाग क्यों रहे हैं ? यहाँ देख-रेख करनेवालोंकी तो कमी नहीं है ?"

"कौन है, बताओ ? डाक्टर आकर देख-भाल गये हैं, मुझे सोने भेजकर मणि स्वयं ही बैठी जाग रही है। पर मुझे नींद ही नहीं आती थी और तुम्हारे आनेमें देर होने लगी।—कमल, पतिकी बीमारीके समय भी क्या अभिमान रखा जाता है ? लड़ाई-झगड़ा तो होता ही रहता है, पर तुमने खबर तक नहीं ली कि तीन-चार दिनसे कहाँ किस मकानमें वह बुखारमें पड़ा हुआ है ? छि, यह काम अच्छा नहीं हुआ, अब अकेली तुम्हींको तो सब भुगतना पड़ेगा।"

सुनकर कमलको बड़ा आश्चर्य हुआ, और समझ गई कि इस सरलचित्त व्यक्तिको भीतरकी कोई भी बात मालूम नहीं। वह चुप रही; आशु बाबू उसके अभिमानको शान्त करनेके अभिप्रायसे कहने लगे, "हरेन्द्र बाबूके मुँहसे सुना कि तुम घरपर नहीं हो, तभी मैं समझ गया कि अजितने तुम्हें छोड़ा नहीं। वह खुद खूब घूमना पसन्द करता है, तुम्हें भी ले गया होगा। लेकिन सोचो तो जरा, अँधेरेमें अचानक कोई दुर्घटना हो जाती तो तुम लोग कैसी आफतमें पड़ते ?"

अजितकी छातीपरसे एक पत्थर-सा उतर गया। आशु बाबूके लिए वह सोचने लगा : किसी बातकी बुराईकी तरफ मानो उनका मन जाना ही नहीं चाहता, निष्कलुष अन्तःकरण हरदम अकलङ्क शुभ्रतासे चमका करता है। स्नेह और श्रद्धासे उसने मन ही मन उन्हें नमस्कार किया। लेकिन, कमलने उनकी सब बातोंपर ध्यान नहीं दिया, शायद इसकी जरूरत भी नहीं समझी। उसने पूछा, "वे अस्पताल न जाकर यहाँ क्यों आये ?"

आशु बाबूने आश्चर्यके साथ कहा, "अस्पताल ? यह देखो, अभी तक तुम्हारा गुस्सा नहीं गया !"

"गुस्सेकी बात नहीं कह रही आशु बाबू, जो सगत और स्वाभाविक है, वही कह रही हूँ।"

"यह स्वाभाविक नहीं है, और सगत तो है ही नहीं। हाँ, इतना मानता हूँ कि मणिको उचित था कि यहाँ न लाकर वह तुम्हारे पास भेज देती।"

कमलने कहा, "नहीं, उचित नहीं था। मणि जानती है कि इलाज करानेकी शक्ति नहीं है मेरी।"

इस बातसे उन्हें और एक बात याद आ गई और उससे वे अत्यन्त लज्जितसे हो गये। कमल कहने लगी, "सिर्फ मनोरमा ही नहीं शिवनाथ बाबू भी जानते हैं कि सेवासे ही रोग नहीं जाता, दवा-दारूकी भी जरूरत पड़ती है। शायद यह अच्छा ही हुआ कि खबर मेरे पास न जाकर मणिके पास पहुँची। उनकी आयुका ज़ोर समझिए।"

आशु बाबू लज्जासे म्लान होकर सिर हिलाते हुए बार बार कहने लगे, "यह बात नहीं कमल,—सेवा ही सब कुछ है। तीमारदारी सबसे बड़ी दवा है। नहीं तो, डाक्टर-वैद्य तो महज एक उपलक्ष हैं।" उन्हें अपनी स्वर्गीया पत्नीकी याद आ गई, बोले "मैं तो भुक्तभोगी हूँ कमल, बीमारी भुगतते भुगतते मुझे इसकी शिक्षा मिल चुकी है। घर चलो, तुम्हारी चीज है, जैसा तुम ठीक समझोगी वैसा ही होगा। मेरे रहते दवा-दारूकी तकलीफ नहीं होगी।" और उसे वे रास्ता दिखाते हुए आगे ले चले। अजित किंकर्तव्य-विमूढ़ होकर, बगैर समझे ही उनके साथ हो लिया। इस डरसे कि रोगीके कमरेमें शोर होनेसे कहीं उसके विश्राममें विघ्न न हो, सबने दबे-पाँव प्रवेश किया। देखा, शय्याके पास कुरसीपर बैठी मनोरमा रात्रि-जागरणकी क्लान्तिसे रोगीकी छातीपर अपना थका हुआ मस्तक रखकर शायद अभी अभी सो गई है और उसकी गरदनमें परस्पर सन्नद्ध दोनों बाँहें डाले शिवनाथ भी सो रहा है।

इस स्वप्नातीत दृश्यपर अकस्मात् जैसे ही पिताकी आँखें पड़ीं, वैसे ही उनपर मानो घनान्धकारका जाल उतर आया। क्षण-भर बाद ही वे वहाँसे भाग खड़े हुए। अजित और कमल आँख उठाकर परस्पर एक दूसरेका मुँह ताकने लगे और उसके बाद जैसे आये थे वैसे ही चुपचाप बाहर चले गये।

१६

जाने आनेके रास्तेके पास ही एक छायादार बरंडा है। रोगीके कमरेसे निकलकर अजित और कमल वहीं रुक गये। एक छोटी-सी घिसे काँचकी लालटेन वहाँ झूल रही थी, जिसके अस्पष्ट प्रकाशमें स्पष्ट दीख पड़ा कि अजितका चेहरा सफेद फक पड़ गया है: अकस्मात् धक्का खाकर मानो सारा खून कहीं हट गया है। तीसरा कोई व्यक्ति वहाँ नहीं था, फिर भी अजितने एक अनात्मीया शिष्ट महिलाके योग्य सम्मान दिखाते हुए कमलसे पूछा,

"आप क्या अभी घर लौट जाना चाहती हैं? अगर जाना चाहें तो मैं उसका इन्तजाम कर सकता हूँ।"

कमल उसके मुँहकी तरफ देखकर चुप रह गई। अजितने कहा, "इस मकानमें अब तो आपका एक क्षण भी रहना ठीक न होगा।"

"और आपका रहना ठीक होगा?"

"नहीं, मेरा रहना भी नहीं। कल सवेरे ही मैं और कहीं चला जाऊँगा।"

कमलने कहा, "यही अच्छा है। मैं भी तभी जाऊँगी। फिलहाल, इस कुरसीपर बैठकर रात बिता दूंगी, आप जाकर आराम करें।"

छोटी कुरसीकी तरफ देखकर अजित बगलें झाँकने लगा, बोला, "लेकिन-"

कमलने कहा, "'लेकिन' रहने दीजिए अजित बाबू, उसमें बड़ा झंझट है। इस वक्त न घर जाना ही सम्भव है और न आपके कमरेमें। आप जाइए, देर न कीजिए।"

सवेरे बेहरा आकर अजितको आशु बाबूके सोनेके कमरेमें बुला ले गया। अब तक वे खाटसे उठे भी न थे। पास ही एक कुरसीपर कमल बैठी थी, उसे पहले ही बुला लिया गया था।

आशु बाबूने कहा, "तबीयत कलसे ही ठीक नहीं थी, आज मालूम होता है मानो,—अच्छा, बैठो अजित।"

उसके बैठनेपर वे कहने लगे, "मैंने सुना कि आज सवेरे ही तुम जा रहे हो, पर तुम्हें रहनेके लिए भी मैं नहीं कह सकता, ठीक है,—गुड बाइ। भविष्यमें शायद कभी भेंट न हो, पर यह निश्चय समझो कि मैंने तुम्हें सर्वान्तःकरणसे आशीर्वाद दिया है कि हम लोगोंको क्षमा करके तुम जीवनमें सुखी हो सको।"

अजितने अब तक उनके मुँहकी तरफ देखा नहीं था, अब जवाब देनेके लिए मुँह उठाते ही उससे कुछ कहते नहीं बना। बल्कि यों कहना चाहिए कि अकस्मात् मानो वह अपनी बातको भूल गया। इस बातकी वह कल्पना भी न कर सका कि एक रातके कुछ ही घटोंमें किसीमें इतना जबरदस्त परिवर्तन हो सकता है।

आशु बाबू खुद भी दो-तीन मिनट मौन रहकर कमलसे कहने लगे, "तुम्हें बुलवा तो लिया, पर तुम्हारी आँखोंसे आँखें मिलानेमें भी मेरा सिर नीचा हुआ जा रहा है। सारी रात मेरे मनमें क्या क्या होता रहा है,—क्या क्या सोचता रहा हूँ सो मैं किससे कहूँ?"

फिर जरा ठहरकर बोले, "अक्षयने एक दिन कहा था कि शिवनाथ शायद तुम्हारे यहाँ अकसर नहीं रहते। उस बातपर मैंने ध्यान नहीं दिया था, सोचा था कि वह शायद उसकी अत्युक्ति है,—उसके विद्वेषकी ज्यादती है। तुम रुपयोंकी कमीके कारण संकटमें थीं, तब उसका कारण मैं नहीं समझा था, मगर आज सब कुछ स्पष्ट हो गया है,—कहीं भी कोई सन्देह नहीं रहा।"

दोनों ही चुप हो रहे। थोड़ी देर बाद आशु बाबू कहने लगे, "तुम्हारे साथ मैं कई बार अच्छा व्यवहार नहीं कर सका, पर उस दिन प्रथम परिचयके दिनसे ही मैं तुमपर स्नेह करने लगा था कमल। इसीसे, आज बार बार यही खयाल आ रहा है कि मैं आगरा न आता तो अच्छा था।"

कहते कहते उनकी आँखोंमें आँसू आ गये; उन्हें हाथसे पोंछते हुए वे बोले, "जगदीश्वर!"

कमल उठकर उसके सिरहाने जा बैठी; और माथेपर हाथ रखकर बोली, "आपको तो बुखार है आशु बाबू!"

आशुबाबूने उसका हाथ अपने हाथमें लेकर कहा, "रहने दो कमल, मैं जानता हूँ, तुम अत्यन्त बुद्धिमती हो। मेरा कोई एक किनारा तुम कर दो। इस घरमें उस आदमीका अस्तित्व मेरे सारे शरीरमें आग-सी लगाये दे रहा है।"

कमलने अजितकी ओर देखा, वह नीचेको सिर झुकाये बैठा है। उसकी तरफसे कोई इशारा न पाकर वह क्षण-भर मौन रही, फिर बोली, "मुझे आप क्या करनेको कहते हैं? कहिए।" परन्तु कोई जवाब न पाकर वह क्षण-भर चुप बैठी रही, फिर बोली, "शिवनाथ बाबूको आप यहाँ रखना नहीं चाहते, पर वे बीमार हैं। इस हालतमें या तो उन्हें अस्पताल भेज दीजिए या फिर उनके घर। और अगर आप समझते हैं कि मेरे घर भेजनेसे ठीक रहेगा, तो वहाँ भेज सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नहीं; पर आप तो जानते हैं कि इलाज करानेकी शक्ति मुझमें नहीं है; मैं जी जानसे सिर्फ सेवा ही कर सकती हूँ, उससे ज्यादा कुछ नहीं।"

आशु बाबू कृतज्ञतासे भर उठे, बोले, "कमल, मालूम नहीं क्यों, पर ऐसे ही उत्तरकी मैंने तुमसे आशा की थी। यह मैं जानता था कि पाखण्डीको जवाब देनेमें तुम खुद पत्थर न हो सकोगी। तुम अपनी चीज अपने घर ले जाओ, इलाजके खर्चेकी तुम फिकर मत करो, इसका भार मेरे ऊपर रहा।"

कमलने कहा, "पर इस विषयमें एक बात पहलेसे ही स्पष्ट हो जानी चाहिए।"

आशु बाबू चटसे कह उठे, "तुम्हें कहनेकी जरूरत नहीं कमल, मैं जानता हूँ। एक न एक दिन सारी गन्दगी दूर हो जायगी। तुम कोई चिन्ता मत करो, मेरे जीते जी इतना बड़ा अन्याय-अत्याचार तुमपर मैं नहीं होने दूँगा।"

कमल उनके मुँहकी तरफ देखती हुई स्थिर बैठी रही, कुछ बोली नहीं।

"क्या सोच रही हो कमल ?"

"सोच रही थी कि आपसे कहनेकी जरूरत है, या नहीं। पर मालूम होता है कि जरूरत है; नहीं तो कुछ भी स्पष्ट न होगा, उलझन बढ़ती ही जायगी। आपके पास रुपया है, हृदय है, दूसरोंके लिए खर्च करना आपके लिए कोई मुश्किल नहीं, लेकिन यह भ्रम अगर आपके अन्दर हो कि इस तरह आप मुझपर दया कर रहे हैं, तो वह दूर हो जाना चाहिए। किसी भी बहाने मैं आपकी दी हुई भीख नहीं लूँगी।"

आशु बाबूको सिलाईकी मशीनकी बात याद आ गई, वे व्यथित होकर बोले, "मुझसे गलती अगर कभी हो भी गई हो, तो क्या उसके लिए क्षमा नहीं कर सकतीं ?"

कमलने कहा, "गलती शायद इतनी तब नहीं की जितनी कि आप अब करने जा रहे हैं। आप सोचते होंगे कि शिवनाथ बाबूको बचाना प्रकारान्तरसे मुझको ही बचाना है,—मुझपर ही अनुग्रह करना है। मगर असलमें बात ऐसी नहीं। इसके बाद आपकी जो इच्छा हो, कर सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नहीं।"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए कहा, "ऐसा ही गुस्सा आता है कमल, यह कोई अस्वाभाविक बात नहीं और न अन्याय ही है। अच्छी बात है, मैं शिवनाथको ही बचाना चाहता हूँ, तुमपर अनुग्रह नहीं करता। अब तो ठीक है न ?"

कमलके चेहरेपर विरक्तिका भाव दिखाई दिया। उसने कहा, "नहीं, यह ठीक नहीं। आपको जब कि मैं समझा नहीं सकती तो फिर कोई उपाय नहीं। उन्हें आप अस्पताल नहीं भेजना चाहते, तो हरेन्द्र बाबूके आश्रममें भेज दीजिए। वे बहुतोंकी सेवा किया करते हैं, इनकी भी करेंगे। आपको जो

कुछ खर्च करना हो, वहीं कीजिएगा। मैं खुद भी बहुत ज्यादा थक गई हूँ, अब चलती हूँ।" इतना कहकर वह सचमुच ही जानेको तैयार हो गई।

उसकी बात और आचरणसे आशु बाबू मन ही मन क्रुद्ध हो उठे, बोले, "यह तुम्हारी ज्यादती है कमल। तुम्हारे दोनोंके कल्याणके लिए जो कुछ मैं करने जा रहा हूँ, उसे तुम अकारण विकृत करके देख रही हो। एक ओर तो मेरे लिए लज्जाकी सीमा नहीं,—और मैं जानता हूँ कि इस कदाचारको अंकुरसे नष्ट किये बिना मेरी असीम ग्लानि बनी ही रहेगी,—दूसरी ओर यह भी सच नहीं कि मेरी लड़कीका इससे सम्बन्ध है, इसीलिए मैं किसी तरह बच निकलनेका रास्ता देख रहा हूँ। शिवनाथको मैं बहुत तरहसे बचा सकता हूँ, मगर सिर्फ इतना ही मैं नहीं चाहता। मैं चाहता हूँ कि ऐसे संकटके दिनोंमें तुम सर्वान्तःकरणसे उसकी सेवा करके उसे फिरसे पूर्ववत् पा जाओ। इसीलिए मेरा यह प्रस्ताव है।—सिर्फ अपने स्वार्थवश ही मैं ऐसा नहीं कह रहा।"

बातें सब सच थीं, सकरुण और आन्तरिकतासे पूर्ण। मगर कमलके मनपर कोई असर नहीं पड़ा। उसने कहा, "ठीक यही बात मैं आपको समझाना चाहती थी आशु बाबू। सेवा करनेसे मै इनकार नहीं करती। चायके बगीचेमें रहते हुए मैंने बहुतोंकी सेवा की है, इसका मुझे अभ्यास है। लेकिन मैं उन्हें फिरसे पाना नहीं चाहती; न सेवा करके, और न बिना सेवा किये। यह मेरी अभिमानकी आग नहीं, और न झूठा दर्प ही है,—असलमें हम दोनोंका सम्बन्ध टूट गया है; उसे मैं जोड़ नहीं सकती।"

जो कुछ उसने कहा, उसमें न तो किसी तरहकी गरमी थी न उच्छ्वास,—बिलकुल सीधी-सादी बात थी। परन्तु इसीने आशु बाबूको दंग कर दिया। क्षण-भर बाद उन्होंने कहा, "यह कैसी बात कह रही हो कमल? इस मामूली-सी बातपर पतिको त्याग देना चाहती हो? यह शिक्षा तुम्हें किसने दी?"

कमल चुप रही। आशु बाबू कहने लगे, "बचपनमें यह शिक्षा तुम्हें चाहे जिसने भी दी हो, उसने गलत शिक्षा दी है। यह अन्याय है, असंगत है,—यह भारी अपराध है। चाहे किसी भी घरमें तुम पैदा हुई हो, तुम भारतीय कन्या हो। यह मार्ग तुम्हारा-हमारा नहीं है,—इसे तुम्हें भूलना ही होगा। जानती हो कमल, एक देशका धर्म दूसरे देशके लिए अधर्म है। और 'स्व-धर्ममें मृत्यु भी श्रेय' है।" कहते कहते उनकी आँखें चमक उठीं

और बात खतम करके वे हॉफने लगे। परन्तु जिसे लक्ष्य करके ये बातें कही गई वह रच-मात्र भी विचलित नहीं हुई।

आशु बाबू कहने लगे, "यह मोह ही एक दिन हमें रसातलकी ओर खींचे लिये जा रहा था। पर भ्रान्ति पकड़ाई दे गई कुछ मनीषियोंकी दृष्टिमें। देशवासियोंको बुलाकर बार बार वे सिर्फ एक ही बात कहने लगे—तुम लोग उन्मत्तकी तरह जा कहाँ रहे हो? तुम्हें किसी बातकी कमी नहीं, दीनता नहीं, किसीके आगे हाथ पसारनेकी जरूरत नहीं, सिर्फ एक बार अपने घरकी तरफ मुड़कर देखो। पूर्वपुरुष तुम्हारे लिए सब कुछ छोड़ गये हैं, सिर्फ एक बार हाथ बढ़ाकर उठा भर लो। विलायतका तो सभी कुछ मैं अपनी आँखोसे देख आया हूँ; अब सोचता हूँ कि ठीक समयपर ऐसी सावधान-वाणी अगर वे नहीं घोषित कर गये होते, तो आज देशकी क्या दशा होती? बचपनकी सभी तो बातें याद हैं,—उःफ्—शिक्षित लोगोंकी तब कैसी दशा थी!" इतना कहकर उन्होंने स्वर्गीय मनीषियोंको लक्ष्य करके हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

कमलने मुँह उठाकर देखा कि अजित मुग्ध दृष्टिसे आशु बाबूकी ओर देख रहा है। कल्पनाके आवेशमें मानो उसे होश ही नहीं रहा,—ऐसी हालत थी।

आशु बाबूका भावावेश अब तक दबा नहीं था, कहने लगे, "कमल, और कुछ भी अगर वे न कर जाते, तो भी, सिर्फ इतनेके ही कारण देशवासियोंके हृदयमें वे प्रातःस्मरणीय बने रहते।"

"क्या सिर्फ इतनी ही बातके लिए वे प्रातःस्मरणीय हैं?"

"हॉ, सिर्फ इतनी ही बातके लिए। बाहरसे हटाकर सिर्फ घरकी तरफ आँख उठाकर देखनेको कहा था,—इसीके लिए।"

कमलने पूछा, "बाहर अगर प्रकाश हो रहा हो और पूर्व-आकाशमे अगर सूर्योदय हो रहा हो, तो भी, पीछे मुड़कर पश्चिमके स्वदेशकी ओर देखना पड़ेगा? और वही होगा स्वदेश-प्रेम?"

मगर यह प्रश्न शायद आशु बाबूके कानों तक नहीं पहुँचा, वे अपनी ही झोंकमें कहते गये, "हमारे देशका धर्म, देशके पुराण-इतिहास, देशका आचार-व्यवहार, रीति-नीति विदेशके दबावसे लुप्त होने जा रही थी, उसके प्रति हमारे अन्दर जो आज फिरसे श्रद्धा और विश्वास वापस आया है, सो सिर्फ उन्हींकी भविष्य-दृष्टिका फल है। जातिके हिसाबसे हम ध्वंसकी ओर

बढ़ते चले जा रहे थे, उससे बच जाना क्या मामूली बचना है कमल? यह ज्ञान हमें किसने दिया कि उसे फिरसे सब प्राप्त किये बगैर किसी भी तरह हम बच नहीं सकते,—बताओ तो ?"

अजित उत्तेजनाके मारे अकस्मात् उठ खड़ा हुआ, बोला, "मैंने कभी इसकी कल्पना भी नहीं की थी कि इन सब बातोंका विचार भी आपके मनमें कभी स्थान पा सकता है। मुझे बड़ा भारी दुःख है कि अब तक मैंने आपको पहचाना नहीं, आपके चरणोंमें बैठकर कभी उपदेश नहीं लिया।" वह और भी बहुत कुछ कहने जा रहा था, पर बीचमें विघ्न आ पड़ा। नौकरने आकर खबर दी कि हरेन्द्र बाबू वगैरह भेंट करने आ रहे हैं; और दूसरे ही क्षण हरेन्द्र सतीश और राजेन्द्रके साथ आ पहुँचा। कहा, "मालूम हुआ कि शिवनाथ बाबू सो रहे हैं। आते वक्त डाक्टरके यहाँ भी होता आया हूँ। उनका कहना है कि सीरियस (=खतरनाक) नहीं, जल्दी आराम हो जायगा।" कहते हुए उसने कमलको नमस्कार किया और अपने साथियोंके साथ एक तरफ बैठ गया।

आशु बाबूने सिर हिलाया, पर उनकी दृष्टि थी अजितकी तरफ; और उसीको लक्ष्य करके वे बोले, "मेरा सारा यौवन विलासमें बीता है, इस बातको तुम लोग भूल क्यों जाते हो? ऐसी बहुत-सी चीज़ें है जो नज़दीकसे नहीं दिखाई देतीं, दूर जाकर खड़े होनेसे ही दिखाई देती हैं। मैंने जो स्पष्ट देखा है वह है शिक्षित मानसका परिवर्तन। इन्हीं हरेन्द्रके आश्रमको ही देखो न, इनका जो नगर नगरमें शाखा-प्रशाखाएँ विस्तार करनेका आयोजन है, उसके मूलमें क्या वही भावना नहीं है? विश्वास न हो, इन्हींसे पूछ देखो। वही ब्रह्मचर्य, वही संयमकी साधना, वही पुरानी रीति-नीतिका पुनः प्रवर्तन—यह सब हमारे उस अतीत कालकी पुनः प्रतिष्ठाका उद्यम नहीं तो और क्या है? उसीको अगर हम भूल जायँ, उसीके प्रति अगर हम अपनी आस्था खो बैठें, तो फिर आशा करनेके लिए हमारे पास बाकी ही क्या रह जाता है? तपोवनका आदर्श सिर्फ हमारे ही यहाँ था। संसार छान डालनेपर भी क्या उसका जोड़ कहीं मिल सकता है अजित? किसी जमानेमें जिन लोगोंने हमारे समाजका निर्माण किया था, हमारे वे शास्त्रकार व्यवसायी नहीं थे, सन्यासी थे; उनके दानको बिना किसी संशयके नतमस्तक होकर ग्रहण करनेमें ही हमारी चरम सार्थकता है;—यही हमारे कल्याणका मार्ग है कमल, इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग नहीं।"

अजित स्तब्ध हो रहा। सतीश और हरेन्द्रके आश्चर्यका ठिकाना न रहा, —यह साहवी चाल-चलनका आदमी आज कह क्या रहा है! और राजेन्द्र तो समझ ही न पाया कि अकस्मात् क्यों ओर कैसे यह प्रसंग छिड़ गया। सभीके मुँहपर एक निष्कपट श्रद्धाका भाव प्रस्फुटित हो उठा।

स्वयं वक्ताको भी कम आश्चर्य नहीं हुआ। सिर्फ कहनेकी शक्तिके लिए ही नहीं, बल्कि इसलिए कि इस तरह किसीसे कहनेका उन्हें पहले कभी मौका ही नहीं मिला,—उनके मनमें एक तरहकी अनिर्वचनीय तृप्तिकी लहर दौड़ने लगी। क्षण-भरके लिए वे क्षण-भर पहलेका दुःख भूल गये। बोले, " समझीं कमल, क्यों मैं तुमसे ऐसा अनुरोध कर रहा था ? "

कमलने सिर हिलाकर कहा, " नहीं। "

" नहीं ? नहीं क्यों ? "

कमलने कहा, " सिर्फ यही एक समाचार आप परमानन्दके साथ सुना रहे थे कि विदेशी शिक्षाके प्रभावको दूर कर फिर पुरानी व्यवस्थाकी ओर लौटनेकी चेष्टा शिक्षितोंमें प्रचलित होती जा रही है। आपकी धारणा है कि इससे देशका कल्याण होगा, परन्तु कारण आपने कुछ भी नहीं बतलाया। बहुत-सी प्राचीन रीति-नीतियाँ लुप्त होती जा रही थीं, हो सकता है कि यह सच हो कि उनके पुनरुद्धारका उद्योग हो रहा है, मगर भला इसका प्रमाण क्या है आशु बाबू, कि उससे हमारा भला ही होगा ?—कहाँ,—यह तो आपने बताया ही नहीं ? "

" बताया कैसे नहीं ? "

" नहीं, नहीं बताया। जो कुछ आप कह रहे थे, वह तो सभी सुधार-विरोधी और प्राचीनताके अन्ध स्तुतिकार कहा करते हैं। इसका कोई भी प्रमाण नहीं कि सभी लुप्त वस्तुओंका पुनरुद्धार अच्छा ही होगा। मोहके नशेमें बुरी चीजोंका पुनरुद्धार भी संसारमें होते देखा जाता है। "

आशु बाबूको इसका जवाब ढूँढे न मिला, परन्तु अजितने कहा, " बुरी चीजका उद्धार करनेमें कोई शक्तिका क्षय नहीं करता। "

कमलने कहा, " बहुत लोग करते हैं। बुरीके लिए नहीं, बल्कि पुरानी वस्तु-मात्रको स्वतःसिद्ध अच्छी चीज समझ कर करते हैं। एक बात आपसे पहले ही कहना चाहती थी, पर आपने ध्यान नहीं दिया। चाहे लौकिक आचार-अनुष्ठान हो और चाहे पारलौकिक धर्म-कर्म, अपने देशकी चीज

समझकर उसे गले लगाये रहनेमें स्वदेश-भक्तिकी वाहवाही तो मिल सकती है, पर स्वदेशके कल्याणके देवता उससे खुश नहीं किये जा सकते। बल्कि वे इससे नाराज ही होते हैं।"

आशु बाबू दंग रह गये, बोले, "तुम कह क्या रही हो कमल? अपने देशका धर्म, अपने देशका आचार-अनुष्ठान त्यागकर यदि हम बाहरसे भीख माँगने लगें तो फिर अपना कहनेको हमारे पास बाकी ही क्या रह जायगा? फिर हम संसारमें मनुष्यत्वका दावा करनेके लिए अपना क्या परिचय देंगे?"

कमलने कहा, "दावा खुद हमारे घर आ जायगा, परिचयकी जरूरत न होगी। फिर विश्व-जगत् हमें बिना परिचयके ही जान जायगा।"

आशु बाबू व्याकुल होकर बोले, "तुम्हें तो मैं समझ ही न सका कमल!"

"समझनेकी बात भी नहीं आशु बाबू, ऐसा ही होता है। इस चलनशील ससारमें प्रगतिशील मानव-चित्तको कदम-कदमपर जो सत्य नित्य नये नये रूपमें दिखाई देता है, उसे सभी नहीं पहचान सकते। सोचते हैं, यह आफत कहाँसे आ गई? आपको उस दिनकी ताजमहलकी छायाके नीचे खड़ी शिवानीकी याद है? आज कमलके भीतर उसे पहचाना भी नहीं जा सकता। मन ही मन कहेंगे, जिसे उस दिन देखा था वह गई कहाँ? किन्तु यही मनुष्यका सच्चा परिचय है,—मैं तो यही चाहती हूँ कि हमेशा इसी भावसे लोगोंमें परिचित हो सकूँ।"

जरा ठहरकर फिर बोली, "पर तर्क वितर्ककी आँधीमें हमारी असल बात तो उड़ ही गई—मूल विषयसे हम बहुत दूर जा पड़े हैं। लेकिन मैं बहुत थकी हुई हूँ, अब जाती हूँ।"

आशु बाबूसे कुछ जवाब देते न बना, विह्वलकी भाँति देखते रह गये। इस स्त्रीको कहीं उन्होंने अस्पष्ट समझा और कहीं बिलकुल ही नहीं समझ पाया। उन्हें ऐसा लगने लगा कि अभी अभी उसने जिस आँधीका जिक्र किया था, उसकी प्रचण्ड झंझामें तिनकेकी तरह उनका सब तरहका आवेदन-निवेदन उड़कर कहींका कहीं चला गया।

कमल उठ खड़ी हुई। अजितको इशारेसे बुलाकर बोली, "साथ लाये थे, अब चलिए न पहुँचा दीजिए।"

मगर आज वह मारे संकोचके सिर भी न उठा सका। कमल मन ही मन जरा हँसकर आगे बढ़ी और सहसा राजेन्द्रके कंधेपर हाथ रखकर बोली, "राजेन्द्र बाबू, तुम चलो न भाई, मुझे पहुँचा आओ।"

इस आकस्मिक भाईके सम्बोधनसे राजेन्द्रने विस्मित होकर एक बार उसकी तरफ देखा और उसके बाद कहा, " चलिए। "

दरवाजेके पास जाकर कमल सहसा खड़ी हो गई, बोली, " आशु बाबू, अपना प्रस्ताव मैंने वापस नहीं लिया है। उसी शर्तपर इच्छा हो तो भेज दीजिएगा, मैं यथासाध्य कोशिश कर देखूँगी। बच जायँ तो अच्छा ही है, न बचें तो उनका भाग्य। " इतना कहकर वह चली गई। सबके सब स्तब्ध होकर बैठे रहे। अस्वस्थ आशु बाबूकी आँखोंके आगे प्रभातका प्रकाश भी विवर्ण और विस्वाद हो उठा।

आधे रास्तेमें राजेन्द्रने बिदा ले ली और कहा, " मैं घंटे-भरमें अपना एक काम निबटाकर वापस आता हूँ। कमलने अन्यमनस्कताके कारण ही शायद कोई आपत्ति नहीं की, या हो सकता है कि और कोई वजह हो। जल्दी जल्दी घर पहुँचकर उसने देखा कि सीढ़ीवाले दरवाजेमें ताला बन्द है, घर खोला नहीं गया है। रास्तेके उस तरफ मोदीकी दूकानमे तलाश करनेपर मालूम हुआ कि नौकरानी बीमार पड़ गई है, काम करने नहीं आई और उसकी छोटी नातिन सवेरे आकर घरकी चाबी रख गई है।

घर खोलकर कमल घरके काम-धन्धेमें लग गई। एक तरहसे कलसे ही वह बगैर-खाये थी, उसने तय किया था कि झटपट किसी तरह कुछ बना-खाकर आराम करेगी, आराम करनेकी उसे सख्त जरूरत भी थी, पर घरका काम इतना पड़ा था कि वह खतम ही नहीं होता था। चारों तरफ इतना कूड़ा-करकट जमा हो रहा था कि उसे देखकर वह हैरान हो गई।—इतनी विशृंखलामें उसके दिन कट रहे थे कि इधर उसका ध्यान ही नहीं गया था। आज जिस किसी चीजपर भी उसकी नजर पड़ी वही मानो उसका तिरस्कार करने लगी। छतके नीचेसे पुराना चूना झड़कर खाटपर आ पड़ा है, उसे साफ करना जरूरी है; चिड़ियोंके घोंसलेका बचा हुआ मसाला बिछौनेपर पड़ा है, उसे भी साफ करना है; चादर बदलनी है; तकियोंके खोल बहुत मैले हो गये हैं, उन्हें भी बदलना है; टेबल-कुरसी स्थानभ्रष्ट हो रही हैं; दरवाजेपर पड़े पायंदाजपर मिट्टी जमी हुई है; आईनेकी ऐसी हालत है कि साफ करते-करते शाम हो जायगी; दावातकी स्याही सूख गई है; कलमका पता ही नहीं; पैडका ब्लॉटिंग पेपर लापता है;—इस तरह जिधर आँख उठाकर देखा उधर ही ऐसी गन्दगी मालूम हुई कि उसे खुद ही लगा कि इतने दिनोंसे यहाँ कोई आदमी रहता है या और कोई? नहाना-खाना यों ही

पड़ा रहा, किधरसे कैसे और कब दिन बीत गया,—कुछ मालूम ही नहीं पड़ा। सब काम निबटाकर जब वह नीचेसे नहा-धोकर ऊपर आई तब शाम हो चुकी थी। इतने दिनोंसे वह निश्चित समझ रही थी कि यहाँ उसे नहीं रहना है। रहना सम्भव भी नहीं, और उचित भी नहीं। महीनेके महीने किराया कहाँसे दिया जाय? जाना तो पड़ेगा ही, पर सिर्फ जानेके दिन तक पहुँचना ही मानों उसके लिए मुश्किल हो रहा था,—रातके बाद सवेरा और सवेरेके बाद रात आ-आकर उसे कदम बढ़ानेका समय नहीं दे रहे थे।

घरसे उसे कोई ममता नहीं; फिर भी किस लिए वह दिन-भर मेहनत करती रही, अकस्मात् इसकी क्या जरूरत आ पड़ी—इसी तरहकी एक धुँधली-सी जिज्ञासा उसके मनमें घूम रही थी। काम छोड़कर वह छज्जेपर जा बैठती और शून्य दृष्टिसे सड़ककी तरफ देखती हुई न जाने क्या भूलनेकी कोशिश करती; और फिर भीतर आकर काममें लग जाती। इसी तरह आज उसका काम और दिन दोनों खतम हुए। दिन तो रोज ही खतम होता है, पर इस तरह नहीं। शामके बाद बत्ती जलाकर उसने रसोई चढ़ा दी और महज समय काटनेके लिए एक किताब उठाकर बिस्तरके सहारे बैठी बैठी उसके पन्ने उलटने लगी। लेकिन आज उसकी थकावटकी कोई हद न थी, इसका पता भी नहीं चला कि कब किताबके पन्नोंके साथ साथ उसकी आँखोंके पलक बन्द हो गये। जब पता लगा तब कमरेकी बत्ती बुझ चुकी थी और खिड़कीमेंसे अरुण प्रकाशने आकर सारे कमरेको आरक्त कर दिया था। दिन चढ़ने लगा, पर महरी नहीं आई। इसलिए वासा तलाश करके उसकी भी खबर-सुध लेनेकी आवश्यकता मालूम हुई। कपड़े बदल कर वह निकल ही रही थी कि इतनेमें ज़ीनेपर किसीके चढ़नेकी आहट हुई। उसका कलेजा धड़क उठा।

वहींसे किसीने पुकारा, "घर हैं क्या? आ सकता हूँ?"

"आइए।"

जो आये, उनका नाम है हरेन्द्र। कुरसी खींचकर उसपर बैठ गये और बोले, "कहीं बाहर जा रही थीं क्या?"

"हाँ। जो बुढ़िया मेरे यहाँ काम करती थी, वह बीमार है। उसीको देखने जा रही थी।"

"अच्छी खबर है। इन्फ्लुएञ्जाके सिवा और कुछ नहीं। मालूम होता है, आगरेमें भी शायद एपिडेमिक फार्म (=संक्रामक रूप) शुरू हो गया

है। बस्तियोंमें तो मौतें भी शुरू हो गई हैं। यदि मथुरा-वृन्दावनकी तरह शुरू हुआ तो भागना पड़ेगा, या मरना पड़ेगा। बुढ़िया रहती कहाँ है?"

"मालूम नहीं। सुना है कि यहीं पास ही कहीं रहती है, ढूँढ़ना पड़ेगा।"

हरेन्द्रने कहा, "बड़ी छुतैल बीमारी है, जरा सावधान रहिएगा। इधरकी खबर मिली होगी शायद?"

कमलने गरदन हिलाकर कहा, "नहीं तो।"

हरेन्द्र उसके मुँहकी तरफ देखकर क्षण-भर चुप रहा, फिर बोला, "डरो मत, डरकी ऐसी कोई बात नहीं। कल ही आना चाहता था, पर समय नहीं मिला। हमारे अक्षय बाबू कालेज नहीं आये, सुना है कि उनकी भी तबीयत खराब है। आशु बाबू बिस्तरपर पड़े हैं, सो आप कल देख ही आई हैं,—उधर अविनाश भइयाको कल शामसे बुखार है, भाभीका चेहरा भी देखा कि सूखा सूखा-सा हो रहा है। वे खुद कहीं बीमार न पड़ जायँ।"

कमल चुप बैठी उसकी तरफ देखती रही। इन सब खबरोंपर मानो वह अच्छी तरह ध्यान ही न दे सकी।

हरेन्द्र कहता गया, "इसके अलावा शिवनाथ बाबू भी पड़े हैं। इन्फ्लुएञ्जाका मामला है, कुछ कहा नहीं जा सकता। अस्पताल भी नहीं जाना चाहते। कल शामको उनके घरपर ही उन्हें रिमूव कर दिया गया है। आज एक बार जाकर खबर लेनी है।"

कमलने पूछा, "वहाँ है कौन?"

"एक नौकर है। ऊपरकी कोठरियोंमें कुछ पंजाबी रहते हैं, जो ठेकेदारोंका काम करते हैं। सुना है कि आदमी अच्छे हैं।"

कमल एक उसास लेकर चुप रह गई। थोड़ी देर बाद बोली, "एक बार राजेन्द्र बाबूको मेरे पास भेज सकते हैं?"

"भेज सकता हूँ, पर वह मिलेगा कहाँ? आज तड़केहीसे निकल पड़ा है। उधर कहीं मोचियोंके मुहल्लेमें ज़ोरकी बीमारी फैल रही है, वह गया है उनकी सेवा करने। आश्रममें अगर खाने आया तो कह दूँगा।"

"उन्हें घर पहुँचाया किसने? आपने?"

"नहीं, राजेन्द्रने। उसीके मुँहसे सुना कि पंजाबी लोग उनकी देख-भाल कर रहे हैं। फिर भी, वे करें या न करें, पर राजेन्द्रको जब कि पता लग गया है तो वह किसी बातकी त्रुटि नहीं होने देगा,—सम्भव है, खुद ही

तीमारदारी करने लग जाय। एक बातका पक्का भरोसा है, कि उसे रोग नहीं पकड़ता। पुलिस न पकड़े तो वह अकेला ही एक-सौके बराबर है। वह केवल उन्हीं लोगोंसे घबराता है,—नहीं तो उसे काबू कर सके ऐसा तो दुनियांमें कोई दिखाई नहीं देता।"

"पकड़े जानेकी आशंका है क्या?"

"आशा तो की जाती है। कमसे कम इससे आश्रमकी तो रक्षा हो जायगी।"

"उन्हें कह क्यों नहीं देते कि चले जायँ?"

"यही तो मुश्किल है। कहनेसे उसी वक्त चला जायगा और ऐसा जायगा कि फिर सर दे मारनेपर भी वापस न आयगा।"

"न आवें तो नुकसान ही क्या है?"

"नुकसान? उसे तो आप जानती नहीं, बगैर जाने उस नुकसानका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। आश्रम न रहे तो सहा जा सकता है, लेकिन मुझसे उसका नुकसान न सहा जायगा" इतना कहकर हरेन्द्र मिनट-भर चुप रहा, फिर सहसा प्रसंग बदलकर बोल उठा, "एक बड़े मजेकी बात हो गई है। किसीकी मज़ाल नहीं कि उसकी कल्पना भी कर सके। कल भाई-साहबके यहाँसे लौटकर रातको घर आया तो देखता क्या हूँ कि अजित बाबू पधारे हैं। मैं तो डर गया कि आखिर मामला क्या है? बीमारी बढ गई क्या? मालूम हुआ कि नहीं, ऐसी कोई बात नहीं, बकस-बिस्तर वगैरह सब साथ ले आये हैं आश्रममें रहनेके लिए। इस बीचमें सतीशसे उनकी बात पक्की हो गई है कि आश्रमके नियमानुसार आश्रमके काममें ही वे अपना जीवन बितायेंगे। यह उनकी प्रतिज्ञा है, इसमें कोई भी व्यतिक्रम नहीं हो सकता। ऐसे बड़े आदमी मिलें तो हमारे लिए अच्छा ही है, पर शंका होती है कि भीतर कोई गड़बड़ न हो। सवेरे आशु बाबूके पास गया, सुनकर उन्होंने कहा, 'कि संकल्प तो बहुत ही उत्तम है, पर भारतमें आश्रमोंकी कोई कमी नहीं, वह आगरा छोड़के और कहीं जाकर यह वृत्ति अवलम्बन करता तो मैं कुछ दिन और यहाँ टिका रहता। देखता हूँ, अब मुझे यहाँसे जाना ही पड़ेगा'।"

कमलने किसी तरहका आश्चर्य प्रकट नहीं किया, चुप रही।

हरेन्द्रने कहा, "उन्हींके यहाँसे सीधा आ रहा हूँ, वापस जाकर अजित बाबूसे क्या कहूँगा?"

कमल समझ गई कि शिवनाथ बाबूको स्थानान्तरित करनेके विषयमें बहुत कठोर वादविवाद हो गया है। शायद प्रकटमें और स्पष्ट रूपसे एक शब्द भी न कहा गया होगा, सब कुछ चुपचाप ही किया गया होगा; फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि कर्कशतामें वह सब तरहके कलहको लाँघ गया होगा। परन्तु एक बातका भी उसने उत्तर नहीं दिया, जैसीकी तैसी चुप बनी रही।

हरेन्द्र कहने लगा, "मालूम होता है, आशु बाबूने सब कुछ सुन लिया है। शिवनाथका आपके प्रति जो आचरण हुआ है उससे वे मर्माहत हुए हैं। लगभग जबरदस्ती ही उन्हें घरसे विदा किया है। मनोरमाकी शायद ऐसी इच्छा नहीं थी,—शिवनाथ उसके संगीतके गुरु हैं,—पास रखकर इलाज करानेका ही उसका विचार था, पर वैसा हो नहीं सका। अजित बाबूने शायद इस पक्षका अवलंबन करके ही झगड़ा कर डाला है।"

कमल जरा हँस दी, बोली, "आश्चर्य नहीं। पर आपने यह सब सुना किससे? राजेन्द्रने कहा था?"

"राजेन्द्र? भला राजेन्द्र कहेगा! वह ऐसा आदमी ही नहीं। जानता होगा तो भी न बतायेगा। यह मेरा ही अनुमान है। इसीसे सोच रहा हूँ आखिर समझौता तो होगा ही, फिर अजितको चिढ़ानेसे क्या लाभ? चुपचाप रहना ही ठीक है। जितने दिन वह आश्रममें रहेगा, हमारी तरफसे खातिर-तवज्जहमें त्रुटि न होगी।"

कमलने कहा, "यही ठीक है।"

हरेन्द्रने कहा, "अच्छा, तो अब चला। भाई साहबके लिए चिन्ता है, बहुत थोडेमें घबरा जाते हैं। समय मिला तो कल एक बार आऊँगा।"

"आइएगा।" कहकर कमलने उठकर नमस्कार किया और कहा, "राजेन्द्रको भेजना न भूलिएगा। कहिएगा, मैं बड़ी मुसीबतमें पड़कर बुला रही हूँ।"

"मुसीबतमें पड़कर बुला रही हैं?" हरेन्द्र आश्चर्यके साथ बोला, "भेंट होते ही उसी वक्त भेज दूँगा;—लेकिन वह मुसीबत क्या मुझसे नहीं कही जा सकती? मुझे भी आप अपना अकृत्रिम बन्धु समझिएगा।"

"सो समझती हूँ। लेकिन उन्हींको भेज दीजिएगा।"

"भेज दूँगा, जरूर भेज दूँगा।" कहकर हरेन्द्र आगे बात न बढ़ाकर चला गया।

तीसरे पहर राजेन्द्र आ पहुँचा।

"राजेन्द्र, मेरा एक काम करना होगा।"

"कर दूँगा। पर कल तक तो मेरे नामके साथ 'बाबू' था, आज वह भी उड़ा दिया गया?"

"अच्छा ही तो हुआ, हलके हो गये। मंजूर न हो तो कहो, जोड़ दूँ?"

"नहीं, कोई जरूरत नहीं। मगर आपको मैं क्या कहकर पुकारा करूँ?"

"सभी 'कमल' कहके पुकारते हैं और इससे मेरे सम्मानकी हानि नहीं होती। नामके आगे-पीछे बोझ लादकर अपनेको भारी बनानेमें मुझे लज्जा आती है। 'आप' कहनेकी भी जरूरत नहीं, मुझे सहज नामसे ही पुकारा करें।"

इसके स्पष्ट जवाबको बचाते हुए राजेन्द्रने कहा, "मुझे क्या करना होगा?"

"मेरा बन्धु होना होगा। लोग कहते हैं, तुम क्रान्तिकारी हो। यह अगर सच हो, तो मेरे साथ तुम्हारी मित्रता अक्षय रहेगी।"

"यह अक्षय मित्रता मेरे किस काम आयेगी?"

कमल विस्मित हुई। यह संशय और उपेक्षाकी ध्वनि उसके कानोंमें खटकी, बोली, "ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए। मित्रता जैसी चीज संसारमें दुर्लभ है, और मेरी मित्रता उससे भी ज्यादा दुर्लभ है। जिसे पहचानते नहीं, उसपर अश्रद्धा करके अपनेको छोटा मत बनाओ।"

मगर इस शिकायतने उस युवकको कुण्ठित नहीं किया, उसने मुसकराते चेहरेसे स्वाभाविक स्वरमें ही कहा, "अश्रद्धाके कारण नहीं,—मित्रताकी आवश्यकता नहीं समझनेके कारण ही कहा था और अगर आप समझे कि यह चीज मेरे काम आ सकती है, तो मैं अस्वीकार भी नहीं करूँगा। लेकिन सोच यही रहा हूँ कि क्या काम आयेगी।"

कमलका चेहरा सुर्ख हो उठा। जैसे किसीने चाबुक मारकर उसे अपमानित किया हो। वह उच्च शिक्षिता, अत्यन्त सुन्दरी और प्रखर बुद्धिशालिनी है। उसकी धारणा थी कि वह पुरुषके लिए कामनाका धन है, उसका निष्कपट विश्वास था कि उसका दस तेज अपराजेय है। संसारमें नारियोंने उससे घृणा की है, पुरुषोंने आतंककी आगसे भस्म करना चाहा है, और अवज्ञाका ढोंग भी न किया हो सो बात नहीं; मगर यह तो कुछ और ही चीज़ है! आज इस युवकके सामने अपनी तुच्छता महसूस करके मानो वह जमीनमें

गड़ गड़ गई। शिवनाथने उसे धोखा दिया है, वंचित किया है; मगर इस तरह दीनताका चीर उसके शरीरपर नहीं लपेटा।

कमलके मनमें एक सन्देह प्रबल हो उठा, उसने पूछा, "मेरे सम्बन्धमें शायद तुमने बहुत-सी बातें सुनी होंगी?"

राजेन्द्रने कहा, "हॉ, ये लोग प्रायः कहा तो करते हैं।"

"क्या कहते हैं?"

उसने जरा हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "देखिए, इन बातोंमें मेरी स्मरणशक्ति बहुत ही खराब है। प्रायः कुछ भी याद नहीं है।"

"सच कहते हो?"

"सच ही कह रहा हूँ।"

कमलने जिरह नहीं की, विश्वास कर लिया। समझ गई कि स्त्रियोंकी जीवन-यात्राके सम्बन्धमें अब तक इस आदमीके मनमें किसी तरहका कुतूहल ही पैदा नहीं हुआ। उसने जैसे सुना है वैसे भूल भी गया है। और भी एक बात उसकी समझमें आई। 'तुम' कहनेका अधिकार दिये जानेपर भी क्यों उसने उसे स्वीकार नहीं किया और अब भी 'आप' कहकर सम्बोधन कर रहा है। असलमें उसके अकलङ्क पुरुष-चित्तकी भूमिकापर अब भी नारी-मूर्तिकी छाया नहीं पड़ी है,—इसीसे 'तुम' कहकर घनिष्ठ होनेके लोभका उसे भान नहीं हुआ है। कमलने मन ही मन मानो सन्तोषकी सॉस ली। थोड़ी देर बाद वह बोली, "शिवनाथ बाबूने मुझे त्याग दिया है, मालूम है?"

"मालूम है।"

कमलने कहा, "उस दिन हमारे विवाहके अनुष्ठानमें तो धोखा था, पर मनमें धोखा नहीं था। सबोंने सन्देह करके तरह तरहकी बातें कहीं, कहा कि यह विवाह पक्का नहीं हुआ। लेकिन मैं डरी नहीं; मैंने कहा, होने दो कच्चा, हमारे भीतरके मनने जब मान लिया है तब हमें यह देखनेकी जरूरत नहीं कि बाहरकी गॉठमें कितने फेरे पड़े, बल्कि मैंने तो सोचा, यह अच्छा ही हुआ कि जिसे पतिके रूपमें स्वीकार किया है उसे ऊपरसे नीचे तक कसकर बॉधा नहीं। उसकी मुक्तिकी अर्गला अगर थोड़ी ढीली ही रह गई तो रहने दो। मन ही अगर देवालिया हो जाय, तो फिर पुरोहितके मंत्रको महाजन बनाके खड़ा करनेसे सूद भले ही अदा हो जाय, पर असल तो डूब ही जायगा। मगर यह सब तुमसे कहना व्यर्थ है, तुम समझोगे नहीं।"

राजेन्द्र चुप रहा। कमल कहने लगी, "तब सिर्फ यही बात मैं नहीं जानती थी कि उन्हें रुपयोंका लोभ इतना ज़बरदस्त है। जानती होती तो कमसे कम लांछनाकी आफ़तसे बच जाती।"

राजेन्द्रने पूछा, "इसके मानी ?"

कमलने सहसा अपनेको रोक लिया, बोली, "रहने दो मानी। तुम सुनके क्या करोगे ?"

कुछ देर हुई सूर्य अस्त हो चुका है, घरमें बाहरका अँधेरा घना होता जा रहा है। कमलने बत्ती जलाई और उसे टेबिलके एक किनारे रखकर अपनी जगहपर आते हुए कहा, "खैर, जो भी हो, मुझे एक बार उनके घरपर ले चलो।"

"क्या करेंगी जाकर ?"

"अपनी आँखोंसे एक बार देखना चाहती हूँ। अगर जरूरत होगी तो रह जाऊँगी। नहीं तो तुमपर भार सौंपकर निश्चिन्त हो जाऊँगी। इसीलिए तुम्हें बुलाया था। तुम्हारे सिवा यह काम और कोई नहीं कर सकता। उनके प्रति लोगोंकी नफरतकी हद नहीं।" कहते कहते कमल सहसा बत्तीको जरा बढ़ा देनेकी गरजसे उठी और राजेन्द्रकी तरफ पीठ करके खड़ी हो गई।

राजेन्द्रने कहा, "अच्छी बात है, चलिए। मैं एक ताँगा कर लाऊँ।" और वह चला गया।

ताँगेपर सवार होकर राजेन्द्रने कहा, "शिवनाथ बाबूकी सेवाका भार मुझपर सौंपकर आप निश्चिन्त होना चाहती हैं, सो मैं यह भार तो ले सकता था; लेकिन, अब यहाँ मेरा रहना नहीं होगा, बहुत जल्द चला जाना पड़ेगा। आप और कोई इन्तज़ाम करनेकी कोशिश करें तो अच्छा हो।"

कमलने उद्विग्न होकर पूछा, "क्यों, पुलिस शायद पीछे लगके परेशान कर रही है ?"

"उसकी आत्मीयताका तो मैं आदी हो गया हूँ,—इसके लिए नहीं।"

कमल हरेन्द्रकी बातें याद करके बोली, "तो क्या आश्रमके लोग जानेके लिए कहते हैं ? लेकिन पुलिसके डरसे जो लोग इस तरह आतंकित रहते हैं, उन्हें इतने समारोहके साथ देशके काममें उतरना ही नहीं चाहिए। मगर, इसीलिए तुम्हें यहाँसे चले ही क्यों जाना पड़ेगा ? इसी आगरे शहरमें ऐसा व्यक्ति है जो तुम्हें जगह देनेमें जरा भी नहीं डरेगा।"

राजेन्द्रने कहा, "सो शायद खुद आप ही हैं। बात सुने रखता हूँ, संद-

जमें भूलनेका नहीं; लेकिन इस उपद्रवसे डरते न हों, भारतमें ऐसे आदमी विरले ही हैं। होते तो देशकी समस्या बहुत कुछ सहल हो जाती।"

जरा ठहरकर फिर बोला, "मगर मैं इस वजहसे नहीं जा रहा हूँ। आश्रमको भी दोष नहीं दे सकता। और चाहे जिसके मुँहसे निकल जाय, पर मेरे लिए चले जानेकी बात हरेन्द्र-भइयाके मुँहसे नहीं निकल सकती।"

"तो क्यों जा रहे हो?"

"जा रहा हूँ अपने ही लिए। वह है जरूर देशका काम, पर मेरा उनके साथ मत नहीं मिलता, और न कामकी धारा ही मेल खाती है। मेल है सिर्फ प्रेमकी दृष्टिसे। हरेन्द्र-भइयाको मैं सहोदरसे भी प्रिय हूँ, उससे भी ज्यादा अपना हूँ। किसी दिन इसका व्यतिक्रम भी नहीं होनेका।"

कमलकी दुश्चिन्ता दूर हो गई। बोली, "इससे बढकर और क्या हो सकता है राजेन्द्र? मन जहाँ मिल गया, वहाँ मतका मेल न हो, न सही,—कामकी धारा न मिले न सही, इससे क्या आता-जाता है? सब कोई एक ही तरहसे सोचेंगे, एक ही तरहका काम करेंगे और तभी एक साथ रहेंगे,—यह क्यों? और हम अगर दूसरेके मतपर श्रद्धा न कर सकें, तो फिर शिक्षा ही क्या हुई? मत और कर्म दोनों ही बाहरकी चीजें हैं राजेन्द्र, एक मन ही सत्य है, और, इन बाहरकी चीजोंको ही बड़ा मानकर अगर तुम दूर चले जाओ, तो, तुम जो कह रहे थे कि तुम्हारे प्रेममें कोई व्यतिक्रम नहीं होनेका, सो इस तरह तो उसे अस्वीकार करना होगा। यह जो किताबमें लिखा है कि 'छायाके लिए काया छोड़ी,'—सो यह भी ठीक वैसी ही बात होगी।"

राजेन्द्र कुछ बोला नहीं, सिर्फ हँस दिया।

"हँसे क्यों?"

"हँसा इसलिए कि तब हँसा नहीं था। आपने अपने खुदके विवाहके मामलेमें मनके मेलको ही एकमात्र सत्य स्थिर करके बाह्य अनुष्ठानको बेमेल 'कुछ नहीं' कहके उड़ा दिया था। वह सत्य नहीं था इसीलिए आज आप दोनोंका सब कुछ असत्य हो गया।"

"इसके मानी?"

राजेन्द्रने कहा, "मनके मेलको मैं तुच्छ नहीं समझता, मगर उसीको अद्वितीय कहकर उच्च स्वरसे घोषित करनेकी भी आजकल एक ऊँचे ढँगकी फैशन हो गई है। इससे उदारता और महत्ता दोनों ही प्रकट होती हैं, परन्तु

सत्य नहीं प्रकट होता। यह कहना गलत है कि संसारमें सिर्फ एक मन ही है, और उसके बाहर जो कुछ है, सब छाया है।"

जरा ठहरकर वह फिर कहने लगा, "आप अभी अभी विभिन्न मतवादोंके प्रति श्रद्धा रख सकनेको ही बड़ी भारी शिक्षा बता रही थीं, मगर आप जानती हैं कि सब तरहके मतोंपर श्रद्धा कौन रख सकता है? जिसके अपने मतकी कोई बला नहीं, वही रख सकता है। शिक्षाके द्वारा विरुद्ध मतकी चुपचाप उपेक्षा की जा सकती है, पर उसपर श्रद्धा नहीं की जा सकती।"

कमलको अत्यंत विस्मय हुआ, वह अवाक् रह गई। राजेन्द्र कहने लगा, —"हमारी ऐसी नीति नहीं है, झूठी श्रद्धासे हम संसारका सर्वनाश नहीं करते,—मित्रके मतपर भी नहीं,—उस श्रद्धाको तोड़-फोड़कर चकनाचूर कर डालते हैं। यही हम लोगोंका काम है।"

कमलने कहा, "इसीको तुम लोग 'काम' कहते हो?"

राजेन्द्रने कहा, "हाँ, कहते हैं। मतका बेमेल अगर हमारे काममें बाधा पहुँचाता रहे तो मनके मेलसे हमें क्या करना है? हम चाहते हैं मतकी एकता, कामकी एकता,—हमारे लिए भावोंके विलासका कोई भी मूल्य नहीं शिवानी—"

कमल आश्चर्य-चकित होकर बोली, "मेरा यह नाम भी तुम्हें मालूम हो गया है?"

"हाँ। कर्मके जगतमें आदमीके व्यवहारका मेल ही बड़ा मेल है, मनका नहीं। मन हो तो बना रहे, अन्तःकरणका विचार अन्तर्यामी करेंगे, हमारा काम व्यावहारिक एकताके विना नहीं चल सकता। यही हमारी कसौटी है,—इसीसे हम जाँच करते हैं। बाहरसे अगर स्वरमें मेल न हो तो केवल दो जनोंके मनके मेलसे संगीतकी सृष्टि नहीं होती, वह तो सिर्फ कोलाहल ही कहलायेगा। राजाकी जो सेनाएँ युद्ध करती हैं, उनकी बाहरकी एकता ही राजाकी शक्ति है। मनसे उसे कोई मतलब नहीं। नियमका शासन संयम है—और यही हम लोगोंकी नीति है। इसे छोटा बनानेसे मनके नशेके लिए खुराक जुटाई जा सकती है, और कुछ नहीं। यह उच्छृंखलताका ही नामान्तर है।—ताँगेवाले, रोको रोको,—शिवानी, यही है उनका घर।"

सामने एक पुराना टूटा-फूटा मकान है। दोनों चुपकेसे उतरकर नीचेकी एक कोठरीमें पहुँचे। आहट सुनकर शिवनाथने आँख खोलके देखा, प

दियाके धुँधले उजालेमें शायद पहचान न सका। क्षण-भर बाद ही उसने आँखे मींच लीं और तन्द्राच्छन्न हो रहा।

१७

चारों तरफ देख-भालकर कमल सन्न हो गई। घरकी शकल क्या हो रही है! सहसा किसीको विश्वास नहीं हो सकता कि यहाँ कोई आदमी भी रहता है। किसीके आनेकी आहट सुनाई दी और एक सत्रह-अठारह सालका लड़का आ खड़ा हुआ। राजेन्द्रने उसका परिचय देते हुए कहा, "यह शिवनाथ बाबूका नौकर है। पथ्य बनानेसे लेकर दवा खिलानेतक सब इसीकी ड्यूटीमें है। सूर्यास्तसे ही शायद सोना शुरू किया था इसने, अभी उठके आ रहा है। रोगीके सम्बन्धमें अगर कुछ उपदेश देना हो तो इसीको दीजिए। मालूम होता है कि समझ तो जायगा, बिलकुल बेवकूफ नहीं है। नाम कल पूछा तो था पर याद नहीं रहा। क्या नाम है रे?"

"फगुआ।"

"आज दवा दी थी?"

लड़केने बायें हाथकी दो उँगलियाँ दिखाते हुए कहा, "दो खुराक दी है।"

"और कुछ दिया है।"

"हाँ,—दूध भी पिला दिया है।"

"बहुत अच्छा किया। ऊपरके पंजाबी बाबुओंमेंसे कोई आया था?"

लड़केने याद करके कहा, "शायद दो पहरको एक बाबू आये थे।"

"शायद? तब तुम क्या कर रहे थे, सो रहे थे?"

कमलने कहा, "फगुआ, यहाँ झाड़ू-आड़ू कुछ है या नहीं?"

फगुआ सिर हिलाके झाड़ू लेने चला गया। राजेन्द्र बोला, "झाड़ूका क्या करेंगी? उसे पीटेंगी क्या?"

कमलने गम्भीर होकर कहा, "यह क्या मज़ाकका वक्त है? माया-ममता क्या तुम्हारे बिलकुल है ही नहीं?"

"पहले थी। फ्लड और फेमिन रिलीफमे उन्हें झाड़-पोंछकर अलग फेंक आया हूँ।"

फगुआ झाड़ू लेकर हाजिर हुआ। राजेन्द्रने कहा, "मैं भूखके मारे मरा जा रहा हूँ, कहीं जाकर कुछ खा आऊँ। तब तक झाड़ू और इस लड़केका

जो उपयोग कर सकें, आप कीजिए; वापस आकर आपको मैं घर पहुँचा दूँगा। डरिएगा नहीं, मैं डेढ़-दो घंटेमें लौट आता हूँ।" कहकर वह जवाबकी परवाह किये बगैर ही चल दिया।

शहरके किनारेका यह स्थान थोड़ी ही देरमें निःशब्द और निर्जन हो गया। जो लोग ऊपर रहते हैं उनका कोलाहल और चलने-फिरनेका शब्द भी बन्द हो गया। मालूम होता है कि वे सब सो गये हैं। शिवनाथकी खबर लेने कोई नहीं आया। बाहर अँधेरी रात्रि और भी गहरी होने लगी। जमीनपर कम्बल बिछाकर फगुआ ऊँघने लगा। बाहरका दरवाजा बन्द करनेका समय हो रहा था कि सड़कपर साइकिलकी घंटी सुनाई दी और दूसरे ही क्षण दरवाजा धकेलकर राजेन्द्र भीतर आ गया। उसने इधर उधर देखा और इस थोड़ेसे समयमें सारे कमरेमें काफी परिवर्तन देखकर कुछ देर चुपचाप खड़ा रहा, फिर हाथकी छोटी-सी पोटली बगलकी तिपाईपर रखता हुआ बोला, "आपको जैसा सोचा था दूसरी स्त्रियोंकी तरह, वैसी आप नहीं हैं। आपपर भरोसा किया जा सकता है।"

कमलने कुछ जवाब नहीं दिया, चुपकेसे उसके मुँहकी ओर देखा। राजेन्द्रने कहा, "इस बीचमें आपने तो बिस्तर तक बदल डाला है! और सब कुछ तो आपने ढूँढ़-खोजकर निकाल लिया, पर इन्हें उठाकर उसपर सुलाया कैसे?"

कमलने आहिस्तेसे कहा, "तरकीब मालूम हो, तो यह काम मुश्किल नहीं।"

"मगर मालूम कैसे हो? मालूम होनेकी तो कोई बात नहीं थी।"

कमलने कहा, "मालूम करना क्या सिर्फ तुम्हीं लोगोंके हाथकी बात है? बचपनमें चाय बगीचेमें मैंने बहुत-से रोगियोंकी सेवा की है।"

"अच्छा, यह बात है!" कहकर उसने चारों तरफ नजर दौड़ाई, फिर कहा, "आते वक्त साथमें कुछ खानेको लेता आया हूँ। देख गया था कि सुराहीमें पानी है, लीजिए, खा लीजिए, मैं बैठा हूँ।"

कमल उसके चेहरेकी तरफ देखकर जरा हँस दी, बोली, "खानेके बारेमें तो मैंने कहा नहीं था, अचानक यह बात सूझ कैसे गई?"

राजेन्द्र बोला, "बात सच है, सूझा तो अचानक ही। जब मेरा पेट भर गया, तब न जाने क्यों ऐसा लगा कि आपको भी भूख लगी होगी। आते वक्त दूकानसे थोड़ा-सा लेता आया। देर न कीजिए, खाने बैठिए।" कहकर वह खुद ही सुराही उठा लाया। पास ही कलईदार गिलास रखा था, बोला,

,'ठहरिए, बाहरसे इसे मॉज लाऊँ।" कहता हुआ वह उसे बाहर ले गया। वह कल ही जान गया था कि इस घरमें कहाँ क्या रखा है। लौटा तो खोजकर साबुनका टुकड़ा उठा लाया और बोला, "आपने बहुत उठा-धरी की है, जरा सावधान रहना अच्छा है। मैं पानी देता हूँ, आप पहले हाथ धो लीजिए।"

कमलको अपने पिताकी याद आ गई। उनकी भी बातोंमें इसी तरह रस कस कुछ नहीं होता था, मगर वे हार्दिकतासे भरी रहती थीं। उसने कहा, "हाथ धोनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं, पर खा नहीं सकूँगी भाई। तुम्हें तो शायद मालूम है कि मैं खुद अपने हाथसे बनाकर खाया करती हूँ, और दूसरे, यह सब कीमती अच्छी अच्छी मिठाइयाँ भी मैं नहीं खाती। मेरे लिए व्यस्त होनेकी जरूरत नहीं, मैं तो हमेशाकी तरह घर जाकर ही खाऊँगी।"

"तो फिर ज्यादा रात न करके अब घर ही लौट चलिए, आपको पहुँचा दूँ।"

"आप फिर यहीं लौट कर आएँगे?"

"हाँ।"

"कबतक रहिएगा?"

"कमसे कम कल सवेरे तक। ऊपरके पंजाबी भाइयोंके हाथ कुछ रुपये दे गया था, उनसे एक बार मुकाबिला बगैर किये नहीं हिलनेका। जरा थक गया हूँ, पर इसकी कुछ परवाह नहीं। मुझे नहीं मालूम था कि इतनी लापरवाही होगी, उठिए, फिर ताँगा नहीं मिलेगा, पैदल जाना पड़ेगा। लौटते वक्त मोचियोंके मुहल्लेमें भी जरा देखने जाना है। दोके मरनेकी बात थी, देखना है, उन लोगोंने क्या किया?"

कमलको फिर उस बातका खयाल आ गया कि इस आदमीके हृदयमें अनुभूति नामकी कोई बला ही नहीं। लगभग यंत्र-सा काम करता है। न-जाने कौन-सी अज्ञात प्रेरणा इसे बार बार कार्यमें जोत देती है, और यह काम करता चला जाता है! अपने लिए नहीं, और शायद कोई आशा लेकर भी नहीं करता। कार्य इसके रक्तमें और सारे शरीरमें जल-वायुकी भाँति ही सहज-स्वाभाविक हो गया है। और मज़ा यह कि औरोंके आश्चर्यका ठिकाना नहीं, वे सोचते हैं कि ऐसा होता कैसे है? कमलने पूछा, "राजेन्द्र, आप खुद भी तो डाक्टर हैं?"

"डाक्टर? नहीं तो। सिर्फ जरा डाक्टरी स्कूलमें कुछ दिन पढ़ा था।"

"तो फिर उन लोगोंका इलाज कौन करता है ?"

"यम।"

"और आप क्या करते हैं ?"

"मैं उनके कार्यमें मदद करता हूँ, उनका गुण-लुब्ध परम भक्त हूँ।"—कहकर वह कमलके विस्मयाच्छन्न चेहरेकी तरफ क्षण-भर देखता रहा; फिर जरा हँसकर बोला, "यम नहीं, वे हैं यम-राज। बलिहारी है उसकी प्रतिभाकी जिसने राजा कहकर इन्हें पहले पहल अभिनन्दित किया था। सचमुच हैं तो राजा ही। जैसी दया है वैसा ही विवेक। मैं होड़ बदकर कह सकता हूँ कि विश्व-जगतमें कोई अगर सृष्टिकर्ता है, तो वे उसकी सर्वश्रेष्ठ सृष्टि हैं।"

कमलने आहिस्तेसे पूछा, "आप क्या मज़ाक कर रहे हैं राजेन्द्र ?"

"कतई नहीं। सुनकर सतीश भइया मुँह गम्भीर बना लेते हैं, हरेन्द्र भइया गुस्सा हो जाते हैं, मुझे 'सिनिक' कहते हैं। और अपने आश्रममें उन सबने मिलकर कृच्छ्रता, संयम, त्याग, और अद्भुत कठोरताके तरह तरहके अस्त्र-शस्त्र पैनाकर मानो यम-राजके विरुद्ध विद्रोह घोषित कर रक्खा है। वे समझते हैं कि मैं उनका उपहास कर रहा हूँ। मगर सो बात नहीं है। गरीब दुखियोंके मुहल्लोंमें वे जाते नहीं, अगर जाते तो मेरा विश्वास है कि वे भी मेरी तरह परम राज-भक्त हो जाते और श्रद्धासे झुककर यम-राजका गुण-गान करते, अकल्याण समझकर उन्हें गाली देते न फिरते।"

कमलने कहा, "यही अगर तुम्हारा वास्तविक मत हो तो तुम्हें 'सिनिक' कहनेमें बुराई क्या है ?"

"बुराईका विचार पीछे होगा। चलेंगी एक बार मेरे साथ मोचियोंके मुहल्लेमें ? कतारकी कतार पड़ी है, सिर्फ आजकलके इन्फ्लुएञ्जाकी वजहसे ही नहीं,—हैजा, चेचक, प्लेग,—कोई भी बहाना-भर मिलना चाहिए। औषधि नहीं, पथ्य नहीं, सोनेके लिए बिस्तर नहीं, ढकनेके लिए कपड़ा नहीं, मुँहमें पानी देनेके लिए आदमी नहीं,—देखते ही यकायक घबरा जाना पड़ता है कि आखिर इसका किनारा कहाँ है ? पर उसी वक्त किनारा नजर आ जाता है, चिन्ता दूर हो जाती है और मन ही मन कहने लगता हूँ,—कोई डर नहीं भाई, कोई डर नहीं।—समस्या चाहे कितनी ही गंभीर क्यों न हो, उसका समाधान करनेकी जिनपर जिम्मेदारी है वे आ ही रहे होंगे। जुदे जुदे देशोंमें जुदी जुदी व्यवस्थाएँ हैं, पर हमारी इस देव-भूमिमें सारीकी सारी ज़िम्मेदारी यमराजने ले रक्खी है, स्वयं राजाधिराज यमराजने। एक हिसाबसे

हम बहुत ज्यादा सौभाग्यवान् हैं।—लेकिन न जाने कहाँसे यह सब बातें निकल आईं। चलिए, बहुत रात होती जा रही है। बहुत-सा रास्ता पैदल तै करना है।"

"मगर तुम्हें तो फिर इसी रास्ते वापस भी आना है?"

"सो तो आना ही है।"

"तुम्हारा मोची-मुहल्ला है कितनी दूर?"

"पास ही है, याने यहाँसे एक मीलके भीतर।"

"तो तुम साइकिलसे घूम आओ,—मैं बैठी हूँ।"

राजेन्द्रको आश्चर्य हुआ, बोला, "सो कैसे? आपने तो दो दिनसे खाया नहीं है?"

"किसने दी तुम्हें यह खबर?"

"अभी अभी खयालकी बात हो रही थी न, उसीसे। पर खबर मैंने खुद ही प्राप्त की है। आते वक्त आपका रसोईघर एक बार झाँककर देख आया था, आलू-भात तैयार रखा था,—बटलोईका चेहरा देखनेसे सन्देह नहीं रहा कि वह गत रात्रिका बनाया हुआ है। अर्थात्, दो दिनसे आपका कोरा उपवास चल रहा है। लिहाजा, या तो चलिए या फिर जो लाया हूँ उसे खा लीजिए। आज हाथसे बनानेका बहाना अवैध है।"

"अवैध?" कमल जरा हँसकर बोली, "मगर मेरे लिए तुम्हें इतना सिर-दर्द क्यों?"

"सो नहीं जानता। कारणकी अभी खुद ही तलाश कर रहा हूँ, पता लगते ही आपको खबर दे दूँगा।"

कमल थोडी देर कुछ सोचती रही, उसके बाद बोली, "जरूर देना। शरमाना मत।" फिर कुछ देर चुप रहकर उसने कहा, "राजेन्द्र, तुम्हारे आश्रमके भाई-साहबोंने तुम्हें बहुत कम पहचाना है, इसीसे वे तुम्हें उपद्रव समझते हैं। पर मैं तुम्हें पहचानती हूँ। लिहाजा, मुझे भी पहचान रखना तुम्हारे लिए जरूरी है। लेकिन, उसके लिए समय चाहिए, वह परिचय वाद-विवाद करनेसे नहीं होगा।" और फिर जरा स्थिर रहकर कहने लगी, "मैं खुद अपने हाथसे बनाकर खाती हूँ, एक बेर खाती हूँ, सो भी अत्यन्त गरीबीका खाना,—मुट्ठी-भर दाल-भात, बस। पर यह मेरा व्रत नहीं है, इसलिए तोड़ भी सकती हूँ। लेकिन सिर्फ इसीलिए नियम भग नहीं करूँगी कि दो

दिनसे खाया नहीं है। तुम्हारे इस स्नेहको मैं नहीं भूलूँगी, पर तुम्हारी बात भी न रख सकूँगी राजेन्द्र। इसके लिए तुम नाराज मत होना, भला!"

"नहीं।"

"क्या सोच रहे हो, बताओ तो सही?"

"सोच रहा हूँ, परिचयकी भूमिकाका यह अंश बुरा नहीं रहा। देखता हूँ, सहजमें भुलाया नहीं जा सकेगा।"

"सहजमें मैं तुम्हें भूलने कब दूँगी?" कह कर कमल सहसा हँस पड़ी। बोली, "मगर अब देर मत करो, जाओ। जितनी जल्दी हो सके, लौट आओ। उस बड़ी आराम कुरसीपर कम्बल बिछा रखूँगी—दो-चार घंटे सोनेके बाद जब सवेरा होगा तब हम लोग घर चलेंगे,—क्यों ठीक है न?"

राजेन्द्रने सिर हिलाकर कहा, "अच्छी बात है। मैंने सोचा था कि आजकी रात भी कोरी आँखों बितानी पड़ेगी; लेकिन छुट्टी मजूर हो गई,—सेवाका भार आपने खुद अपने ही ऊपर ले लिया। अच्छा हुआ। लौटनेमे शायद मुझे ज्यादा देर न लगेगी, पर इस बीचमें आप सो मत जाइएगा।"

कमलने कहा, "नहीं। पर यह खबर आपको किसने दी कि ये मेरे पति हैं? यहाँके भले आदमियोंने शायद? किसीने भी दी हो, उसने मज़ाक किया है। विश्वास न हो तो किसी दिन इन्हींसे पूछ लीजिएगा, मालूम हो जायगा।"

राजेन्द्रने कुछ जवाब नहीं दिया। चुपकेसे बाहर चला गया।

शिवनाथ मानो इसीकी बाट देख रहा था। उसने करवट बदल आँखें खोल कर देखा और कहा, "यह कौन है?"

सुनकर कमल चौंक पड़ी। कण्ठका स्वर स्पष्ट था, जड़ताका चिह्न भी न था। आँखोंकी चितवनमें थोड़ी बहुत-सुस्ती जरूर थी, पर चेहरा बिलकुल स्वाभाविक था। अधूरी नींद उचट जानेसे जैसा आच्छन्न भाव रहता है उससे ज्यादा कुछ नहीं था। पर कमल सहसा इस बातपर विश्वास न कर सकी कि इतनी जबर्दस्त बीमारी इतनी आसानीसे और इतनी जल्द खतम हो गई। इसीसे जवाब देनेमें उसे देर लगी। शिवनाथने फिर पूछा, "यह कौन आदमी है शिवानी? तुम्हें साथ लेकर यही आये हैं?"

"हाँ। मुझे भी लाये हैं और तुम्हें भी कल यहाँ पहुँचा गये हैं। वही हैं।"

"नाम क्या है?"

"राजेन्द्र।"

"तुम दोनों क्या अभी एक ही मकानमें रह रहे हो?"

"कोशिश तो यही कर रही हूँ। मगर रह जायँ तो मेरा भाग्य।"

"हूँ। उसे यहाँ क्यों लाई हो?"

कमलने इसका कोई जवाब नहीं दिया। शिवनाथने भी फिर कोई प्रश्न नहीं किया, आँख मींचे पड़ा रहा। बहुत देरतक सन्न रहनेके बाद शिवनाथने पूछा, "यह बात तुमने किसके मुँहसे सुनी कि मेरे साथ तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं रहा? मैंने कहा है,—ऐसा लोग कह रहे हैं क्या?"

कमलने इस बातका कोई जवाब नहीं दिया, किन्तु अबकी उसने खुद ही प्रश्न किया, "मुझसे तुमने ब्याह नहीं किया, सो मैंने इसपर भले ही विश्वास न किया हो, तुम तो करते थे? पर मुझे छोड़के चले आते वक्त यह बात तुम मुझसे कह क्यों नहीं आये? यही सोच रक्खा था क्या तुमने कि मैं तुम्हें बाँधकर रोक सकती हूँ या रो-पीटकर अनर्थ खड़ा कर सकती हूँ? ऐसा मेरा स्वभाव नहीं, सो तो तुम अच्छी तरह जानते ही थे, फिर कहके क्यों नहीं आये?"

शिवनाथ थोड़ी देर नीरव रहकर बोला, "कामकी झंझटके मारे या रोजगारके खातिर कुछ दिनोंके लिए अलग मकान लेकर रहने लगना ही क्या त्यागना हो गया? मैं तो सोचता था—"

शिवनाथकी बात मुँहकी मुँहमें ही रह गई। कमल बीचमें ही बोल उठी, "रहने दो, मैं नहीं जानना चाहती।" पर कहनेके साथ ही वह अपनी उत्तेजनासे आप ही लज्जित हो गई। कुछ देर चुप रहकर अपनेको शान्त करके अन्तमें बोली, "तुम क्या सचमुच ही बीमार थे?"

"सच नहीं तो क्या झूठ?"

"सचमुच ही अगर बीमार थे तो वहाँ न जाकर आशु बाबूके घर किस लिए गये? तुम्हारे एक कामने तो मुझे व्यथा ही पहुँचाई है, पर दूसरे कामने मेरा इतना अपमान किया है कि जिसकी हद नहीं। मैं जानती हूँ, यह सुनकर कि मुझे दुःख हुआ है तुम हँसोगे; पर यह जानना ही मेरे लिए सान्त्वना है। तुम इतने ओछे हो सिर्फ इसीलिए, मैंने सह लिया, नहीं तो मुझसे नहीं सहा जाता।"

शिवनाथ चुप रहा; कमल इसके चेहरेकी तरफ एकटक देखती रही और

बोली, "तुम जानते हो, मुझे सब सहन हुआ, पर तुम्हें घरसे निकाल देना मुझसे नहीं सहा गया। इसीसे तुम्हारी सेवा करने आई थी,—तुम्हें रिझाने नहीं।"

शिवनाथने धीरे धीरे कहा, "तुम्हारी इस दयाके लिए मैं कृतज्ञ हूँ शिवानी।"

कमलने कहा, "तुम मुझे 'शिवानी' कहके मत पुकारो, कमल कहके पुकारा करो।"

"क्यों?"

"सुननेसे मुझे घृणा होती है, इसीलिए।"

"मगर एक दिन तो तुम इसी नामको सबसे ज्यादा पसन्द करती थीं!" कहते हुए शिवनाथने कमलका हाथ अपने हाथमें ले लिया। कमल चुप रही। अपने हाथको लेकर खींचातानी करनेमें भी उसे संकोच मालूम हुआ।

"चुप हो रहीं, जवाब क्यों नहीं देतीं?"

कमल पूर्ववत् चुप रही।

"क्या सोच रही हो बताओ न शिवानी?"

"क्या सोच रही हूँ, जानते हो? सोच रही हूँ कि इन बातोंकी याद दिलानेवाला आदमी कितना बड़ा पाखण्डी होना चाहिए।"

शिवनाथकी आँखोंमे आँसू छलक आये, उसने कहा, "पाखण्डी मैं नहीं हूँ शिवानी। एक दिन आयेगा जब अपनी भूल तुम आप ही समझ जाओगी,—उस दिन तुम्हारे पश्चात्तापकी सीमा न रहेगी। क्यों मैंने अलहदा कमरा किरायेपर लिया है—"

"लेकिन अलहदा कमरा किरायेपर लेनेका कारण तो तुमसे मैंने एक बार भी नहीं पूछा? मैंने तो सिर्फ इतना ही जानना चाहा था कि यह बात तुम मुझे जताकर क्यों नहीं आये? तुम्हें एक दिनके लिए भी मैं पकड़के नहीं रखती।"

शिवनाथकी आँखोंसे आँसू ढलक पड़े, उसने कहा, "कहनेकी मुझे हिम्मत नहीं पड़ी शिवानी।"

"क्यों?"

शिवनाथ कुड़तेकी आस्तीनसे आँखे पोंछता हुआ बोला, "एक तो रुपयोंकी तंगी, उसपर आये दिन बाहर जाना पड़ता पत्थर खरीदने। माल लादने-उतारनेके लिए स्टेशनके पास एक—"

कमल बिस्तरसे उठकर दूर एक कुरसीपर जा बैठी। "मुझे अपने लिए

अब दुःख नहीं होता। होता है एक दूसरे आदमीके लिए। पर आज तुम्हारे लिए भी दुःख हो रहा है शिवनाथ बाबू!"

बहुत दिन बाद फिर आज उसने नाम लेकर पुकारा। बोली, "देखो, कोरी वंचनाको ही मूल-धन मानकर दुनियामें रोजगार नहीं किया जा सकता। मेरे साथ, हो सकता है कि, फिर कभी तुम्हारी मुलाकात न हो, लेकिन मेरी तुम्हें याद आयेगी। जो होना था सो तो हो चुका, वह अब वापस नहीं आ सकता; परन्तु भविष्यमें जीवनको और एक पहलूसे देखनेकी कोशिश करोगे तो हो सकता है कि तुम्हारा भला हो, तुम अच्छी तरह रहो।"

कमलने बड़ी मुश्किलसे अपने आँसू रोके। यह बताकर कि आशु बाबूने क्यों उसे अपने घरसे हटा दिया, उसका असली कारण क्या था,—वह इतनी बडी चोट, इतनी बात हो जानेपर भी उसे न पहुँचा सकी।

बाहर साइकिलकी घण्टी सुन पड़ी। शिवनाथ बिना कुछ बोले चुपचाप करवट बदलकर सो रहा।

भीतर आकर राजेन्द्रने धीमे स्वरसे कहा, "अच्छा, सचमुच ही जाग रही हैं आप। रोगीका क्या हाल है? दवा-अवा कुछ खिलाई-पिलाई क्या?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं, कुछ नहीं खिलाया।"

राजेन्द्रने उँगलीसे इशारा करके कहा, "चुप। नींद उचट जायगी,—नींद खराब होना अच्छा नहीं।"

"नहीं। पर तुम्हारे मोचियोंने क्या किया?"

"वे भले आदमी थे, बात रख ली। मेरे पहुँचनेके पहले ही यमराजके भैंसे आकर दो आत्माओंको ले गये, सवेरे दोनों मुर्दोंको म्युनिसिपालिटीके भैंसोंके हवाले कर छुट्टी पा लूँगा। और भी आठ दस साँसे भर रहे हैं, कल एक बार आपको ले जाकर दिखा लाऊँगा। आशा है, आपको पर्याप्त ज्ञान प्राप्त होगा। मगर आराम-कुरसीपर मेरा कम्बलका बिछौना कहाँ है? भूल गईं?"

कमलने कम्बल बिछा दिया।

"ओःफ्—जानमें जान आई!" कहकर उसने एक लम्बी साँस ली और हथेलोंपर पाँव पसारकर वह पड़ रहा। बोला, "दौड़-धूप करते करते पसीनेसे लथपथ हो गया हूँ,—पंखा-वंखा कुछ है क्या?"

कमल हाथमें पंखा लेकर कुरसी खींचके उसके सिरहाने बैठ गई और

बोली, "मैं बयार कर रही हूँ, तुम सो जाओ। रोगीके लिए दुश्चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं, वे अच्छे हैं।"

"वाह! तब तो सब तरफ शुभ ही शुभ समाचार हैं।" कहते हुए उसने आँखें मींच लीं।

१८

इन्फ्लुएञ्जा इस देशमें बिलकुल नई बीमारी नहीं है, 'डेंगू' या 'हड्डी तोड़' बुखारके नामसे यहाँवाले इसे बहुत कुछ अवज्ञा और उपहासकी दृष्टिसे देखते रहे हैं। लोगोंकी यही धारणा थी कि दो तीन दिन तकलीफ देनेके सिवा उसका और कोई गहरा उद्देश्य नहीं होता।—परन्तु इसकी किसीको कल्पना तक न थी कि सहसा ऐसी दुर्निवार महामारीके रूपमें उसका प्रकोप हो सकता है। लिहाजा, इस बार अकस्मात् इसकी अपरिमेय शक्तिकी सुनिश्चित कठोरतासे लोग पहले तो हतबुद्धि-से हो गये, बादमें जिससे जिधर बन सका, भाग खड़ा हुआ। अपने और परायेमें ज्यादा भेद-भाव न रहा। बीमारकी तीमारदारी करना तो दूर रहा, मरते वक्त मुँहमें पानी देनेवाला भी बहुतोंके भाग्यमें न जुटा। शहर और गाँव सर्वत्र ही एक-सी दशा थी। आगरेके भाग्यमें भी अन्यथा कुछ नहीं हुआ,—उस समृद्ध जन-बहुल प्राचीन नगरीकी शकल कुछ ही दिनोंमें बिल्कुल ही बदल गई। स्कूल-कॉलेज बन्द हो गये हैं, बाज़ार और मण्डियोंकी दूकानोंमें ताले लग गये हैं, जमनाका किनारा सुनसान है,—हिन्दू और मुसलमान शव-वाहकोंके शंकाकुल त्रस्त पैरोंकी आवाज़के सिवाय सड़कोंपर बिलकुल सन्नाटा है। किसी भी तरफ देखनेसे यही मालूम होता है कि मारे भय और आशंकाके सिर्फ आदमियोंकी ही नहीं बल्कि मकानात और पेड़-पौधों तककी शकल-सूरत बिगड़ गई है। शहरकी ऐसी हालतमें चिन्ता, दुःख और शोककी ज्वालाके कारण बहुतोंके साथ बहुतोंका समझौता हो गया है,—कोशिश करके, बातचीतके द्वारा या मध्यस्थ-मानकर नहीं, बल्कि यों ही अपने आप। आज भी जो लोग जिन्दा हैं, अभी तक इस दुनियासे जुदे नहीं हुए, वे सभी मानो परस्पर एक दूसरेके परम आत्मीय हो गये हैं। बहुत दिनोंसे जिनमें बातचीत तक बन्द थी, सहसा रास्तेमें भेंट होते ही उनकी भी आँखोंमें आँसू छलक आते हैं।—किसीका भाई मर गया है तो किसीका लड़का, किसीकी स्त्री मर गई है तो किसीकी

लड़की,—नाराजीसे मुँह फेर लेनेकी ताकत अब किसीमे नहीं रह गई,—कभी किसीसे बात हुई और कभी वह भी नहीं हुई, चुप चाप मन ही मन एक दूसरेकी कल्याण-कामना करके विदा ले ली है।

मोचियोंके मुहल्लेमें अब ज्यादा आदमी नहीं बचे हैं। जितने मरे उतने ही भाग गये हैं। बाकीके लिए राजेन्द्र अकेला ही काफी है। उनकी गति और मुक्तिका भार स्वयं उसीने अपने जुम्मे ले लिया है। सहकारिणीके तौरपर कमल हाथ बँटाने आई थी। इसीका उसको भरोसा था कि बचपनमें चायके बगीचेमे बीमार कुलियोंकी उसने सेवा की थी, पर दो-ही-तीन दिनमे वह समझ गई कि उस पूँजीसे यहाँ काम नहीं चल सकता। उःफ् मोचियोंकी वह कैसी दुर्दशा थी! भाषामे उसका वर्णन करके विवरण देना असम्भव है। झोंपड़ियोंमे पाँव धरते ही सारा शरीर काँप उठता था,—कहीं भी बैठनेको जगह नहीं। वहाँ आनेके पहले कमल नहीं जानती थी कि गन्दगी कैसा भयंकर रूप धारण कर सकती है। इस बातकी कल्पनाको भी वह अपने मनमे स्थान न दे सकी कि इन सबके मध्यमें हरदम रहते हुए, अपनेको सावधानीसे बचाए रखकर, रोगियोंकी सेवा और देख-भाल की जा सकती है। बड़े दर्पके साथ वह राजेन्द्रके साथ यहाँ आई थी। दुस्साहसिकतामें वह किसीसे कम नहीं थी,—ससारकी किसी बातसे वह डरती नहीं थी,—मौतसे भी नहीं, और उसने इसमें झूठ भी नहीं कहा था; पर यहाँ आकर उसने समझा कि इसकी भी एक सीमा है। कुछ दिनोंमे ही डरके मारे उसकी देहका खून सूखने लगा। फिर भी, बिलकुल ही देवालिया होकर घर लौट आनेके पहले राजेन्द्र उसे आश्वास देते हुए बार बार कहने लगा, "ऐसी निर्भीकता मैंने अपने जीवनमें नहीं देखी। ठीक तूफानके मुँहको ही आपने सम्हाल लिया। पर अब जरूरत नहीं,—आप घर जाकर कुछ दिन आराम कीजिए। इनके लिए जो कुछ आप किये जा रही हैं उसका ऋण ये अपने जीवनमें न चुका सकेंगे।"

"और तुम?"

राजेन्द्रने कहा, "इन बचे हुओंको महायात्रा कराकर मैं भी भागूँगा। नहीं तो, क्या आप चाहती हैं कि इनके साथ मैं भी मर जाऊँ?"

कमलको जवाब ढूँढ़े न मला, क्षण-भर उसकी तरफ देखती रही, फिर चली आई। मगर इसके मानी यह नहीं कि वह इन कई दिनोंमें अपने घर

बिलकुल आ ही न सकी हो। रसोई बनाकर साथ ले जानेके लिए उसे रोज एक बार अपने घर आना पड़ता था। पर आज यह जानकर कि उसे फिर उस भयानक स्थानमें वापस न आना पड़ेगा एक ओर जैसे उसे तसल्ली हुई, वैसे ही दूसरी ओर अव्यक्त उद्वेगसे उसका सारा जी भर उठा। आते वक्त वह राजेन्द्रसे खानेके बारेमें पूछना भूल गई थी। मगर, यह त्रुटि चाहे कितनी ही बड़ी क्यों न हो, जहाँ उसे वह छोड़ आई है उसके लेखे कुछ नहीं थी।

स्कूल-कालेज बन्द होनेके समयसे हरेन्द्रका ब्रह्मचर्याश्रम भी बन्द है। ब्रह्मचारी बालकोंको किसी निरापद स्थानमें पहुँचा दिया गया है और देखे-रेखके लिए सतीश उनके साथ है। अविनाशकी बीमारीके कारण हरेन्द्र खुद नहीं जा सका। आज वह कमलके घर आया, और नमस्कार करके बोला, "पाँच-छः रोजसे रोज आ रहा हूँ, आपसे भेंट ही नहीं होती। कहाँ थीं?"

कमलने मोचियोंके मुहल्लेका नाम लिया तो वह अत्यन्त विस्मित हुआ, बोला, "वहाँ! वहाँ तो, सुनते हैं, बहुत लोग मर रहे हैं! यह सलाह आपको दी किसने? पर किसीने भी दी हो, अच्छा काम नहीं किया।"

"क्यों?"

"क्यों क्या! वहाँ जानेके मानी है लगभग आत्म-हत्या। मैं तो यह सोच रहा था कि शिवनाथ बाबू आगरेसे चले गये हैं, सो शायद आप भी कहीं चली गई होंगीं। पर गई होंगीं अवश्य ही, कुछ दिनोंके लिए ही, नहीं तो मकान खाली किये बगैर नहीं जातीं—अच्छा, राजेन्द्रका पता है कुछ? वह क्या यहीं है या और कहीं चला गया? अचानक ऐसा गोता मारा कि कोई पता ही नहीं मिलता।"

"उनसे क्या आपको कोई खास काम है?"

"नहीं, खास कामके मानी जो साधारणतः समझे जाते हैं, वैसा तो कोई काम नहीं। फिर काम ही समझिए। कारण, मैं भी अगर उसकी खोज-खबर लेना बंद कर दूँ तो सिवा पुलिसके और कोई उसका आत्मीय-जन नहीं रह जाता। मुझे विश्वास है, आपको मालूम है कि वह कहाँ है।"

कमलने कहा, "मुझे मालूम है। पर आपको बतानेमें कुछ फायदा नहीं। यह अनुसन्धान करना अनुचित कुतूहल है कि जिसे घरसे भगा दिया है अब वह बाहर निकलकर कहाँ गया।"

हरेन्द्र कुछ देर चुप रहा, फिर बोला, "मगर वह मेरा घर नहीं, आश्रम है। वहाँ उसे स्थान नहीं दे सका। मगर इसकी शिकायत दूसरेके मुँहसे सुनना भी मुझे गवारा नहीं। अच्छी बात है, मैं जाता हूँ। उसे पहले भी बहुत बार ढूँढ निकाला है, और इस बार भी ढूँढ लूँगा,—आप ढकके नहीं रख सकेंगी।"

यह बात सुनकर कमल हँस दी, बोली, "जैसा कि आप कह रहे हैं हरेन्द्र बाबू, फिर अगर उन्हें मैं ढक रखूँगी तो क्या आप समझते हैं कि उससे मेरा दुःख दूर हो जायगा?"

हरेन्द्र खुद भी हँस दिया, पर उस हँसीके इर्द-गिर्द बहुत-सी सेंध रह गई; उसने कहा, "मेरे सिवा इस प्रश्नका जवाब देनेवाले आगरेमें और भी बहुतेरे हैं। वे क्या कहेंगे, मालूम है? कहेंगे—कमल, आदमीका दुख तो एक तरहका है नहीं, बहुत तरहका है। उनकी प्रकृतियाँ भी भिन्न हैं और दुःख दूर करनेके रास्ते भी भिन्न हैं। लिहाजा, उन दुखी लोगोंके साथ अगर कभी मुलाकात हो जाय तो बातचीत करके उन्हींसे निर्णय कर लीजिएगा।" फिर वह जरा ठहरकर बोला, "लेकिन असलमें आप भूल रही हैं। मैं उस दलका नहीं हूँ। व्यर्थ परेशान करने मैं नहीं आया, क्योंकि, संसारमें जितने लोग आपपर सचमुच श्रद्धा रखते हैं, उन्हींमेंसे मैं भी एक हूँ।"

कमलने उसके चेहरेकी तरफ एक नजर डालकर धीरेसे पूछा, "मुझपर आप सचमुच श्रद्धा रखते हैं सो किस नीतिसे? मेरे मत या आचरण, किसीके भी साथ तो आप लोगोंका मेल नहीं।"

हरेन्द्रने उसी वक्त उत्तर दिया, "नहीं, कोई मेल नहीं। मगर फिर भी मैं गहरी श्रद्धा रखता हूँ। क्यों, यही आश्चर्यकी बात मैं अपने आपसे बार-बार पूछा भी करता हूँ।"

"कोई उत्तर नहीं पाते?"

"नहीं। मगर विश्वास है कि किसी न किसी दिन पा लूँगा जरूर।" फिर जरा ठहरकर बोला, "आपका इतिहास कुछ कुछ आपके निजके मुँहसे सुना है, कुछ अजित बाबूसे मालूम हुआ है,—हाँ, आपको मालूम होगा शायद, वे अब हमारे आश्रममें ही रहने लगे हैं।"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "सो तो आप पहले ही बता चुके हैं।"

हरेन्द्र कहने लगा, "आपके जीवन-इतिहासके विचित्र अध्याय ऐसी उदार सरलतासे सामने आ खड़े हुए हैं कि उनके विरुद्ध सरसरी राय जाहिर

करनेमें डर लगता है। अब तक जिन बातोंको बुरा मानना सीखा है; आपके जीवनने मानों उन्हींके विरुद्ध मामला दायर कर दिया है! इन बातोंका न्याय करनेवाला कहाँ मिलेगा और उसका नतीजा क्या होगा सो मुझे कुछ भी नहीं मालूम; किन्तु भला बताइए तो सही कि इस तरहसे जो निर्भयतासे आ सकती हैं और घूँघटकी कोई आवश्यकता ही नहीं समझतीं, उनके प्रति श्रद्धा किये वगैरे कैसे रहा जा सकता है ?"

कमलने कहा, "निर्भयतासे आके सामने खड़ा हो जाना ही क्या कोई बहुत बड़ा काम है ? दो कन-कटोंकी कहानी क्या आपने नहीं सुनी ? वे भी बीच सड़कसे चलते थे। आपने नहीं देखा, लेकिन मैंने चाय बगीचोंके साहबोंको देखा है। उनका निर्भय, निःसंकोच बेहयापन देखकर दुनियामें लज्जाको भी लज्जा आती है। लज्जाको उन्होंने मानो गर्दनी देकर बाहर निकाल दिया है। उनके दुःसाहसकी तो सीमा नहीं,—मगर उनकी यह बात क्या आदमीके लिए श्रद्धाकी चीज है ?"

हरेन्द्रको ऐसे उत्तरकी आशा और चाहे किसीसे रही हो, इस स्त्रीसे नहीं थी। सहसा मानो उसे कोई बात ढूँढ़े न मिली, बोला, "वह और बात है।"

कमलने कहा, "कैसे जाना कि और बात है ? बाहरसे मेरे पिताको भी लोग उन्हींमेंसे एक समझा करते थे। मगर मैं जानती हूँ, वह सच नहीं था। लेकिन सच तो सिर्फ मेरे जाननेपर ही निर्भर नहीं है,—दुनियाके आगे उसका प्रमाण क्या है ?"

हरेन्द्र इस प्रश्नका भी उत्तर न दे सका और चुप रहा।

कमल कहने लगी, "मेरा इतिहास आप सबने सुना है, और खूब सम्भव है कि उस कहानीका परमानन्दके साथ उपभोग भी किया है। पर इस विषयमें आप मौन हैं कि मेरे काम सब अच्छे हुए या बुरे, जीवन मेरा पवित्र है या कलुषित,—मगर हाँ, वे काम गुप्तरूपसे न होकर सब लोगोंकी आँखोंके सामने,—सबकी उपेक्षा दृष्टिके नीचे हुए हैं,—मेरे प्रति आपकी श्रद्धाके आकर्षणका कारण यही है। हरेन्द्र बाबू, दुनियामें आदमीकी श्रद्धा मैंने इतनी ज्यादा नहीं पाई कि लापरवाहीसे विना कहे-सुने उसका अपमान कर सकूँ; पर आप मेरे सम्बन्धमें जैसे और भी बहुत कुछ जानते हैं वैसे ही यह भी जान रखिए कि अक्षय बाबूओंकी अश्रद्धासे बढ़कर यह श्रद्धा ही मुझे पीड़ा पहुँचाती है। अश्रद्धा मुझसे सही जाती है, पर इस श्रद्धाका भार मेरे लिए दुःसह है।"

हरेन्द्र पहलेकी तरह ही क्षण-भर मौन रहा। कमलके वाक्योंसे,—खासकर उसके कण्ठस्वरकी शान्त-कठोरतासे मन ही मन उसे अपने अपमानका बोध हुआ। थोड़ी देर बाद उसने कहा, "क्या इसपर आपको विश्वास नहीं होता कि विचार और व्यवहारमें अनैक्य होते हुए भी किसीपर श्रद्धा की जा सकती है, कमसे कम मैं कर सकता हूँ?"

कमलने बहुत ही सरलतासे उसी वक्त जवाब दिया, "ऐसा तो मैंने नहीं कहा हरेन्द्र बाबू, कि विश्वास नहीं होता। मैंने तो सिर्फ यही कहा है कि ऐसी श्रद्धा मुझे पीड़ा पहुँचाती है।" फिर जरा ठहरकर कहा, "आचार और विचारके लिहाज़से अक्षय बाबू और आपमे कोई विशेष भेद नहीं। उनमें बहुत जगह अनावश्यक और अत्यधिक कठोरता न होती तो आप सब एक-से ही होते। और अश्रद्धाके लिहाजसे भी आप सब एकसे हैं। मेरे सिर्फ इस साहसने कि मैं लज्जा और संकोचके मारे छिपी छिपी नहीं फिरती, आप लोगोंका आदर प्राप्त किया है। मगर इसकी कितनी-सी कीमत है हरेन्द्र बाबू? बल्कि, यह सोचकर कि आप लोग इसीके लिए अब तक मेरी वाहवाही करते आ रहे हैं मेरे मनमे एक अरुचि ही पैदा होती है।"

हरेन्द्र कहा, "इसके लिए वाहवाही अगर हो ही, तो क्या वह असंगत है? साहस क्या दुनियामें कोई चीज नहीं?"

कमलने कहा, "आप लोग हरएक प्रश्नको इतना एकांगी करके क्यों पूछते हैं? यह तो मैंने नहीं कहा कि साहस कोई चीज ही नहीं, मैंने तो कहा था कि यह चीज संसारमें दुर्लभ है और दुर्लभ होनेसे ही यह आँखोंमें चकाचौंध पैदा कर देती है। पर इससे भी बड़ी एक और चीज है और वह चीज सहसा बाहरसे साहसके अभाव जैसी ही मालूम देती है।"

हरेन्द्रने सिर हिलाते हुए कहा, "समझ नहीं सका। आपकी बहुत-सी बातें बहुधा मुझे पहेली-सी मालूम देती हैं, लेकिन आजकी बातें तो उन्हे भी लॉघ गई हैं। मालूम होता है, आज आप बहुत ही अन्यमनस्क हैं। इसका आपको कुछ खयाल ही नहीं कि किसका जवाब किसे दिये चली जा रही हैं।"

कमलने कहा, "ठीक यही बात है।" फिर क्षण-भर स्थिर रहकर बोली, "हो भी सकता है। सचमुचकी श्रद्धा पाना क्या चीज है, सो शायद अब तक मैं खुद ही नहीं जानती। उस दिन सहसा चौंक-सी गई। हरेन्द्र बाबू, आप दुखी न हों, परन्तु उसके साथ तुलना करनेसे और सब बातें आज

परिहास-सी ही मालूम होती हैं।" कहते कहते उसकी आँखोंकी प्रखर दृष्टि छायाच्छन्न सी हो आई, और सारे चेहरेपर ऐसी एक स्निग्ध सजलता प्रवाहित हो उठी कि हरेन्द्रको अनुभव हुआ कि कमलकी ऐसी मूर्ति उसने पहले कभी देखी ही न थी। अब उसे जरा भी संशय न रहा कि ये बातें कमल किसी अनुद्दिष्ट व्यक्तिको लक्ष्य करके कह रही है। वह सिर्फ निमित्त मात्र है, और इसीलिए शुरूसे आखिर तक सब कुछ उसे पहेली-सा मालूम हो रहा है।

कमल कहने लगी, "अभी अभी आप मेरी दुर्मद निर्भीकताकी प्रशंसा कर रहे थे,—अच्छी बात है, आपने सुना है कि शिवनाथ मुझे छोड़के चले गये हैं?"

हरेन्द्रका मारे शर्मके सिर झुक गया, बोला, "हाँ।"

कमलने कहा, "हम दोनोंमें मन ही मन एक शर्त थी कि सम्बन्ध-विच्छेदका दिन अगर कभी आयेगा तो सहज ही दोनों अलग हो जायँगे। नहीं नहीं,—किसी दस्तावेजपर लिखा पढ़ी करनेकी जरूरत न होगी,—यों ही।"

हरेन्द्रने कहा, "ब्रूट!"

कमलने कहा, "सो तो आपके मित्र अक्षय बाबू हैं। शिवनाथ गुणी आदमी हैं, उनके विरुद्ध मुझे अपनी तरफसे कोई बड़ी शिकायत नहीं। और शिकायत करनेसे लाभ ही क्या है? हृदयकी अदालतमें तो इकतरफा फैसला ही होता है, उसकी तो कोई अपील-कोर्ट है नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "इसके मानी यह हुए कि प्रेमके सिवा और किसी बन्धनको आप नहीं मानतीं?"

कमलने कहा, "पहली बात तो यह कि हमारे मामलेमें कोई और बन्धन था नहीं, और दूसरी, यदि होता भी तो उसे मंजूर करानेसे फायदा क्या था? देहका जो हिस्सा लकवेसे बेकाम हो जाता है उसके लिए बाहरका बन्धन भारी बोझ हो उठता है। उसके द्वारा काम कराना ही सबसे ज्यादा खटकता है।" कहकर क्षण-भर वह चुप रही और फिर कहने लगी। "आप सोचते होंगे कि सचमुचका ब्याह नहीं हुआ, इसीसे ऐसी बात मुँहसे निकाल रही हूँ, हुआ होता तो न निकाल सकती। परन्तु यह बात नहीं है। हुआ होता तो भी निकाल सकती थी; पर हाँ, तब इतनी आसानीसे इस समस्याका हल न कर पाती। नाकाम हिस्सा भी शायद देहसे जुड़ा रह जाता, और अधिकांश

स्त्रियोंके सम्बन्धमें जैसा होता है, मुझे भी उसी तरह आमरण उस दुःखका बोझा लिये यह जिन्दगी बितानी पड़ती। मैं बच गई हरेन्द्र बाबू, भाग्यसे छुटकारेका दरवाजा खुला था, सो मुक्ति पा गई।"

हरेन्द्रने कहा, "आपको शायद मुक्ति मिल गई हो। लेकिन इस तरह सभी अगर मुक्तिका द्वार खुला रखना चाहें, तो संसारमें समाज-व्यवस्थाकी बुनियाद तक उखड़ जायगी। ऐसा कोई नहीं जो उस अवस्थाकी भयंकर मूर्तिको कल्पनामें भी अंकित कर सके। इस सम्भावनाको सोचा भी नहीं जा सकता।"

कमलने कहा, "सोचा जा सकता है, और एक दिन ऐसा आयेगा जब सोचा जायगा। इसका कारण यह है कि मनुष्यके इतिहासका शेष अध्याय अभी तक पूरा लिखा नहीं गया। एक दिनके किसी एक अनुष्ठानके जोरसे अगर उसका छुटकारेका रास्ता सारे जीवनके लिए रोक दिया जाय तो उसे श्रेयकी व्यवस्था नहीं माना जा सकता। संसारमें सभी भूल-चूकोंके सुधारकी व्यवस्था है, कोई उसे बुरा नहीं बताता; फिर भी, जहाँ भ्रान्तिकी सम्भावना सबसे ज्यादा है और उसके निराकरणकी आवश्यकता भी उतनी ही अधिक है, वहीं लोगोंने अगर सारे उपायोंको अपनी इच्छासे बन्द कर रखा हो तो उसे अच्छा कैसे मान लिया जाय, बताइए भला?"

इस स्त्रीकी तरह तरहकी दुर्दशाओंके कारण हरेन्द्रके मनमें गहरी सहानुभूति थी;—विरुद्ध आलोचनामें वह जल्दी शामिल नहीं होता और जब विरोधी दल तरह तरहकी गवाहियों और प्रमाणोंसे उसे हीन साबित करनेकी कोशिश करता तब वह प्रतिवाद भी करता। विरोधी लोग कमलके प्रकट आचरण और वैसी ही निर्लज्ज उक्तियोंकी नजीर दे दे कर जब धिक्कारते, तब हरेन्द्र तर्क-युद्धमें परास्त होकर भी जी-जानसे यह समझानेकी कोशिश किया करता कि कमलके जीवनमें हर्गिज यह सच नहीं हो सकता। कहीं न कहीं कोई न कोई एक निगूढ़ रहस्य है जो एक न एक दिन अवश्य ही व्यक्त होगा। इसपर वे व्यंगसे कहते, कृपाकर उसे व्यक्त कर दीजिए तो प्रवासी बंगाली समाजमें हम लोग बदनामीसे बच जायँ। और यदि कहीं अक्षय मौजूद होता तो क्रोधसे पागल होकर कहता, आप लोग सभी समान हैं। मेरे जैसी विश्वासकी शक्ति किसीके भी नहीं है; आप लोग उसे अपना भी नहीं सकते, छोड़ भी नहीं सकते। आजकलके कुछ उग्र विलायती विचारोंके भूतने आप लोगोंको ग्रस्त कर रक्खा है।

अविनाश कहते, "ये विचार कमलके मुँहसे नये ही सुने हों, सो बात भी नहीं है अक्षय, मैंने तो वे पहलेसे ही सुन रक्खे हैं। आज कलकी दो-चार अँग्रेजीकी अनुवादित पुस्तकें पढ़ लेना ही इसके लिए काफी है। विचारोंकी इसमें कोई करामात नहीं।"

अक्षय कठोर होकर पूछता, "तो किसकी करामात है? कमलके रूपकी? अविनाश बाबू, हरेन्द्र अविवाहित छोकरा है, उसे माफ किया जा सकता है; मगर आश्चर्य तो यह है कि बुढ़ापेमें आकर आप लोगोंकी आँखें भी चौंधिया गईं।" इतना कह कर वह कनखियोंसे आशु बाबूकी तरफ देखता और कहता, "मगर यह 'प्रेत-नीर' * का उजाला है आशु बाबू, सड़े कीचड़से इसकी पैदाइश है। साफ दिखाई दे रहा है कि उस कीचड़मे ही किसी दिन बहुतोंको खींच ले जाकर मारेगा वह, सिर्फ अक्षयको वह भुलावा नहीं दे सकता,—वही असल-नकल पहचानता है।"

आशु बाबू मुसकराकर रह जाते, पर अविनाश मारे क्रोधके लाल-ताते हो जाते। हरेन्द्र कहता, "आप बड़े बहादुर हैं अक्षय बाबू, आपका जयजयकार हो। हम सब मिलके जब कीचड़में डुबकियाँ लेने लगें तब आप किनारेपर खड़े खड़े बगलें बजाकर नाचिएगा, हममेंसे कोई भी आपकी निन्दा न करेगा।"

अक्षय जवाब देता, "निन्दाका काम मैं करता ही नहीं हरेन्द्र। गृहस्थ आदमी हूँ, मैं सहज-सीधी बुद्धिसे समाजको मानकर चालता हूँ। न तो मैं ब्याहकी कोई नई व्याख्या करना चाहता हूँ और न दुनिया-भरके वाहियात लड़कोंको जमाकर ब्रह्मचारी-गीरी ही दिखाता फिरता हूँ। आश्रममें चरणोंकी धूलका वजन और जरा बढ़ा लेनेकी कोशिश करो भइया, फिर साधन-भजनके लिए चिन्ता न करनी होगी। देखते देखते साराका सारा आश्रम विश्वामित्र ऋषिका तपोवन हो उठेगा और शायद हमेशाके लिए तुम्हारी एक कीर्ति रह जायगी।"

अविनाश गुस्सा भूलकर जोरसे हँस पड़ते और निर्मल दबी मुसकानसे आशु बाबूका चेहरा चमक उठता। हरेन्द्रके आश्रमपर किसीकी भी आस्था नहीं थी, उसे सबने एक व्यक्तिगत खामखयाली भर समझ रखा था।

---

* Will o' the wisp या दलदलवाले स्थानोंमें यकायक पैदा होनेवाला और बुझ जानेवाला प्रकाश जो एक नैसर्गिक चमत्कार है।

जवाबमे हरेन्द्र मारे गुस्सेके लाल होकर कहता, "पशुके साथ तो युक्ति-तर्क चल नहीं सकता, उसके लिए दूसरी विधि है। मगर, उसकी व्यवस्था करते नहीं बनती, इसीलिए आप चाहे-जिसे सींग मारते फिरते हैं। छोटे-बड़े, नीच-ऊँच, स्त्री-पुरुष किसीका भी खयाल नहीं करते।" और यह कहते हुए अन्य दो-चार जनोंको लक्ष्य करके कहता, "पर आप लोग इसे प्रश्रय क्यों कर देते हैं? इतना बड़ा एक कुत्सित इंगित भी मानो कोई परिहासका विषय हो!"

अविनाश अप्रतिभ-से होकर कहते, "नहीं नहीं, प्रश्रय क्यों देने लगे, पर तुम जानते ही हो, अक्षयको बोलते वक्त उपयुक्त काल और क्षेत्रका ज्ञान नहीं रहता।"

हरेन्द्र कहता, "यह काण्ड-ज्ञान सच पूछा जाय तो, उसकी अपेक्षा आप लोगोंको और भी कम है। मनुष्यके मनका चेहरा तो दिखाई देता नहीं भाई साहब, नहीं तो हँसी-मजाक कम ही लोगोंके मुँहसे शोभा देता। विवाहके बहाने शिवनाथने कमलको ठग लिया, मगर मेरा दृढ़ विश्वास है कि उस धोखेको भी कमलने सत्यके समान ही मान लिया था। गार्हस्थिक लेन-देनके नफे-नुकसानका बखेड़ा करके उसने उसे लोगोंकी निगाहमें नीचे नहीं गिराना चाहा। पर उसके न चाहनेपर भी आप लोग क्यों छोड़ने लगे? शिवनाथ उसके प्रेमकी निधि हो सकता है, पर आप लोगोंका कौन है? क्षमाका अपव्यय आप लोग न सह सके। यही है न आप लोगोंकी घृणाका मूल कारण,—असल पूँजी? सो उसीको भँजा भँजा कर आप लोगोंसे जितना चलाया जाय, चलाइए, पर मैं विदा लेता हूँ।" इतना कहकर हरेन्द्र उस दिन गुस्सा होकर चला गया।

उसके मनमें इस बातका दृढ विश्वास था कि किसी दिन कमलके मुँहसे यह बात व्यक्त होगी कि शैव-विवाहको वास्तविक विवाह मानकर ही वह धोखेसे छली गई थी। अपनी इच्छासे, सब कुछ जानते हुए एक गणिकाकी तरह उसने शिवनाथका आश्रय नहीं लिया था। परन्तु आज उसके विश्वासकी यह भीत भी मिट्टीमें मिल गई। हरेन्द्र कोई अक्षय या अविनाश नहीं था। विना किसी भेदभावके नर-नारी सबके प्रति उसकी तबीयतमें एक तरहकी विस्तृत और गहरी उदारता थी। इसीलिए देश और दसके कल्याणके लिए सब तरहके अनुष्ठानोंमें उसने बचपनसे अपनेको लगा रखा था। उसका

ब्रह्मचर्य-आश्रम, उसका उदार दान, सबके साथ अपना सब कुछ बाँट लेना, —इन सबकी जड़में उसकी वही उदार भावना काम कर रही है और उसकी इस प्रवृत्तिने ही उसे शुरूसे कमलके प्रति श्रद्धान्वित कर रखा था। परन्तु इसकी उसने कल्पना भी नहीं की थी कि आज वह उसीके मुँहपर उसीके प्रश्नके उत्तरमें ऐसा भयानक जवाब दे बैठेगी। भारतके धर्म, नीति आचार, —उसके स्वातंत्र्य और विशिष्ट सभ्यताके प्रति हरेन्द्रके मनमें अच्छेद्य स्नेह और अपरिमेय भक्ति थी, फिर भी, लम्बी पराधीनता और वैयक्तिक कमजोरियोंके कारण उत्पन्न होनेवाले उसके व्यतिक्रमोंको भी वह अस्वीकार नहीं करता था। परन्तु कमलके द्वारा ऐसी उग्र अवज्ञाके साथ उसके मूलभूत सिद्धान्तों तकके अस्वीकार किये जानेके कारण उसकी वेदनाकी सीमा नहीं रही। और इस बातकी याद करके कि कमलके पिता योरोपीय थे और माता कुलटा थी,—उसकी नसोंमें व्यभिचारका खून डोल रहा है, मारे घृणाके वह मन ही मन स्याह पड़ गया। दो-तीन मिनट चुप रहकर धीरेसे बोला, "तो अब जाता हूँ—"

कमल हरेन्द्रके मनके भावको ठीकसे ताड़ न सकी, सिर्फ एक परिवर्तनपर उसका लक्ष्य गया। धीरेसे उसने पूछा, "मगर जिस कामके लिए आये थे उसका तो कुछ किया ही नहीं?"

हरेन्द्रने सिर उठाकर पूछा, "क्या काम?"

कमलने कहा, "राजेन्द्रकी खबर जानने आये थे, पर बगैर जाने ही चले जा रहे हैं। अच्छा, यहाँ उनके रहनेके कारण क्या आप लोगोंमें बहुत भद्दी आलोचना हुआ करती है? सच बताइएगा?"

हरेन्द्रने कहा, "यदि कभी होती भी है तो मैं उसमें शरीक नहीं होता। मेरे लिए यही काफी है कि वह पुलिसके हाथमें न पड़े। उसे मैं पहचानता हूँ।"

"लेकिन मुझे?"

"लेकिन आप तो ऐसी बातोंका खयाल करती नहीं, और न आपके ऐसे विश्वास ही हैं।"

"बहुत कुछ ऐसा ही है। यानी ऐसी कोई कड़ी शपथ मैंने नहीं ले रखी है कि इन बातोंका खयाल करूँगी ही। पर मित्रका ही खयाल करनेसे काम नहीं चलता हरेन्द्र बाबू, और एक आदमीका भी खयाल करना जरूरी है।"

"इसे मैं व्यर्थ समझता हूँ। बहुत दिनोंके बहुत काम-काजोंमें जिसे मैंने

विना किसी संशयके पहचान लिया है, उसके सम्बन्धमें मुझे कोई आशंका नहीं। उसकी जहाँ तबीयत हो, रहे; मैं निश्चिन्त हूँ।"

कमलने उसकी चेहरेकी तरफ क्षण-भर चुप रहकर देखा और कहा, "आदमीको बहुत परीक्षाएँ देनी पड़ती हैं हरेन्द्र बाबू। उसका एक दिन पहलेका प्रश्न सम्भव है कि दूसरे दिनके उत्तरसे मेल न खाय। किसीके सम्बन्धमें भी अपने विचारको इस तरह शेष बनाकर नहीं रखना चाहिए, धोखा खाना पड़ता है।"

हरेन्द्रने अनुमान किया कि कमलने ये बातें सिर्फ तत्त्व-दृष्टिसे ही नहीं कहीं, इनमें कुछ एक इशारा भी है। परन्तु पूछताछ करके उस इशारेको स्पष्ट करानेकी उसे हिम्मत नहीं पडी। राजेन्द्रके प्रसंगको बन्द करके उसने सहसा दूसरा प्रसग छेड़ दिया। बोला, "हम लोगोंने निश्चय किया है कि शिवनाथको उचित दण्ड दिया जाय।"

कमल सचमुच ही आश्चर्यमें पड़ गई। उसने पूछा, "'हम लोगोंने' किसने?"

हरेन्द्रने कहा, "जो भी हों, उनमें मैं भी एक हूँ। आशु बाबू बीमार हैं, उन्होंने वचन दिया है कि अच्छे होनेपर वे मेरी सहायता करेंगे।"

"वे बीमार हैं?"

"हाँ, आज सात-आठ दिन हुए उनकी तबीयत खराब है। मनोरमा पहलेसे ही चली गई है। आशु बाबूके चाचा काशीवास कर रहे हैं, वे ही आकर उसे ले गये हैं।"

सुनकर कमल चुप हो रही। हरेन्द्र कहने लगा, "शिवनाथ जानता है कि कानूनकी रस्सी उस तक पहुँच नहीं सकती। इसी बलपर उसने अपने मरे हुए मित्रकी स्त्रीको धोखा दिया, अपनी बीमार स्त्रीको त्याग दिया और फिर बेखटके आपका सर्वनाश किया। कानूनको वह बहुत अच्छी तरह समझता है, सिर्फ नहीं जानता तो यही कि दुनियामें कानून ही सब कुछ नहीं है, उसके बाहर भी कुछ और मौजूद है।"

कमलने हँसते हुए कौतुकके साथ पूछा, "लेकिन आप लोगोंने दण्ड उनके लिए क्या तय किया है? उन्हें पकड़ लाकर फिर एक बार मेरे साथ जोड़ देंगे, यही न?" और वह जरा हँस दी। उसका यह प्रस्ताव हरेन्द्रको भी ऐसा हास्यकर प्रतीत हुआ कि उससे भी बगैर हँसे न रहा गया। बोला,

"मगर यह भी तो नहीं हो सकता कि वह जिम्मेदारीको इस तरह छोड़ कर अपने मनके माफिक विना किसी बाधा-विघ्नके बचकर निकल जाय, और इसके भी कोई मानी नहीं कि आपके साथ उसे जोड़ ही देना होगा।"

कमलने कहा, "तो आखिर उन्हें लाकर आप करेंगे क्या? मुझपर पहरा देनेके काममें लगायेंगे, या उनकी गरदन पकड़ेंगे और नुकसान वसूल कर मुझे दिलायेंगे? पहली बात तो यह कि रुपये मैं लूँगी नहीं, दूसरी, वह चीज उनके पास है भी नहीं। शिवनाथ कितने गरीब हैं सो और कोई भले ही न जाने, मैं तो जानती हूँ।"

"तो क्या इतने बड़े अपराधका कोई दण्ड ही न होगा? और कुछ हो चाहे न हो, पर यह तो उन्हें जता देना जरूरी है कि बाजारसे आज भी चाबुक खरीदा जा सकता है।"

कमल व्याकुल होकर कहने लगी, "नहीं नहीं, ऐसा न कीजिएगा। उससे मेरा इतना बड़ा अपमान होगा कि मैं उसे सह नहीं सकूँगी।" फिर उसने कहा, "इतने दिन मैं गुस्सेमें ही जल-भुन रही थी कि इस तरह चोरकी भाँति भागे फिरनेकी क्या जरूरत थी, और साफ साफ मुझसे कहके जाते तो क्या मैं उन्हें रोक लेती? तब मुझे यह दुबका-चोरीका असम्मान ही मानो पर्वतके बराबर बनकर दिखाई देता था, उसके बाद सहसा एक दिन मौतके मुहल्लेसे बुलाहट आई। वहाँ न जाने कितनी मौतें अपनी आँखों देखकर आई। आज मेरी चिन्ताकी धारा एक दूसरे ही रास्तेसे बहने लगी है। अब सोचती हूँ कि उनमें जो कहकर जानेका साहस नहीं था, सो वही तो मेरा सम्मान है। उनकी दुबका-चोरी, छल-कपट और सारे मिथ्याचारने मेरी मर्यादा बढ़ा देनेका ही काम किया है। पानेके दिन उन्होंने मुझे धोखा देकर ही पाया था, लेकिन छोड़नेके दिन उन्हें मुझे ब्याज और मूल सब चुकता करके जाना पड़ा है। अब मुझे कोई शिकायत नहीं, मेरा सबका सब वसूल हो गया है। आशु बाबूसे नमस्कार जताकर कहिएगा कि मेरी भलाई करनेकी कामनासे कहीं वे मेरा नुकसान न करें।"

हरेन्द्र एक भी बात न समझ सका, अवाक् होकर देखता रहा।

कमलने कहा, "संसारकी सब चीजें सबके समझनेकी नहीं होतीं हरेन्द्र बाबू, आप दुःखित न हों। पर मेरी बात अब न कीजिए। दुनियामें सिर्फ शिवनाथ और कमल ही हों सो बात नहीं। यहाँ और भी लोग रहते हैं,

और उनके भी सुख-दुख हैं।" कहते हुए उसने अपनी निर्मल और प्रशान्त हँसीसे मानो दुःख और वेदनाकी घनी भाफ एक मुहूर्त-भरमें दूर कर दी। बोली, "कौन कैसे हैं सो खबर भी तो दीजिए ?"

हरेन्द्रने कहा, "पूछिए ?"

"अच्छी बात है। पहले बताइए कि अविनाश बाबूका क्या हाल है ? सुना था कि वे बीमार हैं, अब अच्छे हो गये ?"

"हाँ। पूरी तरह अच्छे न होनेपर भी बहुत कुछ अच्छे हैं। उनके एक चचेरे भाई रहते हैं लाहौर, स्वास्थ्य ठीक करनेके लिए वे लड़केको साथ लेकर वहीं गये हैं। लौटनेमें शायद दो-एक महीनेकी देर होगी।"

"और नीलिमा ? वे भी क्या साथ गई हैं ?"

"नहीं, वे यहीं हैं।"

कमलने आश्चर्यके साथ पूछा, "यहीं हैं ? अकेली, उस मकानमें ?"

हरेन्द्रने पहले तो जरा इधर उधर किया, फिर कहा, "भाभीकी समस्या सचमुच ही जरा कठिन हो गई थी, पर भगवानने बचा लिया; आशु बाबूकी तीमारदारीके बहाने उन्हें यहीं छोड़ जानेका सुयोग मिल गया।"

यह संवाद इतना बेडौल था कि कमल आगे कुछ पूछ न सकी, सिर्फ विस्तृत विवरणकी आशासे जिज्ञासु-मुखसे उसकी तरफ देखती रह गई। हरेन्द्रकी दुविधा मिट गई और जब वह बोला, तब उसके स्वरसे गूढ़ क्रोधका चिह्न प्रकट हुआ। कारण, इस मामलेमें अविनाशके साथ उसका जरा-कुछ कलह-सा भी हो गया था। हरेन्द्रने कहा, "परदेशमें अपने डेरेपर जो चाहे सो किया जा सकता है, पर इसी कारण वयस्का विधवा सालीको लेकर चचेरे भाईके घर जाकर नहीं रहा जा सकता। उन्होंने कहा, 'तुम भी तो मेरे अपने जन हो, तुम्हारे घर क्या—' मैंने जवाब दिया कि 'पहले तो मैं तुम्हारा अपना आदमी हूँ, सो बहुत दूरके नातेसे,—पर उनका कोई भी नहीं। दूसरे, वह मेरा घर नहीं, आश्रम है; वहाँ रखनेका नियम नहीं। तीसरे, फिलहाल लड़के सब बाहर चले गये हैं, मैं अकेला हूँ।' सुनकर भाई साहबको ऐसी चिन्ता हुई जिसकी हद नहीं। आगरेमें भी नहीं रहा जा सकता,—चारों तरफ मरी फैल रही है, और उनके भाईके यहाँसे बार बार चिट्ठी और तार आ रहे हैं।—भाई साहब बड़े संकटमें पड़ गये।"

कमलने पूछा,—"पर सुना है कि नीलिमाका मायका भी तो है ?"

हरेन्द्रने सिर हिलाकर कहा, "है। और सुनते हैं, एक बड़ी भारी-सी सुसराल भी है। पर उन सबका कोई जिक्र ही नहीं उठा। अचानक एक दिन इसका विचित्र समाधान हो गया। प्रस्ताव किस तरफसे पेश हुआ था, मुझे नहीं मालूम; पर, बीमार आशु बाबूकी सेवाका भार भाभीने ले लिया।"

कमल चुप रही।

हरेन्द्र हँसता हुआ बोला, "मगर हाँ, आशा है कि भाभीकी नौकरी नहीं जायगी। उन लोगोंके वापस आनेपर फिर वे अपने पुराने गृहिणीपद्पर बहाल हो सकेंगी।"

कमलने इस श्लेषका भी कोई उत्तर नहीं दिया, वैसे ही मौन बनी रही।

हरेन्द्र कहने लगा, "मैं जानता हूँ, भाभी वास्तवमें सच्चरित्र महिला हैं। अविनाश-भइयाको वे उनके बुरेसे बुरे दिनोंमें छोड़कर नहीं जा सकी थीं, और उस रह जानेके कारण ही उधरके उनके सब रास्ते बन्द हो गये हैं। मगर, इधर भी देखा कि विपत्तिके दिनोंमें उनके लिए रास्ता खुला नहीं है। इसीसे सोचता हूँ, कि बिना किसी अपराधके भी इस देशकी स्त्रियाँ कितनी बेबस हैं!"

कमल उसी तरह चुप मारे बैठी रही, कुछ बोली नहीं।

हरेन्द्रने कहा, "ये बातें सुनकर आप शायद मन ही मन हँस रही हैं, क्यों?"

कमलने सिर्फ सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

हरेन्द्र बोला, "मैं अकसर जाया करता हूँ आशु बाबूको देखने। वे दोनों ही आपकी खबर जानना चाहते थे। भाभीके आग्रहकी तो कोई सीमा ही नहीं,—एक दिन चलिएगा वहाँ?"

कमल उसी वक्त राजी हो गई, बोली, "आज ही चलिए न हरेन्द्र बाबू, उन्हें देख आयें।"

"आज ही चलेंगी? चलिए। अगर मिल जाय तो मैं एक ताँगा ले आऊँ," कहकर वह बाहर जा ही रहा था कि कमलने उसे वापस बुलाकर कहा, "ताँगेमें हम दोनोंके साथ जानेसे शायद आश्रमके हितैषी लोग नाराज होंगे। चलिए, पैदल ही चले चलें।"

हरेन्द्रने पीछेको मुड़कर कहा, "इसके मानी?"

"मानी कुछ नहीं,—ऐसे ही। चलिए, चलें।"

१९

लगभग तीसरे पहर हरेन्द्र और कमल दोनों आशु बाबूके घर पहुँचे। खाटपर अधलेटी अवस्थामें पड़े हुए अस्वस्थ घर-मालिक उस दिनका 'पायोनियर' पढ़ रहे थे। कई दिनसे उन्हें बुखार नहीं है, अन्यान्य शिकायतें भी दूर होती जाती हैं, सिर्फ शारीरिक कमजोरी अभीतक नहीं गई। इन दोनोंके अन्दर पहुँचते ही वे अखबार फेंक उठकर बैठ गये और कितने खुश हुए सो उनके चेहरेसे साफ मालूम हो गया। उनके मनमें डर था कि कमल शायद अब न आयेगी। इसीसे हाथ बढ़ाकर उसे ग्रहण करते हुए बोले, "आओ, मेरे पास आकर बैठो।" और हाथ पकड़कर उसे अपनी खाटके पास पड़ी कुरसीपर बिठाते हुए कहा, "कैसी हो, बताओ तो कमल?"

कमलने हँसते चेहरेसे जवाब दिया, "अच्छी ही हूँ।"

आशु बाबूने कहा, "सो तो भगवानका आशीर्वाद है। नहीं तो जैसे कुदिन आये हैं, उनमें यह सोचा ही नहीं जा सकता कि कोई अच्छी तरह होगा। इतने दिन थीं कहाँ, बताओ तो? हरेन्द्रसे रोज ही पूछता हूँ और रोज ही वह एक ही जवाब देता है—घरमें ताला पड़ा है, उनका कोई पता नहीं। नीलिमाको शक हो रहा था कि तुम कुछ दिनोंके लिए कहीं बाहर चली गई हो?"

हरेन्द्रने उसका जवाब दिया, कहा, "और कहीं नहीं, इसी आगरेमें मोचियोंके मुहल्लेमें सेवा-कार्यमें लगी हुई थीं। आज भेंट हो गई सो पकड़ लाया।"

आशु बाबू भय-व्याकुल कण्ठसे बोले, "मोचियोंके मुहल्लेमें? पर अखबारमें तो खबर है कि वह मुहल्ला बिलकुल उजाड़ हो गया है। इतने दिन वहीं थीं? अकेली?"

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं, अकेली नहीं थी, साथमें राजेन्द्र भी थे।"

सुनते ही हरेन्द्रने उसके मुँहकी तरफ देखा, पर कुछ कहा नहीं। इसका तात्पर्य यह था कि तुम्हारे बगैर कहे ही मैंने अन्दाज़ा लगा लिया था। इस बातको मैं नहीं जानूँगा तो और कौन जानेगा कि जहाँ दैवका इतना जबर-

दस्त निग्रह शुरू हो गया है, वहाँके उन अभागोंको छोड़कर वह एक कदम भी इधर-उधर नहीं जा सकता।

आशु बाबूने कहा, "अद्भुत आदमी है यह लड़का। उसे मैंने दो-तीनसे ज्यादा दफे नहीं देखा, उसके बारेमें कुछ जानता भी नहीं, फिर भी ऐसा लगता है कि वह किसी अजीब धातुका बना हुआ है। उसे ले क्यों नहीं आई, सब बातें पूछता। अखबारोंसे तो सब बातें मालूम पड़ती नहीं।"

कमलने कहा, "नहीं। लेकिन उनके आनेमें अब भी देर है।"

"क्यों?"

"मुहल्ला अभी तक पूराका पूरा खतम नहीं हुआ है। उनका प्रण है कि जो लोग अभी बचे हुए हैं उन सबको रवाना किये बगैर वे वहाँसे छुट्टी न लेंगे।"

आशु बाबूने उसके मुँहकी तरफ देखते हुए पूछा, "तो फिर तुम्हें कैसे छुट्टी मिल गई? क्या तुम्हें वहाँ फिर जाना पड़ेगा? मैं मना तो नहीं कर सकता, पर यह तो बड़ी चिन्ताकी बात है कमल!"

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, "चिन्ताकी कोई बात नहीं आशु बाबू, चिन्ता कहाँ नहीं है, बताइए? पर मेरी घड़ीमें जितनी चाबी भरी थी वह खतम हो चुकी, और तब मैं आई हूँ। फिरसे वहाँ जानेका सामर्थ्य मुझमें नहीं है। अब अकेले राजेन्द्र वहाँ रह गये हैं। किसी किसीके शरीर-यन्त्रमें प्रकृति ऐसी अननिबट चाबी भरकर दुनियामें भेज देती है कि न तो वह कभी खतम ही होती है और न वह यंत्र ही कभी बिगड़ता है। राजेन्द्र उन्हींमेंसे एक हैं। शुरू-शुरूमें ऐसा लगा कि इस भयानक मुहल्लेमें वे जीते रहेंगे कैसे? और कितने दिन जीते रहेंगे? वहाँसे जब अकेली चली आई, तो किसी भी तरह मेरी चिन्ता न मिटी, पर अब मुझे कोई डर नहीं है। न जाने कैसे मैं निश्चित समझ गई हूँ कि प्रकृति ही खुद अपनी गर्जसे ऐसोंको जिलाये रखती है। नहीं तो गरीब-दुखियोंके झोपड़ोंमें जब बाढ़की तरह मौत आ घुसती है तब उसकी ध्वंस-लीलाका गवाह कौन रहेगा? आज ही हरेन बाबूसे सब किस्सा कह रही थी। शिवनाथ बाबूके घरसे आखिरी रात जब लज्जासे सिर झुकाये चली आई—"

आशु बाबू यह वृत्तान्त सुन चुके थे, बोले, "इसमें तुम्हारे लिए लज्जाकी क्या बात है कमल? सुना है, उनकी सेवा करनेके लिए ही तुम बिना कहे अपने-आप उनके घर पहुँच गई थीं,—"

कमलने कहा, "लज्जा उस बातकी नहीं आशु बाबू ! लज्जा तो मुझे तब हुई जब मैंने देखा कि उन्हें कोई बीमारी ही नहीं है,—सब ढोंग है,—किसी बहानेसे आप लोगोंकी कृपा पाना ही उनका उद्देश्य था जो सफल न हो पाया। आखिर आपने अपने घरसे उन्हें निकाल ही दिया।—तब मेरा क्या हाल हुआ सो मैं आपको समझा नहीं सकती। जो साथ था उसे भी यह बात जता नहीं सकी,—सिर्फ किसी तरह रातके अन्धकारमें उस दिन चुपचाप वहाँसे निकल आई। रास्तेमें बार बार सिर्फ एक ही बातका खयाल आता रहा कि इस अति क्षुद्र कंगाल आदमीको गुस्सेमें आकर सजा देना न तो धर्म है और न इसमें सम्मान है।"

आशु बाबूने विस्मयापन्न होकर कहा, "कह क्या रही हो कमल ? शिव-नाथकी बीमारी क्या सिर्फ एक बहाना था ? सच नहीं थी ?"

परन्तु जवाब देनेके पहले ही दरवाजेके पास पैरोंकी आहट सुनकर सबने उधर देखा कि नीलिमा आ रही है। उसके हाथमें दूधका कटोरा है। कमलने हाथ उठाकर नमस्कार किया। उसने हाथका कटोरा पलंगके सिरहाने तिपाईपर रखकर प्रतिनमस्कार किया, और यह समझकर कि इन लोगोंकी बातचीतमें उसने बाधा पहुँचाई है, खुद कुछ न बोलकर एक तरफ बैठ गई।

आशु बाबूने कहा, "लेकिन यह तो कमजोरी है कमल ! यह चीज तो तुम्हारे स्वभावके साथ मेल नहीं खाती। मैं बराबर सोचता था कि जो कार्य अनुचित है, जो मिथ्याचार है, उसे तुम माफ नहीं करतीं।"

हरेन्द्रने कहा, "इनके स्वभावका तो मुझे पता नहीं, मगर मोची-मुहल्लेकी मौतें देखकर इनकी धारणा बदल गई है, और यह खबर मुझे इन्हींसे मिली है। पहले इनके मनमें चाहे जो बात रही हो, पर अब किसीके भी खिलाफ शिकायत करनेमें ये नाराज हैं।"

आशु बाबूने कहा, "मगर उसने जो तुम्हारे प्रति इतना बड़ा अत्याचार किया, उसका क्या होगा ?"

कमलने मुँह उठाते ही देखा कि नीलिमा उसकी तरफ एकटक देख रही है। जवाब सुननेके लिए वही मानो सबसे ज्यादा उत्सुक है। नहीं तो, शायद वह चुप ही रहती, हरेन्द्रने जितना कहा है उससे ज्यादा एक शब्द भी नहीं कहती। उसने कहा, "यह प्रश्न मेरे लिए अब असंगत मालूम होता है। सिर्फ इसके लिए कि जो नहीं है, वह क्यों नहीं, आँसू बहानेमें मुझे शरम

आती है; इस बातपर झगड़ा करनेमें, कि जितना वे कर सके उससे ज्यादा उन्होंने क्यों नहीं किया, मेरा सिर झुक जाता है। आप लोगोंसे सिर्फ इतनी प्रार्थना है कि मेरे दुर्भाग्यको लेकर उनसे खींचातानी न करें।" इतना कह उसने मानो सहसा थककर कुरसीकी पीठसे सिर टेक दिया और आँखें मींच लीं।

घरकी नीरवता भंग की नीलिमाने। उसने आँखके इशारेसे दूधका कटोरा दिखाते हुए आहिस्तेसे कहा, "यह जो बिलकुल ही ठंडा हुआ जा रहा है। देखिए, पी सकेंगे या नहीं, नहीं तो फिरसे गरम कर लानेके लिए कह दूँ।"

आशु बाबूने कटोरा मुँहसे लगाकर जरा-सा पीया और फिर रख दिया। नीलिमाने मुँह उठाकर देखा और कहा, "डाल रखनेसे काम नहीं चलेगा, डाक्टरकी व्यवस्था मैं तोड़ने नहीं दूँगी।"

आशु बाबू थके हुए-से होकर मोटे तकियेके सहारे पड़ रहे, बोले, "यह बात तुम्हें भूलनी नहीं चाहिए कि डाक्टरसे भी बड़ा व्यवस्थापक है हमारा अपना शरीर।"

"मैं नहीं भूलती, भूल जाते हैं आप खुद।"

"सो तो मेरी उमरका दोष है नीलिमा, मेरा नहीं।

नीलिमाने हँसते हुए कहा, "सो तो है ही। दोष लादने लायक उमर पानेमें अब भी आपको बहुत बहुत देरी है।—अच्छा, कमलको लेकर हम जरा उस कमरेमें जा रही हैं, गप-शप करेंगी, आप आँखें मींचकर जरा आराम कीजिए।—क्यों? जायँ?"

आशु बाबूकी शायद ऐसी इच्छा नहीं थी, फिर भी उन्हें सम्मति देनी पड़ी; बोले, "मगर एकदम तुम लोग चले मत जाना, बुलानेसे सुन लेना।"

"अच्छी बात है। चलो जी छोटे बाबू, हम लोग बगलवाले कमरेमें चलकर बैठें।" यह कह वह सबको साथ लेकर चली गई। नीलिमाकी बातें स्वभावतः ही मधुर होती हैं, और कहनेके ढंगमें भी ऐसी एक विशिष्टता होती है जो सहज ही दिखाई दे जाती है; परन्तु आजके ये थोड़ेसे शब्द मानो उससे भी बढ़कर आगे निकल गये। हरेन्द्रने उधर ध्यान नहीं दिया, पर कमलने गौर किया। पुरुषकी दृष्टिमें जो नहीं आया, वह पकड़ाई दे गया स्त्रीकी दृष्टिमें। नीलिमा तीमारदारी करने आई है, और यह भी ठीक है कि साधारण लोगोंकी दृष्टिमें इस बीमार आदमीकी तन्दुरुस्तीकी तरफ खास सावधानी रखनेमें कोई

आश्चर्यकी बात नहीं, मगर उन साधारण जनोंमें कमलका शुमार नहीं किया जा सकता। नीलिमाकी इस अत्यन्त सावधानीकी अपूर्व स्निग्धतासे मानो उसे एक अचिन्त्य विस्मयका सामना करना पड़ा। विस्मय सिर्फ एक तरफसे नहीं, बहुत तरफसे हुआ। ऐसे सन्देहको कि सम्पत्तिके मोहने इस विधवाको मुग्ध कर लिया है, कमल अपनी कल्पनामें भी स्थान न दे सकी, क्योंकि नीलिमाका इतना परिचय तो वह पा ही चुकी थी। आशु बाबूके यौवन और रूपका प्रश्न तो इस मामलेमें सिर्फ असंगत ही नहीं बल्कि हास्यकर है। तब फिर इसका पता कहाँ मिलेगा, मन ही मन कमल उसकी खोज करने लगी। इसके अलावा एक पहलू और भी है। वह है आशु बाबूका अपना पहलू। लोगोंका दृढ़ विश्वास था कि इस सरल और सदाशिव भले आदमीके हृदयके नीचेकी गहराईमें पत्नी-प्रेमका आदर्श ऐसी अचंचल निष्ठाके साथ नित्य पूजित होता आ रहा है कि किसी दिन कोई भी प्रलोभन उसपर दाग नहीं लगा सका। जिस दिन मनोरमाकी माकी मृत्यु हुई थी,—उस समय आशु बाबूकी उमर ज्यादा न थी, तबतक यौवन बीता नहीं था,—उसी दिनसे, उस लोकान्तरित पत्नीकी स्मृतिको उखाड़कर नवीनकी प्रतिष्ठा करनेके लिए घरवालों और इष्ट-मित्रोंने प्रयत्न करनेमें कुछ उठा नहीं रक्खा था, मगर फिर भी उस दुर्भेद्य दुर्गका द्वार तोड़नेका कौशल किसीको भी ढूँढ़े नहीं मिला। ये सब बातें कमलने बहुतोंके मुँहसे सुनी थीं। और, दूसरे कमरेमें आकर वह अन्यमनस्क-सी चुपचाप बैठी सिर्फ यही सोचने लगी कि नीलिमाके इस मनोभावका लेशमात्र भी इस आदमीके ध्यानमें आया है या नहीं? अगर आया हो, तो दाम्पत्यके जिस सुकठोर व्रतकी वे अत्याज्य धर्मकी तरह एकाग्र सावधानीके साथ आजीवन रक्षा करते आये हैं, आसक्तिकी इस नव-जाग्रत चेतनासे वह लेशमात्र विक्षुब्ध हुआ है या नहीं?

नौकर चाय-रोटी और फल वगैरह दे गया। अतिथियोंके सामने उन सबको रखती हुई नीलिमा तरह तरहकी बातें करने लगी। आशु बाबूकी बीमारी, उनकी तन्दुरुस्ती, उनकी सहज सज्जनता और बच्चों जैसी सरलताके छोटे-मोटे विवरण, और इसी तरहकी और भी बहुत-सी बातें जो इधर कई दिनोंमें उसकी निगाहसे गुजरी हैं। श्रोताके तौरपर हरेन्द्र स्त्रियोंके लिए लोभकी चीज था; उसके साग्रह-प्रश्नोंके उत्तरमें नीलिमाकी वाक्शक्ति उच्छ्वसित आवेगसे शतमुखी होकर फूट निकली। उसके कहनेकी आन्तरिक-

तासे हरेन्द्र ऐसा मुग्ध हुआ कि उसे फिर ध्यान ही नहीं रहा कि जिस भाभीको उसने अविनाशके घर देखा है वह यही है या नहीं। वह परिणत यौवनका स्निग्ध गाम्भीर्य, वह कौतुकपूर्ण उज्ज्वल परिमित परिहास, वैधव्यकी वह सीमित संयत बातचीत, वह सुपरिचित स्वभाव,—यह सबका सब इन्हीं कई दिनोंमें छोड़-छाड़कर जो आकल्पित वाचालतासे बालिकाकी तरह प्रगल्भ हो उठी है, सो क्या उसकी वही भाभी है?

बातें करते करते नीलिमाकी कमलपर नज़र पड़ी, देखा कि चायके प्यालेमें मुँह लगानेके सिवा उसने और कुछ खाया नहीं है। क्षुण्ण-स्वरमें उसके उलाहना देते ही कमलने हँसते हुए जवाब दिया, "इतनेमें ही मुझे भूल गई क्या?"

"भूल गई? इसके मानी?"

"इसके मानी यही कि मेरे खाने-पीनेकी बात आपको याद नहीं रही है। मैं तो बेवक्त कुछ खाती-पीती नहीं।"

"और हजार अनुरोध करनेपर भी उसमें फर्क नहीं पड़ता।" हरेन्द्रने और पीछेसे जोड़ दिया।

उत्तरमें कमलने वैसे ही हँसते हुए कहा, "यह दर्प तो मैं नहीं करती हरेन्द्र बाबू, कि इस हठमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता, पर हाँ, यह मानती हूँ कि साधारणतः इस नियमका मुझे अभ्यास हो गया है।"

रास्तेमें निकलकर कमलने हरेन्द्रसे पूछा, "अब आप जा कहाँ रहे हैं, बताइए न?"

हरेन्द्रने कहा, "डरिए मत, आपके घर नहीं जाऊँगा, पर जहाँसे आपको लाया हूँ वहाँ न पहुँचा दूँ तो अनुचित होगा।"

तब काफी रात हो चुकी थी, रास्तेमें लोगोंका आना जाना नहींके बराबर था। चलते चलते अकस्मात् अत्यन्त घनिष्ठकी तरह कमलने हरेन्द्रका एक हाथ अपने हाथमें लेते हुए कहा, "चलिए मेरे साथ। उचित-अनुचितका विचार आपका कितना सूक्ष्म हो गया है, परीक्षा दीजिएगा।"

हरेन्द्र मारे संकोचके व्यस्त हो उठा। स्पष्ट देखने लगा कि यह अच्छा नहीं हुआ। इस तरह रास्तेमें चलना खतरेसे खाली नहीं, और अगर कोई परिचित कहींसे सामने आ पड़ा तो शर्मका ठिकाना न रहेगा; परन्तु बगैर कहे हाथ छुड़ा लेनेकी अशोभन कठोरताको भी वह मनमें स्थान न दे सका।

मामला बहुत भद्दा मालूम हुआ और उसे संकटकी अवस्था मान कर ही वह उसके घरके दरवाजेपर जा पहुँचा। जब उसने विदा माँगी तो कमलने कहा, "इतनी जल्दी काहेकी है? आश्रममें अजित बाबूके सिवा तो और कोई है नहीं?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। आज वे भी नहीं हैं, सवेरेकी गाड़ीसे देहली गये है, सम्भवतः कल लौट आयेंगे।"

कमलने पूछा, "जाके खायेंगे क्या? आश्रममें रसोइया रखनेकी तो व्यवस्था है नहीं?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं, हम लोग अपने हाथसे बनाते हैं।"

"अर्थात् आप और अजित बाबू?"

"हाँ। पर आप हँसती क्यों है? निहायत खराब नहीं बनाते हम लोग।"

"अजित बाबू नहीं हैं, इसलिए घर जाकर आपको खुद ही बना कर खाना होगा। मेरे हाथकी खानेमें अगर आपको घृणा न हो तो मेरी बड़ी इच्छा है कि आपका निमंत्रण करूँ। खायेंगे मेरे हाथकी?"

हरेन्द्रने अत्यन्त क्षुण्ण होकर कहा, "यह तो बड़ी बेजा बात है। आप क्या सचमुच ही समझती हैं कि मैं घृणासे नामंजूर कर सकता हूँ?" और वह क्षण-भर चुप रहकर फिर बोला, "आपको यह जतानेमें मैंने कोई कसर नहीं रख छोड़ी है कि जो लोग आपको वास्तवमें श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते हैं, मैं उन्हींमेंसे एक हूँ। मेरी तरफसे आपत्ति सिर्फ इतनी ही है कि बेवक्त मैं आपको तकलीफ नहीं देना चाहता।"

कमलने कहा, "सो आप खुद ही देख लीजिएगा, मुझे कोई खास तकलीफ नहीं होगी। आइए।"

रसोई बनाते हुए कमलने कहा, "मेरी तैयारियाँ बहुत मामूली हैं; लेकिन आश्रममें आप लोगोंका जो कुछ देख आई हूँ उसे भी प्रचुर नहीं कहा जा सकता। लिहाजा, मुझे भरोसा है कि यहाँ अगर खाने-पीनेकी कोई तकलीफ भी हो तो औरोंकी तरह वह आपको असह्य न होगी।"

हरेन्द्रने खुश होकर जवाब दिया, "हमारे यहाँ खाने-पीनेकी व्यवस्था वही है जो आप देख आई हैं। सचमुच ही हम लोग बहुत कष्टके साथ रहते हैं।"

"मगर रहते क्यों हैं? अजित बाबू बड़े आदमी हैं, आपकी अपनी अवस्था भी ऐसी बुरी नहीं,—फिर कष्ट पानेकी तो कोई वजह नहीं?"

हरेन्द्रने कहा, "वजह न हो, जरूरत तो है ही। मेरा विश्वास है कि इस जरूरतको आप भी समझती हैं और इसीलिए आपने अपने सम्बन्धमें भी वही व्यवस्था कर रखी है। लेकिन, अगर कोई बाहरवाला आश्चर्यके साथ आपसे इसका कारण पूछ बैठे तो उसे क्या आप इसका कारण बता सकती हैं?"

कमलने कहा, "बाहरवालोंको भले ही न बता सकूँ, पर भीतरवालेको तो बता ही सकती हूँ। बात यह है कि मैं सचमुच ही बहुत गरीब हूँ, अपने भरण-पोषणके लिए कमानेकी जितनी मुझमें शक्ति है उसमें इससे ज्यादा नहीं किया जा सकता। पिताजी मुझे कुछ भी नहीं दे जा सके, पर वे मुझे दूसरोंके अनुग्रहसे बचनेका यह बीज-मंत्र दे गये हैं।"

हरेन्द्र उसके मुँहकी तरफ चुप चाप देखता रहा। इस विदेशमें कमल कैसी निरुपाय है, वह जानता है। सिर्फ रुपये-पैसेके लिए ही नहीं; समाज, सम्मान, सहानुभूति,—किसी तरफ भी ताकनेके लिए उसके पास कुछ नहीं है। मगर, इस सत्यको भी वह याद बगैर किये न रह सका कि इतनी जबरदस्त निःसहायता भी इस रमणीको लेशमात्र दुर्बल नहीं कर सकी है। आज भी वह किसीसे भीख नहीं माँगती, बल्कि भीख देती है। जो शिवनाथ उसकी इतनी बड़ी दुर्गतिका मूल कारण है, उसे भी दान करने लायक पूँजी अब तक उसकी खतम नहीं हुई। और, हरेन्द्रने शायद साहस और सान्त्वना देनेके अभिप्रायसे ही उससे कहा, "आपके साथ मैं तर्क नहीं करना चाहता कमल, मगर इसके सिवा मैं और कुछ सोच भी नहीं सकता कि हमारी तरह आपकी गरीबी भी वास्तविक नहीं है, एक बार भी आप चाहें तो आपका यह दुःख मरीचिकाकी तरह विला जा सकता है। पर ऐसी इच्छा आपमें नहीं है, कारण, आप भी जानती हैं कि स्वेच्छासे ग्रहण किये हुए दुःखको ऐश्वर्यके समान भोगा जा सकता है।"

कमलने कहा, "हाँ, भोगा जा सकता है। मगर क्यों, आप जानते हैं? क्योंकि वह अनावश्यक दुःख है,—क्योंकि वह दुःखका सिर्फ एक अभिनय है। सभी अभिनयोंमें थोड़ा-बहुत कौतुक रहता है, इसलिए उसका उपभोग करनेमें कोई बाधा भी नहीं।" इतना कहकर वह खुद कौतुकसे हँस पड़ी।

उसका हँसना सहसा न जाने कैसा बेसुरा-सा मालूम पड़ा। इस व्यंगको सुनकर हरेन्द्र क्षण-भर चुप रहा, फिर बोला, "मगर यह तो आप मानती हैं कि बहुतायतके भीतर जीवन तुच्छ होने लगता है, दुःख-दैन्यमेंसे गुजर कर मनुष्यका चरित्र महान् और सत्य हो जाता है।"

कमलने 'स्टोव' परसे कड़ाही उतारकर नीचे रख दी और एक दूसरा बरतन चढ़ाकर कहा, " सत्य बननेके लिए उधर भी तो थोड़ा-बहुत सत्य रहना चाहिए हरेन्द्र बाबू! आप लोग बड़े आदमी है, वास्तवमें आपको कोई कमी नहीं, फिर भी एक छद्म-अभावकी तैयारीमें व्यस्त हैं। और फिर उसमें अजित बाबू भी जा मिले हैं। आपके आश्रमकी फिलासफी मेरी तो कुछ समझमें आती नहीं, पर इतना समझती हूँ कि गरीबीके कष्ट भोगनेकी विडम्बनासे कभी महत्त्वको नहीं पाया जा सकता; हाँ, पाया जा सकता है तो थोड़ेसे दम्भ और अहम्मन्यताको। संस्कारोंसे अन्धे न होकर जरा आँख खोलके आप देखें तो यह चीज स्पष्ट दिखाई दे जायगी। इसके दृष्टान्तके लिए भारत-भ्रमणकी जरूरत न होगी।—पर बहस अभी छोड़िए, रसोई बन चुकी, आप खाने बैठिए।"

हरेन्द्रने हताश होकर कहा, "मुश्किल तो यह है कि भारतवर्षकी फिला-सॅफी समझना आपके बूतेसे बाहरकी बात है। आपकी शिराओंमें म्लेच्छ-रक्त बह रहा है।—हिन्दुओंका आदर्श आपकी दृष्टिमें तमाशा ही मालूम देगा।—दीजिए, क्या बनाया है, खानेको दीजिए।"

"देती हूँ।" कहकर कमलने आसन बिछा दिया। जरा भी नाराज नहीं हुई।

हरेन्द्र उसकी तरफ देखकर सहसा बोल उठा, "अच्छा, मान लीजिए कि कोई अगर वास्तवमें अपना सब कुछ दान कर सचमुचके अभाव और दैन्यमें अपनेको घसीट लाये,—तब तो अभिनय कहकर उसका मजाक नहीं किया जा सकेगा? तब तो—"

कमलने बीचमें ही रोकते हुए कहा, "तब फिर मजाक नहीं,—तब तो सचमुचका पागल मानकर उससे लिए सिर धुन धुन कर रोनेका समय आ जायगा। हरेन्द्र बाबू, कुछ दिन पहले मैं भी कुछ कुछ आप ही जैसा विचार किया करती थी, उपवासके नशेकी तरह मुझे भी उसने मोहित कर रखा था, पर अब वह संशय मेरा जाता रहा है। गरीबी और अभाव इच्छासे आवे या इच्छाके विरुद्ध आवे, उसमें गर्व करने लायक कुछ नहीं होता।

उसके भीतर है शून्यता, उसके भीतर है कमज़ोरी और उसके भीतर है पाप। अभाव मनुष्यको कितना हीन और कितना छोटा बना देता है, सो मैंने अपनी आँखोंसे देखा है इस महामारीमें मोचियोंके मुहल्लेमें जाकर। और भी एक आदमीने यह देखा है, वे हैं आपके मित्र राजेन्द्र। पर उनसे तो कुछ मिलनेका नहीं,—आसामके गहरे जंगलकी तरह क्या क्या वहाँ छिपा हुआ है, कोई नहीं जानता। मैं अकसर सोचा करती हूँ कि आप लोगोंने उन्हींको विदा कर दिया! कहावत है न, मणि फेंककर काँचके टुकड़ेको गिरहमें बाँध लेना,—आप लोगोंने ठीक वही किया है। आपने भीतरसे कहींसे भी निषेध नहीं पाया? आश्चर्य!

हरेन्द्रने उत्तर नहीं दिया, चुप रहा।

आयोजन मामूली था, पर कमलने कैसे जतनसे अतिथिको खिलाया सो कहा नहीं जा सकता। खाने बैठा तो हरेन्द्रको बार बार नीलिमा-भाभीकी याद आने लगी। नारीत्वके शान्त माधुर्य और शुचिताके आदर्शकी दृष्टिसे वह नीलिमासे बढ़कर, और किसीको भी न मानता था। मन ही मन बोला—'शिक्षा, संस्कार, रुचि और प्रवृत्तिके देखे इन दोनोंमें चाहे कितना ही भेद क्यों न हो, पर सेवा और ममतामें दोनों बिलकुल एक-सी हैं। असलमें वे बाहरकी चीजें हैं, इसलिए विषमताका अन्त नहीं और तर्क भी खतम नहीं होता; परन्तु नारीकी जो बिलकुल अपनी चीज है, जो सब तरहके मतामतके घेरेके बाहरकी वस्तु है, नारीके उस गूढ़ अन्तःकरणका रूप देखनेसे आँखें एकदम जुड़ा जाती हैं। नाना कारणोंसे आज हरेन्द्रको भूख न थी, सिर्फ एकको प्रसन्न करनेके लिए ही उसने बूतेसे बाहर खा लिया। कोई एक तरकारी 'बहुत अच्छी लगी है' कहकर उसने उसके बर्तनको बिलकुल साफ कर दिया। बोला, "बहुत बार असमयमें जा जाकर भाभीका मैंने ठीक इसी तरह नाकों दम कर दिया है, कमल!"

"किसका, नीलिमाका?"

"हाँ।"

"उनके नाकमें दम आता था?"

"ज़रूर। पर मानती न थीं।"

कमलने हँसकर कहा, "सिर्फ आपकी ही नहीं, सभी पुरुषोंकी ऐसी मोटी अक्ल हुआ करती है।"

हरेन्द्रने बहसके ढंगपर कहा, "मैंने अपनी आँखोंसे देखा है।"

कमलने कहा, "सो मैं जानती हूँ। और इस आँखों देखनेके घमण्डमें ही आप लोग मरे जा रहे हैं।"

हरेन्द्रने कहा, "घमण्ड आप लोगोंके भी कम नहीं। तब भाभी खाये बिना रह जातीं, उपासी रात बिता देतीं, फिर भी हार नहीं मानतीं।"

कमल चुपचाप उसके मुँहकी तरफ देखती रही। हरेन्द्र कहता रहा, "आप लोगोंके आशीर्वादसे मोटी अक्ल ही हम लोगोंके सदा बनी रहे,— इसीमें ज्यादा फायदा है। आप लोगोंकी सूक्ष्म बुद्धिकी डाहसे उपासे मरना हमें मंजूर नहीं।"

कमलने इस बातका भी कुछ जवाब नहीं दिया। हरेन्द्र बोला, "अबसे मैं आपकी सूक्ष्म बुद्धिकी भी बीच-बीचमें परीक्षा लिया करूँगा।"

कमलने कहा, "सो आप नहीं ले सकेंगे, गरीब होनेसे आपको मुझपर दया आ जायगी।"

सुनकर हरेन्द्र पहले तो लज्जित-सा हुआ, फिर बोला, "देखिए, इस बातका जवाब देनेमें ज़बान रुकती है। क्यों, जानती हैं? जिसे राज-रानी होना शोभता, उसे यह कंगालपना अच्छा नहीं मालूम देता। मालूम होता है, आपकी गरीबी दुनियाकी तमाम अमीर स्त्रियोंका मज़ाक उड़ा रही है।"

बात तीरकी तरह कमलके कलेजेमें जा लगी। हरेन्द्र कुछ और कहना चाहता था कि कमलने उसे रोकते हुए कहा, "आप जीम चुके हों तो उठिए। उस कमरेमें जाकर सारी रात गप्प सुनूँगी, तब तक इस कमरेका काम खतम कर लूँ।"

थोड़ी देर बाद सोनेके कमरेमें आकर कमलने कहा, "आज आपकी भाभीका सारा इतिहास वगैरे सुने आपको छोड़ूँगी नहीं, चाहे कितनी ही रात क्यों न हो जाय। सुनाइएगा?"

हरेन्द्र संकटमें पड़ गया, बोला, "भाभीकी सारी बातें तो मैं जानता नहीं। उनके साथ पहली जान-पहचान मेरी इसी आगरेमें हुई थी अविनाश-भइयाके घर। वास्तवमें उनके सम्बन्धमें मुझे लगभग कुछ भी नहीं मालूम। जो कुछ यहाँके लोग जानते हैं, उतना ही मैं जानता हूँ। सिर्फ एक बात शायद संसारमें सबसे ज्यादा जानता हूँ, और वह है उनकी अकलंक शुभ्रता। जब उनके पति मरे थे तब उनकी उमर थी उन्नीस-बीस सालकी। भाभीने उन्हें

सर्वान्तःकरणसे पाया था। वह स्मृति अबतक पुछी नहीं है और न कभी पुछ ही सकती है,—जीवनके अन्तिम दिन तक वह अक्षय बनी रहेगी। पुरुषोंमें जब आशु बाबूकी बात उठती है—मैं मानता हूँ, उनकी निष्ठा भी असाधारण है—लेकिन—"

"हरेन्द्र बाबू, रात बहुत हो गई है, अब तो आपका घर जाना हो नहीं सकता,—इसी कमरेमें आपके लिए बिस्तर कर दूँ?"

हरेन्द्रने आश्चर्यसे पूछा, "इसी कमरेमें? और आप?"

कमलने कहा, "मैं भी यही सोऊँगी। और तो कोई कमरा है नहीं।"

हरेन्द्र मारे शरमके पीला पड़ गया। कमलने हँसते हुए कहा, "आप ब्रह्मचारी जो हैं। आपको भी क्या डरनेका कोई कारण हो सकता है?"

हरेन्द्र स्तब्ध होकर एकटक उसके चेहरेकी तरफ देखता रह गया। यह कैसा प्रस्ताव है, उससे कल्पना करते भी न बना। स्त्री होकर उसके मुँहसे यह बात निकली कैसे?

उसकी हदसे ज्यादा विह्वलताने कमलको धक्का दिया। उसने कुछ क्षण चुप रहकर कहा, "मेरी ही गलती हुई, हरेन्द्र बाबू, अपने घर जाइए। इसी कारण आपकी असीम श्रद्धाकी पात्री नीलिमाको आश्रममें जगह नहीं मिली, जगह मिली तो आशु बाबूके घरमें। सूने घरमें अनात्मीय नर-नारीका सिर्फ एक ही सम्बन्ध आपको मालूम है,—पुरुषके निकट औरत सिर्फ औरत ही है, उसके बारेमें इससे ज्यादह कोई खबर आपतक आजतक नहीं पहुँची।—ब्रह्मचारी हो जानेपर भी नहीं। जाइए, अब देर न कीजिए, आश्रम जाइए।" इतना कहकर वह खुद ही बाहरके अँधेरे बरण्डेमें जाकर अदृश्य हो गई।

हरेन्द्र मूढकी तरह दो तीन मिनट खड़ा रहा, फिर धीरे धीरे नीचे उतर गया।

२०

लगभग एक महीना बीत गया। आगरेमें इन्फ्लुएञ्जाकी विकराल महामारीका रूप शान्त हो गया है; कहीं कहीं दो-एक नये आक्रमण होनेकी बात सुनी तो जाती है, पर वे ऐसे खतरनाक रूपमें नहीं होते। कमल घरमें बैठी सिलाईका काम कर रही थी, इतनेमें हरेन्द्र आ गया। उसके हाथमें एक पोटली थी, उसे पास ही जमीनपर रखते हुए बोला, "आपकी मेहनत देख-

कर तकाजा करनेमें शरम लगती है। मगर आदमी भी ऐसे वेहया हैं कि भेट होते ही पूछते हैं, 'बन गया ?' मैं साफ साफ जवाब दे देता हूँ कि अभी बहुत देर है। बहुत जरूरी हो तो कहिए, कपड़ा वापस ला दूँ। मगर मज़ेकी बात तो यह है कि आपके हाथकी चीज़ जिसने एक बार बरती वह और कहीं सिलाना नहीं चाहता। यह देखिए न, लालाजीके घरसे उनका नौकर फिर गरद रेशमका थान और नमूनेका कुरता दे गया है,—"

कमलने सिलाईपरसे आँख उठाकर कहा, "ले क्यों लिया ?"

"लिया क्या यों ही ? कह दिया है कि छह महीनेसे पहले नहीं होगा,— उसपर भी राजी हो गया। बोला, छह महीने बाद तो मिल जायगा ? कोई हर्ज नहीं। यह देखिए न, सिलाईके रुपये तक हाथपर रख गया है।" कहते हुए जेबमेंसे उसने एक नोटमें मुड़े हुए रुपये निकाल कर कमलके सामने पटक दिये।

कमलने कहा, "इतना ज्यादा काम आता रहा तो, मैं देखती हूँ, मुझे आदमी रखना पड़ेगा।" फिर उसने पोटली खोलकर पुराना पंजाबी कुरता उठाकर देखा और कहा; "किसी बडी दुकानका सिला हुआ मालूम होता है,—बड़े कारीगरका काम है,—मुझसे तो ऐसा सीते न बनेगा। कीमती कपड़ा है, खराब हो जायगा, इसे वापस दे दीजिएगा।"

हरेन्द्रने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "आपसे बढ़कर कारीगर और भी है क्या कोई ?"

"यहाँ न हो, कलकत्तेमें तो है। वहीं भेज देनेको कहिए।"

"नहीं नहीं, सो नहीं होगा। आपसे जैसा बने वैसा बना दीजिए, उसीसे काम चल जायगा।"

"बनेगा नहीं हरेन्द्र बाबू, बनता तो बना देती।" कहकर वह अकस्मात् हँस पड़ी, बोली, "अजित बाबू बड़े आदमी हैं और शौकीन-मिजाज ठहरे; ऐसा वैसा बना देनेसे उनसे पहना कैसे जायगा ? व्यर्थमें कपड़ा खराब करनेसे कोई फायदा नहीं, आप वापस ले जाइए।"

हरेन्द्रको अत्यन्त आश्चर्य हुआ, उसने कहा, "कैसे जाना कि यह अजित बाबूका है ?"

कमलने कहा, "मैं ज्योतिष जो जानती हूँ। गरद-रेशमका थान, पेशगी रुपया और फिर छह महीने बाद मिले तो भी कोई हर्ज नहीं !—यहाँके लाला

लोग ऐसे मूर्ख नहीं होते हरेन्द्र बाबू। उनसे कह दीजिएगा कि उनका कुरता बनाने लायक योग्यता मुझमें नहीं है, मैं तो सिर्फ गरीबोंके सस्ते दामके कपड़े ही सीं जानती हूँ। यह नहीं सीं सकती।"

हरेन्द्र संकटमें पड़ गया। अन्तमें बोला, "उनकी बड़ी इच्छा है कि आपके हाथका सिला हुआ कुरता पहनें। लेकिन, आप कहीं जान न जायें, और यह न समझ बैठें कि हम लोग किसी तरह आपकी सहायता करनेकी कोशिश कर रहे हैं, इससे मैं बहुत दिनोंसे इसे ला नहीं रहा था। उनसे कहा था कि कम दामका कोई मामूली कपड़ा दें। पर वे राजी नहीं हुए। बोले, यह कोई मेरी रोज़की पहननेकी मिरजई थोड़े ही है। यह तो कमलके हाथकी सिली हुई चीज है जो सिर्फ किसी विशेष पर्वके दिन पहननेके काम आयेगी, और रख छोड़ी जायगी। इस संसारमें उनसे बढ़कर आपपर शायद कोई दूसरा श्रद्धा करता हो।"

कमलने कहा, "कुछ दिन पहले उनके मुँहसे शायद ठीक इससे उलटी बात ही बहुतोंने सुनी होगी। ठीक है कि नहीं? जरा कोशिश करें तो शायद आपको भी स्मरण हो सकता है। जरा याद कर देखिए न?"

कुछ ही दिन पहलेकी बात थी, हरेन्द्रको सब याद था। वह कुछ लज्जित-सा होकर बोला, "झूठ नहीं है; मगर ऐसी धारणा तो एक दिन बहुतोंकी थी। शायद अकेले आशु बाबूकी भले ही न हो; लेकिन उन्हें भी एक दिन विचलित होते देखा गया है। खुद मुझको ही देखिए न,—आज तो कोई प्रमाण पेश करनेकी जरूरत नहीं, पर उस दिनकी कसौटीपर आज भी अगर मेरी भक्ति-श्रद्धाकी जाँच करने लगें तो बताइए मैं कहाँ खड़ा हो सकूँगा?"

कमलने पूछा, "राजेन्द्रका पता लगा?"

हरेन्द्रने समझ लिया कि यह हृदय-सम्बन्धी आलोचना, पहलेकी तरह, आज फिर स्थगित रही। उसने कहा, "नहीं, अब तक तो नहीं लगा। उम्मीद है कि कहींसे आ खड़ा होगा तो लग जायगा।"

कमलने कहा, "सो तो मैं जानना चाहती नहीं, मैंने तो आपसे सिर्फ इतना ही पता लगानेको कहा था कि वह पुलिसका मेहमान हुआ है या नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "सो तो पता लगा लिया। फिलहाल उसके हाथसे तो बचा हुआ है।"

सुनकर कमल निश्चिन्त तो नहीं हो सकी, पर उसे कुछ तसल्ली जरूर हुई। पूछा, "वे कहाँ गये हैं और कब गये हैं, मोचियोंके मुहल्लेमें जरा जा करके क्या उनका पता नहीं लगाया जा सकता?—हरेन्द्र बाबू, उनके प्रति आपको स्नेह कितना है सो मैं जानती हूँ, इस बारेमें पूछना ज्यादती होगी; पर इधर कई दिनोंसे मेरी ऐसी दशा हो गई है कि इसके सिवा और कुछ सोच ही नहीं सकती।" इतना कहकर उसने ऐसी व्याकुल दृष्टिसे हरेन्द्रकी ओर देखा कि वह विस्मित हो गया। पर दूसरे ही क्षण वह आँख नीची करके पहलेकी तरह अपने सिलाईके काममें लग गई।

हरेन्द्र चुपचाप खड़ा रहा। खड़े खड़े उसके मनमें एक एक करके कई प्रश्न उठते रहे और कुतूहल भी होता रहा,—मुँहसे शब्दोंने भी निकलना चाहा, पर उसने अपनेको हर बार सम्हाल लिया। किसी तरह वह तय नहीं कर पाया कि इस पूछनेका नतीजा क्या होगा। इस तरह पाँच-सात मिनट बीत जानेपर कमलने खुद ही बात की। सिलाईको एक तरफ रखकर समाप्तिकी एक साँस लेकर उसने कहा, "रहने दो, अब नहीं करती।" मुँह ऊपर उठाते ही आश्चर्यके साथ बोली, "यह क्या? खड़े क्यों हैं? कुर्सी खींचकर बैठा भी नहीं गया आपसे?"

"बैठनेको तो कहा नहीं आपने।"

"अच्छे रहे! कहा नहीं, सो बैठेंगे भी नहीं?"

"नहीं, बगैर कहे बैठना उचित नहीं।"

"मगर खड़े रहनेके लिए भी तो मैंने नहीं कहा, फिर खड़े क्यों हैं?"

"ऐसा अगर आप कहती हैं तो मेरा न खड़ा होना ही उचित था। अपना कसूर मंजूर करता हूँ।"

सुनके कमल हँस दी। बोली, "तो मैं भी अपना कसूर मान लेती हूँ। अब तक अन्यमनस्क रहना मेरा अपराध है। अब बैठिए।"

हरेन्द्र कुरसी खींचकर उसपर बैठ गया। कमल सहसा जरा गम्भीर हो गई। एक बार कुछ सोचा, फिर बोली, "देखिए हरेन्द्र बाबू, मैं जानती हूँ और आप भी जानते हैं कि असलमें इसके अन्दर कुछ है नहीं। फिर भी बात खटकती ही है। यह जो मैं बैठनेके लिए कहना भूल गई,—जो आदर अतिथिको देना चाहिए था वह नहीं दिया,—हजार घनिष्ठताके होते हुए भी इस त्रुटिपर आपकी निगाह पड़ ही गई।—नहीं नहीं, आप नाराज हुए हैं,

सो मैं नहीं कहती,—मगर फिर भी न जाने क्यों मनमें कुछ लगता ही है। मनुष्यका यह संस्कार जानेपर भी नहीं जाना चाहता, कहीं न कहीं थोड़ा-बहुत रह ही जाता है।—क्यों, ठीक है न?"

हरेन्द्र इसका मतलब न समझ सका, आश्चर्यके साथ उसके मुँहकी तरफ देखता रह गया। कमल कहने लगी, "इससे संसारमें न जाने कितना अनर्थ हो रहा है और मज़ा यह कि इसीको लोग सबसे ज्यादा भूलते हैं। क्यों, है न यही बात?"

हरेन्द्रने पूछा, "यह सब आप मुझसे कह रही हैं, या अपने आपसे? अगर मेरे लिए हो तो जरा और खुलासा करके कहिए। यह पहेली मेरे मगजमें घुस नहीं रही है?"

कमल हँसने लगी, बोली, "है तो पहेली ही। सीधा-सरल रास्ता होता है, मालूम ही नहीं होता कि विपत्ति आँखें लाल कर रही है। चलते चलते ठोकर लगती है और उँगलीमेंसे खून निकलने लगता है, तब कहीं जाकर होश आता है कि और जरा देखकर चलना चाहिए था। क्यों, है न यही बात?"

हरेन्द्रने कहा, "रास्तेके बारेमें तो यह ठीक है। कमसे कम आगरेके रास्तोंपर तो जरा होश सम्हालकर ही चलना अच्छा,—ऐसी दुर्घटनाएँ आश्रमके लड़कोंपर प्रायः घटती हैं। मगर पहेली ही रह गई, भीतरी मतलब तो कुछ समझमें नहीं आया?"

कमलने कहा, "उसका कोइ चारा नहीं हरेन्द्र बाबू। बता देनेसे ही सभी बातोंका मतलब समझमें नहीं आ जाता। मुझको ही देखिए न, मुझे तो किसीने बताया नहीं, फिर भी मतलब समझनेमें मुझे कोई अड़चन नहीं हुई।"

हरेन्द्रने कहा, "इसके मानी यह हैं कि आप भाग्यवती हैं और मैं अभागा। या तो ऐसी भाषामें कहिए कि साधारण आदमीके दिमागमें भी घुस जाय या फिर रहने दीजिए, कुछ मत बोलिए। चीनी आतिशबाजीकी तरह, जितना इसे खोलना चाहता हूँ उतनी ही यह उलझती जा रही है। अज्ञात अज्ञेय विरोधसे शुरू होकर वक्तव्य अब कहाँ आकर रुका है, इसका ओर-छोर नहीं मिला। ये सब बातें क्या आप राजेन्द्रकी याद करके कह रही हैं? उसे मैं भी तो जानता हूँ, सहल बना करके कहें तो शायद कुछ कुछ समझ भी सकूँ। नहीं तो, फिर इस तरह एक स्वप्नमग्न आदमीकी वक्तृता सुनते सुनते मुझे अपनी बुद्धिपर विश्वास ही न रह जायगा।"

कमल हँसते मुँहसे बोली, " किसकी बुद्धिपर? मेरीपर या अपनीपर ?"

" दोनोंकी ही ।"

कमलने कहा, " सिर्फ राजेन्द्रकी ही नहीं । मालूम नहीं क्यों, सवेरेसे आज मुझे सभीकी याद आ रही है । आशु बाबू, मनोरमा, अक्षय, अविनाश, नीलिमा, शिवनाथ,—यहाँतक कि अपने पिताजीकी—"

हरेन्द्रने टोका, " इस तरह नहीं चल सकता । आप फिर गम्भीर होती जा रही हैं। आपके माता-पिता स्वर्ग गये हैं, उनको इस मामलेमें घसीटना मुझसे नहीं सहा जायगा । हाँ, जो ज़िन्दा हैं उनकी बात कीजिए । आप राजेन्द्रकी बात कहना चाहती थीं,—उसीकी कहिए, मै सुनूँ । वह मेरा मित्र है, उसे मैं जानता हूँ, पहचानता हूँ, प्यार भी करता हूँ,—मेरा विश्वास कीजिए, मैं चाहे आश्रम चलाता होऊँ या और कुछ करता होऊँ, आपको धोखा नहीं दूँगा । ससारमें और लोगोंकी तरह मैं भी प्रेमकी कहानी सुनना पसन्द करता हूँ ।"

कमलकी गम्भीरता सहसा हँसीमें परिणत हो गई, उसने पूछा, " सिर्फ दूसरोंकी ही सुनना पसन्द करते हैं ? उससे आगे कुछ नहीं चाहते ?"

हरेन्द्रने कहा, " नहीं । मैं ब्रह्मचारियोंका पण्डा हूँ, अक्षयका दल सुन लेगा तो मुझे खा ही जायगा ।"

सुनकर कमल फिर हँस पड़ी, बोली, " नहीं, वे नहीं खायेंगे । मैं उसका उपाय कर दूँगी ।"

हरेन्द्रने सिर हिलाते हुए कहा, " आप नहीं कर सकेंगी । आश्रम तोड़कर भाग जानेपर भी मेरा छुटकारा नहीं है । अक्षयने एक बार जब कि मुझे पहचान लिया है, तब जहाँ भी मैं जाऊँगा वहाँ मुझे वह सन्मार्गपर लगाये ही रखेगा । इससे अच्छा यह है कि आप अपनी ही बात कहें । राजेन्द्रको आप अपने मनसे किसी तरह भुला ही नहीं सकतीं,—उसकी बातके सिवाय और कोई बात सोच ही नहीं सकतीं, तो फिर वहींसे शुरू कीजिए । किस तरह उस अभागे छोकरेको आप इतना चाहने लगी हैं, यह सुननेकी मुझे बड़ी साध है !"

कमलने कहा, "ठीक यही प्रश्न मैं बार बार अपनेसे भी कर रही हूँ ।"

" कुछ पता नहीं पा रहीं ?"

" नहीं ।"

"पानेकी बात भी नहीं, और मुझे विश्वास भी नहीं होता कि यह सच है।"

"क्यों, विश्वास क्यों नहीं होता ?"

"खैर, छोड़िए इस बातको। शायद एक बार मैं कह भी चुका हूँ कि इससे भी अच्छे 'कैण्डिडेट' (उम्मीदवार) मौजूद हैं। आखिरी निर्णय करनेके पहले उनके 'केसों' (दरख्वास्तों) पर भी जरा नजर डाल देखिएगा। यही प्रार्थना है।"

"मगर केसोंपर केवल अनुमानके आधारपर तो विचार किया नहीं जा सकता हरेन्द्र बाबू, बाकायदा गवाह और प्रमाणोंकी जरूरत होती है। सो कौन हाजिर करेगा ?"

"वे खुद ही करेंगे। गवाह और सुबूतके लिए वे तैयार हैं, पुकार होते ही हाजिर हो जायँगे।"

कमलने कुछ जवाब नहीं दिया, ऊपर मुँह उठाकर देखा और हँस दी। उसके बाद पूरे और अधूरे सींये कपड़ोंकी एक एक करके ठीकसे घड़ी की, उन्हें एक बेतकी टोकनीमें जचाकर रख दिया और उठके खड़ी हो गई। बोली, "आपका शायद चाय पीनेका वक्त हो गया हरेन्द्र बाबू, जरा-सी चाय बनाकर ले आऊँ, आप बैठिए।"

हरेन्द्रने कहा, "बैठा तो हूँ ही। लेकिन आप तो जानती हैं, चाय पीनेके लिए मुझे कोई वक्त-बेवक्त नहीं। मिले तो पी लेता हूँ, न मिले तो कोई बात नहीं। इसके लिए आपको तकलीफ उठानेकी जरूरत नहीं। एक बात आपसे पूछूँ ?"

"खुशीसे।"

"बहुत दिनोंसे आप किसीके यहाँ गई नहीं,—सो क्या जान-बूझकर जाना बन्द कर दिया है ?"

कमलको आश्चर्य हुआ, बोली, "नहीं तो। मुझे इसका कुछ खयाल ही नहीं।"

"तो फिर चलिए न, आज जरा आशु बाबूके मकान तक घूम आवें। वे सचमुच ही बहुत खुश होंगे। जब वे बीमार थे तब एक बार आप गई थीं, अब तो वे अच्छे हो गये हैं। सिर्फ डाक्टरने मना कर दिया है कि वे बाहर नहीं निकलें। नहीं तो शायद वे किसी दिन खुद ही यहाँ आ उपस्थित होते।"

कमलने कहा, "वे न आवें तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। जाना तो

मुझे ही चाहिए था, लेकिन कामके झंझटसे जा नहीं सकी। बड़ी गलती हो गई।"

"तो आज ही चलिए न?"

"चलिए। मगर शाम होने दीजिए। आप बैठिए, चटसे एक प्याला चाय बनाये लाती हूँ।" इतना कहकर वह बाहर चली गई।

शामके झुटपुटेमें दोनों घरसे निकल पड़े। रास्तेमें हरेन्द्रने कहा, "जरा दिन रहते चलते तो अच्छा रहता।"

"कमलने कहा, "नहीं, जान-पहचानका शायद कोई देख लेता।"

"भले देख लेता। इन सब बातोंकी अब मैं परवाह नहीं करता।"

"पर मैं तो करती हूँ।"

हरेन्द्रने समझा कि मजाक किया जा रहा है, वह बोला, "लेकिन जान-पहचानवाले ही अगर सुनेंगे कि आप मेरे साथ अकेली निकलनेमें आजकल संकोच करने लगी हैं, तो वे क्या सोचेंगे?"

"शायद यही सोचेंगे कि मैंने मज़ाक किया होगा।"

"मगर आपको जो पहचानता है वह क्या और कुछ सोच सकता है? बताइए?"

अबकी बार कमल चुप रही।

जवाब न पाकर हरेन्द्रने कहा, "आज आपको क्या हो गया है, मालूम नहीं, सब कुछ दुर्बोध्य हो रहा है।"

कमलने कहा, "जो समझनेका नहीं है उसे न समझना ही अच्छा है। राजेन्द्रको भूलना चाहकर भी भूलती नहीं। इसका सबसे ज्यादा भान होता है आपके आनेपर। उसके लिए आश्रममें स्थान नहीं हुआ,—हालाँ कि किसी पेड़के नीचे पड़े रहनेसे भी उसका काम चल जाता, सिर्फ मैंने ही वहाँ रहने नहीं दिया और आदरके साथ बुला लाई। मेरे घर आया,—कहींसे भी उसके मनको कोई रुकावट नहीं आई। हवा और प्रकाशकी तरह उसके आनेपर भी सब दिशाएँ खुली रहीं; पुरुषका मानो एक नया परिचय मिला। यह सोचनेको मुझे समय ही नहीं मिला कि यह अच्छा है या बुरा,—शायद समझनेमें देर भी लगे।"

हरेन्द्रने कहा, "यह बड़ी भारी सान्त्वना है।"

"सान्त्वना क्यों है?"

" सो नहीं मालूम । "

फिर कोई भी कुछ नहीं बोला, दोनों ही न जाने कैसे अन्यमनस्क-से बने रहे।

हरेन्द्रने शायद जान-बूझकर ही जरा घुमावका रास्ता अख्तियार किया था। जब वे आशु बाबूके घर पहुँचे तब शाम बीते बहुत देर हो चुकी थी। भीतर जानेके लिए खबर देनेकी जरूरत न थी, पर पाँच-छह दिनसे हरेन्द्र आ नहीं सका था इसलिए नौकरको सामने पाकर बोला, " बाबू साहबकी तबीयत अच्छी है ? "

उसने नमस्कार करके कहा, " जी हाँ, अच्छी है । "

" अपने कमरेमें ही हैं क्या ? "

" नहीं, ऊपरके सामनेवाले कमरेमें सबके साथ बैठे बातें कर रहे हैं । "

जीनेपर चढ़ते चढ़ते कमलने पूछा, " ' सब ' कौन ? "

हरेन्द्रने कहा, " भाभी तो हैं ही, और भी शायद कोई होगा,—मालूम नहीं । "

परदा हटाकर भीतर घुसते ही दोनोंको जरा आश्चर्य हुआ। एसेन्स और चुरटकी तेज़ गन्धने एक साथ मिलकर कमरेकी हवाको भारी कर दिया था। नीलिमा मौजूद नहीं थी, आशु बाबू बड़ी आराम-कुरसीके हथेलोंपर पैर फैलाये चुरट पी रहे थे और पास ही सोफेपर सीधी बैठी एक अपरिचित महिला बातें कर रही थी। कमरेकी आब-हवाकी तरह ही उसके मुँहका भाव भी तेज़ था। बंगालिन थी, पर बंगला बोलनेकी उसमें रुचि नहीं थी, और शायद आदत भी न हो। हरेन्द्र और कमलने कमरेमे कदम रखते ही सुन लिया कि वह अनर्गल अँगरेजी बोल रही है।

आशु बाबूने मुँह उठाकर देखा। कमलपर निगाह पड़ते ही उनका सारा चेहरा आनन्दसे उज्ज्वल हो उठा। शायद एक बार उठके बैठनेकी भी कोशिश की, पर सहसा बैठा नहीं गया। मुँहका चुरट फेंककर बोले, " आओ कमल, आओ। " और अपरिचिता रमणीको निर्दिष्ट करके बोले, " ये मेरी एक रिश्तेदार हैं। परसों आई हैं, सम्भव है इन्हें कुछ दिन यहाँ रख भी सकूँ। "

जरा ठहरकर फिर बोले, " बेला, ये कमल हैं। मेरी लड़कीकी तरह। "

दोनोंने दोनोंके लिए हाथ उठाकर नमस्कार लिया।

हरेन्द्रने कहा, "और मैं ?"

"ओ हो, तुम तो रह ही गये ! ये हरेन्द्र हैं, प्रोफेसर अक्षयके परम मित्र। बाकी परिचय यथासमय होता रहेगा,—चिन्ताकी कोई बात नहीं हरेन्द्र।" और कमलको इशारेसे पास बुलाते हुए बोले, "यहाँ मेरे पास आओ कमल, तुम्हारा हाथ लेकर कुछ देर चुप बैठा रहूँ। इसके लिए कई दिनोंसे मेरा जी तड़फड़ा रहा है।"

कमल हँसती हुई उनके पास जाकर बैठ गई और दोनों हाथ बढ़ाकर उसने उनके मोटे भारी हाथको अपनी गोदमें रख लिया।

आशु बाबूने पूछा, "खा-पीकर आई हो क्या ?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

आशु बाबूने छोटी-सी एक साँस लेकर कहा, "पूछनेसे फायदा ही क्या ? यहाँ तुम्हें खिला तो सकता नहीं !"

कमल चुप रही।

२१

बेलाके मुँहकी तरफ देखकर आशु बाबू जरा हँसे और बोले, "क्यों, वर्णन मेरा मिल तो गया ? इसे बुढापेकी 'एकस्ट्रावेगन्स' (बुढ़भस) कहकर मजाक उड़ाना तो तुम्हारा ठीक नहीं हुआ, अब तो मान गई ?"

महिला चुप रहीं। आशु बाबू कमलका हाथ हिलाने-डुलाने लगे और बोले, "इस लड़कीको बाहरसे देखकर जैसा आश्चर्य होता है, भीतरसे देखकर वैसे ही दंग रह जाना होता है। क्यों हरेन्द्र, ठीक है न ?"

हरेन्द्र चुप रहा; कमलने हँसते हुए जवाब दिया—"ठीक है कि नहीं, इसमें सन्देह है; लेकिन किसीने अगर बुढ़ापेकी 'एकस्ट्रावेगन्स' कहके आपके कामोंका मजाक किया हो तो इतना तो बखटके कहा जा सकता है कि वह ठीक नहीं है। मात्रा-ज्ञान आपका इस दुनियामें अचल है।"

"ओह, ऐसा है !" आशु बाबूने गम्भीर स्नेहके स्वरमें कहा, "जानता हूँ कि इस घरमें मैं तुम्हें खिला-पिला कुछ भी न सकूँगा, पर यह तो बताओ अपने घर तुमने क्या क्या खाया है ?"

"जो रोज खाया करती हूँ वही।"

"फिर भी, सुनूँ तो सही ? बेला सोच रही थी कि यह भी मैंने बढ़ा-चढ़ाके कहा है।"

कमलने कहा, "यानी मेरे विषयमें मेरी अनुपस्थितिमें बहुत-कुछ चर्चा हो चुकी है?"

"सो तो हुई है,—अस्वीकार नहीं करूँगा।" इतनेमें चाँदीकी रकाबीमें एक छोटा कार्ड लिये हुए बेहरा आ गया। उसकी लिखावटपर सबकी निगाहें पड़ गईं और सभीको आश्चर्य हुआ। इस घरमें अजित एक दिन घरके लड़केकी तरह था पर अब आगरेमें रहते हुए भी वह नहीं आता और शायद यही स्वाभाविक है। इस न आनेकी लज्जा और संकोचके द्वारा दोनों तरफसे ऐसा एक व्यवधान उठ खड़ा हुआ है कि उसके इस अप्रत्याशित आगमनसे सिर्फ आशु बाबू ही नहीं, उपस्थित सभी जरा चौंक-से पड़े। आशु बाबूके चेहरेपर उद्वेगकी एक गहरी छाप पड़ गई,—बोले, "उन्हें इसी कमरेमें ले आ।"

थोड़ी देर बाद अजित आ पहुँचा। एक साथ इतने परिचित और अपरिचित जनोंकी उपस्थितिकी संभावनाका विचार या आशंका उसने नहीं की थी।

आशु बाबूने कहा, "बैठो अजित। अच्छे तो हो?"

अजितने सिर हिलाते हुए कहा, "जी हाँ। आपकी तबीयत अब कैसी है? अब तो अच्छी मालूम होती है?"

आशु बाबूने कहा, "बीमारी तो अच्छी हो गई मालूम होती है।

परस्परका कुशल-प्रश्नोत्तर यहीं खतम हो गया। कमल न होती तो शायद और भी दो-एक बातें हो सकती थीं, परंतु चार आँखें होनेके डरसे अजितने उधर कमलकी ओर आँख उठाकर देखनेका साहस ही नहीं किया। दो-तीन मिनट तक सब लोग चुप रहे। हरेन्द्र सबसे पहले बोला, पूछा, "यहाँ आप क्या अभी सीधे घरसे ही आ रहे हैं?"

कुछ बोलनेका मौका पाकर अजितके जीमें जी आ गया। बोला, "नहीं, ठीक सीधा नहीं आ रहा हूँ, आपको खोजते हुए जरा घूम-फिरकर आ रहा हूँ।"

"मुझे खोजते हुए? क्या काम है?"

"काम मेरा नहीं, और एक सज्जनका है। वे राजेन्द्रकी खोजमें दो पहरसे शायद चार बार आ चुके। उनसे बैठनेके लिए कहा था, पर वे राजी नहीं हुए। स्थिरतासे बैठकर प्रतीक्षा करना शायद उनको सहन नहीं है।"

हरेन्द्रने शंकित होकर पूछा, "था कौन? देखनेमें कैसा था? कह क्यों नहीं दिया कि यहाँ नहीं है?"

अजितने कहा, " यह खबर तो उन्हें दे चुका हूँ। पर शायद उन्होंने विश्वास नहीं किया।"

हरेन्द्रका चेहरा उद्विग्नतासे भर उठा, वह उठ खड़ा हुआ और कमलको घर पहुँचानेका भार आशु बाबूपर छोड़कर चल दिया। उसके चले जानेपर आशु बाबूने कहा, " कमल, इस लड़के राजेन्द्रको मैंने दो-तीन बारसे ज्यादा नहीं देखा,—बिना किसी संकटमें पड़े उसके दर्शन ही नहीं होते, पर ऐसा लगता है कि उससे मैं काफी स्नेह करने लगा हूँ। मालूम नहीं, कौन-सी महामूल्य वस्तु वह अपने साथ लिये फिरता है और मज़ा यह है कि हरेन्द्रके मुँहसे सुना करता हूँ कि वह बिलकुल 'वाइल्ड' (=बेअदब—अव्यवस्थित) है; पुलिस उसे सन्देहकी दृष्टिसे देखती है। डर रहता है, न जाने कब क्या उपद्रव खड़ा कर बैठे और शायद उसकी खबर भी न मिले। यही देखो न, किसीको पता ही नहीं लग रहा है कि अचानक कहाँ गायब हो गया।"

कमल पूछ बैठी, " अचानक अगर मालूम हो कि वे संकटमें पड़ गये हैं, तो आप क्या करें?"

आशु बाबूने कहा, " क्या करूँ, सो जवाब तो सिर्फ तभी दिया जा सकता है, अभी नहीं। बीमारीके दिनोंमें नीलिमाने और मैंने उसके बहुत-से किस्से हरेन्द्रके मुँहसे सुने हैं। दूसरोंके लिए सचमुच ही अपने आपको किस तरह विलीन कर दिया जा सकता है,—समर्पित किया जा सकता है,—सुनते सुनते मानो उसकी तसवीर-सी खिंच जाती थी सामने। भगवानसे प्रार्थना है कि उसपर कभी कोई आफत-बिपत न आवे।"

ऊपरसे किसीने कुछ नहीं कहा, पर मन ही मन शायद सभीने इस प्रार्थनामें साथ दिया।

कमलने पूछा, " नीलिमाको आज देख नहीं रही हूँ? शायद काममें व्यस्त होंगी?"

आशु बाबूने कहा, " काम-काजी ठहरीं, दिन-रात काम-धन्धेमें ही लगी रहती हैं, मगर आज सुना है कि सिर-दर्दसे बिस्तरपर पड़ी हैं। तबीयत शायद कुछ ज्यादा खराब है। नहीं तो पड़े रहनेका उनका स्वभाव नहीं। अपनी आँखोंसे देखे बगैर विश्वास नहीं किया जा सकता कि कोई आदमी लगातार इतनी सेवा,—इतना परिश्रम कर सकता है।"

फिर क्षण-भर चुप रहकर कहा, " अविनाशके साथ मेरी जान-पहचान

आगरेमें हुई। बीच-बीचमें जाता आता रहा हूँ। कितना-सा परिचय है! फिर भी आज सोचता हूँ कि संसारमें अपने परायेका जो व्यवहार चल रहा है, वह कितना अर्थहीन है! दुनियामें अपना-पराया कोई नहीं। कमल, यह कोई नहीं जानता कि संसारके इस महासमुद्रके बहावमें पड़कर कौन कहाँसे बहता हुआ पास आ जाता है और कौन बहकर दूर चला जाता है।"

सिर्फ उस अपरिचित स्त्री बेलाके सिवा दोनों ही समझ गये कि यह बात किसको लक्ष्य करके और किस दुःखसे कही गई है। आशु बाबू कुछ कुछ मानो अपने मन ही मन कहने लगे, "इस बीमारीसे उठनेके बादसे संसारकी बहुत-सी चीजें मानों कुछ दूसरी ही तरहकी नजर आने लगी हैं। ऐसा लगता है कि क्यों इतनी खींचातानी. बाँधा-बाँधी और इतना भले-बुरेका वाद-विवाद किया जाता है? क्यों मनुष्य अपने चारों तरफ बहुत-सी भूलों और बहुतसे धोखोंको जमा करके स्वेच्छासे अन्धा बन रहा है? अब भी उसे बहुत युगोंका अज्ञात सत्य ढूँढ़ निकालना होगा, तब कहीं वह सच्चे अर्थोंमें मनुष्य हो सकेगा! आनन्द तो नहीं, बल्कि निरानन्द ही मानो उसकी इस सभ्यता और भद्रताका अन्तिम लक्ष्य बन गया है।"

कमल आश्चर्यसे उनकी तरफ देखती रही। यह बात नहीं कि उनकी बातका मतलब वह विना किसी संशयके समझ रही हो। उसे ठीक ऐसा लगता था जैसे कि कुहरेके बीच किसी आगंतुकका चेहरा अस्पष्ट-सा दीखता हो; मगर पैरोंकी चाल बिलकुल परिचित हो।

आशु बाबू खुद ही रुके। शायद कमलकी विस्मित दृष्टिने उन्हें अपनी तरफसे चेता दिया, "तुम्हारे साथ मुझे और भी बहुत-सी बातें करना हैं कमल, किसी दिन फिर आना।"

"आऊँगी। आज जाती हूँ।"

"अच्छा। गाड़ी नीचे खड़ी है, तुम्हें वह पहुँचा देगा,—इसीसे वासुदेवको छुट्टी नहीं दी है। अजित, तुम भी साथ क्यों नहीं चले जाते, लौटते वक्त तुम्हें आश्रममें उतारता आयेगा?"

दोनों नमस्कार करके बाहर निकल आये। बेला साथ साथ गाड़ी तक आइ, बोली, "आपके साथ बातचीत करनेका आज वक्त नहीं रहा, मगर अबकी जिस रोज आयेंगी, मैं नहीं छोड़ूँगी।"

कमलने हँसकर सिर हिलाते हुए कहा, "यह मेरा सौभाग्य है। लेकिन डर लगता है, परिचय पाकर कहीं आपका मत न बदल जाय ?"

मोटरमें दोनों जनें पास-पास बैठे। चौराहेसे मुड़ते वक्त कमलने कहा, "उस दिनकी रात भी ऐसी ही अँधेरी थी,—याद है ?"

"हाँ, याद है।"

"और उस दिनका पागलपन ?"

"सो भी याद है।"

"मैं राजी हो गई थी, सो याद है ?"

अजितने हँसकर कहा, "नहीं। मगर आपने जो व्यंग किया था सो याद है।"

कमलने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "व्यंग किया था ? नहीं तो !"

"जरूर किया था।"

कमलने कहा," तो आपने गलत समझा था। खैर, उसे छोड़िए, आज तो व्यंग नहीं कर रही ?—चलिए न, आज ही दोनों जनें चल दें ?"

"धुत्। आप बड़ी शरीर हैं।"

कमलने हँसकर कहा, "शरीर कैसी ? बताइए, मेरे जैसी शान्त सीधी स्त्री कहाँ मिलेगी ? अचानक हुक्म किया, कमल, चलो चलें, और मैं उसी वक्त राजी होकर बोली, चलिए।"

"लेकिन वह तो सिर्फ मज़ाक था।"

कमलने कहा, "अच्छा, मज़ाक ही सही, लेकिन बताइए, अचानक ऐसा क्या कसूर हो गया जो 'तुम' छोड़कर अब 'आप' कहना शुरू कर दिया है ? कितनी मुसीबतसे दिन काट रही हूँ भला ?—आप ही लोगोंके कपड़े सीं-सींकर किसी तरह पेट चला रही हूँ,—और आपके पास रुपयोंका शुमार नहीं,—पर एक दिन भी आपने मेरी सुधि ली ? मनोरमा ऐसी तकलीफमें पड़तीं तो क्या आपसे रहा जाता ? देखिए, दिन-रात मेहनत-मजदूरी कर करके कितनी दुबली हो गई हूँ ?" इतना कहकर जैसे ही उसने अपना बायाँ हाथ अजितके हाथपर रखा वैसे ही अजित चौंक पड़ा और उसका सारा शरीर सिहर उठा। अस्फुट स्वरमें उसके मुँहसे कुछ निकला ही चाहता था कि कमल सहसा अपना हाथ उठाकर चिल्ला उठी, "ड्राइवर, रोको रोको, यहाँ पागलखानेके पास कहाँ आ पड़े ? गाड़ी घुमा लो। अँधेरेमें कुछ खयाल ही नहीं रहा।"

अजितने कहा, " हाँ, कुसूर अँधेरेका ही है। तसल्ली सिर्फ एक यही है कि चाहे उसपर हजार अन्याय होता रहे, पर बेचारा प्रतिवाद नहीं कर सकता। इस अधिकारसे वह वंचित है। " और वह हँस दिया। सुनकर कमल भी हँस दी, बोली, " सो तो ठीक है। लेकिन न्याय-विचार ही संसारमें सब कुछ नहीं है। यहाँ अन्याय-अविचारके लिए भी स्थान है, इसीसे आज तक दुनिया चल रही है, नहीं तो न जाने वह कबकी रुक गई होती।—ड्राइवर, रोको। "

अजितने दरवाजा खोल दिया। कमल सड़कपर उतर कर बोली, "अँधेरेका इससे भी बढ़कर एक और अपराध है अजित बाबू, उसमें अकेले जानेमें डर मालूम होता है। "

इस इशारेपर अजित नीचे उतर कर पास जा खड़ा हुआ। कमलने ड्रायवरसे कहा, " अब तुम घर जाओ, इन्हें जानेमें अभी कुछ देर होगी। "

" सो कैसे! इतनी रातमें मुझे गाड़ी कहाँसे मिलेगी? "

" उसका इन्तजाम मैं कर दूँगी। "

गाड़ी चली गई। अजित बोला, " मुझे मालूम है, कोई भी इन्तजाम न होगा। मुझे अँधेरेमें तीन-चार मील पैदल चलकर ही जाना पड़ेगा। और अभी मैं आपको पहुँचाकर आसानीसे घर जा सकता था। "

" नहीं जा सकते थे। कारण, बगैर खिलाये-पिलाये मैं आपको उस आश्रमकी अनिश्चिततामें नहीं भेज सकती। चलिए, आइए। "

घरपर नौकरानी आज बत्ती जलाये बाट देख रही थी, पुकारते ही उसने दरवाजा खोल दिया। ऊपर रसोईघरमें जाकर कमलने उसी सुन्दर आसनको बिछाते हुए अजितसे बैठनेके लिए कहा। सामान सब तैयार था, स्टोव जलाकर कमलने रसोई चढ़ा दी, और पास ही बैठकर बोली, " ऐसे ही और एक दिनकी बात याद है? "

" जरूर। "

" अच्छा, उस दिनके साथ आज कहाँ क्या फर्क है, बता सकते हैं? बताइए तो देखें? "

अजित कमरेमें इधर उधर देखकर याद करनेकी कोशिश करने लगा कि कहाँ क्या था।

कमलने हँसते हुए कहा, " उधर रात भर ढूँढ़के भी न बता सकेंगे किसी दूसरी ही तरफ देखना पड़ेगा। "

" किधर, बताइए तो ? "

" मेरी तरफ । "

अजित सहसा मारे शरमके संकुचित-सा हो गया । आहिस्तेसे बोला, " एक दिन भी मैंने आपका मुँह अच्छी तरह नहीं देखा । और सब देखा करते थे, पर मालूम नहीं क्यों, मुझसे देखते नहीं बनता था । "

कमलने कहा, " औरोंके साथ आपमें यही तो फर्क है । वे जो देख सके उसका कारण यह था कि उनकी दृष्टिमें मेरे प्रति सम्मानका भाव नहीं था।"

अजित चुप रहा । कमल कहने लगी, " मैंने तय किया था कि जैसे भी होगा आपको खोज निकालूँगी । मुझे आशा नहीं थी कि आशु बाबूके घर आज आपसे भेंट हो जायगी, पर संयोगसे जब भेंट हो गई तब जान लिया कि पकड़ ही लाऊँगी । भोजन कराना तो महज एक छोटा-सा उपलक्ष्य है, इसलिए भोजन कर चुकनेपर भी छुट्टी नहीं मिलेगी । आज रातको मैं आपको कहीं भी न जाने दूँगी, इसी घरमें बन्द कर रखूँगी । "

" पर इससे आपको फायदा क्या होगा ? "

कमलने कहा, " फायदेकी बात पीछे बताऊँगी, पर आप मुझसे ' आप ' कहते हैं, तो सचमुच ही मुझे व्यथा होती है । एक दिन ' तुम ' कहके बोलते थे,—उस दिन मैंने निहोरा नहीं किया था, आपने ही इच्छासे कहा था । आज उसे बदल देने लायक कोई भी कुसूर मैंने नहीं किया है । रूठकर अगर ऊतर न दूँ तो आप ही कष्ट पायेंगे । "

अजितने सिर हिलाकर कहा, " हाँ, शायद पाऊँगा । "

कमलने कहा, " 'शायद' नहीं, निश्चयसे पायेंगे । आप आगरे आये थे मनोरमाके लिए । पर वह जब इस तरह चली गई तब सबने सोचा कि अब आप एक क्षण-भी यहाँ नहीं ठहरेंगे । सिर्फ एक मैं ही जानती थी कि आप नहीं जा सकेंगे ।—अच्छा, इस बातपर कि मैं आपको प्यार करती हूँ, आप विश्वास करते हैं ? "

" नहीं, नहीं करता । "

" जरूर करते हैं । इसीसे आपके खिलाफ मेरी बहुत-सी नालिशें हैं । "

अजितने कुतूहलके साथ कहा, "बहुत-सी नालिशें ? एकआध सुनाओगी भी?"

कमलने कहा, " सुनाऊँगी, इसीलिए तो मैंने जाने नहीं दिया । पहले अपनी बात कहती हूँ । और कोई चारा नहीं, इससे गरीबोंके कपड़े सींकर

अपनी गुजर करती हूँ,—यह सब मुझे सह्य है। पर इसलिए कि संकटमें पड़ी हूँ, यह कैसे सहा जा सकता है कि आपके भी कुरते सींकर दाम लूँ ? "

" पर तुम किसीका दान तो लेतीं नहीं हो ! "

" नहीं, दान मैं किसीका नहीं लेती,—यहाँतक कि आपका भी नहीं। लेकिन दानके सिवा क्या संसारमें और देनेका कोई रास्ता खुला ही नहीं ? आपने आकर जोर देकर क्यों नहीं कहा, कि कमल, यह काम मैं तुम्हें नहीं करने दूँगा। मैं उसका क्या जवाब देती ? दुर्दैवसे आज अगर मेरी मेहनत-मजूरी करके खानेकी शक्ति जाती रहे तो फिर आपके जीते-जी क्या मैं दर दर भीख माँगती फिरूँगी ? "

इस दर्दभरी बातने अजितको व्याकुल कर दिया, उसने कहा, " यह नहीं हो सकता कमल, मेरे जीते जी यह असम्भव है। तुम्हारे विषयमें मैंने एक दिन भी इस तरह नहीं सोचा। अब भी मानो मनमें यह बात बैठती नहीं कि जिस कमलको हम सब जानते हैं, वही तुम हो। "

कमलने कहा, " और लोग चाहे जो जानते रहें, पर आप क्या उन्हींमेंसे एक हैं ? उनसे ज्यादा कुछ नहीं ? "

इस प्रश्नका उत्तर नहीं मिला। शायद अत्यन्त कठिन होनेके कारण, और इसके बाद दोनों चुप हो रहे। शायद, दोनोंने यह अनुभव किया कि दूसरेसे पूछनेकी अपेक्षा यह बात अपनेसे ही पूछनेकी ज्यादा जरूरत है।

कितना-सा राँधना था ! तैयार होनेमें देर न लगी। खाते खाते अजितने गम्भीर होकर कहा, " फिर भी, मजा यह है कि पास चाहे कितना ही रुपया क्यों न हो तुम्हारी कमाईका अन्न हाथ पसारके खाये बगैर किसीको छुटकारा नहीं मिलता, और तुम न किसीका लेती न किसीका खाती हो,—कोई सिर पटक कर मर जाय, तो भी नहीं। "

कमलने हँसकर कहा, " आप खाते ही क्यों हैं ? इसके अलावा आपने सिर भी कब पटका है ? "

अजितने कहा, " सिर पटकनेकी इच्छा बहुत बार हुई है। और तुम्हारा खाता इसलिए हूँ कि जबरदस्तीमें तुमसे जीत नहीं पाता। आज मैं अगर कहूँ कि कमल, आजसे मैंने तुम्हारा सारा भार अपने ऊपर ले लिया, यह उञ्छ-वृत्ति अब मत करो, तो सम्भव है कि तुम कोई ऐसी कड़वी बात कह बैठो कि मेरे मुँहसे फिर दूसरा कोई वाक्य ही न निकले।

कमलने कहा, "यह बात क्या कही थी कभी आपने ?"

"शायद कही थी।"

"और मैंने सुनी नहीं वह बात ?"

"नहीं।"

"तो आपने सुनने लायक तरीकेसे नहीं कही। शायद, मन ही मन सिर्फ इच्छा ही की,—मुँहसे वह जाहिर नहीं हुई।"

"अच्छा, मान लीजिए, आज ही अगर कहूँ ?"

"और मैं भी अगर कहूँ कि नहीं ?"

अजितने हाथका कौर नीचे रखते हुए कहा, "यही तो मुश्किल है। तुम्हें एक दिनके लिए भी हम लोग समझ नहीं सके। जिस दिन ताजमहलके सामने पहले पहल देखा था, उस दिन भी जैसे आपकी बातें समझमें नहीं आई, वैसे ही आज भी हम लोगोंके लिए आप 'रहस्य' ही बनी हुई हैं। अभी अभी तुमने कहा था कि मेरा भार सम्हाल लो और अभीकी अभी कह रही हो 'नहीं!'"

कमल हँस दी, बोली, "ऐसी 'नहीं' जरा आप भी कह देखिए न ? कहिए कि आज तो खाया है, फिर कभी न खाएँगे,—देखूँ कैसे आपकी बात रहती है !"

अजितने कहा, "रहेगी कैसे ? बगैरे खिलाये तुम तो छोड़ोगी नहीं।"

परन्तु अबकी बार कमल नहीं हँसी। शान्त भावसे बोली, "आपके लिए मेरा भार उठानेका समय अभी नहीं आया। जिस दिन आयेगा उस दिन मेरे मुँहसे भी 'ना' नहीं निकलेगा। रात बढ़ती जा रही है, आप खा लीजिए।"

"खाता हूँ। वह दिन कभी आयेगा या नहीं, बता सकती हो ?"

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, "सो मैं नहीं बता सकती। जवाब आपको खुद ही एक दिन खोज लेना पड़ेगा।"

"इतनी शक्ति मुझमें नहीं है। एक दिन बहुत खोजा था, पर मिला नहीं। इसी आशासे कि जवाब तुम्हींसे मिलेगा, मैं हाथ पसारे बैठा रहूँगा।"

इसके बाद वह चुपचाप खाने लगा। थोड़ी देर बाद कमलने पूछा, "इस घरके होते हुए भी आप अचानक हरेन्द्रके आश्रममें रहने क्यों पहुँचे ?"

अजितने कहा, "कहीं न कहीं तो पहुँचना ही था। तुम खुद ही जानती हो, आगरा छोड़कर मैं कहीं जा नहीं सकता था।"

"तो जानती हूँ न?"

"हाँ, जानती तो हो ही।"

"और यही अगर सच हो, तो सीधे मेरे पास क्यों न चले आये?"

"अगर आता, तो सचमुच ही जगह देतीं?"

"सचमुच तो आये नहीं? खैर, इसे छोड़िए, पर हरेन्द्रके आश्रममें तो असुविधाओंका ओर-छोर नहीं,—वही उनकी साधना ठहरी,—मगर इतनी असुविधाएँ आप कैसे सह लेते हैं?"

"मालूम नहीं, कैसे सह लेता हूँ, पर आज मुझे उन सब बातोंका मनमें खयाल भी नहीं आता। अब तो मैं उन्हींमेंसे एक हो गया हूँ। हो सकता है कि यही मेरा भविष्यका जीवन हो। अब तक चुप भी नहीं बैठा था। आदमी भेजकर जगह जगह आश्रम कायम करनेकी कोशिश करता रहा हूँ—तीन-चार जगहसे उम्मीद भी मिली है,—जी चाहता है, एक बार खुद जाके घूम आऊँ।"

"यह सलाह आपको दी किसने? हरेन्द्रने शायद?"

अजितने कहा, "अगर दी भी हो तो निष्पाप होकर ही दी है। देशका सर्वनाश जिन लोगोंने अपनी आँखोंसे देखा है,—दारिद्र्यका निष्ठुर दुःख, धर्महीनताकी गहरी ग्लानि, कमजोरीसे उत्पन्न दयनीय भीरुता—"

कमल बीचमें ही बोल उठी, "हरेन्द्रने यह सब देखा होगा, मैं इनकार नहीं करती, पर आपके निकट तो ये सब सुनी हुई बातें हैं। अपनी आँखों तो आपको कभी कुछ देखनेका मौका मिला नहीं?"

"पर बातें तो ये सब ठीक हैं?"

"सच नहीं है, सो मैं नहीं कहती, पर उसके प्रतीकारका उपाय क्या इन आश्रमोंकी प्रतिष्ठा है?"

"नहीं क्यों? भारतवर्षके मानी सिर्फ उत्तरमें हिमालय और तीनों ओर समुद्रसे घिरा हुआ थोड़ा-सा भूखण्ड ही तो नहीं? यहाँकी प्राचीन सभ्यता, यहाँकी धार्मिक विशिष्टता, यहाँकी नैतिक पवित्रता, न्याय-निष्ठाकी महिमा,—यही तो भारत है। इसीसे इसका नाम है देवभूमि, इसे अत्यन्त हीन दशासे बचानेके लिए तपस्याके सिवा और क्या मार्ग है? ब्रह्मचर्य-व्रतधारी निष्कलंक बच्चोंके लिए जीवनमें सार्थक होने और धन्य होनेके—"

कमलने उसे रोक दिया, बोल उठी, " आप जीम चुके हों तो हाथ-मुँह धोकर उठिए, उस कमरेमें चलिए—उठिए, अब नहीं । "

" तुम नहीं खाओगी ? "

" मै क्या दोनों वक्त खाती हूँ जो खाऊँगी ? चलिए । "

" पर मुझे तो आश्रम वापस जाना है । "

" नहीं, नहीं जाना है, उस कमरेमें चलिए । बहुत-सी बातें आपसे मुझे सुननी हैं । "

" अच्छा, चलो । लेकिन बाहर रहनेका हमारा नियम नहीं है,—कितनी ही रात क्यों न हो, आश्रममें वापस जाना ही पड़ेगा । "

कमलने कहा, " वह नियम दीक्षित आश्रमवासियोंके लिए है, आपके लिए नहीं । "

" मगर लोग क्या कहेंगे ? "

इस उल्लेखसे, कि लोग क्या कहते हैं, कमलका धैर्य छूट जाता है। उसने कहा, " लोग सिर्फ आपकी निन्दा ही करेंगे, रक्षा नहीं कर सकते । जो रक्षा कर सकेगी उसके निकट आपको कोई डर नहीं ।—आपके ' उन लोगों ' से मैं कहीं ज्यादा आपकी अपनी हूँ । उस दिन आपने साथ चलनेको कहा था, पर मैं जा नहीं सकी,—आज बगैर चले मेरा काम नहीं चलेगा । चलिए उस कमरेमें, मुझसे कोई डर नहीं । मैं उनकी जातिकी नहीं हूँ जो पुरुषके भोगकी ही वस्तु हैं । उठिए । "

उस कमरेमें ले जाकर कमलने अजितके लिए बिलकुल नये कपड़ोंसे पलंगपर सुन्दर बिस्तर कर दिये और अपने लिए जमीनपर मामूली-सा बिछौना कर लिया । फिर उठकर बाहर जाते हुए उसने कहा, " मैं अभी आती हूँ। दसेक मिनट लगेंगे, मगर आप सो मत जाइएगा । "

" नहीं । "

" नहीं तो मैं झकझोरकर जगा दूँगी ! "

" उसकी जरूरत न होगी कमल, नींद मेरी आँखोंसे उड़ गई है । "

" अच्छा, उसकी परीक्षा हो जायगी " कहकर वह कमरेसे बाहर चली गई । रसोईके बर्तन यथास्थान उठाके रखना, जूठे बरतन बरण्डेमें धरना, नौकरानी बहुत देरकी चली गई है, इससे नीचेके किवाड़ बन्द करना,—घर-गृहस्थीके ऐसे ही सब छोटे-मोटे काम जो बाकी थे उन्हें पूरा किया, तब जाके कहीं उसकी छुट्टी हुई ।

सूने कमरेमें कमलके हाथसे बड़े जतनसे बिछाई शुभ्र-सुन्दर शय्यापर बैठकर सहसा उसने एक गहरी साँस ली। इसका खास कोई गहरा कारण नहीं था, सिर्फ मनके अन्दर 'अच्छा लगने' की एक तृप्ति थी। हो सकता है कि उसमें थोड़ा-सा कुतूहल भी मिला हुआ हो, पर आग्रहका उत्ताप नहीं था। मालूम होता था कि मानो एक शान्त आनन्दका मधुर स्पर्श चुपकेसे उसके सारे शरीरमें फैल गया है।

अजित धनाढ्य-घरकी सन्तान है, जन्मसे विलासके अन्दर ही वह इतना बड़ा हुआ है; परन्तु हरेन्द्रके ब्रह्मचर्य-आश्रममें भरती होनेके बादसे गरीबी और आत्म-निग्रहके दुर्गम मार्गसे भारतीय वैशिष्ट्यकी मर्मोपलब्धिकी एकाग्र साधनाने उधरसे उसकी दृष्टि हटा दी है। सहसा उसकी नजर तकियेपर पड़ी, देखा कि उसकी खोलीपर चारों तरफ पीले सूतसे छोटे चन्द्रमल्लिकाके फूल कढ़े हुए हैं। बिछौनेकी चादरका जो कोना नीचे लटक रहा है उसपर सफेद रेशमसे कढ़ी हुई किसी अज्ञात लताकी तसवीर बनी हुई है। जरा-सी कारीगरी थी,—मामूली-सी बात, जो न जाने और कितने आदमियोंके घर होगी। फुरसतके वक्त कमलने इसे अपने हाथसे काढा है। देखकर अजित मुग्ध हो गया। हाथसे उसे हिला-डुला रहा था कि कमल बाहरका काम निबटाकर कमरेमें आ खड़ी हुई। अजित उसके चेहरेकी तरफ देखकर बोल उठा, "वाह, बहुत सुन्दर है!"

कमलने आश्चर्यके स्वरमें कहा, "क्या सुन्दर है? यह बेल?"

"हाँ, और यह पीले रंगके फूल। तुमने अपने हाथसे काढ़े हैं, न?"

कमलने हँसते हुए कहा, "खूब पूछा। अपने हाथसे नहीं काढ़ती तो क्या बाजारसे कारीगर बुलाकर तैयार कराती? आपको चाहिए ऐसा?"

"नहीं, नहीं, मुझे नहीं चाहिए। मैं क्या करूँगा?"

उसके इस आकुल और सलज्ज इन्कारसे कमल हँस पड़ी, बोली, "आश्रममें जाकर इसपर सोइएगा और कोई पूछे तो कहिएगा कमलने रात-भर जागकर इसे बना दिया है।"

"धुत्!"

"धुत् क्यों? ये सब चीजें कोई अपने लिए थोड़े ही बनाता है, दूसरे ही किसी आदमीके लिए बनाई जाती हैं। तकलीफ झेलकर जो ये फूल काढ़े थे सो क्या अपने सोनेके लिए? एक न एक दिन कोई न कोई आता ही, उसीके

लिए ये चीजें उठाके रख दी थीं। सबेरे जब आप जाने लगेंगे तब ये आपके साथ रख दूँगी।"

अबकी बार अजित भी हँस दिया, बोला, "अच्छा कमल, तुमने क्या मुझे बिलकुल ही मूर्ख समझ रक्खा है?"

"क्यों?"

"क्या इस बातपर भी मैं विश्वास कर लूँ कि तुमने मेरी ही याद करके ये सब चीजें तैयार की थीं?"

"क्यों नहीं करेंगे?"

"इसलिए कि बात सच नहीं है।"

"पर अगर कहूँ कि मैं सच कह रही हूँ, तो विश्वास करेंगे, कहिए?"

"जरूर करूँगा। मगर तुम्हारे मज़ाककी कोई हद नहीं,—कहीं भी तुम्हें हिचकिचाहट नहीं होती। उस दिनकी मोटरपर घूमनेकी बात याद आते ही लज्जाकी हद नहीं रहती। वह बात दूसरी है, पर इसका मुझे भरोसा है कि मज़ाकके सिवाय और किसी बातके लिए तुम झूठ नहीं बोलोगी।"

"अगर मैं कहूँ कि वास्तवमें मैंने मज़ाक नहीं किया, बिलकुल सच कह रही हूँ, तो विश्वास करेंगे?"

"जरूर करूँगा।"

कमलने कहा, "अगर करें तो आज मैं आपसे सच्ची बात ही कहूँगी। तब तक राजेन्द्र नहीं आया था, अर्थात्, आश्रमसे निकलकर तब तक उसने मेरे यहाँ आश्रय नहीं लिया था। मेरी भी वही दशा थी। आप लोगोंने मिलकर जब मुझे घृणासे दूर कर दिया,—इस परदेशमें जब किसीके पास जाकर खड़े होनेका उपाय नहीं रहा, तबका ही,—उन गंभीर दुःखके दिनोंका ही यह काम है। शायद मुझे कभी मालूम भी न होता कि उस दिन ठीक किसकी याद करके ये फूल काढे थे।—लगभग भूल ही चुकी थी, मगर आज बिस्तर बिछाते वक्त अचानक ऐसा लगा कि नहीं नहीं, उसपर नहीं,—जिसपर कोई किसी दिन सो चुका है उसपर मैं आपको हर्गिज नहीं सुला सकती।"

"क्यों नहीं सुला सकती?"

"मालूम नहीं क्यों, जैसे कोई धक्का देकर वह बात कह गया हो।" कहकर वह क्षण-भर मौन रही और फिर बोली, "उसी समय सहसा इन चीजोंकी याद आई कि ये बकसमें रखी हैं। आप तब बाहर हाथ-मुँह धो रहे

थे। इस डरसे कि आप झटसे आ पहुँचेंगे, मैंने जल्दी जल्दी इन्हें निकालकर बिछाना शुरू कर दिया। तब मेरे जीमें पहले-पहल यह खयाल आया कि उस दिन जिसकी याद करके रात-भर जागकर यह फूल-पत्ती वेलें काढ़ी थीं वह आप ही थे।"

अजित कुछ बोला नहीं। सिर्फ एक रंगीन आभा उसके चेहरेपर दिखाई दी और उसी क्षण विलीन हो गई।

कमल खुद भी कुछ देर चुप रही, फिर बोली, "चुप मारे क्या सोच रहे हैं, बताइए न!"

अजितने कहा, "सिर्फ चुप ही मारे हूँ, कुछ सोच नहीं रहा हूँ।"

"इसकी वजह?"

"वजह! तुम्हारी बातें सुनकर मेरी छातीके भीतर मानो आँधी-सी उठ खड़ी हुई है। सिर्फ आँधी ही,—न तो आया आनन्द और न बँधी आशा ही।"

कमल चुपचाप उसकी तरफ देखा की। अजित धीरे धीरे कहने लगा, "कमल, एक किस्सा कहता हूँ, सुनो। मेरी माको एक बार हमारे गृह-देवता राधावल्लभजीने पूजावाले कमरेमें मूर्ति धारण करके दर्शन दिये और माके हाथसे भोग लेकर सामने बैठकर खाया। यह उनकी अपनी आँखों देखी बात थी, फिर भी घरमें हम लोगोंमेंसे कोई उसपर विश्वास नहीं कर सका। सबने समझा कि सुपना होगा, मगर हमारे इस अविश्वासका दुःख उन्हें मरते दम तक बना रहा। आज तुम्हारी बात सुनकर मुझे वही बात याद आ रही है। मैं जानता हूँ कि तुम हँसी नहीं कर रही हो, मगर फिर भी, मेरी माकी तरह तुमसे भी कहीं बड़ी भारी गलती हो गई है। मनुष्यके जीवनमें ऐसा बहुत-सा समय चला जाता है जब वह अपने सम्बन्धमें अँधेरेमें रहता है। फिर शायद सहसा एकदिन आँख खुलती है। मेरा भी वही हाल है। यों तो मैं अब तक दुनियामें और भी बहुत जगह घूमता रहा हूँ, लेकिन सिर्फ इस आगरेमें आकर ही मैंने ठीकसे अपनेको पहचाना है। मेरे पास है तो सिर्फ रुपया है और वह भी पिताकी कमाईका। इसके सिवा ऐसी कोई भी चीज मेरी अपनी नहीं, जिसके लिए तुम मेरी गैर जानकारीमें मुझसे प्रेम कर सकतीं।"

कमलने कहा, "रुपयोंकी कोई फिकर न कीजिए आप। आश्रम-वासियोंको जब कि एक मरतबा उसका पता चल गया है तब उसकी सब व्यवस्था वे ही कर डालेंगे।" कहते कहते वह जरा हँसी और फिर बोली, "लेकिन

और सब तरफसे आप ऐसे निःस्व हैं सो इसकी खबर मैंने क्या पहले खाक पाई थी? अगर पाई होती तो क्या कभी प्रेम करने आती? इसके सिवा आपके स्वभावकी भलाई-बुराई समझनेका वक्त ही कहाँ मिला था मुझे? मनमें सिर्फ एक सन्देह था जिसका पता नहीं चल रहा था, पर अभी अभी दसेक मिनट हुए, अकेली बिस्तरके सामने खड़ी थी कि अकस्मात् कोई ठीक खबर मेरे कानमें आकर सुना गया।"

अजितने गहरे आश्चर्यके साथ पूछा, "सच कह रही हो? सिर्फ दसेक मिनट हुए? पर अगर सच हो तो यह पागलपन है!"

कमलने कहा, "पागलपन तो है ही। इसीसे तो आपसे कहा था कि मुझे और कहीं ले चलिए। ऐसी भीख तो मैंने माँगी नहीं कि ब्याह करके मेरे साथ घर-गृहस्थी कीजिए।"

अजित अत्यन्त कुण्ठित हो गया, बोला, "भीख क्यों कहती हो कमल, यह भीख माँगना नहीं है, यह तुम्हारा प्रेमका अधिकार है। मगर अधिकारका दावा तुमने नहीं किया, माँगी ऐसी चीज जो पानीके बुदबुदेकी तरह अल्पायु है, और उसीकी तरह मिथ्या।"

कमलने कहा, "हो भी सकता है कि उसकी आयु कम हो, मगर इससे वह मिथ्या क्यों होगी? आयुकी दीर्घताको ही जो सत्य समझकर जकड़े रहना चाहते हैं, मैं उनमेंसे नहीं हूँ।"

"पर इस आनन्दमें तो कुछ भी स्थायित्व नहीं, कमल!"

"न रहे। लेकिन जो लोग, इस डरसे कि असली फूल जल्दीसे सूख जाते हैं, देरतक रहनेवाले नकली फूलोंका गुच्छा बनाते और फूलदानीमें सजाकर रखते हैं, उनके साथ मेरे मतका मेल नहीं खाता। आपसे पहले भी मैंने एक बार ठीक यही बात कही थी कि किसी भी आनन्दमें स्थायित्व नहीं है। स्थायी हैं सिर्फ उस आनन्दके क्षणस्थायी दिन और वे दिन ही तो मानव-जीवनके चरम संचय हैं। उस आनन्दको बाँधने चले कि वह मरा। इसीसे ब्याहमें स्थायित्व तो है, पर उसका आनन्द नहीं। दुःसह स्थायित्वकी मोटी रस्सी गलेमें बाँधकर वह आनन्द आत्महत्या करके मर मिटता है।"

अजितको याद आया कि ठीक यही बात उसने पहले भी कमलके मुँहसे सुनी थी। सिर्फ मुँहकी बात ही नहीं है यह,—यही उसके अन्तःकरणका विश्वास है। शिवनाथने उससे ब्याह नहीं किया था, किन्तु धोखा दिया था,

इस बातको लेकर एक दिनके लिए भी उसने कोई शिकायत नहीं की। क्यों नहीं की? आज यह पहले पहल अजितने बिना किसी संशयके समझा कि इस धोखेमें कमलकी अपनी भी राय थी। संसार-भरकी मानव-जातिके इस प्राचीन और पवित्र संस्कारके प्रति इतनी जबरदस्त अवज्ञाके कारण अजितका मन धिक्कारसे भर उठा।

क्षणभर मौन रहकर वह बोला, "तुम्हारे सामने गर्व करना मुझे शोभा नहीं देता। पर तुमसे अब मैं कोई बात छिपाऊँगा नहीं। ये लोग कहते हैं कि संसारमें कामिनी काञ्चनका त्याग ही पुरुषका सबसे बड़ा पुरुषार्थ है। बुद्धिकी तरफसे मैं इसपर विश्वास करता हूँ और यह भी मानता हूँ कि इस साधनामें सिद्धि प्राप्त करनेकी अपेक्षा और कोई महत्तर वस्तु नहीं। काञ्चन मेरे पास काफी है, उसकी मुझे इच्छा नहीं, परन्तु जब मैं सोचता हूँ कि मुझे अपने सम्पूर्ण जीवनमें न कोई प्यार करनेवाला मिला और न कोई मिलेगा, तब मेरा हृदय मानो सूख जाता है। और डर लगता है कि हृदयकी इस कमजोरीको शायद मैं मरते दम तक न जीत सकूँगा। भाग्यमें यही अगर किसी दिन घटा, तो मैं आश्रम छोड़कर कहीं चला जाऊँगा। पर तुम्हारा आह्वान तो उससे भी बढ़कर मिथ्या है। उस पुकारका मैं अनुकूल जवाब न दे सकूँगा।"

"इसे आप मिथ्या क्यों कह रहे हैं?"

"मिथ्या तो है ही। मनोरमाका आचरण समझमें आता है, क्यों कि वास्तवमें कभी उसने मुझपर प्यार नहीं किया, किन्तु शिवनाथके प्रति शिवानीका प्यार तो मैंने अपनी आँखोंसे देखा है। उस दिन मानो उसकी कोई सीमा ही नहीं थी, पर आज उसका निशान तक मिट गया है।"

कमलने कहा, "आज वह अगर मिट ही गया हो, तो उस दिनका क्या सिर्फ मेरा छल ही आपकी निगाहमें आया था?"

अजितने कहा, "सो तो तुम्हीं जानो, पर आज मुझे लगता है कि नारीके जीवनमें इससे बढ़कर मिथ्या और कुछ है ही नहीं।"

कमलकी दृष्टि प्रखर हो उठी, उसने कहा, "नारी-जीवनके सत्यासत्य निर्णयका भार नारीपर ही रहने दीजिए। उसके निर्णयका दायित्व पुरुषको लेनेकी जरूरत नहीं,—न मनोरमाका और न कमलका। इसी तरहसे संसारमें न्याय चिरकालसे विडम्बित होता आ रहा है, नारी असम्मानित होती रही

है और पुरुषका चित्त संकीर्ण और कलुषित होता गया है। इसीसे इस झूठे मामलेका आज तक फैसला नहीं हुआ। अविचारसे सिर्फ एक ही पक्ष क्षतिग्रस्त नहीं होता अजित बाबू, दोनों पक्षोंका सर्वनाश होता है। उस दिन शिवनाथने जो कुछ पाया था, दुनियाके बहुत कम पुरुषोंके भाग्यमें उतना बदा होता है; पर आज वह नहीं है। यह तर्क उठाकर कि क्यों नहीं है, पुरुष अपने मोटे हाथसे मोटा डण्डा घुमाकर शासन भले ही कर ले, पर उसे पा नहीं सकता। उस दिनका होना जितना बड़ा सत्य था, आजका न होना भी ठीक उतना ही बड़ा सत्य है। क्योंकि शठताकी फटी गुदड़ी ओढ़ाकर इसे ढक देनेमें शरम आती है, इसी वजहसे पुरुषके विचारसे यह हो गया नारी-जीवनका सबसे बड़ा मिथ्या? क्या इसी सुविचारकी आशासे हम आप लोगोंका मुँह ताका करती हैं?"

अजितने जवाब दिया, "मगर उपाय क्या है? जो इतना क्षणस्थायी है, इतना क्षणभंगुर है, उसे इससे ज्यादा सम्मान मनुष्य देगा ही क्यों?"

कमलने कहा, "देगा नहीं, यह मैं जानती हूँ। हमारे आँगनके किनारे जो फूल खिलते हैं उनका जीवन एक छाकसे ज्यादा नहीं। उससे बल्कि वह मसाला पीसनेका सिल-लोढ़ा कहीं ज्यादा टिकाऊ है,—कहीं ज्यादा दीर्घस्थायी है। सत्यकी जाँचका इससे ज्यादा मजबूत माप-दण्ड आप लोग और पा ही कहाँ सकते हैं?"

"कमल, यह युक्ति नहीं है, यह तो सिर्फ गुस्सेकी बात है।"

"गुस्सा किस बातका अजित बाबू? सिर्फ स्थायित्व लेकर ही जिनका कारोबार है, वे इसी तरह कीमत आँका करते हैं। मेरे आह्वानपर जो आपसे 'हाँ' कहते नहीं बना, उसकी जड़मे भी यही संशय है। दस्तखत करके जो चिरकालके लिए बन्धन नहीं लेना चाहती उसपर आप विश्वास करेंगे किस तरह? फूलको जो नहीं जानता उसके लिए वह सिल-लोढ़ा ही सबसे बड़ा सत्य है क्यों कि उस सिल-लोढ़ाके सूखकर झड़ जानेकी आशंका नहीं है। फूलकी आयु सिर्फ एक छाककी है और सिल-लोढ़ा हमेशाके लिए है। रसोईघरकी जरूरतके मुताबिक वह हमेशा रगड़ रगड़ कर मसाला पीस दिया करेगा,—रोटी निगलनेके लिए तरकारीका उपकरण जो ठहरा वह, उसपर भरोसा किया जा सकता है। उसके न होनेसे संसार बेस्वाद जो हो जायगा!"

अजित उसके मुँहकी तरफ देखता हुआ बोला, "यह व्यंग किस लिए कमल?"

कमलके कानोंतक शायद यह प्रश्न पहुँचा ही नहीं, वह मानो अपने आप ही कहने लगी, "मनुष्य यह समझ ही नहीं पाता कि हृदय लोहेसे बना नहीं होता,—इस तरह निश्चिन्त निर्ममतासे उसपर सारा बोझा नहीं लादा जा सकता। उसमें दुःख न होता हो सो बात नहीं,—पर यही हृदयका धर्म है, यही उसका सत्य है। फिर भी यह बात कही भी नहीं जा सकती और न मानी ही जा सकती है। इससे बढ़कर अनीति संसारमें और क्या है? इसीसे तो किसीकी समझमें न आया कि शिवनाथको कैसे मैं सर्वान्तःकरणसे क्षमा कर सकी हूँ। रो रोकर यौवनमें जोगन बनना उनकी समझमें आ-जाता, पर यह उनसे नहीं सहा गया; अरुचि और अवहेलनासे सारा मन उनका कड़ुआ हो गया। पेड़के पत्ते सूखके झड़ जाते हैं और उनके क्षतको नये पत्ते आकर भर देते हैं : यह तो हुआ मिथ्या और बाहरकी सूखी लता मर जानेपर भी पेड़से लिपटी रहती है,—कसके चिपटी रहती है : यह हो गया सत्य?"

अजित एक मनसे सुन रहा था, उसकी बात खतम होते ही एक गहरी साँस छोड़कर बोला, "एक बात हम लोग अकसर भूल जाया करते हैं कि असलमें तुम हमारी अपनी नहीं हो। तुम्हारा खून, तुम्हारा संस्कार, तुम्हारी सारी शिक्षा विदेशकी है। इसके प्रचण्ड संघातको काट कर तुम किसी तरह ऊपर उठ नहीं सकतीं और इसी जगह हमारी तुम्हारे साथ निरंतर खटक होती है। रात बहुत हो गई कमल, इस निष्फल झगड़ेको बन्द करो।—यह आदर्श तुम्हारे लिए नहीं है।"

"कौनसा आदर्श? आपके ब्रह्मचर्य-आश्रमका?"

इस तानेकी चोटसे अजित मन ही मन गुस्सा हो गया, बोला, "अच्छा, सो ही सही। लेकिन इसे तुम नहीं समझोगी कि इसका गूढ़ तत्त्व विदेशियोंके लिए नहीं है।"

"आपकी शागिर्दी करनेपर भी नहीं?"

"नहीं।"

अबकी कमल हँस पड़ी, मानो अब वह पहलेकी रही ही नहीं। बोली, "अच्छा, यह तो बताइए कि उन साधुओंके अड्डेमेंसे आपका नाम कैसे कटवा सकती हूँ? वास्तवमें वह आश्रम मेरी आँखका काँटा बन गया है।"

अजित बिस्तरपर पड़ रहा, बोला, "राजेन्द्रको बुलाकर तुमने अनायास ही जगह दे दी।—तुम्हें कुछ भी हिचकिचाहट न हुई,—क्यों?"

"हिचकिचाहट क्या होती ?"

"इन सब बातोंकी तुम परवाह ही नहीं करतीं क्या ?"

"क्या परवाह नहीं करती ?—आप लोगोंके मतामतकी ?—वो तो नहीं करती।"

"अपने सम्बन्धमें भी शायद कभी किसी बातसे डरतीं नहीं ?"

कमलने कहा, "यह तो नहीं कह सकती कि कभी डरती ही नहीं, पर ब्रह्मचारीसे डर किस बातका ?"

"हूँ।" कहके अजित चुप हो गया।

फिर कुछ देर बाद एकाएक बोल उठा, "केंचुआ मिट्टीके नीचे अँधेरेमें रहता है, वह जानता है कि बाहरके उजालेमें निकलनेसे उसका बचना मुश्किल है,—उसे लील जानेके लिए बहुतसे मुँह बाये फिर रहे हैं। छिपनेके सिवा आत्मरक्षाका और कोई उपाय उसे मालूम नहीं। पर तुम जानती हो कि आदमी केचुआ नहीं, यहाँ तक कि औरत होनेपर भी नहीं। शास्त्रोंमें लिखा है, अपने स्वरूपको जान लेना ही परम शक्ति है,—और तुम्हारा यह अपना स्वरूप-ज्ञान ही तुम्हारी असल शक्ति है,—क्यों है न ठीक ?"

कमल कुछ बोली नहीं, चुप रही।

अजितने कहा, "स्त्रियाँ जिस चीजको अपने इहजीवनका सर्वस्व समझती हैं, उसपर तुम्हारी ऐसी एक सहज उदासीनता है कि चाहे कोई कितनी ही निन्दा किया करे, वह तुम्हारे चारों तरफ आगकी चहारदीवारी बनकर प्रतिक्षण तुम्हें रखाया करती है। तुम तक पहुँचनेके पहले ही वह निन्दा खुद जलकर भस्म हो जाती है। अभी अभी तुम मुझसे कह रही थीं कि जो पुरुषके भोगकी वस्तु हैं उनकी जातिकी तुम नहीं हो। आजकी रातमें तुम्हारे साथ आमने-सामने बैठकर उस बातका अर्थ स्पष्ट होता आ रहा है। मैं यह भी समझ रहा हूँ कि लोगोंकी निन्दा-प्रशंसाकी अवज्ञा करनेकी हिम्मत तुम्हे कहाँसे मिला करती है।"

कमलने कृत्रिम आश्चर्यसे मुँह ऊपर कर कहा, "आपको हुआ क्या है अजित बाबू, बातें तो आज बहुत-कुछ ज्ञानवानोंकी-सी कर रहे हैं ?"

अजितने कहा, "अच्छा कमल, सच्ची बताओ, तुम्हारे लिए मेरा मतामत भी क्या और सबोंकी तरह ही तुच्छ है ?"

"पर वह बात जानकर आप क्या करेंगे ?"

"कमल, अपनेको शक्तिमान समझकर मैंने कभी तुम्हारे आगे घमण्ड नहीं किया। वास्तवमें, भीतर भीतर मैं जितना कमजोर हूँ उतना ही असहाय भी। किसी कामको ज़ोरसे कर डालनेकी ताकत ही नहीं मुझमें।"

कमल हँसके बोली, "सो तो मैं आपसे बहुत ज्यादा जानती हूँ।"

अजितने कहा, "मुझे क्या लगता है जानती हो? लगता है कि तुम्हें पाना जितना सहल है, गँवा देना भी उतना ही आसान है।"

कमलने कहा, "यह भी मुझे मालूम है।"

अजित अपने मन ही मन सिर हिलाकर बोला, "यही तो मुश्किल है। तुम्हें आज पा लेना ही तो सब कुछ नहीं है। एक दिन अगर इसी तरह गँवा देना पड़ा तो क्या होगा?"

कमलने शान्त कण्ठसे कहा, "कुछ भी न होगा, उस दिन गँवाना भी ऐसा ही सहज हो जायगा। जितने दिन तक पास रहूँगी, उतने दिन आपको वही विद्या सिखाया करूँगी।"

अजित भीतरसे चौंक पड़ा। बोला, "विलायतमें रहते हुए मैंने देखा है कि वहाँवाले कितनी आसानीसे,—कितने मामूली कारणोंसे हमेशाके लिए विच्छिन्न हो जाया करते हैं। मनमें सोचता हूँ, क्या उन्हें जरा भी चोट नहीं लगती? और यही अगर उनके प्रेमका परिचय है तो वे सभ्यताका गर्व कैसे किया करते हैं?"

कमलने कहा, "अजित बाबू, बाहरसे अखबारोंमें वह जितना सहज दीखता है, असलमें वह उतना सहज नहीं है। मगर फिर भी, मैं तो यही कामना करती हूँ कि नर-नारीका यह परिचय ही किसी दिन जगतमें प्रकाश और हवाकी तरह सहज-स्वाभाविक बन जाय।"

अजित चुपचाप उसके मुँहकी तरफ ताकता रह गया, कुछ बोला नहीं। उसके बाद आहिस्तेसे दूसरी तरफ मुँह फेरकर लेटते ही, मालूम नहीं क्यों, उसकी आँखोंमें आँसू भर आये।

शायद कमल ताड़ गई। उठकर वह पलंगके सिरहानेके पास जा बैठी और उसके माथेपर हाथ फेरने लगी, मगर सान्त्वनाका एक शब्द भी उसने मुँहसे नहीं निकाला।

सामनेकी खुली हुई खिड़कीसे दिखाई दिया कि पूर्वका आकाश स्वच्छ होता आ रहा है।

"अजित बाबू, सोनेका अब शायद समय नहीं रहा।"

"नहीं, अब उठता हूँ।" कहकर वह आँख मींड़ता हुआ उठकर बैठ गया।

२२

आशु बाबूने शायद अपने विधाताके आगे भी कभी इससे ज्यादाका दावा न किया होगा कि वे संसारके साधारण आदमियोंमेंसे एक हैं। जैसे शान्त आनन्दके साथ उन्होंने अपनी बड़ी भारी पैतृक धन-सम्पत्तिको ग्रहण किया था वैसे ही अपने विराट् देह-भार और उसके साथी वात-रोगको भी साधारण दुःखके रूपमें स्वीकार कर लिया था। और इस सत्यको उन्होंने सिर्फ बुद्धिसे ही नहीं, किन्तु, हृदयसे भी अनुभव किया था कि संसारके सुख-दुःख विधाताने केवल उन्हींको लक्ष्य करके नहीं गढ़े हैं बल्कि वे अपने नियमानुसार हुआ करते हैं, और इसकी प्राप्तिके लिए भी उन्हें कोई तपस्या नहीं करनी पड़ी,—उनमें यह बात स्वाभाविक संस्कारके रूपमें आई है। उस दिन जिस दिन कि आकस्मिक स्त्री-वियोगकी दुर्घटनासे सारा संसार उनकी दृष्टिमें फीका और सूखा दिखाई दिया था, जैसे उन्होंने अपने भाग्य-देवताको हजारों धिक्कारोंसे लाछित नहीं किया, वैसे ही आज भी जब कि उनकी अत्यन्त स्नेहकी पूँजी मनोरमाने उनकी तमाम आशा-कामनाओंमें आग लगा दी, वे सिर धुन धुनके रोने नहीं बैठे। क्षोभ और दुःसह नैराश्यके बीच भी उनके मनमें न जाने कौन मानो अत्यन्त परिचित कण्ठसे बार बार कहता रहा कि यह ऐसा ही होता रहता है, ऐसे बहुत दुःख बहुत मनुष्योंके भाग्यमें बहुत बार आये हैं। ऐसे ही संसार चलता है। इस सुख-दुखकी परम्परामें कोई नवीनता नहीं है,—यह उतनी ही सनातन है जितनी कि सृष्टि। उफनते हुए शोककी लहरोंको फिरसे नवीन बनाने और संसारमें उन्हें फैला देनेमें न तो कोई पौरुष है, और न इसकी कोई जरूरत ही है। इसीसे, सब तरहके दुःख अपने आप शान्त होकर उनके भीतर चारों तरफ ऐसी एक स्निग्ध-प्रसन्नताकी वेष्टनी बना लेते हैं कि उसके भीतर पहुँचते ही सबका सब तरहका बोझ मानो अपने आप ही हलका और अकिञ्चित्कर हो जाता है।

इसी तरह आशु बाबूकी सारी जिन्दगी बीती है। आगरेमें आकर अनेक उलट-फेरोंके बीच भी उसमें कोई फर्क नहीं आया; पर इधर कई दिनोंसे

इसी किस्मका कुछ फर्क-सा लोगोंकी निगाहमें आने लगा है। अकस्मात् देखनेमें आता कि उनके आचरणमें धैर्यकी कमी अधिकांश स्थलोंपर दबी रहना नहीं चाहती। मालूम होता कि बातचीतमें अकारण ही रूखापन आ जाता है, यहाँ तक कि नौकर-चाकरों तकको उनका कोई कोई मन्तव्य तीक्ष्ण और अद्भुत-सा सुनाई पड़ता है। पर ऐसा क्यों हो रहा है, यह भी सोच निकालना मुश्किल है। रोगकी ज्यादतीमें भी उनमें ऐसी विकृति आ जाना अविश्वास्य मालूम देता, फिर भी अब वे अच्छे हो गये हैं। परन्तु कारण कुछ भी क्यों न हो, जरा ध्यान देखा जाय तो मालूम होगा कि उनके अन्तस्तलमें मानो आग जल रही है और उसकी चिनगारियाँ कभी कभी बाहर प्रकट हो जाती हैं।

आज तक उन्होंने साफ-साफ जाहिर तो नहीं किया, पर मालूम होता है कि अब उनके आगरेमें रहनेके दिन खतम हो गये। शायद, जरा और स्वस्थ होनेकी देर है। उसके बाद सहसा जैसे एक दिन यहाँ आ पहुँचे थे वैसे ही अचानक एक दिन चल देंगे।

शामके वक्त आजकल बहुतसे पदाधिकारी बंगाली सज्जन मुलाकात करने और राजी-खुशी पूछने आ जाया करते हैं। सस्त्रीक मजिस्ट्रेट साहब, रायबहादुर, सदरआला, कालेजकी अध्यापक-मण्डली, नाना कारणोंसे जो आगरा छोड़ नहीं सके हैं वे, हरेन्द्र, अजित और बंगाली मुहल्लेके वे लोग जो आनन्दके दिनोंमें बहुत-सा पुलाव-मांस आदि खा गये हैं,—कोई न कोई आते ही रहते हैं।

आता नहीं तो सिर्फ अक्षय, सो भी इसलिए कि यहाँ वह है नहीं। महामारीके शुरू होते ही वह सस्त्रीक देश चला गया है और शायद बीमारी शान्त होनेकी खबरकी बाट देख रहा है। कमल भी नहीं आती। उस दिन जो आई थी, उसके बाद फिर नहीं आई।

आशु बाबू मजलिसी आदमी हैं, फिर भी पहलेकी तरह अब वे मजलिसमें शरीक नहीं हो पाते,—मौजूद रहनेपर भी लगभग चुप बैठे रहते हैं। उनकी स्वास्थ्यहीनताका खयाल करके लोग आनन्दके साथ उन्हें माफी भी दे देते हैं। एक दिन जो काम मनोरमा किया करती थी, अब वे रिश्तेदार होनेसे बेलाको ही करने पड़ते हैं। आतिथ्यमें कहीं कोई त्रुटि नहीं होती। बाहरके लोग आकर सिर्फ उसका रस ही लेते हैं, और शायद मजलिस खतम होनेपर

परितृप्त चित्तसे इस निरभिमान गृहस्वामीको मन ही मन धन्यवाद देते हुए आश्चर्यके साथ सोचते हैं कि आव-भगतकी ऐसी त्रुटिशून्य व्यवस्था इस बीमार आदमीसे रोज़मर्रा कैसे बन पड़ती है !

पर, 'कैसे बन पडती है' का इतिहास छिपाका छिपा ही रह जाता है। नीलिमा सबके सामने निकलती नहीं, इसकी उसे आदत भी नहीं ओर न वह निकलना पसन्द ही करती है। परन्तु परदेकी ओटमे होते हुए भी उसकी जाग्रत दृष्टि इस घरमें सर्वत्र प्रतिक्षण व्याप्त रहा करती है। वह दृष्टि जैसी निगूढ होती है वैसी ही नीरव। शिराओंमे प्रवहमान रक्तधारकी तरह यह निःशब्द प्रवाह शायद आशु बाबूको छोड़कर दूसरा कोई अनुभव भी नहीं कर पाता।

शीत ऋतुका प्रथमार्द्ध बीत चला है, परन्तु फिर भी चाहे किसी भी कारणसे हो, इस साल जाड़ा उतना कड़ाकेका नहीं पड़ा। लेकिन आज सवेरेसे ही थोड़ी थोड़ी बर्षा हो रही है, और शामके वक्त तो खूब जोरसे मेह बरसने लगा। ऐसे मेहमे इसकी कोई सम्भावना ही न रही कि बाहरसे कोई आ सकेगा। घरकी खिड़कियाँ असमयमें ही बन्द कर दी गई हैं और आशु बाबू पैरोंपर दुशाला डाले आराम-कुरसीपर पड़े पड़े कोई किताब पढ रहे हैं। बेला शायद कुछ बिरक्तिके कारण ही बोल उठी, "इस अभागे देशमें सभी कुछ उलटा है। कुछ दिन पहले,—जून या जुलाई महीनेमें जब यहाँ आई थी, तब वर्षाके लिए देशभरमें ऐसा जबरदस्त हाहाकार मचा हुआ था कि बगैर आँखों देखे उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसीसे सोचती हूँ कि ऐसे कठोर शुष्क देशमें आदमी ताजमहल बनाने बैठे सो किस अक्लमंदीपर ?"

नीलिमा पास ही एक कुरसीपर बैठी कुछ सीं रही थी, बगैर आँख उठाये ही उसने कहा, "इसका कारण क्या सभी जान सकते हैं ? सब नहीं जान सकते।"

बेलाने सरल-चित्तसे पूछा, "क्यों ?"

नीलिमाने कहा, "तमाम बड़ी चीजें आदमीके हाहाकारमेंसे ही पैदा होती हैं, अतएव जो लोग संसारके आमोद-प्रमोदमें ही मगन रहते हैं उन्हें यह सूझ ही कैसे पड़ सकता है ?"

उसका यह जवाब ऐसे कल्पनातीत रूपमें कठोर था कि सिर्फ बेला ही नहीं, बल्कि आशु बाबू तक आश्चर्य-चकित हो गये। उन्होंने किताबपरसे मुँह

उठाया तो देखा, नीलिमा पूर्ववत् सीनेके काममें लगी हुई है। मानों, यह बात उसके मुँहसे कतई निकली ही नहीं।

एक तो बेला कलहप्रिय स्त्री नहीं, और दूसरे वह सुशिक्षिता है। उसने बहुत कुछ देखा-सुना है और उमर भी शायद पैंतीसके ऊपर पहुँच चुकी है; किन्तु सयत्न-सतर्कतासे उसने अपने यौवनके लावण्यको आज भी पश्चिमकी ओर ढलने नहीं दिया है,—अकस्मात् ऐसा मालूम होता है कि शायद वह वैसा ही बना हुआ है। रंग उज्ज्वल है, चेहरेपर एक विशिष्ट रूप है, पर गौरसे देखनेसे मालूम हो जाता है कि कोमलताके अभावने मानो उसे रूखा बना रखा है। आँखोंकी दृष्टि हास्य-कौतुकसे चपल-चंचल है, निरन्तर बहते फिरना ही जैसे उसका काम है,—किसी भी चीजपर स्थिर होने लायक न तो उसमें भार है और न तलदेशमें कोई जड़ ही। आनन्द-उत्सवमें ही वह शोभती है; सहसा दुःखके बीच आ पड़नेसे घर-मालिकको लज्जामें पड़ना पड़ता है।

जब बेलाका विमूढ़ताका भाव दूर हो गया तब क्षण-भरके लिए मारे क्रोधके उसका चेहरा तमतमा उठा। पर नाराज होकर झगड़ा करना उसकी शिक्षा और सौजन्यके खिलाफ है, इसलिए उसने अपनेको सम्हालते हुए कहा, "मुझपर कटाक्ष करनेसे कोई लाभ नहीं। सिर्फ इसलिए ही नहीं कि यह अनधिकार-चर्चा है, बल्कि हाहाकार करते फिरना चाहे जितनी बड़ी ऊँची बात क्यों न हो, वह मुझसे करते नहीं बनती, और उससे कोई अभिज्ञता संचय करनेमें भी मैं असमर्थ हूँ। मेरा आत्म-सम्मान-ज्ञान बना रहे, उससे बढ़कर मैं कुछ नहीं चाहती।"

नीलिमा अपने काममें ही लगी रही, कुछ जवाब नहीं दिया।

आशु बाबू भीतरसे क्षुण्ण हो गये थे, पर इस डरसे कि बात आगे न बढ़े व्यस्त होकर बोल उठे, "नहीं नहीं, तुमपर कोई कटाक्ष नहीं किया बेला, इसमें कोई शक नहीं कि बात उन्होंने साधारण भावसे ही कही है। नीलिमाका स्वभाव तो मुझे मालूम है, ऐसा हो ही नहीं सकता, मैं तुमसे कहता हूँ न, ऐसा हर्गिज नहीं हो सकता।"

बेलाने संक्षेपमें सिर्फ इतना ही कहा, "न हो यही अच्छा है। इतने दिनसे एक साथ रह रही हूँ, ऐसा तो मैं सोच ही नहीं सकती।"

नीलिमाने 'हाँ-ना' कुछ भी जवाब नहीं दिया, अपने काममें वह ऐसी तन्मय रही मानो उस जगह और कोई है ही नहीं। कमरेमें बिलकुल सन्नाटा छा गया।

वेलाके जीवनका एक इतिहास है जिसे यहाँ कह देना आवश्यक है। उसके पिता वकालतका पेशा करते थे, पर अपने पेशेमें वे यश या धन दोनोंमेंसे कुछ भी प्राप्त न कर सके थे। उनका धर्म क्या था, कोई भी नहीं जानता; और समाजकी दृष्टिसे भी देखा जाय तो वे हिन्दू, ब्राह्मण या क्रिस्तान किसी समाजको मानकर न चलते थे। लड़कीको वे बहुत ज्यादा प्यार करते थे, और उन्होंने सामर्थ्यके बाहर खर्च करके उसे शिक्षा देनेकी कोशिश की थी। यह हम पहले ही बता चुके हैं कि उनकी वह कोशिश बिलकुल व्यर्थ नहीं हुई। 'वेला' नाम उन्होंने अपने शौकसे रखा था। किसी समाजको न माननेपर भी एक दल तो उनका अपना था ही। सुन्दरी और शिक्षिता होनेकी वजहसे वेलाका नाम उस दलमें सबकी जबानपर चढ गया, और इसलिए उसे धनी पात्र मिलनेमें भी देर न हुई। वे हाल ही विलायतसे कानून पास करके लौटे थे। कुछ दिन देख-भाल और परस्पर मन निरखने-परखनेका सिलसिला चलता रहा, उसके बाद कानूनके अनुसार रजिस्टरी करके ब्याह हो गया। इस तरह कानूनके प्रति गहरे अनुरागका एक अंक खतम हुआ। दूसरे अंकमें भोग-विलास, साथ साथ देश-भ्रमण, पृथक् पृथक् वायु-परिवर्तन,—आदि ऐसी ही बहुत-सी बातें हुईं। दोनों तरफसे तरह तरहकी अफवाहें सुनी गईं, परन्तु उनकी आलोचना यहाँ अप्रासंगिक होगी। लेकिन उनमें जो अंश प्रासंगिक था, वह शीघ्र ही प्रकट हो गया। वर-पक्ष हाथों-हाथ पकड़ा गया और कन्या-पक्ष विवाह-विच्छेदका मामला दायर करनेकी सोचने लगा। मित्र-मण्डलीमें आपसमें समझौता करानेकी कोशिश हुई, किन्तु शिक्षिता वेला नर-नारीके समानाधिकार-तत्त्वकी सबसे बड़ी पण्डा थी। लिहाजा उसने इस असम्मानके प्रस्तावपर कतई ध्यान नहीं दिया। पति बेचारा चरित्रकी दृष्टिसे चाहे जैसा भी हो, आदमीके लिहाजसे बुरा नहीं था; स्त्रीको वह शक्ति और सामर्थ्यके माफिक प्यार ही करता था। उसने शर्मके साथ अपना कसूर मंजूर करके अदालतकी दुर्गतिसे छुटकारा पानेके लिए हाथ जोड़कर क्षमा प्रार्थना की, पर स्त्रीने क्षमा नहीं दी। अन्तमें बड़े दुःखपूर्ण ढंगसे फैसला हुआ। एकमुश्त नगद और खाने-पहरनेके लिए मासिक खर्च देना कबूल करके उसने किसी तरह मामलेसे अपना पिण्ड छुड़ाया। और इधर दाम्पत्य-युद्धमें विजय पाकर वेला भग्न स्वास्थ्यकी मरम्मतके लिए शिमला, मसूरी, नैनी आदि पार्वत्य प्रदेशोंमें दर्पके साथ सैर

करने चल दी। उस बातको आज लगभग छह-सात साल हो गये। इसके थोड़े ही दिन बाद उसके पिताका देहान्त हो गया। इस मामलेमें उनकी राय नहीं थी, बल्कि इससे वे अत्यन्त मर्माहत भी हुए थे। आशु बाबूकी स्वर्गीय पत्नीके साथ उनका कोई दूरका रिश्ता था और उसी सम्बन्धसे बेला आशु बाबूकी भी रिश्तेदार थी। उसके ब्याहमें भी आशु बाबू निमंत्रित होकर गये थे, और उसके पतिसे भी परिचित होनेका उन्हें मौका मिला था। इस तरह कई रिश्तोंके सिलसिलेमें बेला आगरा आई थी न बिल्कुल गैर होकर आई थी और न निराश्रित होकर ही। तुलनामें इसी जगह नीलिमाके साथ उसका काफी अन्तर था।

फिर भी, हालत इससे बिलकुल उलटी हो गई थी। इस विषयमें कि इस घरमें किसका कहाँ स्थान है, घरके किसी व्यक्तिको रंच-मात्र भी सन्देह न था। पर उसका हेतु जैसा अज्ञात था, कर्तृत्व भी वैसा ही अविसंवादि था।

बहुत देर तक मौन रहकर बेलाहीने पहले बात की, कहा, "यह मैं मानती हूँ कि साफ साफ कुछ नहीं कहा, पर इस विषयमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं कि मुझे धिक्कारनेके लिए ही नीलिमाने ऐसी बात कही है।"

आशु बाबूके मनमें भी शायद सन्देह न था, फिर भी विस्मयके स्वरमें उन्होंने पूछा, "धिक्कार? धिक्कार किस लिए बेला?"

बेलाने कहा, "आपको तो सब कुछ मालूम है। निन्दा करनेवालोंकी उस दिन भी कमी नहीं थी, और आज भी नहीं है। परन्तु अपने सम्मानकी,—सम्पूर्ण नारी-जातिके सम्मानकी रक्षाके लिए उस दिन भी मैंने किसीकी परवाह नहीं की, और आज भी नहीं करूँगी। मैं अपनी इज्जत-आबरू खोकर पतिकी घर-गृहस्थी चलानेको राजी नहीं हुई थी, इसलिए उस दिन ग्लानि-प्रचारका काम सबसे बढ़कर स्त्रियोंने ही किया था, और आज भी उनहीके हाथसे निस्तार पाना मेरे लिए सबसे कठिन हो रहा है। मगर चूँकि मैंने अनुचित कार्य नहीं किया, इसलिए उस दिन भी जैसे मैं नहीं डरी, आज भी उसी तरह निडर हूँ। अपनी विवेक-बुद्धिके आगे मैं बिलकुल चोखी हूँ।"

नीलिमाने सिलाईपरसे आँख नहीं उठाई, किन्तु आहिस्तेसे कहा, "एक दिन कमल कह रही थीं कि विवेक-बुद्धि ही संसारमें सबसे बड़ी चीज नहीं है। विवेककी दुहाई देनेसे ही समस्त उचित-अनुचितकी मीमांसा नहीं हो जाती।"

आशु बाबूने आश्चर्यमें आकर कहा, "वह कहती है क्या?"

नीलिमाने कहा, " हाँ। कहती हैं कि वह तो सिर्फ मूर्खोंके हाथका अस्त्र है। आगे-पीछे दोनों तरफ चलाया जा सकता है,—उसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं।"

आशु बाबूने कहा, " जो कहती है, उसे कहने दो; पर ऐसी बात तुम अपने मुँहसे न निकालो नीलिमा।"

बेलाने कहा, " इतने बड़े दुस्साहकी बात तो मैंने कभी सुनी ही नहीं।"

आशु बाबू क्षण-भर मौन रहकर धीरे-धीरे कहने लगे, " दुस्साहस तो है ही। उसके साहसका अन्त नहीं। वह अपने नियमपर चलती है, उसकी सब बातें न सब समय समझमें आती हैं और न मानी ही जा सकती हैं।"

बेलाने कहा, " अपने नियमपर तो मैं भी चलती हूँ आशु बाबू। इसीसे बाबूजीकी भी मनाही न मान सकी। मैंने पतिको त्याग दिया, पर सिर न झुका सकी।"

आशु बाबूने कहा, " इसमें शक नहीं कि यह गहरे पश्चात्तापका विषय है, परन्तु तुम्हारे पिताके सम्मति न देनेपर भी मुझसे तो बिना दिये रहा नहीं गया।"

बेलाने कहा, " थैंक्स (=धन्यवाद), सो मुझे याद है आशु बाबू!"

आशु बाबू बोले, " उसकी वजह थी। स्त्री-पुरुषके समान दायित्व और समान अधिकारपर मैं पूरा विश्वास करता हूँ। हमारे हिन्दू-समाजमें एक बड़ा भारी दोष यह है कि सौ-सौ अपराध करनेपर भी पतिको न्याय-विचार या दण्डका डर नहीं, और तुच्छसे तुच्छ दोषपर स्त्रीको दण्ड देनेके हजारों मार्ग खुले हुए हैं। इस व्यवस्थाको मैं एक दिनके लिए भी उचित नहीं मान सका। इसीसे बेलाके पिताने जब मेरे पास राय जाननेके लिए चिट्ठी लिखी थी, तब मैंने उत्तरमें यही बात कही थी कि हालाँ कि यह कोई शोभाकी बात नहीं और न सुखकी ही, परन्तु वह अगर अपने असच्चरित्र पतिको सचमुच ही त्याग देना चाहती है, तो उसे मैं अनुचित कहकर मना नहीं कर सकता।"

नीलिमाने अकृत्रिम विस्मयसे आँख उठाकर प्रश्न किया, " आपने सचमुच यही बात जवाबमें लिखी थी?"

" सचमुच नहीं तो क्या?"

नीलिमा स्तब्ध हो रही।

उस निस्तब्धतामें आशु बाबूको न जाने कैसी एक प्रकारकी अशान्ति-सी मालूम होने लगी। उन्होंने कहा, " इसमें आश्चर्य करनेकी तो ऐसी कोई बात नहीं नीलिमा। बल्कि न लिखना ही मेरे तरफसे अनुचित होता।"

फिर जरा ठहरकर कहा, "तुम खुद भी तो कमलकी बड़ी भक्त हो, बताओ, वह खुद ऐसी हालतमें क्या करती? क्या जवाब देती? इसीसे तो उस दिन जब बेलासे उसका परिचय कराया था, तब इस बातपर मैंने जोर दिया था कि कमल, तुम्हारी तरह विचार करने और तुम्हारी तरह साहसका परिचय देनेमें मैंने सिर्फ एक ही लड़कीको देखा है, और वह है यह बेला।"

नीलिमाकी आँखें सहसा व्यथासे भर आईं। बोली, "वह बेचारी शिष्ट समाजसे बाहर,—यहाँ तक कि बस्तीके बाहर पड़ी हुई है। उसे आप लोग क्यों घसीटते हैं?"

आशु बाबू व्यस्त हो उठे, बोले, "नहीं नहीं, घसीटनेकी बात नहीं नीलिमा, यह तो सिर्फ एक उदाहरण देना है।"

नीलिमाने कहा, "वही तो घसीटना है। अभी अभी आपने कहा था कि उसकी सब बातें सब समय समझमें भी नहीं आतीं और न मानी ही जा सकती हैं।—माना कुछ नहीं जा सकता, सिर्फ उदाहरण ही दिया जा सकता है!"

आशु बाबूको अपनी बातमें दोषकी कोई बात नजर नहीं आ रही थी। वे क्षुण्ण कण्ठसे बोले, "किसी भी कारणसे हो, आज तुम्हारा मन शायद बहुत ही अस्वस्थ हो रहा है। इस समय किसी विषयकी आलोचना करना ठीक नहीं।"

नीलिमाने इस बातपर ध्यान नहीं दिया, वह बोल उठी, "उस दिन आपने इनके विवाह-विच्छेदमें अपनी राय दी थी और आज बिना किसी संकोचके कमलका दृष्टांत दे रहे हैं। इनकी-सी हालतमें कमल क्या करती सो तो वही जाने; मगर उसके दृष्टान्तका वास्तवमें अनुसरण करनेके लिए आज इन्हें कुली-मजदूरोंके कपड़े सीं करके अपनी गुजर करनी पड़ती,—सो भी शायद हमेशा नहीं जुटते। कमल और चाहे जो करती, पर जिस पतिको वह लाञ्छन लगाकर घृणासे छोड़ देती उसीके दिये हुए अन्नका ग्रास मुँहमें देकर और उसीके दिये कपड़ोंसे आबरू बचाकर हर्गिज न जीना चाहती। अपनेको इतनी छोटी या ओछी बनानेके पहले वह आत्म-हत्या करके मर जाती।"

आशु बाबू जवाब क्या देते? वे तो भावाविष्ट से हो रहे, और बेला ठीक वज्राहतकी भाँति निश्चल हो रही। नीलिमाके दिन हँसी-मजाकमें ही कट जाते हैं, सबका मुँह ताकना ही मानो उसका काम है, दोनोंमेंसे कोई भी इस बातको कयासमें न ला सका कि वह सहसा इस तरह निर्मम हो सकती है।

नीलिमा क्षण-भर स्थिर रहकर फिर बोली, "आप लोगोंकी मजलिसमें मैं नहीं बैठती, लेकिन लोगोंको लेकर जो सब तरहकी आलोचनाएँ हुआ करती हैं वे मेरे कानों तक पहुँच जाती हैं। नहीं तो शायद मैं कोई बात कहती भी नहीं। कमलने एक दिनके लिए भी शिवनाथकी निन्दा नहीं की, एक भी आदमीके आगे अपना दुखड़ा नहीं रोया—क्यों, जानते हैं?"

आशु बाबूने विमूढकी भाँति पूछा, "क्यों?"

नीलिमाने कहा, "क्यों, सो कहना व्यर्थ है। आप लोग समझ नहीं सकेंगे।" फिर जरा ठहरकर कहा, "आशु बाबू, यह एक अत्यन्त मोटी बात है कि पति-पत्नीका अधिकार समान है मगर इसके मानी यह न सोचिएगा कि स्त्री होकर स्त्रियोंकी तरफसे इस दावेका मैं प्रतिवाद कर रही हूँ। प्रतिवाद मैं नहीं करती, मैं जानती हूँ कि वह सत्य है, मगर साथ ही यह भी जानती हूँ कि सत्य सत्य चिल्लानेवाले एक सत्य-विलासी गिरोहने नर-नारीके मुँहके द्वारा और तरह तरहके आन्दोलनोंसे उस सत्यको ऐसा गन्दा कर दिया है कि आज उसे मिथ्या कहनेको ही जी चाहता है। आज मेरी हाथ जोड़के प्रार्थना है कि सबके साथ मिल करके आप कमलके विषयमें कोई चर्चा न किया करें।"

आशु बाबूने जवाब देना चाहा, पर उनके कुछ कहनेके पहले ही वह सिलाईकी चीजें लेकर भीतर चली गई।

तब क्षुब्ध-विस्मयसे एक लम्बी उसाँस लेकर आशु बाबू सिर्फ यह कहकर रह गये, "उसने कब क्या सुना है मालूम नहीं, पर मेरे विषयमें यह बिलकुल असत्य दोषारोप है।"

बाहर कुछ देरके लिए वर्षा रुक गई थी, किन्तु ऊपरके मेघाच्छन्न आकाशने घरके भीतर असमयमें अन्धकार फैला दिया। नौकर जब बत्ती जला गया तब आशु बाबूने फिर एक बार पुस्तक उठाकर आँखोंके सामने रख ली। पर छापेके अक्षरोंमें मन लगाना सम्भव न था और इधर बेलाके साथ आमने-सामने बैठकर बातचीत करना और भी असम्भव मालूम दिया।

इतनेमें भगवानने दया की। एक ही छतरीमें रास्ते-भर धक्कमधक्का करते हुए कृच्छ्रव्रतधारी हरेन्द्र-अजित आँधीकी तरह कमरेमें आ घुसे। दोनों जनें आधे आधे भींज चुके थे। हरेन्द्र बोला, "भाभी कहाँ हैं?"

आशु बाबूके मानो चाँद हाथ लग गया। उनको विश्वास नहीं था कि

आजके दिन कोई आयेगा। साग्रह उठके बैठ गये और स्वागतके स्वर बोले, "आओ अजित, बैठो हरेन्द्र—"

"बैठता हूँ। भाभी कहाँ हैं?"

"ओह! दोनोंके दोनों खूब भींजे मालूम होते हो।"

"जी हाँ। वे हैं कहाँ?"

"बुलवाता हूँ।" कहके आशु बाबूने ज्यों ही पुकारनेका उद्योग किया कि भीतरसे परदा हटाती हुई नीलिमा स्वयं ही बाहर निकल आई। उसके हाथमें दो धोतियाँ और एक कुरता था।

अजितने कहा, "यह क्या? आप ज्योतिष भी जानती हैं क्या?"

नीलिमाने कहा, "ज्योतिष जाननेकी जरूरत नहीं लालाजी, खिड़कीसे ही देख लिया था। एक टूटी छतरीमें जिस तरह एक दूसरेकी तकलीफका खयाल रखते हुए तुम दोनों चले आ रहे थे, उसे एक मैं ही क्यों, शायद शहर-भरके लोगोंने देखा होगा।"

आशु बाबूने कहा, "एक छतरीमें दो दो जनें? तभी तो दोनोंको भींजना पड़ा है।" और वे हँस दिये।

नीलिमाने कहा, "शायद दोनों जनें समानाधिकार-तत्त्वपर विश्वास करते हैं, अन्याय नहीं करते—इसीसे छतरीका ठीक ठीक बँटवारा करके रास्ता चल रहे थे। लो लालाजी, कपड़े बदल लो।" कहते हुए उसने कपड़े हरेन्द्रके हाथमें दे दिये।"

आशु बाबू चुप रहे। हरेन्द्रने कहा, "धोतियाँ तो दो दे दीं, लेकिन कुरता एक ही है?"

"कुरता बहुत बड़ा है लालाजी, एकसे ही काम चल जायगा।" कहकर वह गम्भीर बनके पासकी कुरसीपर बैठ गई।

हरेन्द्रने कहा, "कुरता आशु बाबूका है, लिहाजा इसमें दो ही क्यों, और चार जनें समा सकते हैं, मगर तब इसे मशहरीकी तरह लटकाना पड़ेगा, पहना नहीं जा सकेगा।"

बेला अब तक विषण्ण-मुखसे चुपचाप बैठी थी, हँसी रोक न सकनेके कारण बाहर उठके चली गई और नीलिमा खिड़कीके बाहर देखती हुई चुप बैठी रही।

आशु बाबू छद्म-गाम्भीर्यके साथ कहने लगे, "बीमारीमें पड़ा पड़ा सूखके आधा रह गया हूँ हरेन्द्र, अब तुम लोग टोको मत। देखते नहीं, औरतोंको

कैसा बुरा मालूम हुआ, एक तो उठके बाहर चली गई और एकने मारे गुस्सेके मुँह फेर लिया।"

हरेन्द्रने कहा, "टोका-टाकी नहीं की आशु बाबू, विराटकी महिमा गाई है। टोका-टाकीका दुष्प्रभाव तो सिर्फ हमारे जैसी नर-जातिको ही विपत्तिमें डाल सकता है, आप लोगोंको छू भी नहीं सकता। अतएव, चिरस्तूयमान हिमालयके समान यह देह अक्षय बनी रहे, स्त्रियाँ निःशंक हों, और मेह-पानीके बहाने समागत जनोंके भाग्यमें जो दैनन्दिन मिष्टान्नादि बदा है उसमें आज भी रंचमात्र कमी न हो।"

नीलिमाने इधर मुँह उठाया और हँस दी। "बड़ोंका स्तुतिवाद तो अनादिकालसे चला आ रहा है छोटे देवरजी, वही निर्दिष्ट धारा है और उसमें तुम सिद्धहस्त हो; पर आज जरा नियममें व्यतिक्रम करना पड़ेगा। आज छोटोंकी खुशामद बगैर किये इतर जनोंके भाग्यमें मिष्टान्नकी जगह कोरा शून्य पड़ेगा।"

बेला बरामदेसे लौटकर भीतर आ बैठी।

हरेन्द्रने पूछा, "क्यों भाभी?"

गंभीर स्नेहसे नीलिमाकी आँखें भर आईं, बोली, "ऐसी मीठी बात बहुत दिनोंसे सुनी नहीं है भाई, इसीसे सुननेको जी लुभाता है।"

"तो शुरु कर दूँ क्या?"

"अच्छा अभी रहने दो। पहले तुम लोग उस कमरेमें जाकर कपड़े बदल लो, मैं कुरता भेजे देती हूँ।"

"मगर कपड़े बदल चुकनेके बाद? फिर क्या होगा?

नीलिमाने हँसते हुए कहा, "फिर कोशिश करके देखूँगी कि इतर जनोंके भाग्यसे अगर कहींसे खाने-पीनेको कुछ जुटा सकूँ।"

हरेन्द्रने कहा, "तकलीफ उठाके कोशिश करनेकी जरूरत न पड़ेगी भाभी, सिर्फ एक बार आँख खोलके देख-भर लीजिएगा। आपकी अन्नपूर्णाकी-सी दृष्टि जहाँ पड़ेगी, वहीं अन्नका भाण्डार निकल पड़ेगा। चलो अजित, अब कोई फिकरकी बात नहीं, हम लोग तब भीगे कपड़े बदल आयें।" कहकर अजितको वह हाथ पकड़के बगलके कमरेमें खींच ले गया।

२३

अजितने कहा, "पानी थमनेका तो कोई लक्षण नहीं दिखाई देता ?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। लिहाजा फिर हम दोनोंको उसी टूटी छतरीमें सिरसे सिर भिड़ाकर समानाधिकार-तत्त्वकी सत्यता प्रमाणित करते हुए अन्धकार-मार्गमें चल देना और अन्तमें आश्रम पहुँच जाना चाहिए। अवश्य ही उसके बादकी चिन्ता नहीं रही,—उसे यहीं पूरा कर चुके हैं,—लिहाजा, फिरसे एक बार भीगे कपड़े बदलना और सो जाना रह जायगा।"

आशु बाबू व्यग्र होकर बोले, "तो फिर तुम लोगोंने पेट भरके ही क्यों नहीं जीम लिया ?"

हरेन्द्र कह उठा, "नहीं नहीं, रहने दीजिए,—इससे क्या हुआ—आप इसके लिए कोई चिन्ता न करें।"

नीलिमा पहले तो खिलखिलाकर हँस पड़ी, उसके बाद शिकायतके स्वरमें बोली, "लालाजी, क्यों यों ही रोगी आदमीकी व्याकुलता बढ़ा रहे हो ?" फिर आशु बाबूसे बोली, "ये संन्यासी आदमी ठहरे, वैरागी-गीरीमें पक गये हैं,—लिहाजा खाने पीनेकी तरफ इनकी त्रुटि किसीके नजर नहीं आ सकती। हाँ, अजित बाबूके लिए जरूर सोच है। इनका आजका खाना देखकर समझा जा सकता है कि ऐसे संसर्गमें भी ये जल्दी पक नहीं पाये हैं।"

हरेन्द्रने कहा, "शायद मनमें पाप होगा, इसीसे। पकड़े तो जायँगे ही किसी न किसी दिन।"

अजितका चेहरा मारे शरमके सुर्ख हो उठा, बोला, "आप न जाने क्या कह रहे हैं हरेन्द्र बाबू !"

नीलिमा क्षण-भर हरेन्द्रके मुँहकी तरफ देखती रही और बोली, "तुम्हारे मुँहपर फूल-चन्दन पड़े लालाजी, ऐसा ही हो, उनके मनमें थोड़ा बहुत पाप हो और किसी दिन पकड़े जायँ तो मैं कालीघाट जाकर ठाठसे पूजा दे आऊँ।"

"तो फिर तैयारियाँ करना शुरू कर दीजिए।"

अजित बहुत ही नाराज हो गया, बोला, "आप क्या वाहियात बक रहे हैं हरेन्द्र बाबू,—बड़ा भद्दा मालूम होता है।"

हरेन्द्रने फिर कुछ नहीं कहा। अजितके मुँहकी तरफ देखकर नीलिमाका कुतूहल तीक्ष्ण हो उठा, पर वह भी चुप रही।

इसके कुछ देर बात हरेन्द्रने नीलिमाको लक्ष्य करके कहा, " हमारे आश्रमपर कमल बहुत नाराज है। आपको शायद याद होगा भाभी ? "

नीलिमाने सिर हिलाते हुए कहा, " हाँ, है। अब भी उनका वही रुख है क्या ? "

हरेन्द्रने कहा, " वही रुख नहीं, बल्कि उससे भी जरा बढ़ गया है,—इतना फर्क है। " फिर बोला, " और, सिर्फ हम ही लोगोंपर नहीं, सब तरहकी धार्मिक संस्थाओंपर उनका आत्यंतिक अनुराग है। चाहे ब्रह्मचर्यको ले लीजिए, चाहे वैराग्यकी बात कीजिए; या ईश्वरकी चर्चा कीजिए; सुनते ही अहेतुक भक्ति और प्रीतिकी बहुलतासे वे अग्निवत् हो उठती हैं। और मिजाज अनुकूल हो तो बूढ़ों और बच्चोंके खेलमें भी कौतुकका आनन्द लेनेमें वे असमर्थ नहीं। कमाल ही समझिए। "

बेला चुप बैठी सुन रही थी, बोल उठी, " ईश्वर भी उनके लिए लड़कोंका खेल है और आप उन्हींके साथ मेरी तुलना कर रहे थे, आशु बाबू ? " इतना कहकर उसने एक तरफसे सबके मुँहकी ओर देखा, पर किसीकी तरफसे कोई उत्साह नहीं मिला। उसका रूखा स्वर किसीके कान तक पहुँचा या नहीं, सो भी ठीक समझमें नहीं आया।

हरेन्द्र कहने लगा, " और मजा यह कि उनके अपने अन्दर एक ऐसा निर्द्वन्द्व संयम, नीरव मिताचार और निःशंक तितिक्षा है कि देखके आश्चर्य होता है। आपको शिवनाथका मामला तो याद होगा आशु बाबू ! वह हम लोगोंका कौन था ? फिर भी इतना बड़ा अन्याय हमसे सहा नहीं गया, और दण्ड देनेकी आकांक्षासे हमारे मनके भीतर आग जल उठी। पर कमलने कहा, ' नहीं। ' उसका उस दिनका चेहरा मुझे स्पष्ट याद है। उसकी 'नहीं'में विद्वेष नहीं था, जलन नहीं थी, ऊपरसे हाथ बढ़ाकर दान देनेकी श्लाघा नहीं थी, और क्षमाका दम्भ भी नहीं था,—उसका दाक्षिण्य मानो अविकृत करुणासे भरा हुआ था। शिवनाथने चाहे कितना ही बड़ा अन्याय क्यों न किया हो, फिर भी, मेरे प्रस्तावर कमलने चौंककर सिर्फ यही कहा—' छिः छिः,—नहीं नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। ' अर्थात् एक दिन जिसे उसने प्यार किया है उसके प्रति निर्ममताकी तुच्छताकी वह कल्पना ही न कर सकी, और सबकी निगाहके ओझल उसके सब दोष चुपकेसे बिलकुल पोंछकर फेंक दिये। उसमें न कोई कोशिश थी न चञ्चलता थी, और न शोकाच्छन्न हाहाकारका

कोई भाव था,—मानो पहाड़के शिखरपरसे जलकी धारा लीलामात्रमें स्वतः ही बह आई हो।"

आशु बाबूने एक गहरी साँस ली और कहा, "सच्ची बात है।"

हरेन्द्र कहने लगा, "पर मुझे सबसे ज्यादा गुस्सा तब आता है जब वह सिर्फ हमारे आदर्शको ही नहीं बल्कि हमारे धर्म, इतिहास, श्रुति, नैतिक अनुशासन आदि सबको मजाकमें उड़ा देना चाहती है। मैं जानता हूँ कि उसके शरीरमें उत्कट विदेशी खून है और मनमें भी वैसी ही उग्रताके साथ पर-धर्मका भाव प्रवाहित है, फिर भी उसके मुँहके सामने खड़े होकर जवाब नहीं दे पाता। उसके कहनेमें न मालूम कैसी एक दृढ़ निश्चयकी दीप्ति फूट निकलती है कि मालूम होता है मानो उसने जीवनके तत्त्वको खोज लिया है। शिक्षाके जरिये नहीं, और न अनुभव-उपलब्धिके जरिये ही, बल्कि ऐसा लगता है कि तत्त्वको जैसे वह आँखोंसे साफ साफ प्रत्यक्ष देख रही हो।"

आशु बाबू खुश होकर बोले, "ठीक यही बात मेरे भी मनमें अनेक बार आई है। यही वजह है कि जैसी उसकी बातें हैं वैसे ही उसके काम हैं। वह अगर असत्य भी समझी हो, तो वह असत्य भी गौरवपूर्ण हो उठा है।" फिर जरा ठहर बोले, "देखो हरेन्द्र, एक तरहसे अच्छा ही हुआ जो वह पाखण्डी चला गया। उसको हमेशा ढककर रखनेसे न्यायकी मर्यादा नहीं रहती। सूअरके गलेमें मोतीकी मालाकी तरह यह भी अपराध होता।"

हरेन्द्रने कहा, "और फिर, दूसरी तरफ ऐसी माया-ममता है कि सिर्फ एक भाभीको छोड़कर मैं और किसी स्त्रीको उसके समान नहीं पाता। सेवामें ऐसी समझिए जैसे लक्ष्मी। शायद पुरुषोंसे बहुत-सी बातोंमें बहुत बड़ी होनेके कारण ही वह अपनेको उनके सामने ऐसी साधारण बनाये रखती है कि आश्चर्य होता है। मन छुड़ककर मानो पैरोंपर लोट जाना चाहता है।"

नीलिमाने हँसते हुए कहा, "लालाजी, तुम पहले जनममें शायद किसी राज-रानीके स्तुति-पाठक थे, इसीसे इस जनममें भी वह संस्कार दूर नहीं हुआ। लड़के पढ़ानेका काम छोड़कर अगर यह रोजगार करते तो इससे कहीं ज्यादा आराम पाते।"

हरेन्द्र हँस दिया, बोला, "क्या करूँ भाभी, मैं सरल सीधा आदमी हूँ, जो मनमें सोचता हूँ वही कह डालता हूँ। लेकिन, आप उन अजित बाबूसे पूछ देखिए जरा; अभी आस्तीन चढ़ाकर मारनेको तैयार हो जायँगे।—भले हो जायँ, पर जिन्दा रहीं तो देख लीजिएगा किसी दिन—"

अजित क्रुद्ध कण्ठसे बोल उठा, "आह, आप क्या कहते हैं हरेन्द्रबाबू, आपके आश्रमसे तो, मालूम होता है, अब चला ही जाना पड़ेगा किसी दिन।"

हरेन्द्रने कहा, "सो मैं जानता हूँ। पर जब तक गये नहीं हैं तब तक तो सहन करना पड़ेगा।"

"तो आप कहते जाइए जो तबीयत में आवे, मैं जाता हूँ।"

नीलिमाने कहा, "लालाजी, तुम अपने ब्रह्मचर्याश्रमको उठा क्यों नहीं देते? तुम भी बच जाओ और लड़कोंकी भी जान बचे।"

हरेन्द्रने कहा, "लड़के तो बच सकते हैं भाभी, पर मेरे बचनेकी कोई आशा नहीं; कमसे कम अक्षयके जीते जी तो कतई नहीं। वह मुझे यमराजके हवाले किये बगैर पीछा नहीं छोड़नेका।"

आशु बाबूने कहा, "तब तो, मालूम होता है, अक्षयसे तुम लोग डरते हो?"

"जी हाँ, डरते हैं। विष खाना सहज है, पर उसके कटाक्ष हजम करना असाध्य है। इन्फ्लुएंजामें इतने आदमी मर गये, पर वह नहीं मरा। ठीक वक्तपर भाग गया।"

सब हँस पड़े। नीलिमाने कहा, "अक्षय बाबूसे मैं बोलती नहीं, पर अबकी बार बाहर निकलकर तुम्हारी तरफसे मैं क्षमाकी भीख माँग लूँगी। भीतर ही भीतर जल-भुनकर खाक हुए जा रहे हो!"

हरेन्द्रने कहा, "हम लोग ही तो पकड़े जायँगे भाभी, आप लोग तो सब जलने-भुननेके परे पहुँच चुकी हैं। विधाताने आगकी सृष्टि सिर्फ हम ही लोगोंको जलानेके लिए की थी, आप लोग उसके इलाकेसे बाहर हैं!"

नीलिमा मारे शर्मके सुर्ख हो उठी, बोली, "और नहीं तो क्या!"

बेलाने कहा, "ठीक तो है। बाहर तो हैं ही।"

क्षण-भर सब चुप रहे। अजितने कहा, "उस दिन ठीक इसी विषयपर एक बड़ी सुन्दर कहानी पढ़ी थी।" फिर आशु बाबूकी तरफ देखकर पूछा, "आपने नहीं पढ़ी क्या?"

"कौन-सी, याद तो नहीं पड़ता।"

"आपके जो मासिक पत्र विलायतसे आते हैं, उन्हींमेंसे किसीमें है। किसी नार्वेजी लेखिकाकी कहानीका अँग्रेजी अनुवाद है। लेडी-डाक्टर अपने परिचयमें कहती है, 'मैंने यौवन पार करके प्रौढ़त्वमें कदम रक्खा

है।'—वह है न सामनेके शेल्फपर—" कहता हुआ वह पत्रिका उठा लाया।

आशु बाबूने पूछा, "कहानीका नाम क्या है?"

अजितने कहा, "नाम जरा अजीब-सा है—'एक दिन : जिस दिन मैं नारी थी।"

बेलाने कहा, "इसके मानी? लेखिका अब पुरुषोंमें शामिल हो गई है क्या?"

अजितने कहा, "लेखिकाने आप-बीती लिखी है और शायद डाक्टर होनेकी वजहसे नारी-देहके क्रमविकासका जो चित्र खींचा है वह कहीं कहीं रुचिको चोट पहुँचाता है। जैसे—"

नीलिमा चटसे बोल उठी, "'जैसे' बतानेकी जरूरत नहीं अजित बाबू, रहने दीजिए।"

अजितने कहा, "रहने दीजिए। मगर उन्होंने नारीके भीतरका, यानी उसके हृदयका जो चित्र खींचा है वह मधुर न होते हुए भी आश्चर्यजनक है।"

आशु बाबूको कुतूहल हुआ, बोले, "अच्छी बात है अजित, जरा-कुछ काट-छाँट करके संक्षेपमें सुनाओ तो सुनें। मेह भी अभी रुका नहीं और रात भी ज्यादा नहीं हुई।"

अजितने कहा, "कहानी बहुत बड़ी है, इसलिए काट-छाँट कर ही पढ़ी जा सकती है,—आप चाहें तो पीछे पूरी पढ़ लीजिएगा।"

बेलाने कहा, "पढ़िए, जरा सुनें। कमसे कम वक्त तो कटेगा।"

नीलिमाके मनमें आई कि उठ कर चली जाय, पर जानेका कोई बहाना न मिलनेके कारण वह संकोचके साथ वहीं बैठी रही।

बत्तीके सामने बैठकर अजित किताब खोलकर कहने लगा, "शुरू शुरूमें जरा भूमिका-सी है, उसे संक्षेपमें कह देना जरूरी है। जिसकी यह आत्मा-कहानी है वह सुन्दरी है, सुशिक्षिता है और बड़े घरकी लड़की है। चरित्र निष्कलंक था या नहीं, इसका कहानीमें स्पष्ट उल्लेख नहीं है, पर इतना निसन्देह समझमें आ जाता है कि अगर उसके कोई दाग किसी दिन किसी कारणसे लगा भी हो तो वह यौवनके प्रारम्भमें,—बहुत दिन पहले लगा होगा।

"उस दिन उसको बहुतोंने चाहा था;—एकने तो समस्याका कोई हल न पाकर आत्म-हत्या कर ली और एक चला गया समुद्रके उस पार कनाड़ामें। चला तो गया, पर आशा न छोड़ सका। दूरसे कृपा-भिक्षा माँगते हुए उसने

इतनी चिट्ठियाँ लिखीं कि उन्हें अगर इकट्ठा किया जाता तो एक समूचा जहाज भर जाता लेकिन जवाबकी आशा उसने नहीं की, और न जवाब पाया ही। उसके बाद एक दिन दोनोंमें मुलाकात हुई। देखते ही सहसा मानो वह चौंक पड़ा। इस बीच पन्द्रह वर्ष बीत गये थे, और इसकी उसे धारणा ही नहीं थी कि जिसे वह पचीस सालकी युवती देखकर विदेश चला गया था उसकी उमर अब चालीस सालकी हो गई है। कुशल-प्रश्न अनेक हुए, उलाहने भी कम पेश नहीं किये गये, परन्तु, पहले आँखें चार होते ही उसकी आँखोंके कोनोंसे जो चिनगारियाँ निकलने लगती थीं और उन्मत्त-कामनाका जो झंझावात समस्त इन्द्रियोंके बन्द दरवाजोंको तोड़कर बाहर निकलना चाहता था,—आज उसका कोई चिह्न तक कहीं दिखाई नहीं दिया। अब वह न जाने कबका स्वप्न-सा मालूम देने लगा। स्त्रियोंको और सब विषयोंमें धोखा दिया जा सकता है, पर इस विषयमें नहीं।—यहींसे कहानी शुरू होती है।" कहकर अजित आगे पढ़नेके विचारसे किताबके पन्नेपर झुक पड़ा।

आशु बाबूने टोकते हुए कहा, "नहीं नहीं, अँग्रेजी नहीं अजित, अँग्रेजी नहीं। तुम्हारे मुँहसे हिन्दीमें कहानीका सहज भाव बहुत मीठा लग रहा है, तुम बाकीका हिस्सा भी इसी तरह कहते जाओ।"

"मुझसे बनेगा कैसे?"

"बनेगा, बनेगा। जैसे अभी कह रहे थे वैसे ही कहते जाओ।"

अजितने कहा, "हरेन्द्र बाबूकी तरह मुझे भाषाका ज्ञान नहीं; भाषाके दोषसे अगर साराका सारा कडुआ हो जाय तो उसमें मेरी ही असमर्थता समझिएगा।" इसके बाद वह कभी किताबके पन्नेकी तरफ देखकर और कभी बगैर देखे ही कहने लगा।

"फिर वह घर पहुँची। उस आदमीको उसने कभी प्यार नहीं किया था और न करना चाहा था; बल्कि, सर्वान्तःकरणसे उसने हमेशा यही प्रार्थना की थी कि भगवान किसी दिन उसे मोह-मुक्त कर दें,—उसे इस निष्फल प्रणयके दाहसे छुटकारा दे दें,— असम्भव वस्तुके लुब्ध आश्वाससे वह अब तकलीफ न पाये। देखा गया, कि भगवानने इतने दिनों बाद उसकी वही प्रार्थना मंजूर की है। कोई बात नहीं हुई; मगर फिर भी इतना तो निःसन्देह समझमें आ गया कि वह कनाड़ा वापस जाय या न जाय, पर दीनतासे प्रणयकी भीख माँगकर न अब वह खुद ही निरन्तर दुःख पायेगा और न

उसे ही दुःख देगा। दुःसाध्य समस्याकी आज मानो अन्तिम मीमांसा हो गई। हमेशासे 'नहीं' कह कर बराबर वह स्त्री अस्वीकार ही करती आई है, और आज भी उसमें व्यतिक्रम नहीं हुआ, किन्तु वह अन्तिम 'नहीं' आज आई उलटी तरफसे। उस स्त्रीने इसकी स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की थी कि दोनों 'नहीं' में इतना जबरदस्त प्रभेद होगा। पुरुषोंकी लोलुप दृष्टिने हमेशा उसे परेशान ही किया है, लज्जासे पीड़ित ही किया है,—आज ठीक उसी दिशासे अगर उसे मुक्ति मिली हो, और शरीर-धर्मके कारण उसके अस्तप्राय यौवनने अगर पुरुषोंकी उद्दीप्त कामना, उन्माद और आसक्तिका रास्ता रोक दिया हो, तो इसमें शिकायतकी कौन-सी बात है ? मगर फिर भी, घर लौटते समय, रास्तेमें, मानो आज सारा विश्व-संसार उसे बिलकुल अपरिचित मूर्ति धारण करके दिखाई देने लगा। प्रेम नहीं, हृदयमें एकान्त मिलनकी व्याकुलता नहीं,—ये सब तो दूसरी बातें हैं, बड़ी बातें हैं। किन्तु आजके पहले उसे इसकी क्या खबर थी कि जो बड़ी नहीं, जो रूपज हैं, अशुभ हैं, असुन्दर हैं, अत्यन्त क्षणस्थायी हैं,—उन सब कुत्सित बातोंके लिए भी उस नारीके अविज्ञात चित्तके नीचे इतना बड़ा आसन बिछा हुआ था ! और उनके कारण पुरुषकी विमुखता उसे ऐसे निर्मम अपमानसे आहत कर सकती है !"

हरेन्द्रने कहा, "अजित कहते तो बड़े अच्छे ढंगसे हैं। कहानीको खूब ध्यानसे पढ़ा है।

स्त्रियाँ चुपचाप बैठीं सिर्फ देखती रहीं, उन्होंने कुछ राय जाहिर नहीं की।

आशु बाबूने कहा, "हाँ। उसके बाद, अजित ?"

अजित कहने लगा, "फिर उस महिलाको अचानक खयाल आया कि सिर्फ एक ही पुरुष तो उसे नहीं चाहता था, बहुतसे लोग बहुत दिनोंसे उससे प्रेम करते आ रहे थे, प्रार्थना करते आ रहे थे,—उस दिन उसकी जरा-सी मुसकान और मुँहके केवल एक शब्दके लिए उनकी व्याकुलताकी हद न थी। प्रतिदिनके प्रत्येक पदक्षेपमेंसे वे न जाने कहाँसे और किस जमीनको फोड़कर बाहर निकल आते थे। पर वे सब भी आज कहाँ गये ? कहीं भी तो नहीं गये— अब भी तो कभी कभी दिखाई दे जाते हैं। तो क्या उसके अपने कण्ठका स्वर बिगड़ गया है ? उसकी हँसीका रूप बदल गया है ? अभी अभी उस दिनकी बात ही तो है,—दस पन्द्रह वर्ष, सो ऐसे कितने दिन हो गये ?— इतनेमें क्या उसका सब कुछ बीत गया, सब कुछ खो गया ?"

आशु बाबू सहसा बोल उठे, " गया कुछ भी नहीं अजित, गया हो तो शायद उसका यौवन,—उसकी मा होनेकी शक्ति खो गई होगी।"

अजित उनकी तरफ देखकर बोला, " यही बात है। कहानी आपने पढ़ी थी?"

" नहीं।"

" नहीं तो ठीक यही बात आपने कैसे जान ली?"

आशु बाबू उत्तरमें सिर्फ जरा हँस दिये, बोले, " तुम आगे पढो।"

अजित कहने लगा, " घर लौटकर वह अपने शयनागारमे खूब बड़े आईनेके सामने बत्ती जलाकर खड़ी हो गई। बाहर जानेकी पोशाक उतारकर रातके सोनेके कपड़े पहनते पहनते अपनी छायापर आज पहले-पहल उसकी नजर पड़ी और पड़ते ही एकाएक मानो उसकी दृष्टि ही बदल गई। इस तरह धक्का खाये बगैर शायद अब भी उसे दिखाई न देता कि नारीकी जो सबसे बड़ी सम्पदा है,—आप जिसे बता रहे थे कि उसकी मा होनेकी शक्ति,—वह शक्ति आज बिलकुल निस्तेज और म्लान हो चुकी है; वह आज सुनिश्चित मृत्युके मार्गपर कदम बढाये खड़ी है; इस जीवनमें अब उसे वापस नहीं लाया जा सकता। उसकी निश्चेतन देहके ऊपरसे अविच्छिन्न जल-धाराकी तरह बहकर वह सम्पदा प्रतिदिनकी व्यर्थतामें क्षय हो चुकी है। यह बात उसे आज इस शेष समयमें मालूम हुई कि इतना बड़ा ऐश्वर्य इतना स्वल्पायु है।"

आशु बाबूने एक गहरी उसाँस ली और कहा, " ऐसा ही होता है अजित, ऐसा ही होता है। जीवनकी बहुत-सी बड़ी चीजोंको हम तब पहचान पाते हैं जब उन्हें खो देते हैं। हाँ, फिर?"

अजित कहने लगा, " फिर उस आईनेके सामने खड़ी खड़ी वह अपने यौवनान्त शरीरका सूक्ष्मातिसूक्ष्म विश्लेषण करती है। एक दिन क्या थी और आज क्या होने जा रही है? मगर उस वर्णनको न मैं कह सकता हूँ और न पढ ही सकता हूँ।"

नीलिमा पहलेकी भाँति ही व्यस्त होकर बोल उठी, " न न न, अजित बाबू, उसे रहने दीजिए। उसे छोड़कर आगे कहिए।"

अजित कहने लगा, " उस महिलाने विश्लेषणके अन्तमें कहा है कि जिस

तरह नारीके दैहिक सौन्दर्यके समान सुन्दर वस्तु इस संसारमें नहीं है, उसी तरह इसकी विकृतिके समान असुन्दर वस्तु भी शायद ही पृथिवीपर कोई हो।"

आशु बाबूने कहा, "यह जरा कुछ ज्यादती है अजित।"

नीलिमाने सिर हिलाते हुए प्रतिवाद किया, "नहीं, जरा भी ज्यादती नहीं इसमें। बिलकुल सच है।"

आशु बाबूने कहा, "मगर उसकी जितनी उमर है उसे तो विकृतिकी उमर नहीं कहा जा सकता, नीलिमा।"

नीलिमाने कहा, "कहा जा सकता है। कारण, वह तो कोई सालोंकी गिनतीसे स्त्रियोंके जीनेका हिसाब नहीं है; इस बातको और चाहे जो भूल जाय, पर स्त्रियोंके भूलनेसे काम नहीं चलेगा कि यौवनका आयुष्काल अत्यन्त ही कम है।"

अजित सिर हिलाता और खुश होता हुआ बोला, "ठीक यही उत्तर उसने खुद दिया है। कहा है, "आजसे समाप्तिकी शेष प्रतीक्षा करते रहना ही होगा अवशिष्ट जीवनका एकमात्र सत्य। मैं जानती हूँ कि इसमें कोई सान्त्वना नहीं, आनन्द नहीं, आशा नहीं,—फिर भी उपहासकी लज्जासे तो बच ही जाऊँगी। ऐश्वर्यका भग्न स्तूप आज भी शायद किसी अभागेका मन हरण कर सके, परन्तु वह मुग्धता जैसे उसके लिए विडम्बनाके सिवा कुछ नहीं, वैसे ही मेरे लिए भी वह मिथ्या है, झूठ है। यह मुझसे नहीं होगा कि जिस रूपका सचमुचका प्रयोजन खतम हो चुका है, उसीको नाना प्रकारसे, नाना वेश-भूषासे सजाकर कहूँ कि 'खतम नहीं हुआ' तथा अपनेको और दूसरोंको भी धोखा देकर ठगती फिरूँ'।"

इसपर और किसीने कुछ नहीं कहा, सिर्फ नीलिमा बोल उठी, "बहुत सुन्दर है। ये शब्द उसके मुझे बहुत ही सुन्दर लगे अजित बाबू।"

और सबोंकी तरह हरेन्द्र भी खूब ध्यानसे सुन रहा था; वह इस मन्तव्यसे खुश न हुआ, बोला, "यह आपका भावावेशका उफान है भाभी, खूब सोच-विचारके नहीं कहा आपने। ऊँची डालपर सेमरका फूल भी सहसा सुन्दर दीख पड़ता है, फिर भी फूलोंके दरबारमें उसकी कोई कदर नहीं। रमणीकी देह क्या ऐसी तुच्छ चीज है कि इसके सिवा उसका और कोई उपयोग ही न हो?"

नीलिमाने कहा, "नहीं है, सो तो लेखिकाने कहा नहीं। यह आशंका उसे

खुद भी थी कि अभागे आदमियोंकी आवश्यकता आसानीसे नहीं मिटती।" फिर जरा हँसकर कहा, "और उफानकी जो बात कह रहे थे छोटे बाबू, सो अक्षय बाबू मौजूद नहीं, वे होते तो समझ जाते कि उफानकी ज्यादती किस ओर है।"

हरेन्द्रने जवाब दिया, "आप गाली-गलौज करती रहेंगी तो मैं ऊब जाऊँगा, सो नहीं होगा भाभी।"

सुनकर आशु बाबू खुद भी जरा हँस दिये, बोले, "वास्तवमें हरेन्द्र, मुझे भी ऐसा लगता है कि इस कहानीमें लेखिकाने स्त्रियोंके रूपके वास्तविक प्रयोजनकी तरफ ही इशारा किया है।"

"मगर, क्या वही ठीक है?"

"ठीक नहीं, यह बात दुनियाकी तरफ देखते खयाल करना कठिन है।"

हरेन्द्रने उत्तेजित हो उठा, कहने लगा, "दुनियाकी तरफ देखकर आप चाहे कुछ भी खयाल करें, मनुष्यकी तरफ देखकर इसे स्वीकार करना मेरे लिए भी कठिन है। मनुष्यका प्रयोजन जगतके साधारण प्रयोजनको पार करके बहुत दूर चला गया है; इसीसे तो उसकी समस्या ऐसी विचित्र,—ऐसी दुरूह होती जा रही है। इसीमें तो उसकी मर्यादा है आशु बाबू, कि चलनीमें छानकर उसे अलग नहीं किया जा सकता।"

"सो हो सकता है। कहानीका बाकी हिस्सा क्या है, सुनाओ तो अजित!"

हरेन्द्र क्षुण्ण हो गया, बाधा देते हुए बोला, "सो नहीं होगा आशु बाबू। यह मैं नहीं होने दूँगा कि इस बातको तुच्छ समझकर आप जवाब देनेसे बच जायँ। या तो मेरी बात स्वीकार कीजिए या फिर मेरी गलती दिखा दीजिए। आपने बहुत कुछ देखा है, बहुत पढ़ा है,—बहुत बड़े विद्वान् हैं आप,—यह मुझसे नहीं सहा जायगा कि इस अनिर्दिष्ट ढीली-ढाली बातकी सेंधमेंसे भाभी जीत जायँ। कहिए?"

आशु बाबू हँसते हुए बोले, "तुम ब्रह्मचारी आदमी ठहरे,—रूपके विवेचनमें हार भी जाओ तो इसमें तुम्हारे लिए लज्जाकी कोई बात नहीं हरेन्द्र।"

"नहीं, सो मैं नहीं सुनूँगा।"

आशु बाबू क्षण-भर चुप रहे, फिर धीरे धीरे बोले, "तुम्हारी बातको अप्रमाणित ठहरानेके लिए कमर बाँधकर बहस करनेमें मुझे शर्म आती है। वास्तवमें यही अच्छा है कि नारीके रूपका निगूढ़ अर्थ अपरिस्फुट ही रहे।

फिर जरा चुप रहकर बोले, " अजितकी कहानी सुनते सुनते मुझे बहुत दिन पहलेकी एक दुःखकी कहानी याद आ रही थी। बचपनमें मेरे एक अँग्रेज मित्र थे; वे एक पोलिश स्त्रीको प्यार करते थे। लड़की बहुत ही सुन्दर थी; छात्राओंको पियानो सिखाकर जीविका चलाती थी। सिर्फ रूपमें ही नहीं, अनेक गुणोंसे गुणवती भी थी। हम सभी उनकी शुभ कामना करते थे और निश्चित जानते थे कि उनके विवाहमें कहीं भी कोई विघ्न न आयेगा। "

अजितने पूछा, " विघ्न कैसे आया ? "

आशु बाबूने कहा, " सिर्फ उमरकी बातपर। देशसे एक दिन उसकी मा आ पहुँची, उसीके मुँहसे बातों ही बातोंमें अचानक पता लगा कि उसकी उमर पैंतीस पार कर चुकी है। "

सुनकर सब चौंक पड़े। अजितने पूछा, " उस महिलाने क्या आप लोगोंसे अपनी उमर छिपाई थी ? "

आशु बाबूने कहा, " नहीं। मेरा विश्वास है कि पूछनेपर वह छिपाती नहीं,—उसकी ऐसी प्रकृति ही न थी—मगर पूछनेकी बात किसीके ध्यानमें ही न आई। उसकी देहकी गठन ऐसी थी, चेहरेकी ऐसी सुकुमार श्री थी और ऐसा मधुर कण्ठस्वर था कि कभी किसीको आशंका ही न हुई कि उसकी उमर तीससे ज्यादा हो सकती है। "

बेलाने कहा, "आश्चर्य है ! आप लोगोंमेंसे किसीके क्या ऑंखें ही न थीं ? "

" थीं क्यों नहीं। मगर दुनियाके सभी आश्चर्य ऑंखोंसे नहीं पकड़े जा सकते। इसे उसीका एक दृष्टान्त समझो। "

" और उस आदमीकी उमर क्या थी ? "

" वह मेरी ही उमरका था,—तब शायद अट्ठाईस-उनतीससे ज्यादा न होगी। "

" फिर ? "

आशु बाबूने कहा, " फिरकी घटना अत्यन्त संक्षिप्त है। उस युवकका सारा हृदय एक ही क्षणमें उस प्रौढ़ा रमणीके विरुद्ध मानो पाषाण बन गया। उस बातको जमाना बीत गया, पर आज भी खयाल करता हूँ तो मनमें एक तरहकी टीस उठती है। कितने आँसू, कितनी हाय हाय, कितना जाना-आना, कितना मनाना-रिझाना होता रहा; पर उसके मनसे उस नफरतको जरा भी

हिलाया डुलाया नहीं जा सका। इस बातके आगे वह और कुछ सोच ही न सका कि यह व्याह असम्भव है। ”

क्षण-भर सभी चुप रहे। नीलिमाने पूछा, “ मगर बात इससे ठीक उलटी होती तो शायद असम्भव न होता ? ”

“ शायद न होता। ”

“ पर ऐसा व्याह क्या उस देशमें एक भी नहीं होता ? ऐसे पुरुष क्या वहाँ है ही नहीं ? ”

आशु बाबूने हँसते हुए जवाब दिया, “ हैं क्यो नहीं। इस कहानीकी लेखिकाने शायद खास तौरसे ऐसे ही पुरुषोंको लक्ष्य करके ‘ अभागे ’ विशेषणका प्रयोग किया है। लेकिन अब रात तो बहुत हो गई अजित, इसका अन्त क्या है ? ”

अजितने चौंककर उनकी ओर देखा, और कहा, “ मैं आपकी ही कहानीकी बात सोच रहा था। इतना प्रेम होते हुए क्यों वह उसे ग्रहण नहीं कर सका ? इतनी बड़ी सत्य वस्तु किधरसे कैसे एक क्षणमें झूठी हो गई ?—जिन्दगी-भर शायद वह महिला यही सोचती रही होगी, ‘ एक दिन : जिस दिन मैं नारी थी। ’ इसके पहले शायद उस विगतयौवना नारीने कभी इस बातकी चिन्ता भी न की होगी कि नारीत्वकी वास्तविक समाप्ति नारीके विना जाने ही कब और कैसे हो जाती है। ”

“ लेकिन तुम्हारी कहानीका शेष ? ”

अजित शान्त भावसे बोला, “ रहने दीजिए। यौवनका वह शेष अभी तक निश्शेष नहीं हुआ,—अपने और दूसरोंके आगे स्त्रियोंकी इस प्रतारणाकी करुण-कहानीके साथ कहानी खतम होती है। अब आज रहने दीजिए, फिर किसी दिन सुनाऊँगा। ”

नीलिमाने सिर हिलाते हुए कहा, “ नहीं नहीं, इससे तो बल्कि उसे असमाप्त ही रहने दीजिए। ”

आशु बाबूने भी हाँमें हाँ मिला दी, वेदनाके साथ बोले, “ वास्तवमें स्त्रियोंके लिए यही समय निसंग जीवन होनेके कारण सबसे बुरा होता है। इसीसे शायद असहिष्णु, कपटी, पर-छिद्रान्वेषी,—यहाँ तक कि निष्ठुर होकर सब देशके पुरुष इन अविवाहिता प्रौढ़ा स्त्रियोंसे बचकर चलना चाहते हैं नीलिमा। ”

नीलिमाने हँसकर कहा, "ऐसा कहना ठीक नहीं आशु बाबू, बल्कि यों कहिए कि तुम जैसी पति-पुत्रहीना अभागी स्त्रियोंसे बचकर चलना चाहते हैं।"

आशु बाबूने इसका कोई जवाब नहीं दिया, पर इशारेको स्वीकार कर लिया। बोले, "पर मजा तो यह है कि जो पति-पुत्रसे सौभाग्यवती हैं, वे स्नेह-प्रेम और सौन्दर्य-माधुर्यसे ऐसी परिपूर्ण हो उठती हैं कि उन्हें पता भी नहीं लग पाता कि जीवनका इतना बड़ा संकट-काल कब और किस रास्तेसे निकल गया।"

नीलिमाने कहा, "उन भाग्यवतियोंसे मैं डाह नहीं करती आशु बाबू, ऐसी प्रेरणा आज तक मनमें कभी नहीं आई,-पर भाग्यके दोषसे जो हमारी तरह भविष्यकी सारी आशाओंको जलाञ्जलि दे चुकी हैं, बता सकते हैं कि उनके मार्गका निर्देश किस तरफ है?"

आशु बाबू कुछ देर तक तो स्तब्ध हुए बैठे रहे, फिर बोले, "इसके जवाबमें मैं सिर्फ बड़ोंकी बातकी प्रतिध्वनि मात्र कर सकता हूँ नीलिमा, उससे ज्यादा मुझमें शक्ति नहीं। वे कह गये हैं कि दूसरोंके लिए अपनेको उत्सर्ग कर देना चाहिए। संसारमें न तो दुःखका ही अभाव है और न आत्म-निवेदनके दृष्टान्तोंका असद्भाव है। यह सब मैं भी जानता हूँ,—परन्तु इसे मैं आज तक निःसंशय होकर नहीं जान पाया कि इसके भीतर नारीका सचमुचका निरवरुद्ध कल्याणमय आनंद है या नहीं।"

हरेन्द्रने पूछा, "यह सन्देह क्या आपको शुरूसे ही था?"

आशु बाबू मन ही मन कुछ कुण्ठितसे हुए, जरा ठहरकर बोले, "ठीक याद नहीं पड़ता हरेन्द्र। मनोरमाको गये तब दो-तीन दिन हुए होंगे। मन बोझिल था और शरीर विवश। इसी कुरसीपर चुपचाप पड़ा था, अचानक देखा कि कमल आ पहुँची है। आदरसे बुलाके उसे पास बिठाया। मेरी व्यथाकी जगहको सावधानीसे बचाते हुए उसने निकल भी जाना चाहा, पर वह निकल नहीं सकी। बातों ही बातोंमें कुछ ऐसा प्रसंग उठ खड़ा हुआ कि फिर उसे कुछ होश ही न रहा। तुम लोग तो उसे जानते ही हो, जो भी कुछ प्राचीन है उसपर उसे कैसी प्रबल वितृष्णा है! उसे झकझोरकर तोड़ डालना ही मानो उसका 'पैशन' (=उत्कट इच्छा) है। मन गवाही नहीं देना चाहता, हमेशाका संस्कार मारे डरके सिकुड़ जाता है। फिर भी जवाब ढूँढ़े नहीं मिलता और हार माननी पड़ती है। याद है, उस दिन भी मैंने उसके सामने स्त्रियोंके आत्मोत्सर्गका उल्लेख किया था, मगर उसने उसे मंजूर ही

नहीं किया। कहने लगी, 'स्त्रियोंकी बात मैं आपसे ज्यादा जनती हूँ। वह प्रवृत्ति उनमें है तो पर वह उनके भीतरकी पूर्णतासे नहीं आती, आती है सिर्फ शून्यतासे, और उठती है हृदय खाली करके। वह तो स्वभाव नहीं अभाव है और अभावके आत्मोत्सर्गपर मैं कानी-कौड़ीका भी विश्वास नहीं करती।' मेरी तो समझमें ही न आया कि इसका क्या जवाब दूँ, फिर भी मैंने कहा, 'कमल, हिन्दू सभ्यताकी मूल वस्तुसे तुम्हारा परिचय होता तो आज शायद तुम्हें मैं समझा देता कि त्याग और विसर्जनकी दीक्षामें सिद्धि प्राप्त करना ही हमारी सबसे बड़ी सफलता है और इसी मार्गका अवलम्बन कर हमारी कितनी ही विधवा स्त्रियाँ जीवनकी सर्वोत्तम सार्थकता अनुभव कर कर गई हैं।' इसपर कमल हँसकर बोली, 'करते हुए देखा है आपने? एक-आध नाम तो बताइए?' मुझे नहीं मालूम था कि वह ऐसा प्रश्न कर बैठेगी, बल्कि मैंने तो यह सोचा था कि शायद वह बातको मान लेगी। मैं बड़े चक्करमें पड़ गया—"

नीलिमा बोल उठी, "खूब! आपने मेरा नाम क्यों नहीं बता दिया? याद नहीं आई होगी शायद?"

कैसा कठोर परिहास है! हरेन्द्र और अजितने सिर झुका लिया, और बेलाने दूसरी तरफ मुँह फेर लिया।

आशु बाबू कुछ अप्रतिभसे तो हुए, पर, उन्होंने यह जाहिर नहीं होने दिया, बोले, "नहीं, याद ही नहीं आई। आँखोंके सामनेकी चीजपर जैसे कभी कभी नजर नहीं पड़ती वैसे ही। तुम्हारा नाम ले देनेसे सचमुच ही उसका माकूल जवाब हो जाता, किन्तु तब वह याद ही नहीं आया।

"तब कमलने कहा, 'मुझे जिस शिक्षाका आपने उलाहना दिया है, खुद आप लोगोंके सम्बन्धमें भी क्या वह सोलहों आने सच नहीं है? सार्थकताका जो आइडिया बचपनसे ही लड़कियोंके दिमागमें आप लोग भरते आये हैं, उसकी रटी हुई बातोंको ही तो वे दर्पके साथ दुहराकर सोचा करती हैं कि शायद वही सत्य है। नतीजा यह होता है कि आप लोग भी धोखा खाते हैं और आत्म-प्रसादके व्यर्थ अभिमानमें वे खुद भी मर मिटती हैं।'

"इतना कहके वह फिर बोली, 'सहमरणकी बात तो आपके ध्यानमें आनी चाहिए। जो स्त्रियाँ जलके मरती थीं और जो उन्हें प्रेरणा दिया करते थे: दोनों ही पक्षोंका दम्भ उस दिन यह सोचकर आकाशसे जा छूता था कि वैधव्य-जीवनके इतने बड़े आदर्शका दृष्टान्त संसारमें और है कहाँ?'

" इसका मैं क्या उत्तर देता, कुछ समझमें ही न आया। मगर उसने उत्तरकी अपेक्षा भी नहीं की, खुद ही कहने लगी, ' उत्तर है ही नहीं, देंगे क्या ? ' फिर जरा ठहरकर मेरे मुँहकी तरफ देखके बोली, ' लगभग सभी देशोंमें आत्मोत्सर्ग शब्दसे एक तरहका बहुव्याप्त और बहुप्राचीन पारमार्थिक मोह है। उस मोहका नशा जिसे चढ़ता है, उसकी दृष्टिमें परलोककी असाधारण अवस्तु भी इस लोककी संकीर्ण साधारण वस्तुतकको ढक देती है,—वह उसे सोचने ही नहीं देती कि उसमें नर और नारी इन दोनोंमेंसे किसीके भी जीवनका श्रेय है या नहीं। उस वस्तुको स्वतःसिद्ध सत्यकी भाँति उसके संस्कार उससे मानो कान पकड़वाके मनवा लेते हैं,—उसी तरह जिस तरह कि लगभग सहमरणको उन्होंने मनवा लिया था। बस अब और नहीं, मैं जाती हूँ। कहकर उसे सचमुच ही चले जाते देखकर मैंने व्यस्त होकर कहा, ' कमल, प्रचलित नीति और समस्त प्रतिष्ठित सत्यको अवज्ञासे चूरा चूरा कर देना ही मानो तुम्हारा व्रत है। यह शिक्षा जिसने तुम्हें दी है उसने जगतका कल्याण नहीं किया है। '

" कमलने कहा, ' मेरे पिताने दी है। '

" मैंने कहा, ' तुम्हारे ही मुँहसे सुना है कि वे ज्ञानी और विद्वान् आदमी थे। यह बात क्या उन्होंने कभी तुम्हें सिखाई ही नहीं कि अन्ततक सर्वस्व दान करके ही आदमी सत्य-रूपमें अपनेको पाता है ? स्वेच्छासे दुःख स्वीकार करनेमें ही आत्माकी यथार्थ प्रतिष्ठा है।'

" कमलने कहा, ' वे तो यही कहा करते थे कि आदमीका सर्वस्व चूस लेनेका जिन्होंने षड्यंत्र रच रक्खा है,—जिन्हें दुःखका अनुभव नहीं, वे ही दुःख स्वीकार करनेकी महिमा गानेमें पंचमुख हो जाया करते हैं। वह दुःख संसारके दुर्लंघ्य शासनका नहीं है,—वह तो मानो उसे स्वच्छासे जान-बूझकर बुला लाना है,—अर्थहीन शौककी चीजकी तरह महज एक लड़कोंका खेल है वह। उससे बड़ा नहीं। '

" मैं तो मारे आश्चर्यके हतबुद्धि-सा हो गया। बोला, ' कमल, तुम्हारे पिता क्या तुम्हें शुद्ध भोगका मंत्र ही दे गये हैं, और जगतमें जो कुछ महान् है उसपर अश्रद्धासे अवज्ञा करनेको ही कह गये हैं ? '

" कमलने इस तरहके दोषारोपकी शायद मुझसे आशा नहीं की थी। उसने क्षुण्ण होकर उत्तर दिया, ' यह आपकी असहिष्णुताकी बात है आशु

बाबू । आप निश्चित जानते हैं कि कोई भी पिता अपनी कन्याको ऐसा मंत्र नहीं दे जा सकता । मेरे पिताके प्रति आप अविचार कर रहे हैं । वे साधु पुरुष थे । '

" मैंने कहा, ' जैसा कि तुम कह रही हो, यदि वास्तवमें यह शिक्षा वे तुम्हें दे गये हों तो उनके प्रति सुविचार करना भी कठिन है । मनोरमाकी मृत्युके बाद अन्य किसी स्त्रीको जो मैं प्यार न कर सका इसे सुनकर तुमने कहा था कि यह चित्तकी कमज़ोरी है, और कमज़ोरीको लेकर गर्व नहीं किया जा सकता । मृत पत्नीकी स्मृतिके सम्मानको तुमने निष्फल आत्म-निग्रह कहके उपेक्षाकी दृष्टिसे देखा था । संयमके कोई मानी ही उस दिन तुम्हारे ध्यानमें नहीं आये थे । '

" कमलने कहा, ' आज भी नहीं आते आशु बाबू । जो संयम उद्धत आस्फालनसे जीवनके आनन्दको म्लान कर देता है वह तो कोई चीज ही नहीं,—महज मनकी एक लीला है,—उसे बाँधनेकी जरूरत है । सीमा मानकर चलना ही तो सयम है ।—शक्तिकी स्पर्द्धामें भी संयमकी सीमाको लाँघ जाना सम्भव है । तब फिर उसे उतनी इज्जत नहीं दी जा सकती । यह बात क्या आपने कभी विचारके नहीं देखी कि अति-संयम भी एक तरहका असंयम है ? '

" विचारके नहीं देखी, यह सच था । इसीसे विचार देखनेकी बात चटसे याद आ गई । मैंने कहा, ' यह तो सिर्फ तुम्हारी बातोंकी आदूगरी है उसी भोगकी वकालतसे भरी हुई । पर आदमी जितना ही ज्यादा जकड़-पकड़के भोगको लील जाना चाहता है, उतना ही उसे खो बैठता है । उसकी भोगकी भूख तो मिटती ही नहीं,—बल्कि निरन्तर अतृप्ति ही बढ़ती चलती है । इसीसे हमारे शास्त्रकार कह गये हैं कि उस मार्गमें शान्ति नहीं है, तृप्ति नहीं है, उससे मुक्तिकी आशा व्यर्थ है । उनका कहना है कि ' न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति, हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्द्धते । ' आगमें घी देनेसे जैसे वह और भी जोरसे जलने लगती है, वैसे ही भोग-उपभोगोंके द्वारा कामना बढ़ती ही जाती है, कभी घटती नहीं । "

हरेन्द्र उद्विग्न होकर बोल उठा, " उसके सामने शास्त्र-वाक्य आप क्यों कहने गये ? हाँ, फिर ? "

आशु बाबूने कहा, " तुमने ठीक कहा । सुनकर वह हँस पड़ी और बोली,

'शास्त्रमें ऐसी बात है क्या? सो तो होगी ही। उन्हें यह भी तो मालूम था कि ज्ञानकी चर्चासे ज्ञानकी इच्छा बढ़ती है, धर्मकी साधनासे धर्मकी प्यास भी उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, पुण्यके अनुशीलनसे पुण्यका लोभ भी क्रमशः उग्र होता जाता है,—मालूम होता है मानों अभी बहुत बाकी है। इसकी भी ठीक वही हालत है। यह कामना भी शान्त नहीं होती। इसलिए, इस क्षेत्रमें भी वे लोग क्यों यही आक्षेप नहीं कर गये?—उनमें विवेक था, शायद इसलिए?"

हरेन्द्र, अजित, बेला और नीलिमा चारोंके चारों हँस पड़े।

आशु बाबू बोले, "हँसनेकी बात नहीं। लड़कीके उपहास और व्यंगसे मानो मैं हतवाक् हो गया, अपनेको सम्हालकर बोला, 'नहीं, उनका यह अभिप्राय नहीं, वे तो यही निर्देश कर गये हैं कि भोगसे तृप्ति नहीं हो सकती, कामनासे निवृत्ति नहीं हो सकती।'

"कमल जरा रुककर बोली, 'मालूम नहीं, ऐसे बाहुल्यका इंगित वे क्यों कर गये? यह क्या बाजारमें बैठकर 'जात्रा' के गान सुनना है या पड़ोसीके घरका ग्रामोफोन है जो बीचहीमें मालूम हो जायगा कि जाने दो, काफी तृप्ति हो चुकी, अब जरूरत नहीं। इस तृप्ति-अतृप्तिकी असल सत्ता तो बाहरके भोगमें है नहीं, उसका स्रोत तो है जीवनके मूलमें। वहींसे वह हमेशा, जीवनकी आशा, आनन्द और रस जुटाया करती है और शास्त्रका धिक्कार व्यर्थ होकर दरवाजेपर पड़ा रह जाता है,—उसे छू तक नहीं पाता।'

"मैंने कहा, 'सो हो सकता है, मगर है तो आखिरकार वह शत्रु ही, हमें उसे जीतना तो चाहिए ही!'

"कमलने कहा, 'मगर शत्रु कहके गाली देनेसे ही तो वह छोटा न हो जायगा। प्रकृतिके लिखे पक्के पट्टेके अनुसार वह दखलदार है,—उसके किस स्वत्वको कब कौन सिर्फ विद्रोह करके ही उड़ा सका है? दुःखसे घबराकर आत्महत्या करना तो दुःखको जीतना नहीं है? फिर भी मजा यह कि ऐसी ही युक्तियोंके बलपर आदमी अकल्याणके सिंहद्वारपर शान्तिका रास्ता टटोलता फिरता है। इससे शांति तो मिलती नहीं, स्वस्थता भी चली जाती है।"

"सुनकर मुझे ऐसा लगा कि शायद वह सिर्फ मुझहीको कोंच रही है।" इतना कहके वे क्षण-भर चुप रहे, फिर कहने लगे, "और न जाने मेरा कैसा जी हो गया कि मुँहसे चटसे निकल पड़ा, 'कमल, तुम अपने जीवनपर तो

एक बार विचार कर देखो।' बात मुँहसे निकल जानेके बाद खुद मुझे ही अपने कानोंको खटकी। कारण, कटाक्ष करने लायक उसके पास कुछ था ही नहीं,—कमलको खुद भी आश्चर्य हुआ, पर वह न तो गुस्सा हुई, न रूठी; शान्त चेहरेसे मेरी तरफ देखती हुई बोली, 'मैं प्रतिदिन ही विचार देखती हूँ आशु बाबू। दुःख नहीं पाती हूँ सो मैं नहीं कहती, पर मैंने उस दुःखको ही जीवनका चरम नहीं मान लिया है। शिवनाथको जो कुछ देना था वे दे चुके, मुझे जो मिलना था सो मिल गया,—आनन्दके वे छोटे छोटे क्षण ही मेरे मनमें मणि-माणिक्यकी तरह संचित हैं। न तो निष्फल मानसिक दाहसे मैंने उन्हें जलाकर खाक किया और न सूखे झरनेके नीचे रीते हाथ पसारकर भीख माँगनेके लिए ही खड़ी हुई। उनके प्रेमकी आयु जब खतम हो चुकी, तो शान्त मनसे मैंने उन्हें विदा दे दी; पछतावे और शिकायतके धुँएसे आकाश काला करनेकी मेरी प्रवृत्ति ही नहीं हुई। इसीसे उनके सम्बन्धमें मेरा उस दिनका आचरण आप लोगोंको अद्भुत-सा लगा। आप लोगोंने सोचा कि इतने बड़े अपराधको कमलने माफ कैसे कर दिया? मगर मेरे मनमें उस दिन उनके अपराधसे बढकर अपने ही दुर्भाग्यकी बात ज्यादा आई थी!"

"सुनते सुनते मुझे ऐसा लगा कि मानो उसकी आँखोंमें आँसू झलक आये हैं। हो सकता है कि सच हो, या शायद मेरी भूल हो। उस वक्त मेरा हृदय मानो वेदनासे ऐंठ गया,—उसमें और मुझमें प्रभेद ही कितना-सा था! मैंने कहा, 'कमल, ऐसे मणि-माणिक्योंका सचय मैंने भी अपने मनमें किया है, वही तो मेरे लिए सात राज्योंका धन है,—अब हम लोग किसके वास्ते लोभ करने जायँ बतलाओ?'

"कमल चुपचाप देखती रह गई। मैंने पूछा, 'इस जीवनमें क्या अब तुम और किसीको प्यार कर सकती हो कमल? इस तरह समस्त देह-मनसे अंगीकार कर सकती हो और किसीको?'

"कमलने अविचलित कण्ठसे जवाब दिया, 'कमसे कम ज़िंदा तो यही आशा लेकर रहना पड़ेगा आशु बाबू। असमयमें बादलोंकी ओटमें आज अगर सूर्य अस्त हो गया-सा मालूम दे, तो क्या वह अन्धकार ही सत्य हो जायगा और कल प्रभातमें अरुण प्रकाशसे अगर आकाश छा जाय तो क्या अपनी आँखोंको बन्द करके यह कह दूँगी कि यह प्रकाश नहीं है, अन्धकार है? जीवनको क्या ऐसे ही बच्चोंके खेल खेलमें खतम कर दूँगी?'

मैंने कहा, 'रात तो सिर्फ एक ही नहीं होती कमल, प्रभातका प्रकाश खतम करके वह तो दुबारा भी आ सकती है!'

"उसने कहा, 'आया करे। तब भी प्रभातपर विश्वास करके ही फिर रात बिता दूँगी।'

"मैं तो मारे आश्चर्यके सन्न होकर बैठा रहा;—कमल चली गई।"

"बच्चोंका खेल! सोचा था, शोकमेंसे गुजरकर हम दोनोंकी चिन्ता-धारा शायद एक ही स्रोतमें मिल गई है। परन्तु देखा कि नहीं, सो बात नहीं है। जमीन-आसमानका फर्क है। उसके दृष्टिकोणसे तो जीवनका अर्थ ही अलग है,—हम लोगोंके साथ उसका कोई मेल ही नहीं। वह न तो अदृष्टको ही मानती है और न अतीतकी स्मृति उसके आगेका रास्ता ही रोकती है; उसके लिए अनागत ही सब कुछ है,—जो आज तक आया नहीं है। इसीसे उसकी आशा भी जितनी दुर्निवार है, आनन्द भी उतना ही अपराजेय है। सिर्फ इसी वजहसे कि किसी गैरने उसके जीवनको धोखा दिया है, वह अपने जीवनको धोखा देने या वंचित रखनेके लिए किसी तरह तैयार नहीं।"

सुनके सबके सब चुप रहे।

उठते हुए दीर्घ निःश्वासको दबाकर आशु बाबू फिर कहने लगे, "विलक्षण लड़की है! उस दिन नफरत और पछतावेका ठिकाना न रहा, पर साथ ही यह बात भी मन ही मन स्वीकार किये बिना न रहा गया कि यह सिर्फ बापसे सीखकर रटी हुई भाषा नहीं है। जो कुछ उसने सीखा है, बिलकुल निःसंशय होकर पूरी तरह खुद ही सीखा है। ऐसी विशेष उमर भी नहीं, पर फिर भी मालूम होता है कि अपनी आत्माको उसने इसी उमरमें पूरी तरह उपलब्ध कर लिया है।"

फिर जरा ठहरकर कहने लगे, "और, बात भी सच है। वास्तवमें जीवन कोई बच्चोंका खेल तो है नहीं। भगवानका इतना बड़ा दान इसलिए नहीं आया। ऐसी बात भी भला मैं कैसे कह सकता था कि कोई एक आदमी किसी दूसरेके जीवनमें विफल हो गया तो उसी शून्यताकी ज़िन्दगी-भर जय-घोषणा करता रहे!"

बेलाने आहिस्तेसे कहा, "बात तो बड़ी सुन्दर है।"

हरेन्द्र चुपकेसे उठके खड़ा गया, बोला, "रात काफी हो गई; मेह भी कम हो गया,—आज इजाजत मिले।"

अजित भी उठ खड़ा हुआ, कुछ बोला नहीं। और दोनों नमस्कार करके बाहर हो गये।

बेला सोने चली गई। नीलिमाको छोटे-मोटे दो-एक काम करने बाकी थे, पर आज वे यों ही अधूरे पड़े रहे और अन्यमनस्ककी तरह वह भी चुपचाप चल दी।

नौकरकी प्रतीक्षामें आशु बाबू आँखोंपर हाथ धरे पड़े रहे।

बड़ा भारी मकान था। बेला और नीलिमाके सोनेके कमरे आमने-सामने थे। दोनों कमरोंमे बत्ती जल रही थी; इतनी सबकी सब बातें और आलोचनाएँ सूने निःसग कमरोंमें पहुँचनेके बाद मानो धुँधली-सी हो गई; फिर भी, परम आश्चर्यकी बात यह है कि कपड़े बदलनेके पहले दर्पणके सामने जाकर खड़े होनेपर दोनों नारियोंके मनमें, एक ही समयमें, ठीक एक ही प्रश्न उठ खड़ा हुआ, 'एक दिन : जिस दिन मैं नारी थी!'

२४

दस-बारह दिन हुए कमल आगरा छोड़कर कहीं बाहर चली गई है; और इधर आशु बाबूको उसकी सख्त जरूरत है। थोड़ी बहुत चिन्ता तो सभीको हुई थी, पर उद्वेगके काले बादल सबसे ज्यादा हरेन्द्रके ब्रह्मचर्य-आश्रमके माथेपर मड़राये। ब्रह्मचारी हरेन्द्र और अजित व्याकुलताकी प्रतिस्पर्धामें ऐसे सूखने लगे कि शायद उनका 'ब्रह्म' भी खो जाता तो ऐसे परेशान न होते। अन्तमें उन्होंने एक दिन उसे ढूँढ ही निकाला। घटना अत्यन्त साधारण थी। कमलका चायके बगीचेका एक घनिष्ठ परिचित फिरंगी साहब वहाँका काम छोड़कर टूँडलामें रेल्वेकी नौकरी करने आया है; उसके स्त्री नहीं है, दो-ढाई सालकी एक छोटी लड़की है। बड़ी परेशानीमे पड़कर वह कमलको टूँडला ले गया है। उसकी घर-गृहस्थी ठीक करनेमें कमलको इतनी देर लग गई। आज सवेरे वह घर लौटी है और तीसरे पहर उसके लिए मोटर भेजकर आशु बाबू बाट देख रहे हैं।

सिलाई करते करते नीलिमा सहसा बोल उठी, "उस आदमीके घरमें स्त्री नहीं, एक नन्हीं-सी लड़कीके सिवा और कोई औरत भी नहीं,—फिर भी उसके घर कमलने आसानीसे दस-बारह दिन बिता दिये।"

आशु बाबूने बड़ी मुश्किलोंसे सिर घुमाकर उसकी तरफ देखा; पर वे न समझ सके कि इस बातका तात्पर्य क्या है।

नीलिमा मानो अपने मन ही मन कहने लगी, "वह तो, मालूम होता है, नदीकी मछली है जिसके पानीमें भींजने न भींजनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। खाने-पहननेकी उसे चिन्ता नहीं, शासन करनेवाला कोई अभिभावक नहीं, ऑंखें लाल करनेवाला समाज नहीं,—बिलकुल स्वाधीन है।"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए मृदु कंठसे कहा, "बात तो करीब करीब ऐसी ही है।"

"उसके रूप यौवनकी सीमा नहीं, बुद्धि भी वैसी ही अनन्त है। उस राजेन्द्रके साथ उसकी कै दिनकी जान-पहचान थी, मगर उपद्रवके डरसे जब कहीं उसे जगह नहीं मिली, तो उसे भी उसने विना किसी संकोचके अपने घर बुला लिया। किसीके मतामतकी पर्वाहने उसके कर्तव्यमें विघ्न नहीं डाला। जो किसीसे नहीं बना, उसे वह बड़ी आसानीसे कर गुजरी। सुनकर ऐसा लगा जैसे सब उससे छोटे हो गये हैं,—इसके लिए दूसरी औरतोंको न जाने कितनी कितनी बातोंका खयाल रखना पड़ता है!"

आशु बाबूने कहा, "खयाल तो रखना ही चाहिए नीलिमा?"

बेलाने कहा, "हम भी चाहें तो वैसी ही बेपरवाह और स्वाधीन बन सकती हैं।"

नीलिमाने कहा, "नहीं, नहीं बन सकतीं। मैं भी चाहूँ तो नहीं बन सकती, और आप भी नहीं। कारण, दुनिया हमपर जो स्याही उँड़ेल देगी उसे धो-पोंछकर साफ कर डालनेकी शक्ति हम लोगोंमें नहीं है।"

जरा ठहरकर नीलिमा कहने लगी, "वैसी इच्छा एक दिन मेरी भी हुई थी, इसीसे सब ओरसे मैंने इस बातको सोच देखा है। पुरुषोंके बने हुए समाजके अविचार और अत्याचारसे हम जल जल मरी हैं और कितनी जली हैं यह कह नहीं सकतीं,—सिर्फ जलना ही सार हुआ है।—पर समाजके इस अत्याचारका असली रूप कमलको देखनेके पहले हमें कभी नहीं दिखाई दिया। स्त्रियोंकी मुक्ति, स्त्रियोंकी स्वाधीनता तो आजकल हरएक स्त्री-पुरुषकी जबानपर है, पर वह जबानके आगे एक कदम भी आगे नहीं बढ़ती। सो क्यों, जानती हैं? अब मालूम हुआ है कि स्वाधीनता तत्त्व-विचारसे नहीं मिलती, न्याय और धर्मकी दुहाई देनेसे भी नहीं मिल सकती, सभामें खड़े

होकर पुरुषोंके साथ कलह करनेसे भी नहीं मिलती,—असलमें स्वाधीनता जैसी चीज कोई किसीको दे ही नहीं सकता,—लेने-देनेकी वह चीज ही नहीं। कमलको देखते ही दीख जाता है कि वह स्वाधीनता हमारी अपनी पूर्णतासे, आत्माके अपने विस्तारसे, स्वतः ही आती है। बाहरसे अंडेका छिलका तोड़ कर भीतरके जीवको मुक्ति देनेसे वह मुक्ति नहीं पाता,—बल्कि मर जाता है। हमारे साथ यहींपर उसका पार्थक्य है। ”

फिर बेलासे बोली, “ अभी जो वह दस-बारह दिनके लिए न जाने कहाँ चली गई, सबोंके डरका ठिकाना न रहा, पर यह आशंका किसीको स्वप्नमें भी न हुई कि ऐसा कोई काम वह कर सकती है जिससे उसकी इज्जतपर बट्टा लगे। बताइए, हम होतीं तो आदमीके दिलोंमे इतना जबरदस्त विश्वासका जोर कहाँ पातीं ? यह गौरव हमें कौन देता ? न पुरुष ही देते, न औरतें ही।”

आशु बाबू आश्चर्यके साथ उसके मुँहकी तरफ क्षण-भर देखते रहे, फिर बोले, “ वास्तवमें यह सच है नीलिमा। ”

बेलाने पूछा, “ लेकिन उसका पति होता तो वह क्या करती ? ”

नीलिमाने कहा, “ उसकी सेवा करती, रसोई बनाती-खिलाती, घर-द्वार झाड़ती-बुहारती, बच्चे होते तो उनकी परवरिश करती, और क्या करती ? अभी तो वह अकेली है और रुपये-पैसेसे भी तंग है, नहीं तो वैसी हालतमें, मैं तो समझती हूँ, समयके अभावमें वह हम लोगोंसे मिलने जुलने तक न आ सकती।”

बेलाने कहा, “ तब फिर ? ”

नीलिमा, “ तब फिर क्या ? ” कहकर हँस दी और बोली, “ घरका काम-काज नहीं करें, तंगी या शिकायत कुछ रहे नहीं, हरदम सैर-सपाटा करतीं फिरें,—क्या यही स्त्रियोंकी स्वाधीनताका मान-दण्ड है ? स्वयं विधाताके भी काम-काजका अन्त नहीं, लेकिन कोई क्या इस कारण उन्हें पराधीन सोचता है ? इस संसारमें हमारी खुदकी मेहनत-मशक्कत भी क्या कुछ कम है ? ”

आशु बाबू गहरे आश्चर्यके साथ मुग्ध दृष्टिसे उसकी तरफ देखते रहे। असलमें इस ढंगकी कोई बात अबतक उन्होंने नीलिमाके मुँहसे नहीं सुनी थी।

नीलिमा कहने लगी, “ कमल बैठी रहना तो जानती ही नहीं, तब वह पति-पुत्र और घर-गृहस्थीके काममें तल्लीन हो जाती,—आनन्दकी जल-धाराकी तरह घर-गृहस्थी उसके माथेपरसे बही चली जाती, उसे पता भी न पड़ पाता। मगर जिस दिन समझती कि पतिका काम बोझ बनकर उसके सिरपर सवार

हो गया है, उस दिन मैं सौगन्ध खाकर कह सकती हूँ कि उसे संसारमें कोई एक दिनके लिए भी पकड़कर नहीं रख सकता।"

आशु बाबू आहिस्तेसे बोले, "सो ही ठीक है। ऐसा ही मालूम होता है।"

इतनेमें परिचित मोटरका हॉर्न सुनाई दिया। बेलाने खिड़कीसे झाँककर देखा और कहा, "अपनी ही गाड़ी है।"

थोड़ी देर बाद नौकर बत्ती रखने आया और कमलके आनेकी खबर दे गया।

कई दिनसे आशु बाबू उसीकी प्रतीक्षा कर रहे थे, मगर फिर भी खबर पाते ही उनका चेहरा अत्यन्त म्लान और गम्भीर हो गया। अभी अभी वे आराम-कुरसीपर सीधे होकर बैठे थे, अब फिर पीठ टेककर लेट गये।

भीतर आकर कमलने सबको नमस्कार किया, और आशु बाबूके पासकी कुरसीपर जाकर बैठ गई। बोली, "मैंने सुना कि आप मेरे लिए बड़े व्यस्त हैं, किसे मालूम था कि आप लोग मुझे इतना चाहते हैं,—नहीं तो जानेके पहले अवश्य ही आपको खबर दे जाती।" कहते हुए उसने आशु बाबूका शिथिल हाथ बड़े स्नेहके साथ खींचकर अपने हाथमें ले लिया।

आशु बाबूका मुँह दूसरी ओर था, और अब भी वह उधर ही रहा, उसकी बातका वे कुछ भी उत्तर न दे सके।

कमलने पहले तो समझा कि उनके सम्पूर्ण स्वस्थ होनेके पहले ही वह चली गई थी और अब तक कोई खबर-सुध नहीं ली, इसीसे उनका यह अभिमान है। फिर उसने उनकी मोटी उँगलियोंमें अपनी चम्पाकी कली-सी उँगलियाँ उलझाते हुए कानके पास मुँह ले जाकर चुपकेसे कहा, "मेरी गलती हुई है, मैं माफी माँगती हूँ।" मगर इसका भी जब कोई जवाब नहीं मिला, तब उसे सचमुच ही बड़ा आश्चर्य हुआ और साथ ही डर भी लगा।

बेला जानेके लिए कदम बढ़ा चुकी थी, खड़े होकर उसने विनयके साथ कहा, "अगर मालूम होता आप आयेंगी, तो आज मालिनीका निमंत्रण मैं हर्गिज स्वीकार न करती, लेकिन अब तो न जानेसे उन लोगोंको बड़ी निराशा होगी।"

कमलने पूछा, "मालिनी कौन?"

नीलिमाने जवाब दिया, "यहाँके मजिस्ट्रेट साहबकी स्त्री,—नाम शायद तुम्हें याद नहीं रहा।" फिर बेलाकी तरफ मुखातिब होकर कहा, "सचमुच ही आपका जाना जरूरी है। नहीं जानेसे उनकी गानेकी सारी महफिल बिलकुल मिट्टी हो जायगी।"

" नहीं नहीं, मिट्टी नहीं होगी,—मगर हाँ, रंज जरूर होगा। सुना है कि उन्होंने और भी दो-चार सज्जनोंको आमंत्रित किया है। अच्छा तो, आज तो वहीं जाती हूँ, फिर और किसी दिन बातचीत होगी। नमस्कार।" कहकर वह जरा कुछ व्यग्रताके साथ बाहर चली गई।

नीलिमाने कहा, " अच्छा ही हुआ जो आज उनका बाहर निमंत्रण था, नहीं तो सब बातें खुलासा कहनेमे हिचकिचाहट होती। अच्छा कमल, तुम्हें मै 'आप' कहती थी या 'तुम' कहके पुकारती थी?"

कमलने कहा, "'तुम' कहके। मगर मैं तो कोई ऐसे निर्वासनमें नहीं गई थी जो इस बीचमें ही भूल जातीं?"

" नहीं, भूल नहीं, सिर्फ जरा खटका हो गया था। और होनेकी बात भी है। खैर, इसे जाने दो। सात-आठ दिनसे तुम्हे हम लोग ढूँढ रहे थे। हमारा यह सिर्फ खोजना ही नहीं था बल्कि मेरी तो यह तुम्हें पानेके लिए मन ही मनकी तपस्या थी।"

परन्तु तपस्याका शुष्क गाम्भीर्य उसके चेहरेपर न था, इसलिए, अकृत्रिम स्नेहके मीठे परिहासकी कल्पना करके कमल हँसती हुई बोली, " इस सौभाग्यका कारण? मैं तो सबकी परित्यक्ता हूँ जीजी, शिष्ट-समाजका तो कोई मुझे चाहता तक नहीं।"

उसका यह 'जीजी' का सम्बोधन बिलकुल नया था। नीलिमाकी आँखे सहसा भर आईं, पर वह चुप रही।

आशु बाबूसे न रहा गया, उसकी तरफ मुँह करके बोले, " शिष्ट-समाजको जरूरत होगी तो इसका जवाब वही देगी; लेकिन मैं जानता हूँ जीवनमें किसीने अगर वास्तवमें तुम्हे चाहा है तो नीलिमाने ही चाहा है। इतना प्रेम तुमने शायद् किसीका भी न पाया होगा कमल।"

कमलने कहा, " सो मैं जानती हूँ।"

नीलिमा चंचल पैरोंसे उठ खड़ी हुई। कहीं जानेके लिए नहीं बल्कि इसलिए कि इस ढंगकी आलोचनामें व्यक्तिगत इशारेसे वह हमेशा कुछ अस्थिर-सी हो जाया करती है; बहुतसे मौकोंपर प्रिय जनोंको इससे गलतफहमी हुई है, फिर भी, ऐसा ही उसका स्वभाव है। बातको झटपट दबाकर उसने कहा, " कमल, तुम्हें आज दो खबरे सुनानी हैं।"

कमल उसके मनका भाव समझ गई, हँसके बोली, "अच्छी बात है, सुनाइए।"

नीलिमाने आशु बाबूकी तरफ इशारा करके कहा, "ये शरमके मारे तुमसे मुँह छिपाये हुए हैं, इससे मैंने ही भार लिया है सुनानेका। मनोरमाके साथ शिवनाथका ब्याह होना स्थिर हो गया है,—पिता और भावी श्वसुरकी अनुमति और आशीर्वाद पानेके लिए दोनोंने पत्र दिये हैं।"

सुनते ही कमलका चेहरा फक पड़ गया पर उसी क्षण अपनेको सम्हालते हुए उसने कहा, "इसमे इनके लिए लज्जाकी क्या बात है?" नीलिमाने कहा, "इनकी लड़की है इसलिए। और चिट्ठी पानेके बादसे इन कई दिनोंमें इनके मुँहसे सिर्फ एक ही बात बार बार निकली है कि आगरेमें इतने आदमी मर गये, भगवानने मुझपर दया क्यों नहीं की? अपनी जानमें किसी दिन कोई अनुचित काम नहीं किया, इसीसे इनका अनन्य विश्वास था कि ईश्वर मुझपर भी सदय हैं। और अब यह अभिमानकी व्यथा ही मानो इनकी सारी वेदनाओंसे बढ़ गई है। मेरे सिवा और किसीसे कुछ कह नहीं सके हैं, रात-दिन मन ही मन ही मन सिर्फ तुम्हींको पुकार रहे हैं। शायद, इनकी धारणा है कि सिर्फ तुम ही इससे परित्राणका रास्ता बता सकती हो।"

कमलने झुककर देखा कि आशु बाबूकी मिची आँखोंके कोनोंसे आँसू ढलक रहे हैं, हाथसे उन आँसुओंको चुपचाप पोंछकर वह खुद भी स्तब्ध हो रही।

बहुत देर बाद बोली, "एक खबर तो यह हुई, और दूसरी?"

नीलिमाने कुछ परिहासके ढँगपर बात कहनी चाही, पर ठीकसे कहते नहीं बना, बोली "मामला जर अचिन्तित जरूर है, पर ऐसा कुछ भयंकर नहीं। हमारे मुखर्जी महाशयके स्वास्थ्यके विषयमें सब कोई बहुत चिन्तित थे, सो वे स्वस्थ हो गये हैं और उसके बाद उनके भाई और भाभीने मिलकर उनकी इच्छाके सर्वथा विरुद्ध जबरन् उनका ब्याह कर दिया है। और बड़ी शर्मके साथ उन्होंने यह संवाद आशु बाबूको अपने पत्रमें लिखा है,—बस।" इतना कहकर अबकी बार वह खुद ही हँसने लगी।

उसकी इस हँसीमें न तो सुख ही था और न कौतुक ही। कमल उसके मुँहकी तरफ देखकर बोली, "दोनों ही ब्याहकी खबरें हैं। एक हो गया है, और एकका होना तय हो गया है।—लेकिन मेरी पुकार क्यों हुई? इनमेंसे किसीको भी तो मैं रोक नहीं सकती?"

नीलिमाने कहा, "पर, रुकवानेकी कल्पना करके ही शायद ये तुम्हें ढूंढ रहे थे। लेकिन मैंने तुम्हें नहीं ढूंढा बहन, मैं तो काय-मनसे भगवानसे यही चाह रही थी कि भेंट होनेपर तुम्हारी प्रसन्न दृष्टि प्राप्त कर सकूँ। इस देशमें स्त्रीके रूपमें जन्म लेकर भाग्यको दोष देने चलूँ तो उसका किनारा न खोज पाऊँगी; अपनी बुद्धिके दोषसे मायके और सासुरे दोनों ही तो खो दिये हैं,—उसपर ऊपरी नुकसान जो हुआ है उसका विवरण नहीं दे सकूँगी।—अब बहनोईका आश्रय भी जाता रहा। फिर आशु बाबूकी तरफ इशारा करके कहा, "इनके तो दया-दाक्षिण्यकी हद ही नहीं, जितने दिन ये यहाँ हैं, किसी तरह दिन कट ही जायँगे; मगर उसके बाद मुझे अन्धकारके सिवा अपनी आँखोंके आगे और कुछ नहीं सूझ रहा है। सोचा है, अबकी बार तुम्हींसे जगह देनेको कहूँगी, और न मिली तो मर जाऊँगी। अब पुरुषोंसे कृपा-भिक्षा माँगती हुई नदीके कूड़ेकी तरह घाट घाट टकराती हुई आयुके अन्त तक प्रतीक्षा न कर सकूँगी।" कहते कहते उसका स्वर भारी हो आया, पर आँखोंका पानी उसने किसी तरह जबरदस्ती दबा लिया।

कमल उसके मुँहकी तरफ देखकर सिर्फ जरा हँस दी।

"हँसी क्यों?"

"इसलिए कि हँसना जवाब देनेकी अपेक्षा सहज है।"

नीलिमाने कहा, "सो जानती हूँ, पर आजकल बीच बीचमें न जाने कहाँ अदृश्य हो जाया करती हो?—डर तो इस बातका है।"

कमलने कहा, "होती रहूँ अदृश्य, लेकिन जरूरत पड़नेपर मुझे ढूँढने नहीं जाना पड़ेगा जीजी, मैं ही आपको देश-भरमें ढूँढने निकल पड़ूँगी। इस विषयमें आप निश्चिन्त रहें।"

आशु बाबूने कहा, "अब इसी तरह मुझे भी अभय दो कमल, मैं भी जिससे इनकी तरह निश्चिन्त हो सकूँ।"

"आदेश दीजिए, मैं आपके लिए क्या कर सकती हूँ?"

"तुम्हें और कुछ नहीं करना होगा कमल, जो करना होगा मैं खुद ही करूँगा। मुझे सिर्फ इतना उपदेश दो कि पिताके कर्तव्यके खिलाफ मैं कोई अपराध न कर बैठूँ। इतना ही नहीं कि इस ब्याहमें मैं सिर्फ राय ही नहीं दे सकता, बल्कि मैं उसे होने भी नहीं दे सकता।"

कमलने कहा, "राय आपकी है, सो आप नहीं भी दें। पर ब्याह नहीं होने देंगे, सो कैसे? लड़की तो आपकी बड़ी हो चुकी है।"

आशु बाबू अपनी उत्तेजनाको दबा न सके, कारण, यह बात उनके मनमें भी दिन-रात चक्कर काटती रही है कि अस्वीकार करनेका कोई उपाय नहीं। बोले, "सो मैं जानता हूँ। लेकिन लड़कीको भी मालूम होना चाहिए कि बापसे बड़ा नहीं हुआ जा सकता। सिर्फ मतामत ही मेरी अपनी चीज नहीं कमल, सम्पत्ति भी मेरी अपनी है। आशु वैद्यकी कमजोरीके परिचयका ही लोगोंको अभ्यास हो गया है, पर उसका एक दूसरा पहलू भी है,—उसे लोग भूल गये हैं।"

कमलने उनके मुँहकी तरफ देख कर स्निग्ध कण्ठसे कहा, "आपके उस पहलूको लोग भूले ही रहें तो अच्छा, आशु बाबू। लेकिन, अगर ऐसा न हो, तो क्या उसका परिचय सबसे पहले अपनी लड़कीको ही देना होगा?"

"हाँ, अबाध्य लड़कीको।" वे क्षण-भर चुप रहकर बोले, "वह मेरी मातृहीन एकमात्र सन्तान है, किस तरह मैंने उसे आदमी बनाया है, इसे वे ही जानते हैं जिन्होंने पितृ-हृदयकी सृष्टि की है। इसकी मार्मिक व्यथा कितनी बड़ी है, उसे अगर मुँहसे व्यक्त किया जाय तो उसकी विकृति सिर्फ मेरा ही नहीं, बल्कि सबके पिताके जो पिता हैं उन तकका उपहास करने लगेगी। इसके सिवा इसे तुम समझ भी कैसे सकती हो? लेकिन पिताके केवल स्नेह ही नहीं है, कमल, उसका कर्तव्य भी तो है? शिवनाथको मैं पहचान गया हूँ। उसके सत्यानाशी ग्राससे लड़कीको बचानेका इसके सिवा और कोई रास्ता ही मुझे नज़र नहीं आता। कल उन लोगोंको चिट्ठीमें लिख दूँगा कि इसके बाद मणि मुझसे एक कौड़ीकी भी आशा न रक्खे।"

"पर उस चिट्ठीपर अगर वे विश्वास न करें? अगर सोच लें कि यह गुस्सा ज्यादा दिन न रहेगा,—एक दिन आप अपनी गलतीको खुद ही सुधार लेंगे,—तब?"

"तब वे उसका फल भोगेंगे। लिखनेकी जिम्मेदारी मेरी है, विश्वास करनेका दायित्व उनपर है।"

"यही क्या आपने वास्तवमें तय किया है?"

"हाँ।"

कमल चुप बैठी रही और प्रतीक्षामें सिर ऊपर उठाए आशु बाबू खुद भी कुछ देरतक चुप रहकर मन ही मन व्याकुल हो उठे। बोले, "चुप हो रहीं कमल, जवाब नहीं दिया?"

" कहाँ, आपने तो कोई प्रश्न नहीं किया ? संसारमें यह व्यवस्था तो प्राचीन कालसे ही चली आ रही है कि एकके साथ जब दूसरेके मतका मेल नहीं खाता, तो जो शक्तिशाली होता है वह कमजोरको दण्ड देता है। इसमें कहनेकी क्या बात है ? "

आशु बाबूके क्षोभकी सीमा न रही, बोले, " यह तुम्हारी कैसी बात है कमल ? सन्तानके साथ पिताका शक्ति-परीक्षाका सम्बन्ध तो है नहीं जो उसके कमजोर होनेके कारण ही मैं उसे दण्ड देना चाहता होऊँ ? कठोर होना कितना कठिन है, सो सिर्फ पिता ही जानता है; फिर भी मैंने जो इतना बड़ा कठोर संकल्प किया है वह सिर्फ इसीलिए तो कि उसे गलतीसे बचा लूँ। सचमुच ही क्या तुम इसे समझ नहीं सकी हो ? "

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, " समझ तो सकी हूँ, पर, अगर आपकी बात न मान कर वह भूल ही कर बैठे, तो उसका दुःख भी तो वही पायेगी। अगर उस दुःखको दूर न कर सकें तो इसीलिए क्या आप गुस्सेमें आकर उसके दुःखके बोझको और भी हजार-गुना बढ़ा देना चाहेंगे ? "

फिर जरा ठहरकर कहा, " आप उसके सब आत्मीयोंसे बढ़कर परमात्मीय हैं। जिस आदमीको आपने बहुत ही बुरा समझ लिया है क्या उसीके हाथ अपनी लड़कीको हमेशाके लिए निःस्व निरुपाय करके विसर्जित कर देंगे ?— किसी दिन लौटनेका कोई रास्ता ही किसी तरफसे खुला न रहने देंगे ? "

आशु बाबू विह्वल दृष्टिसे सिर्फ देखते रह गये, एक शब्द भी उनके मुँहसे न निकला,—सिर्फ देखते देखते उनकी दोनों आँखोंसे आँसुओंकी बड़ी बड़ी बूँदें ढलक पड़ीं।

कुछ देर इसी तरह बीत जानेपर उन्होंने अपनी आस्तीनसे आँखें पोछीं, और रुके हुए कण्ठको साफ करके धीरे धीरे सिर हिलाकर कहा, " लौटनेका रास्ता अभी ही है, बादमें नहीं। पतिको त्याग कर जो लौटना है, जगदीश्वर करें कि वह मुझे अपनी आँखोंसे न देखना पड़े। "

कमलने कहा, " यह अनुचित है। बल्कि, मैं तो यह कामना करती हूँ कि भूल अगर उसे कभी अपनी आँखोंसे दिखाई दे जाय, तो उस दिन उसके संशोधनका मार्ग किसी भी तरफसे बन्द न रहे। इसी तरह तो मनुष्य अपनेको सुधारते सुधारते आज मनुष्य हो सका है। भूलसे तो कोई डर नहीं आशु बाबू, जब तक कि दूसरी तरफका मार्ग खुला है। वह मार्ग आँखोंके सामने बन्द दिखाई देता है, तभी तो आज आपकी आशंकाकी सीमा नहीं है। "

मनोरमा उनकी कन्या न होकर अगर और कोई होती तो यह सीधी-सी बात सहजहीमें उनकी समझमें आ जाती; परन्तु एकमात्र सन्तानके भयंकर भविष्यकी निस्सन्दिग्ध दुर्गतिकी कल्पनाने कमलके सम्पूर्ण आवेदनको विफल कर दिया।

उन्होंने अनुनयके स्वरमें कहा, "नहीं कमल, इस ब्याहको रोकनेके सिवा और कोई रास्ता मुझे नहीं सुझाई देता। इसका कोई भी उपाय क्या तुम नहीं बता सकतीं?"

"मैं?" उनका इशारा इतनी देर बाद कमलकी समझमें आया, और उसीको स्पष्ट करनेमें उसका स्निग्ध कण्ठ क्षण-भरके लिए गम्भीर हो उठा, पर वह सिर्फ एक ही क्षणके लिए। नीलिमाकी तरफ नजर जाते ही उसने अपनेको सम्हालते हुए कहा, "नहीं, इस विषयमें कोई भी सहायता मैं आपकी न कर सकूँगी। नहीं जानती कि उत्तराधिकारसे वंचित करनेका डर दिखानेसे वह डरेगी या नहीं। पर अगर डर जाय तो मैं कहूँगी कि आपने खिला-पिलाकर और स्कूल-कालेजकी किताबें रटाकर लड़कीको बड़ा भले ही किया हो पर उसे मनुष्य नहीं बनाया। उस अभावको दूर करनेका सुयोग दैवने आज ला ही दिया हो तो मैं उसके बीचमें अन्तराय बनने क्यों जाऊँ?"

बात आशु बाबूको अच्छी नहीं लगी, उन्होंने कहा, "तो क्या तुम यह कहना चाहती हो कि रोकना मेरा कर्तव्य नहीं?"

कमलने कहा, "कमसे कम डर दिखाकर रोकना तो नहीं। फिर भी मैं इतना कह सकती हूँ कि अगर मैं आपकी लड़की होती और शायद बाधा पाती, तो इस जीवनमें फिर कभी आपपर श्रद्धा नहीं कर सकती। मेरे पिता मुझे इसी तरहसे गढ गये हैं।"

आशु बाबूने कहा, "इसमें कोई असम्भव बात नहीं कमल, तुम्हारे कल्याणका मार्ग उन्होंने इधर ही देखा होगा। पर मुझे नहीं दीखता। फिर भी, मैं पिता हूँ कमल, मैं स्पष्ट देख रहा हूँ कि शिवनाथसे वह यथार्थ प्रेम नहीं कर सकती,—यह उसका मोह है। यह मिथ्या है और जिस दिन इस क्षणस्थायी नशेकी खुमारी दूर होगी उस दिन मणिके दुःखका अन्त नहीं रहेगा। मगर तब उसे बचाओगी कैसे?"

कमलने कहा, "नशेमें ही चिन्ताकी बात है, पर जब नशा दूर हो जायगा

और वह स्वस्थ हो जायँगी, तब तो फिर डरकी कोई बात रह नहीं जायगी। तब तो वह स्वस्थता ही उनकी रक्षा करेगी।"

आशु बाबूने अस्वीकार करते हुए कहा, "यह सब बातचीतका दाँव-पेच है कमल, युक्ति नहीं। सत्य इससे बहुत दूर है। भूलका दण्ड उसे बड़े रूपमें पाना ही होगा,—वकालतके जोरसे उससे उसे छुटकारा नहीं मिल सकता।"

कमलने कहा, "छुटकारेकी बात मैंने नहीं कही आशु बाबू। मैं जानती हूँ कि भूलका दण्ड पाना ही पड़ता है। पर उस दण्ड पानेमें दुःख है, लज्जा नहीं, क्यों कि मणिने किसीको ठगना नहीं चाहा। यही भरोसा आपको मैंने दिलाना चाहा था कि भूल मालूम होनेपर वह अगर जहाँकी तहाँ लौट आना चाहे, तो उसे सिर नीचा करके न आना पड़े।"

"फिर भी तो भरोसा नहीं हो रहा कमल। मैं जानता हूँ, उसे भूल मालूम पड़े बिना न रहेगी;—लेकिन उसके बाद भी तो उसे लम्बे समय तक जिन्दा रहना है, तब जीयेगी क्या लेकर? किस आधारपर दिन काटेगी?"

"ऐसी बात न कहिए। मनुष्यका दुःख ही यदि दुःख पानेका अन्तिम परिणाम होता, तो उसका कोई मूल्य नहीं था। एक तरफका नुकसान दूसरी तरफके भारी लाभसे पूरा हो जाता है; नहीं तो, मैं ही भला आज कैसे जी सकती? बल्कि आप तो यह आशीर्वाद दीजिए कि किसी दिन भूल अगर मालूम पड़े तो वह अपनेको मुक्त कर ले सके, तब उसे कोई लोभ, कोई भय राहु-ग्रस्त न कर रक्खे।"

आशु बाबू चुप हो रहे। जवाब देनेमें उन्हें हिचकिचाहट-सी हुई; पर स्वीकार करनेमें वे और भी ज्यादा हिचकिचाये। बहुत देर बाद बोले, "पिताकी दृष्टिसे मैं मणिका भविष्य-जीवन अन्धकारमय देख रहा हूँ। इस-पर भी तुम क्या यही कहोगी कि वास्तवमें मुझे रुकावट न डालना चाहिए, और चुपचाप मान लेना ही मेरा कर्तव्य है?"

"मैं मा होती तो अवश्य मान लेती। उसके भविष्यकी आशंकासे शायद आप जैसी ही व्यथा पाती, फिर भी इस तरीकेसे रुकावट डालनेको तैयार न होती। और यह भी मुझे स्वीकार करना होगा कि मैं तब मन ही मन कहती कि इस जीवनमें जिस रहस्यके सामने आकर आज वह खड़ी हुई है वह मेरी समस्त दुश्चिन्ताओंसे बढ़कर है।"

आशु बाबू फिर कुछ देर मौन रहे, और बोले, "फिर भी मैं न समझ

सका कमल। शिवनाथका चरित्र और उसकी सभी दुष्कृतियोंका हाल मणि जानती है,—एक दिन इस घरमें आने देनेमें भी उसे आपत्ति थी; मगर आज जिस सम्मोहनसे उसका हिताहित-ज्ञान,—उसकी सारीकी सारी नैतिक बुद्धि ढक गई है वह यथार्थ प्रेम नहीं है, वह जादू है, वह मोह है;—यह असत्य, चाहे जैसे भी हो, दूर करना ही पिताका कर्तव्य है।"

अबकी बार कमल एकदम स्तब्ध हो रही। इतनी देरमें जाकर दोनोंकी चिन्ता-धाराके मौलिक भेदपर उसकी दृष्टि पड़ी। इन दोनों चिन्ता-धाराओंकी जाति ही अलग अलग है, और चूँकि यह भेद तर्ककी चीज नहीं है, इस कारण अब तर्ककी इतनी आलोचना और बातचीत बिलकुल विफल सिद्ध हुई। कमल इस बातको समझ गई कि जिस तरफ उनदृष्टि लगी हुई है उधर हजारों वर्ष देखते रहनेपर भी इस सत्यका साक्षात्कार नहीं हो सकता, और समझ गई कि इसमें वही बुद्धिकी जाँच, वही हिताहित-बोध, वही भले-बुरे और सुख-दुःखका अति-सतर्क हिसाब, वही मजबूत नींव डालनेके लिए इञ्जीनियर बुलाना है,—इसके सिवा और कुछ नही। गणित फैलाकर ये लोग प्रेमका फल या नतीजा निकालना चाहते हैं। अपने जीवनमें आशु बाबूने अपनी पत्नीको अत्यन्त एकान्त भावसे प्रेम किया था। उनकी स्त्रीको मरे जमाना बीत गया, फिर भी आज तक शायद उस प्रेमकी जड़ उनके हृदयमें शिथिल नहीं हुई।—संसारमें इसकी तुलना बहुत कम मिलती है।—फिर भी यह सब कुछ सत्य होते हुए भी, यह मानना पड़ता है कि ये हैं दोनों भिन्न जातीय।

इन दोनों धाराओंकी भलाई-बुराईका प्रश्न उठाकर बहस करना निष्फल है। अपने दाम्पत्य जीवनमें एक दिनके लिए भी पत्नीके साथ आशु बाबूका मत-भेद नहीं हुआ,—हृदयमें मालिन्य तकने स्पर्श नहीं किया। निर्विघ्न शान्ति और अविच्छिन्न सुख-चैनके साथ जिनका दीर्घ विवाहित जीवन बीता है उनके गौरव और माहात्म्यको भला कौन खर्व कर सकता है? संसारने मुग्ध-चित्तसे उनका स्तव-गान किया है, उनकी दुर्लभ कहानियाँ लिखकर कवि अमर हो गये हैं, और अपने जीवनमें इसीको प्राप्त करनेकी व्याकुलतापूर्ण वासनासे मनुष्यके लोभकी सीमा नहीं रही है। जिसकी निःसन्दिग्ध महिमा स्वतःसिद्ध प्रतिष्ठासे चिरकाल अवि-चलित है, उसे कमल तुच्छ करेगी किस बिरतेपर? किन्तु मनोरमा? जिस दुःशील अभागेके हाथ अपनेको वह विसर्जन करनेको तैयार

है, उसका सब कुछ जानते हुए भी सम्पूर्ण जाननेके बाहर कदम बढ़ाते हुए उसे डर नहीं मालूम होता। दुःखमय परिणामकी चिन्तासे पिता शंकित हैं, इष्ट-मित्र दुःखित हैं,—सिर्फ वही अकेली निःशंक है। आशु बाबू जानते हैं कि इस विवाहमें सम्मान नहीं है, यह शुभ भी नहीं है,—वंचनापर इसकी नींव है। यह स्वल्पकाल-व्यापी मोह जिस दिन दूर हो जायगा, उस दिन आजीवन लज्जा और दुःख रखनेको जगह न रहेगी। हो सकता है कि आशु बाबूकी यह चिन्ता सत्य हो, किन्तु यह बात आशु बाबूको वह कैसे समझावे कि सब कुछ खोनेके बाद भी इस प्रवंचित लड़कीके पास जो वस्तु बाकी बचेगी वह पिताके शान्ति-सुखमय दीर्घस्थायी दाम्पत्य जीवनकी अपेक्षा बड़ी है? परिणाम ही जिसकी दृष्टिमें मूल्य-निर्णयका एकमात्र मान-दण्ड है, उसके साथ तर्क कैसे चल सकता है? कमलके मनमें एक बार आया कि कहे, आशु बाबू, मोह भी मिथ्या नहीं है। हो सकता है कि कन्याके चित्ताकाशमें क्षण-भरके लिए भी चमक जानेवाली बिजलीकी रेखा दीप्तिकी तुलनामें आपके हृदयमें प्रतिष्ठित अनिर्वापित दीप-शिखाको भी लाँघ जाय। पर उससे यह कहते नहीं बना और वह चुप बैठी रही।

पिताके कर्तव्यके सम्बन्धमें अपना अत्यन्त स्पष्ट अभिमत प्रकट करके आशु बाबू उत्तरकी प्रतीक्षामें अधीर हो रहे थे, परन्तु कमलको वैसे ही निरुत्तर और सिर झुकाये बैठी देख उनकी समझमें आ गया कि वह वाद-विवाद नहीं करना चाहती। इसलिए नहीं कि उसके पास शब्द नहीं, बल्कि इसलिए कि अब इसकी जरूरत नहीं। पर इस तरह एकके चुप हो जानेसे तो दूसरेके मनमें शान्ति नहीं आती। वास्तवमें, इस प्रौढ़ आदमीके गहरे अन्तःकरणमें सत्यके प्रति एक वास्तविक निष्ठा है। एकमात्र सन्तानके भावी बुरे दिनोंकी आशंकासे लज्जित और उद्भ्रान्त-चित्त वे मुँहसे चाहे कुछ भी क्यों न कहें, पर वास्तवमें बल-प्रयोगको वे घृणाकी दृष्टिसे ही देखते हैं। कमलको उन्होंने जितना देखा है, उतना ही उनका आश्चर्य और श्रद्धा बढ़ती गई है। लोक-दृष्टिमें वह हेय है, निन्दित है; शिष्ट-समाजद्वारा परित्यक्त है, सभाओंमें शरीक होनेका उसे निमंत्रण नहीं मिलता; फिर भी इस लड़कीकी नीरव अवज्ञाका उन्हें सबसे ज्यादा डर है, उसीके सामने उनका संकोच नहीं मिटता।

आशु बाबूने कहा, "कमल, तुम्हारे पिता यूरोपियन थे, फिर भी तुम कभी उस देशमें नहीं गई हो। मगर मैंने उन लोगोंमें बहुत दिन बिताये हैं,

उनका बहुत कुछ देखा है। बहुतसे प्रेमके विवाहोत्सवोंमें भी जब कभी निमंत्रण मिला है, आनन्दके साथ शामिल हुआ हूँ, और फिर जब वह सम्बन्ध अनादर और अनाचारसे टूटा है, तब भी मैंने आँसू पोंछे हैं। वहाँ जातीं तो तुम भी ऐसा ही देखतीं।"

कमलने उनकी तरफ मुँह उठाकर कहा, "बगैर गये भी देखा करती हूँ आशु बाबू। सम्बन्ध-विच्छेदकी नजीरें उस देशमें प्रतिदिन पुञ्जीभूत हुआ करती हैं,—और होनेकी बात भी है,—मगर जैसे यह सच है, वैसे ही उन नजीरोंके द्वारा वहाँके समाजके स्वरूपको समझनेकी कोशिश भी भूल है। विचारकी यह पद्धति ही नहीं आशु बाबू।"

आशु बाबू अपनी गलतीको समझकर जरा अप्रतिम हुए। इस तरह इसके साथ तर्क नहीं चल सकता, बोले, "उसे जाने दो, पर हमारे अपने देशकी तरफ भी तो जरा गौरसे आँख पसारकर एक बार देखो। जो प्रथा चिरकालसे चली आ रही है उसके सृष्टिकर्ताओंकी दूरदर्शिताको भी जरा देखो। यहाँ वर-कन्यापर दायित्व नहीं होता, दायित्व होता है मा-बाप और गुरुजनोंपर। इसी कारण विचार-बुद्धि यहाँ आकुल-असंयमसे भ्रष्ट नहीं हो जाती, बड़े-बूढ़ोंकी एक शान्त और अविचलित मंगल-भावना जीवन-भर सदा उनके साथ बनी रहती है।"

कमलने कहा, "मगर मणि तो मंगलका हिसाब लगाने नहीं बैठी आशु बाबू, उसने चाहा है प्रेम। एकका हिसाब बुजुर्गोंकी सुयुक्तियोंसे मिल जाता है, पर दूसरेका हिसाब हृदयके देवताके सिवा और कोई नहीं जानता। लेकिन मैं बहस करके व्यर्थमें आपको परेशान कर रही हूँ।—जिसके घरमें पश्चिमकी खिड़कीके सिवा और सब खिड़कियाँ बन्द हैं, वह प्रभातमें सूर्यका आविर्भाव नहीं देख पाता, देख पाता है सिर्फ संध्याका अवसान। परन्तु संध्याके उस चेहरे और रंगका सादृश्य मिलाकर अगर वह प्रभातपर तर्क करता रहे तो सिर्फ बात ही बढ़ेगी, मीमांसा नहीं हो सकती। मुझे लेकिन रात हुई जा रही है, अब जाती हूँ।"

नीलिमा अब तक चुप थी; इतनी देर तक इतनी बातें हुई, पर किसी भी बातमे उसने योग नहीं दिया; अब बोली, "मैं भी सब बातें तुम्हारी साफ साफ नहीं समझ पाई कमल, पर इतना महसूस कर रही हूँ कि घरकी और और खिड़कियाँ भी खोल देनी चाहिए। पर यह तो आँखोंका दोष नहीं,—

दोष है बन्द खिड़कियोंका। नहीं तो, जिधर खुला है उधर मृत्युकालपर्यंत खड़े खड़े देखते रहनेपर भी, जो दिखाई दे रहा है उसको छोड़कर कभी कोई चीज दिखाई नहीं देगी।"

कमल उठके खड़ी हो गई तो आशु बाबू व्याकुल कण्ठसे कह उठे, "जाओ मत कमल, और जरा बैठो। मुँहमें अन्न नहीं जाता, आँखोंमें नींद नहीं,—लगातार छातीके भीतर ऐसा हो रहा है कि तुम्हें मैं समझा नहीं सकता। तो भी, और एक बार कोशिश कर देखूँ, तुम्हारी बातें अगर सच-मुच ही समझ सकूँ। तुम क्या यथार्थ ही कह रही हो कि मैं चुप रहूँ, और यह भद्दी घटना हो जाने दी जाय?"

कमलने कहा, "मनोरमा यदि वास्तवमें उनको प्रेम करती है तो मैं उसे भद्दा नहीं कह सकती।"

"मगर यही तो मैं तुम्हें सौ सौ बार समझाना चाहता हूँ, कमल, कि यह मोह है, यह प्रेम नहीं,—यह गलती उसकी दूर होगी ही होगी।"

कमलने कहा, "सिर्फ गलती ही, सिर्फ मोह ही दूर होता है सो नहीं आशु बाबू, सचमुचका प्रेम भी संसारमें नष्ट हो जाया करता है। इसीसे अधिकांश प्रेमके विवाह क्षणस्थायी हो जाते हैं। इसीलिए उस देशकी इतनी बदनामी है और इतने विवाह-विच्छेदके मामले वहाँ चला करते हैं।"

सुनकर आशु बाबूको सहसा मानो एक प्रकाश दिखाई दिया, उच्छ्वसित आग्रहके साथ वे कह उठे, "यही कहो, यही कहो। यह तो मैं अपनी आँखोंसे देख आया हूँ।"

नीलिमा अवाक् होकर उनकी तरफ देखती रही।

आशु बाबूने कहा, "मगर हमारे देशकी विवाह-प्रथा? उसे तुम क्या कहोगी? वह तो सारी जिन्दगी नहीं टूटता?"

कमलने कहा, "टूटनेकी वजह भी नहीं आशु बाबू। वह तो अनभिज्ञ यौवनका पागलपन नहीं, बहुदर्शी बड़े-बूढ़ोंका हिसाबसे किया गया कारोबार है। स्वप्नका मूलधन नहीं,—आँखों-देखी पक्के आदमीकी जाँच-पड़ताल की हुई खालिस चीज है। गणित करनेमें कोई सांघातिक गलती जब तक न हो गई हो तबतक उसमें दरार नहीं पड़ती। क्या इस देशमें और क्या उस देशमें, सभी जगह वह बड़ी मजबूत चीज होती है,—जिन्दगी-भर वज्रकी तरह टिकी रहती है।"

आशु बाबू एक उसास लेकर स्थिर हो रहे, कोई उत्तर उनकी जबानपर न आया।

नीलिमा चुपचाप देख रही थी; अब उसने धीरेसे पूछा, "कमल, तुम्हारी बात ही अगर सच हो, सचमुचका प्रेम भी अगर भूलके प्रेमके समान ही टूट जाता हो, तो मनुष्य खड़ा काहेपर होगा? उसके पास आशा करनेके लिए फिर बाकी क्या रह जायगा?"

कमलने कहा, "जिस स्वर्गवासकी मियाद निबट चुकी है, रह जायगी उसीकी एकान्त मधुर स्मृति और रह जायगा उसीके बगलमें व्यथाका समुद्र। आशु बाबूके सुख और शान्तिकी सीमा नहीं थी, लेकिन उससे अधिक उनकी और पूँजी नहीं है। भाग्यने जिन्हें इतनी-सी पूँजी देकर विदा कर दिया है, उनके लिए हम सिवा क्षमा करनेके और कर ही क्या सकती हैं जीजी?"

फिर जरा ठहरकर बोली, "लोग बाहरसे सहसा ऐसा समझ लेते हैं कि गया, अब सब गया और इष्ट-मित्रोंके डरका ठिकाना नहीं रहता। फिर तो वे दोनों हाथोंसे उसका रास्ता रोकना चाहते हैं; और निश्चित समझ लेते हैं कि उनके हिसाबके बाहर सिवा शून्यके और कुछ है ही नहीं। पर शून्य नहीं होता जीजी। सब चला जानेपर भी जो बच जाता है, वह मणि-माणिक्यकी तरह मुट्ठीमें ही आ जाता है। मगर हाँ, दर्शकोंका दल जब देखता है कि चीजोंकी भरमारसे रास्ता-भरके जुलूस तो निकाला नहीं जा सकता तब वे उसे धिक्कारते हुए अपने अपने घर लौट जाते हैं और कहते हैं, यही तो सर्वनाश है।"

नीलिमाने कहा, "कहनेका कारण है, कमल। असलमें मणि-माणिक्य सबके लिए नहीं होता, और न वह सर्वसाधारणके लिए है। पाँवसे लेकर चोटी तक सोने-चाँदीके गहने मिले विना जिनका मन ही नहीं भरता, वे तुम्हारे उस मुट्ठी-भर मणि-माणिक्यकी कदर नहीं समझेंगी। जिन्हें बहुत चाहिए वे गाँठपर बहुत सी गाँठें लगाकर निश्चित हो सकते हैं। उनके लिए बहुत-सा बोझ, बहुत-सा आयोजन, बहुत-सी जगह घिरनी चाहिए, तब कहीं वे चीजकी कीमतका अन्दाज लगा सकते हैं। पश्चिमका दरवाजा खोलकर सूर्योदय दिखानेकी कोशिश व्यर्थ होगी कमल, बन्द करो यह चर्चा।"

आशु बाबूके मुँहसे फिर एक दीर्घ निःश्वास निकल पड़ी, धीरे धीरे बोले,

" व्यर्थ क्यों होगी नीलिमा, व्यर्थ नहीं होगी। अच्छी बात है,—न हो तो मैं चुप ही रहूँगा। "

नीलिमाने कहा, " नहीं, सो आप मत कीजिएगा। सत्य क्या सिर्फ कमलके विचारोंमें ही है, और पिताकी शुभ-बुद्धिमें नहीं है? ऐसा हो ही नहीं सकता। कमलके लिए जो सत्य है, मणिके लिए वह सत्य नहीं भी हो सकता है। स्त्रीके दुश्चरित्र पतिको त्याग देनेमें चाहे जितना भी सत्य हो, यह मैं जोरके साथ कह सकती हूँ कि बेलाके पति-परित्यागमें रत्ती-भर भी सत्य नहीं। सत्य न तो पतिके त्यागनेमें है, और न पतिकी दासी-वृत्ति करनेमें,—ये दोनों ही सिर्फ दायें-बायेंके रास्ते हैं; गन्तव्य स्थान तो अपने आप ढूँढ लेना पड़ता है, तर्क करके उसका पता नहीं लगाया जा सकता। "

कमल चुपचाप उसकी ओर देखती रही।

नीलिमा कहने लगी, " सूर्यका उदय होना ही उसका सब कुछ नहीं है, उसका अस्त होना भी उतना ही महत्त्व रखता है। रूप और यौवनका आकर्षण ही अगर प्रेमका सर्वस्व होता, तो लड़कीके सम्बन्धमें बापकी दुश्चिन्ताकी कोई जरूरत ही न थी,—मगर ऐसा नहीं है। मैंने किताबें नहीं पढ़ीं, ज्ञान-बुद्धि भी कम है, तर्कसे मैं तुम्हें समझा नहीं सकती; लेकिन मुझे मालूम होता है कि असल चीजका पता तुम्हें अभी तक मिला ही नहीं। श्रद्धा, भक्ति, स्नेह, विश्वास,—इन्हें कड़ाई करके नहीं पाया जा सकता; बड़े दुःखसे और बहुत देरमें ये दिखाई देते हैं। मगर जब दिखाई देते हैं कमल, तब रूप-यौवनका प्रश्न जाने कहाँ मुँह छिपाकर दुबक जाता है, कुछ पता ही नहीं पड़ता। "

तीक्ष्ण-बुद्धि कमल एक क्षणमें यह समझ गई कि उपस्थित आलोचनामें उसका यह कथन अग्राह्य है। यह न तो प्रतिवाद ही है और न समर्थन ही, ये सब नीलिमाकी अपनी बातें हैं। उसने देखा कि उज्ज्वल दीपालोकमें नीलिमाके बिखरे हुए घने काले बालोंकी श्यामल छायाने उसके चेहरेपर एक अकल्पित सुन्दरता ला दी है और उसकी प्रशान्त आँखोंकी सजल दृष्टि सकरुण स्निग्धतासे ऊपर तक लबालब भर उठी है। कमलने मन ही मन कहा, यह पूछना व्यर्थ है कि यह नवीन सूर्योदय है या थके हुए सूर्यका अस्त-गमन, रक्तिम आभासे आकाशकी जो दिशा आज रंगीन हो उठी है,—पूर्व-पश्चिम दिशाका निर्णय किये बिना ही उसके लिए मेरा श्रद्धाके साथ नमस्कार है।

दो-तीन मिनट बाद आशु बाबू सहसा चौंककर बोले, "कमल, तुम्हारी बातें मैं फिर एक दफे अच्छी तरह विचार कर देखूँगा, पर हमारी बातोंकी भी तुम इस तरह अवज्ञा मत करना। अनेकानेक मानवोंने इसे सत्य मानकर स्वीकार किया है, असत्यके द्वारा कभी इतने आदमियोंको नहीं बहकाया जा सकता।"

कमलने अन्यमनस्ककी भाँति जरा हँसकर सिर हिला दिया; लेकिन जवाब दिया उसने नीलिमाको। बोली, "जिस चीजसे एक बच्चेको बहकाया जा सकता है, उसीसे लाख बच्चोंको भी बहकाया जा सकता है। संख्याका बढ़ जाना ही बुद्धि बढ़नेका प्रमाण नहीं, जीजी। एक दिन जिन लोगोंने कहा था कि नर-नारीके प्रेमका इतिहास ही मानव-सभ्यताका सबसे सत्य इतिहास है, उन्हींने सबसे बढ़कर सत्यका पता पाया था; किन्तु जिन लोगोंने यह घोषणा की कि पुत्रके लिए भार्याकी आवश्यकता है, वे स्त्रियोंका सिर्फ अपमान ही करके शान्त नहीं हुए, बल्कि अपने बड़े होनेका रास्ता भी वे चिरकालके लिए बन्द कर गये। और चूँकि उस असत्यपर ही उन्होंने सारी भीत उठाई थी इसलिए आज तक भी उनकी सन्तानको-दुःखका कोई किनारा नहीं मिला।"

"पर यह बात मुझे क्यों कह रही हो कमल?"

"क्योंकि, आज मुझे आपको ही जतानेकी सबसे ज्यादा जरूरत है। हमें चाटु-वाक्योंके नाना अलंकार पहनाकर जिन लोगोंने यह प्रचार किया था कि मातृत्वमें नारीकी चरम सार्थकता है, उन लोगोंने समस्त नारी-जातिको धोखा दिया था। जीवनमें किसी भी अवस्थामें क्यों न पड़ना पड़े, जीजी, पर इस मिथ्या नीतिको हर्गिज न मानना। यही मेरा अन्तिम अनुरोध है। —पर अब नहीं, मैं जाती हूँ।"

आशु बाबूने थके हुए स्वरमें कहा, "अच्छा जाओ। नीचे तुम्हारे लिए गाड़ी खड़ी है, पहुँचा आयेगी।"

कमलने व्यथाके साथ कहा, "आप मुझसे स्नेह करते हैं,—पर हम दोनोंमें कहीं भी तो मेल नहीं।"

नीलिमाने कहा, "है क्यों नहीं कमल। पर वह मालिककी फरमाइशके माफिक काँट-छाँट कर बनाया हुआ मेल नहीं, विधाताकी सृष्टिका मेल है। चेहरा अलग अलग हैं, पर खून एक ही है,—आँखोंकी ओझल नसोंमें बहा करता है वह। इसीसे तो बाहरका अनैक्य चाहे कितनी ही गड़बड़ी क्यों न पैदा करे, भीतरका प्रचण्ड आकर्षण हर्गिज नहीं छूटता।"

कमलने पास आकर आशु बाबुके कन्धेपर हाथ रखके धीरे धीरे कहा "लड़कीके बदले आप मेरे ऊपर गुस्सा नहीं हो सकेंगे, मैं कहे देती हूँ।" आशु बाबु कुछ बोले नहीं, सिर्फ स्तब्ध होकर बैठे रहे।

कमलनेके कहा, "अँग्रेजीमें एक शब्द है 'इमेसिन्पेशन' (=मुक्ति-दान) आप तो जानते हैं, प्राचीन कालमें पिताकी कठोर अधीनतासे सन्तानका मुक्त किया जाना भी उसका एक बड़ा अर्थ था। उस जमानेके लड़के-लड़कियोंने मिलकर इस शब्दका आविष्कार नहीं किया था, आविष्कार किया था जो आप जैसे महान् पिता थे उन्हींने—अपनी बन्धनकी रस्सी ढीली करके जिन्होंने अपनी कन्याओंको मुक्ति दी थी, उन्हींने। आज भी इमेन्सिपेशनके लिए चाहे कितनी ही स्त्रियाँ मिलकर झगड़ा क्यों न करती रहें, देनेवाले असल मालिक पुरुष ही हैं, हम स्त्रियाँ नहीं। जगत्-व्यवस्थाके इस सत्यको मैं एक दिनके लिए भी नही भूलती। मेरे पिता अकसर कहा करते थे कि ससारके क्रीत दासोंको उनके मालिकोंने ही एक दिन स्वाधीनता दी थी, और उस दिन उनकी तरफसे लड़े भी थे वे हीं जो उनके मालिकोंकी जातिके थे —दासोंने युद्धके बलपर या युक्तियोंके बलपर स्वाधीनता नहीं पाई। ऐसा ही होता है। विश्वका नियम ही यह है; शक्तिमान ही शक्तिके बंधनसे दुर्बलोंको परित्राण देते हैं। उसी तरह नारियोंको भी पुरुष ही मुक्ति दे सकते हैं। दायित्व तो उन्हींका है। मनोरमाको मुक्ति देनेका भार आपके हाथमें है। मणि विद्रोह कर सकती है, पर पिताके अभिशापमें तो सन्तानकी मुक्ति नहीं रहती, उसकी मुक्ति तो उनके आशीर्वादमें ही निहित है।"

आशु बाबू अब भी कुछ न बोल सके। इस उच्छृंखल प्रकृतिकी लड़कीने ससारमें असम्मान और अमर्यादाके बीचमें ही जन्म-लाभ किया है किन्तु जन्मकी उस लज्जाजनक दुर्गतिको हृदयसे सम्पूर्ण विलुप्त करके अपने लोकान्तरित पिताके प्रति उसने जो भक्ति और स्नेहका भाव संचित कर रक्खा है उसकी सीमा नहीं है।

कमलके पिताको उन्होंने देखा नहीं, और अपने संस्कार और प्रकृतिके अनुसार उस आदमीपर श्रद्धा करना भी कठिन है, फिर भी उस व्यक्तिके लिए उनकी आँखोंमें पानी भर आया। अपनी लड़कीका विच्छेद और विरुद्धाचरण उनके हृदयमें शूलकी तरह चुभा हुआ है, मगर फिर भी, इस पराई लड़कीके मुँहकी तरफ देखकर मानो उन्हें इस बातका आभास-सा मिला

कि सब बन्धन तोड़कर भी आदमीको कैसे हमेशाके लिए बाँधके रखा जा सकता है, और वे अपने कंधेपरका उसका हाथ खींचकर क्षण-भर चुपचाप बैठ रहे।

कमलने कहा, "अब मैं जाऊँ?"

आशु बाबूने हाथ छोड़ दिया, कहा, "जाओ।"

इससे ज्यादा उनके मुँहसे और कुछ निकला ही नहीं।

२५

जाड़ोंका सूर्य अस्त हो गया है। सन्ध्याकी छायाने घरके भीतरका हिस्सा धुँधला-सा कर दिया है। सिलाईका एक जरूरी काम थोड़ा-सा बचा है, जिसे कमल दिया-बत्तीके पहले ही पूरा कर देना चाहती है। पास ही कुरसीपर अजित बैठा है। उसकी भाव-भंगीसे मालूम होता है कि कोई बात कहते कहते अचानक रुक गया है और व्याकुल आग्रहके साथ उत्तरकी प्रतिक्षा कर रहा है।

मनोरमा और शिवनाथका मामला सबको मालूम हो चुका है। आजका प्रसंग उसी विषयको लेकर शुरू हुआ है। अजितने शुरू शुरूमें कहा था कि उसने आगरेमें आते ही सन्देह किया था कि अन्तमें जाकर ऐसी ही बात होगी।

पर सन्देहके कारणके सम्बन्धमें कमलने कोई उत्सुकता नहीं दिखाई!

उसके बाद अजित अनर्गल बकते-बकते अन्तमें ऐसी जगह आकर रुका जहाँ दूसरी तरफसे उत्तर पाये विना नहीं बढ़ा जा सकता।

कमल अत्यन्त तल्लीनताके साथ सिलाई करनेमें ही लगी रही, मानो उसे सिर उठानेकी भी फ़ुरसत नहीं।

दो तीन मिनिट तो सन्नाटेमें बीते। आगे न जाने और कितनी देर लगे, इसलिए अजितको फिर कोशिश करनी पड़ी, बोला, "आश्चर्य तो यह है कि शिवनाथका आचरण तुम्हारी निगाहमें पकड़ाई नहीं दिया।

कमलने मुँह नहीं उठाया, किन्तु सिर हिलाकर हुआ, "इसपर क्या कोई विश्वास कर सकता है?"

"और कोई कर सकता है या नहीं, मुझे नहीं मालूम। पर क्या आप भी नहीं कर सकते?"

अजितने कहा, "शायद कर सका हूँ, लेकिन तुम्हारे मुँहकी ओर देखकर, ऐसे ही नहीं।"

अबकी बार कमलने मुँह ऊपर किया और हँसकर कहा, "तो देखिए, और कहिए, कर सकते हैं या नहीं?"

अजितकी आँखें चमक उठीं; बोला, "तुम्हारी ही बात सच है। उसपर अविश्वास नहीं किया, उसीका यह नतीजा हुआ।"

"हुआ है सो मैं मानती हूँ, पर यह भी तो खुलासा कर बताइए कि आपने अपने सन्देहका अच्छा नतीजा किस परिमाणमें पाया?" कहकर वह फिर जरा हँसी और काममें लग गई।

इसके बाद अजित संबद्ध और असंबद्ध बहुत-सी बातें दस-पन्द्रह मिनट तक लगातार कहता रहा। अन्तमें थककर बोला, "कभी हाँ, कभी ना,—पहेली बुझानेके सिवाय क्या तुम सीधी बात करना जानती ही नहीं?"

कमलने सिलाईका काम सीधा करते हुए कहा, "स्त्रियाँ पहेली बुझाना ही पसन्द करती हैं,—उनका यह स्वभाव है।"

"तो उस स्वभावकी मैं तारीफ नहीं कर सकता। स्पष्ट कहना भी जरा सीखो, उसके बिना संसारमें काम नहीं चलता।"

"आप भी पहेली समझना जरा सीखिए, अन्यथा, दूसरे पक्षको भी ऐसी ही असुविधा होती है।" कमलने हाथकी चीज तह करके टोकनीमें रखते हुए कहा, "स्पष्ट कहनेका लोभ जिन्हें बहुत ज्यादा होता है, वे अगर वक्ता हुए तो अखबारमें वक्तृता छपाते हैं, लेखक हुए तो अपने ग्रन्थकी भूमिका लिखते हैं, और अगर नाट्यकार हुए तो खुद ही अपने नाटकके नायक बनकर अभिनय करते हैं।—सोचते हैं, शब्दोंसे जो व्यक्त नहीं हो सका उसे हाथ पैर हिलाकर व्यक्त कर देना चाहिए।—पर सिर्फ यही मैं नहीं जानती कि अगर वे प्रेम करते हैं तो क्या करते हैं? लेकिन जरा बैठिए आप, मैं बत्ती जला लाऊँ।" कहकर वह उठके जल्दीसे दूसरे कमरेमें चली गई।

पाँच-छह मिनट बाद वह लौट आई और टेबिलपर बत्ती रखकर जमीनपर बैठ गई।

अजितने कहा, "वक्ता या लेखक या नाट्यकार: इनमेंसे मैं कोई भी नहीं, लिहाजा, उनकी तरफसे मैं कैफियत नहीं दे सकता, लेकिन अगर वे प्रेम करते हैं तो क्या करते हैं, सो मैं जानता हूँ। वे शैव विवाहका कूट-कौशल नहीं रचते; बल्कि साफ और जानी हुई राहपर कदम रखकर चलते हैं। वे इस बातका खयाल रखते हैं कि उनके पीछे कहीं घरवालोंको खाने-

पहननेकी तकलीफ न उठानी पड़े, आश्रयके लिए किसी मालिक-मकानका मुँह न ताकना पड़े, असम्मानकी चोट —"

कमल बीचहीमें रोककर बोल उठी, "बस बस, हो गया।" और फिर हँसते हुए कहा, "यानी वे शुरूसे आखिर तक इमारतको ऐसे भयंकर रूपसे ठोस और मजबूत बना देते हैं कि कब्रके मुर्देके सिवा उसमें जिन्दा आदमीके लिए दम लेनेकी भी संध नहीं रहती। वे साधु पुरुष हैं—"

सहसा दरवाजेके बाहरसे अनुरोध आया, "हम लोग भीतर आ सकते हैं?"

हरेन्द्रकी आवाज थी। पर 'हम लोग' कौन?

"आइए, आइए।" कहती हुई कमल अभ्यर्थनाके लिए दरवाजेके पास जा खड़ी हुई।

हरेन्द्र था और साथमें एक और युवक। हरेन्द्रने कहा, "सतीशको हमारे आश्रममें तुमने सिर्फ एक दिन देखा था, फिर भी आशा है कि भूली न होगी।"

कमलने मुस्कराते हुए जवाब दिया, "नहीं। फर्क सिर्फ इतना है कि उस दिन कपड़े सफेद थे, आज हैं पीले।"

हरेन्द्रने कहा, "यह तो उच्चतर भूमिपर आरोहणकी बाह्य-घोषणा मात्र है और कुछ नहीं। काशीवाससे सद्यः प्रत्यागत हुए हैं,—दो घण्टेसे ज्यादा नहीं हुए। एक तो थके हुए हैं, और दूसरे तुम्हारे प्रति प्रसन्न नहीं, फिर भी मुझे यहाँको आता देख आवेगका संवरण न कर सके। यह हम ब्रह्मचारी लोगोंके मतका औदार्य है और कुछ नहीं।" कहते हुए उसने भीतरकी तरफ झाँका, और वह कहने लगा, "अरे आप हैं! यहाँ तो और भी एक नैष्ठिक ब्रह्मचारी पूर्वाह्नमें ही समुपस्थित हैं। खैर, अब कोई आशंकाका कारण नहीं। मेरा आश्रम तो टूट रहा है, लेकिन दूसरा नया पैदा हुआ ही समझो।" यह कहकर वह भीतर घुसा, दूसरी कुरसी सतीशको दिखाता हुआ बोला, "बैठो" और आप खाटपर जा डटा। यह देखकर कि कमल खड़ी है, और तीसरा आसन है नहीं, सतीश बैठनेमें दुविधा कर रहा था; हरेन्द्र इस बातको न समझा हो सो बात नहीं, फिर भी वह हँसकर बोला, "बैठो जी सतीश, जाति न जायगी। काशी हो आनेके कारण तुम चाहे जितने भी ऊँचे चढ़ गये हो, पर इस बातको न भूलो कि संसारमें, उससे भी ऊँची कोई जगह है।"

"नहीं, इसलिए नहीं।" कहकर सतीश अप्रतिम-सा होकर बैठ गया।

उसका मुँह देखकर कमल हँसी, उसने कहा, "किसीपर व्यंग करना आपके मुँहसे शोभा नहीं देता हरेन्द्र बाबू। आश्रमके प्रतिष्ठाता भी आप हैं और महन्त-महाराज भी आप ही हैं। ये लोग उमरमें भी छोटे हैं और पण्डागीरीमें भी पीछे हैं। इनका काम तो सिर्फ आपके उपदेश और आदेशके अनुसार चलना है। इसलिए—"

हरेन्द्रने कहा, "आपका यह 'इसलिए' तो बिलकुल ही अनावश्यक है। आश्रमका प्रतिष्ठाता शायद मैं ही हूँ, पर महन्त और महाराज हैं ये ही दोनों मित्र सतीश और राजेन्द्र। एकका काम है मुझे उपदेश देना और दूसरेका काम था यथासाध्य मेरी न मानकर चलना। एकका तो पता ही नहीं और दूसरे लौटे हैं बहुत ज्यादा तत्त्व-संचय करके। मुझे डर है कि इनके साथ कदमसे कदम मिलाकर शायद ही मैं चल सकूँगा। अब सिर्फ उन अर्ध उपासे लड़कोंकी चिन्ता है जिन्हें काशी-काञ्ची-भ्रमण कराकर ये वापस ले आये हैं। मैंने उनकी तरफ देखते ही समझ लिया कि इस बीचमें उनकी आचार निष्ठामें रंच-मात्र भी त्रुटि नहीं हुई। क्षोभ सिर्फ इतना ही है कि और जरा जोरसे तपस्या करा दी जाती तो वापस आनेका रेल-किराया मेरा नहीं लगता।"

कमलने हार्दिक-वेदनाके साथ पूछा, "लड़के बहुत दुबले हो गये होंगे?"

हरेन्द्रने कहा, "दुबले?—आश्रमकी परिभाषामें शायद उसके लिए एक अच्छा-सा शब्द है,—सतीशको मालूम होगा,—आधुनिक-कालमें अंकित किया हुआ 'शुक्राचार्यके तपोवनमें कच'का चित्र क्या आपने देखा है?—नहीं देखा? —तो तुम मेरी बात नहीं समझ सकोगी।—मैंने जब ऊपरके बरामदेसे देखा तो मालूम हुआ कि कचोंका एक झुण्ड सहसा पंक्तिवार स्वर्गसे उतरकर आश्रममें प्रवेश कर रहा है। मुझे आशा बँध गई कि आश्रम जब टूट जायगा तब, खाना-पीना न मिलनेपर भी वे न मरेंगे, देशके किसी भी चित्रकारीके स्कूलमें जाकर चित्रके लिए मॉडेलका काम दे सकेंगे।

कमलने कहा, "लोग कहते हैं कि आप आश्रम उठा दे रहे हैं। यह क्या सच है?"

"सच है। तुम्हारे वाक्य-बाण मुझसे सहे नहीं जाते। सतीशके यहाँ आनेका यह भी एक कारण है। इसकी धारणा है कि तुम असलमें भारतीय

रमणी नहीं हो, इसलिए भारतकी निगूढ़ सत्य-वस्तुको तुम पहचान ही नहीं सकतीं। तुम्हें यह यही बात समझा देना चाहता है। समझोगी या नहीं -सो तो तुम्हीं जानो, पर इसे मैंने आश्वासन दे दिया है कि मैं कुछ भी क्यों न करूँ, उन लोगोंके लिए डरकी कोई बात नहीं। कारण, मालूम नहीं, चतुर्विध आश्रमोंमेंसे अजितकुमार स्वयं कौन-सा आश्रम ग्रहण करेंगे; पर फिर भी, परम्परासे इतनी खबर मुझे मिल गई है कि वे बहुत-सा अर्थ-व्यय करके ऐसे और भी दस-बीस आश्रम जगह जगह खोल देना चाहते हैं। उनके पास अर्थ भी है और देनेका सामर्थ्य भी। सो उनमेंसे एकका नायकत्व तो सतीशको मिल ही जायगा।"

कमल भीतर ही भीतर मुसकराती हुई बोली, "दानशीलता जैसी दुष्कृतिको ढकनेके लिए इससे अच्छा आच्छादन और नहीं हो सकता। पर भारतकी सत्य-वस्तुको मुझे समझानेसे सतीश बाबूको क्या फायदा होगा? हरेन्द्र बाबूसे मैंने आश्रम उठा देनेके लिए भी नहीं कहा, और रुपयोंके बलपर भारत-भरमें आश्रम खोलनेके लिए भी अजित बाबूको मैं मना नहीं करूँगी। मेरी आपत्ति तो सिर्फ उसीको सत्य मान लेनेमें है। उसमें किसीका क्या नुकसान?"

सतीशने विनीत स्वरमें बोला, "नुकसानका परिमाण बाहरसे नहीं दिखाई देता।—बहसके लिए नहीं बल्कि शिक्षार्थीके तौरपर मैं आपसे अगर कुछ प्रश्न करूँ तो क्या आप उनका उत्तर देंगी?"

"मगर आज तो मैं बहुत थकी हुई हूँ सतीश बाबू।"

सतीशने उसकी बातपर कुछ ध्यान ही नहीं दिया, बोला, "हरेन्द्र भइयाने अभी अभी हँसीके तौरपर कहा था कि मैं काशी जाकर चाहे जितना भी ऊँचा चढ़ गया होऊँ, संसारमें उससे भी ऊँचा और स्थान है सो, वह यही घर है। मैं जानता हूँ कि आपके प्रति इनकी श्रद्धा असीम है। आश्रम टूट जानेसे हानि नहीं, किन्तु आपकी बातोंसे इनका अगर मन टूट गया, तो नुकसानकी पूर्ति होना कठिन है।"

कमल चुप रही। सतीश कहने लगा, "राजेन्द्रको आप अच्छी तरह जानती होंगी, वह मेरा मित्र है। मूल विषयपर मतका मेल न होता तो हम दोनोंकी मित्रता होती ही नहीं। उसीके समान मैं भी चाहता हूँ कि भारतकी सर्वाङ्गीण मुक्तिमेंसे स्वजातिका परम कल्याण हो। उसी आशासे हम लड़कोंको संघबद्ध करके गढ़ना चाहते हैं। हमें मृत्युके बाद कल्पकालतक

वैकुण्ठवास करनेका लोभ नहीं, लेकिन नियमके कठोर बन्धनके विना संघकी सृष्टि हर्गिज नहीं हो सकती। और सिर्फ लड़कोंके लिए ही नहीं, उस बन्धनको हम लोगोंने स्वयं अपने ऊपर भी लागू किया है। कष्ट वहाँ जरूर है,—और रहेगा। ही क्यों कि बहुत 'श्रम' करके महान् वस्तुको प्राप्त करनेके स्थानको ही तो 'आश्रम' कहते हैं। इसमें उपहासकी तो कोई बात नहीं।"

कोई जवाब न पाकर सतीश फिर कहने लगा, "हरेन्द्र भइयाका आश्रम चाहे जैसा भी हो, उसके विषयमें मैं आलोचना नहीं करूँगा; कारण, तब उसके व्यक्तिगत हो जानेका डर है। परन्तु इसे तो अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि भारतीय आश्रमोंमें भारतके अतीतके प्रति ही निष्ठा और परम श्रद्धा निहित होनी चाहिए। त्याग, ब्रह्मचर्य, संयम,—ये सब शक्तिहीन असमर्थोंके धर्म नहीं हैं। जाति-गठनके प्राण और उपादान उस समय इन्हींमें निहित थे, और आज इस युगमें भी वे उपेक्षकी सामग्री नहीं। मरणोन्मुख भारतको सिर्फ एक इसी मार्गसे पुनर्जीवित किया जा सकता है। आश्रमके आचार और अनुष्ठानके द्वारा हम अपने इसी विश्वास और इसी श्रद्धाको जगाये रखना चाहते हैं। एक दिन इस मंत्र-मुखरित, होमाग्नि प्रज्वलित, तपस्या-कठोर भारतमें जो आश्रमोंकी प्रतिष्ठा हुई थी वह जाति-जीवनके एक मौलिक कल्याणको सफल करनेके उद्देश्यसे ही हुई थी और इस सत्यको कौन ऐसा मूर्ख होगा जो स्वीकार नहीं करेगा कि वह प्रयोजन आज भी मिटा नहीं है!"

सतीशकी वक्तृतामें हार्दिकताका जोर था। उसकी बातें अच्छी थीं और निरन्तर कहते रहनेके कारण कण्ठस्थ हो गई थीं। आखिरमें उसका मुलायम स्वर तेज हो गया और मारे उत्तेजनाके काला चेहरा बैंगनी हो उठा। उसीकी तरफ चुपचाप और निष्पलक दृष्टिसे देखते रहनेके कारण एक प्रकारके धार्मिक जोशसे अजितका आपाद-मस्तक रोमाञ्चित हो उठा; और साथ ही हरेन्द्र भी, यद्यपि इसके पहले वह अपने आश्रमके विरुद्ध कितना ही मौखिक आस्फालन कर चुका है, आश्रमके विगत गौरवके वर्णनसे विश्वास और अविश्वासके बीच आँधीके वेगसे झूलने लगा। उसीके मुँहकी तरह तीक्ष्ण दृष्टि रखकर सतीश कहने लगा, "हरेन्द्र भइया, हम भले ही मर जायँ, पर इस सत्यको कि इस तरहके आश्रमोंमें ही हमारे नव-जन्म-लाभका विधान है, आप भूले जा रहे हैं

किस युक्तिपर ? आप तोड़ना चाहते हैं, पर तोड़ना ही क्या बड़ी बात है ? आप ही बताइए कि बनाना क्या उससे बहुत बड़ी बात नहीं है ?"

फिर कमलके मुँहकी तरफ देखकर उसने पूछा, "जीवनमें कितने आश्रम आपने अपनी आँखों देखे हैं ? और कितनोंके साथ आपका यथार्थ गूढ़ परिचय हुआ है ?"

कठिन प्रश्न है। कमलने कहा, "वास्तवमें एक भी नहीं देखा और आप लोगोंके आश्रमके सिवा और किसीके साथ मेरा कोई परिचय भी नहीं हुआ।"

"तब बताइए ?"

कमलने हँसते चेहरेसे कहा, "आँखोंसे क्या सभी कुछ देखा जा सकता है ? आप लोगोंके आश्रमका 'श्रम' ही आँखोसे देख आई थी, मगर उससे किसी महान् वस्तुके प्राप्त करनेकी बात तो ओटकी ओटमें ही रह गई।"

सतीशने कहा, "आप फिर हँसी उड़ा रही हैं।"

उसका क्रुद्ध चेहरा देखकर हरेन्द्र स्निग्ध स्वरमें बोल उठा, "नहीं नहीं सतीश, हँसी नहीं उड़ा रहीं, यों ही सिर्फ विनोद कर रही हैं। यह तो इनका स्वभाव है।"

सतीश बोला, "स्वभाव है ? पर स्वभाव कहनेसे ही कैफियत नहीं हो जाती हरेन्द्र भइया। यह तो भारतके अतीत कालका जो भी कुछ नित्य-पूजनीय और नित्य-आचरणीय तत्त्व है, उसीका अपमान,—उसीके प्रति अश्रद्धा दिखाना है। इसकी तो उपेक्षा नहीं की जा सकती।"

हरेन्द्रने कमलकी तरफ इशारा करके कहा, "इस बातपर इनसे बहुत दफे बहस हो चुकी है। इनका कहना है कि अतीतका इसमें कोई महत्त्व नहीं। वस्तु अतीत होती है कालके धर्मसे, मगर अच्छी होती है अपने गुणसे। सिर्फ प्राचीन होनेसे ही वह पूज्य नहीं हो जाती। जो बर्बर जाति किसी जमानेमें अपने बूढ़े मा-बापको जिन्दा गाड़ देती थी, वह आज भी अगर उस प्राचीन अनुष्ठानकी दुहाई देकर मनुष्यके कर्तव्यका निर्देश करना चाहे, तो उसे भी तो रोका नहीं जा सकता सतीश।"

सतीश क्रोधमें आकर ऊँचे स्वरमें कह उठा, "प्राचीन भारतके साथ बर्बरोंकी तुलना नहीं हो सकती हरेन्द्र दादा।"

हरेन्द्रने कहा, "सो मैं जानता हूँ। पर यह तो युक्ति नहीं सतीश, यह तो गलेके जोरकी बात है।"

सतीश और भी उत्तेजित हो उठा, बोला, "यह हम लोगोंने स्वप्नमें भी न सोचा था हरेन्द्र दादा, कि आपको भी एक दिन इस नास्तिकताके चक्करमें पड़ना पड़ेगा।"

हरेन्द्रने कहा, "तुम जानते हो कि मैं नास्तिक नहीं हूँ। लेकिन यह गाली देकर सिर्फ अपमान ही किया जा सकता है सतीश, मतकी प्रतिष्ठा नहीं की जा सकती। कठोर बात ही दुनियामें सबसे ज्यादा कमजोर होती है।"

सतीश शर्मिन्दा हो गया। उसने झुककर हरेन्द्रके पाँव छू लिये और कहा, "अपमान मैंने नहीं किया हरेन्द्र भइया। आप तो जानते हैं, हम लोग आपकी कितनी भक्ति करते हैं; मगर हमें दुःख होता है जब सुनते हैं कि भारतकी शाश्वत तपस्यापर भी आप अविश्वास करने लगे हैं। एक दिन जिन उपादानों और जिस साधनासे उन तपस्वियोंने भारतकी इस विशाल जाति और विराट् सभ्यताका निर्माण किया था, वह सत्य कभी विलुप्त नहीं हुआ। सुनहले अक्षरोंमें लिखा हुआ मैं स्पष्ट देख रहा हूँ कि वही भारतका मज्जागत धर्म है, वही हमारी अपनी चीज हैं। इस ध्वंसोन्मुख विराट् जातिको फिर उन्हीं उपादानोंसे जिलाया जा सकता है हरेन्द्र भइया, और कोई मार्ग नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "न भी जिलाया जा सके, सतीश। यह तुम्हारा विश्वास है,—और इसकी कीमत सिर्फ तुम्हीं तक सीमित है। एक दिन ठीक इसी ढंगकी बातके जवाबमें कमलने कहा था, 'जगतके आदिम युगमें एक दिन विराट् अस्थि, विराट् देह और विराट् क्षुधावाले एक विराट् जीवकी सृष्टि हुई थी; उसी देह और क्षुधासे वह संसारको जय करता फिरा था, और उस दिन वही थे उसके सत्य उपादान। किन्तु, फिर एक दिन ऐसा आया कि उसी देह और उसी क्षुधाने उसकी मृत्यु ला दी। एक दिनके सत्यके उपादानोंने दूसरे दिनके मिथ्या उपादान बनकर उसे संसारसे निश्चिह्न कर दिया,—जरा भी दुविधा नहीं की। उसकी अस्थि आज पत्थरमें परिणत हो गई है, और अब वह सिर्फ प्रत्न-तत्त्वज्ञ (पुरातत्त्वज्ञ) विद्वानोंकी गवेषणाकी चीज रह गई है।"

सतीशको सहसा जवाब ढूँढ़े न मिला, और वह कहने लगा, "तो क्या हमारे पूर्व-पुरुषोंका आदर्श भ्रान्त था? उनके तत्त्व-निरूपणमें सत्य नहीं था?"

हरेन्द्रने कहा, "हो सकता है कि उस दिन उसमें सत्य रहा हो, पर आज उस सत्यके न रहनेमें कोई बाधा नहीं। उस दिन जो पथ स्वर्गका पथ था

अगर आज वही हमें यमराजके दक्षिण-द्वारपर पहुँचा दे, तो मुँह फुलानेका मैं तो कोई कारण नहीं देखता, सतीश।"

सतीश अपने गूढ़ क्रोधको जी-जानसे दबाकर बोला, "हरेन्द्र भइया, यह सब सिर्फ आप लोगोंकी आधुनिक शिक्षाका फल है; और कुछ नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "असम्भव नहीं। किंतु आधुनिक शिक्षा अगर आधुनिक कालमें हमें कल्याणका मार्ग दिखा सके, तो मैं उसमें लज्जाकी कोई बात नहीं देखता सतीश।"

सतीश बहुत देर तक निर्वाक् होकर स्तब्ध बैठा रहा, फिर धीरे धीरे बोला, "मगर मैं तो लज्जाका बल्कि महालज्जाका कारण देखता हूँ, हरेन्द्र भइया! भारतका ज्ञान और भारतका प्राचीन तत्त्व इस भारतका ही वैशिष्ट्य और प्राण है। उस तत्त्वको तिलाञ्जलि देकर अगर देशको स्वाधीनता प्राप्त करना हो, तो वह स्वाधीनता भारतकी जय न होगी, बल्कि उससे तो सिर्फ पाश्चात्य नीति और पाश्चात्य सभ्यताकी ही जय होगी। वह तो पराजयका ही नामांतर है। उससे तो मृत्यु अच्छी।"

सतीशकी वेदना हार्दिक है। उस व्यथाका परिमाण अनुभव करके हरेन्द्र मौन हो रहा, और अबकी बार जवाब दिया कमलने। उसके मुँहपर सुपरिचित परिहासका चिह्न तक न था, और कंठस्वर संयत, शान्त और मृदु था। उसने कहा, "सतीश बाबू, आपने अपने जीवनमें जैसे अपने आपको समर्पित कर दिया है, अपने संस्कारोंको भी वैसे ही अगर समर्पित कर सकते, तो आज यह बात भी अनुभव करनेमें आपको कठिनाई न होती कि किसी विशेष भावके लिए या किसी वैशिष्ट्यके लिए आदमी नहीं है, बल्कि आदमीके लिए ही उस वैशिष्ट्यका आदर है, मूल्य है। पर मानव ही अगर नष्ट हो जाय, तो उस तत्त्वकी महिमाकी प्रचेष्टासे लाभ ही क्या होगा? भारतके मतकी जय न भी हो तो क्या हुआ, मनुष्यकी जय तो होगी। तब मुक्ति पाकर इतने नर नारी धन्य हो जायँगे। जरा नवीन तुर्कीकी तरफ तो देखिए। जब तक वह अपनी प्राचीन रीति-नीति, आचार-विचार और परम्परागत पुराने अनुष्ठान-मार्गको सत्य जानकर पकड़े रहा, तब तक उसकी बार बार पराजय ही होती रही। आज उसने क्रान्तिमेंसे सत्यको पाया है—उसका साराका सारा, कूड़ा-करकट बह गया है,—किसकी ताकत है कि आज उसका उपहास करे! और मजा यह कि किसी दिन उसके उस प्राचीन मत और मार्गने ही उसे

विजय दी थी, ऐश्वर्य दिया था, कल्याण दिया था, मनुष्यत्व दिया था। पहले उसने सोचा था कि वही शायद चिरन्तन सत्य है। सोचा था कि उसीको जी-जानसे पकड़े रहनेसे विगत गौरवको आज भी वापस पाया जा सकता है। उसे इस बातका खयाल भी न था कि उसका भी विवर्तन है। आज उसका वह मोह तो मर गया, पर आदमी जी उठा। ऐसे दृष्टान्त और भी हैं, और भी होंगे। सतीश बाबू, आत्म-विश्वास और आत्म-अहंकार दोनों एक चीज नहीं हैं।"

सतीशने कहा, "जानता हूँ। मगर ऐसा भी तो हो सकता है कि पश्चिमके लोगोंने मनुष्यके प्रश्नका जो उत्तर दिया है वह शेष उत्तर न हो! ऐसा भी तो हो सकता है कि उनकी सभ्यताका भी किसी दिन ध्वंस हो जाय?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "हाँ, हो सकता है। और मेरी धारणा है कि ध्वंस होगा भी।"

"तब फिर?"

कमलने कहा, "उसमें धिक्कारकी कोई बात नहीं होगी सतीश बाबू। बुरा तो अच्छेका दुश्मन नहीं हुआ करता, अच्छेका दुश्मन तो वह है जो उससे और भी अच्छा है। वह 'और भी अच्छा' जिस दिन अच्छेके सामने उपस्थित होकर प्रश्नका जवाब चाहता है उस दिन उसीके हाथमें राजदण्ड सौंपकर उसे अलग हो जाना पड़ता है। एक दिन शक, हूण और तातारोंने आकर भारतको शारीरिक बलपर जीत लिया, मगर यहाँकी सभ्यताको वे नहीं बाँध सके, वे खुद ही बँध गये। जानते हैं इसका कारण क्या था? असल कारण यह था कि वे खुद ही छोटे थे। पर मुगल पठानोंकी परीक्षा बाकी ही रह गई, क्योंकि इसी बीच फरासीसी और अँग्रेज आ धमके। लेकिन उनकी मियाद आज भी खत्म नहीं हुई है। भारतको इसका जवाब उन्हें एक दिन देना ही होगा। खैर, उस प्रश्नको जाने दीजिए,—लेकिन पश्चिमके ज्ञान-विज्ञान और सभ्यताके सामने भारतवर्षको आज अगर नीचा देखना पड़े तो उससे उसके दम्भको चोट जरूर पहुँचेगी, किन्तु यह मैं निश्चयसे कह सकती हूँ कि उससे उसके कल्याणको चोट न पहुँचेगी।"

सतीशने जोरसे सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं, नहीं, नहीं। जिनके आस्था नहीं, श्रद्धा नहीं, विश्वासकी नींव जिनकी बालूपर है, उनके सामने यह कहना तो सर्वनाशको निमंत्रण देना होगा।" कहकर उसने कनखियोंसे

हरेन्द्रको देखा और कहा, "ठीक इसी तरह एक दिन बंगालमें,—अभी ज्यादा दिन नहीं हुए,—विदेशके विज्ञान, विदेशके दर्शन और विदेशकी सभ्यताको बड़ा मानकर कुछ सत्यभ्रष्ट और आदर्शभ्रष्ट लोगोंने अपनी अधूरी शिक्षाके विजातीय दम्भसे स्वदेशका जो कुछ अपना था उसीको तुच्छ-करके देशके मनको विक्षित और कदाचारी बना डाला था। मगर इतना बड़ा अकल्याण विधातासे सहा न गया, उसकी प्रतिक्रिया हुई और विवेक लौट आया। भूल दिखाई दे गई। उन विषम दिनोंमें जो मनस्वी अपनी जातिके केन्द्र-विमुख उद्भ्रान्त चित्तको अपने घरकी ओर फिरसे वापस ले आये थे, वे सिर्फ बंगालके ही नहीं, समग्र भारतके वन्दनीय हैं।" यह कहते हुए उसने दोनों हाथ जोड़कर माथेसे लगा लिये।

बात सच थी, और सभी जानते थे। लिहाजा हरेन्द्र और अजित दोनोंने जो उसका अनुकरण करके वंदनीयोंके लिए नमस्कार किया, उसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं थी। अजितने मृदु स्वरमें कहा, "नहीं तो शायद बहुतसे लोग उस समय ईसाई हो जाते। सिर्फ उन्हींके कारण ऐसा न हो सका।" बात कहनेके बाद ही उसने कमलके मुँहकी तरफ देखा,—उसकी आँखोंमें इसका अनुमोदन नहीं था, सिर्फ तिरस्कारका भाव ही दिखाई दिया। फिर भी वह चुप ही रही। शायद, जवाब देनेकी इच्छा भी नहीं थी। अजितको वह जानती थी,—पर हरेन्द्रने जब इसीकी अस्फुट प्रतिध्वनि-सी की, तब, उसकी कुछ देर पहले कही हुई बातोंके साथ यह ससंकोच जड़ता ऐसी भद्दी दीख पड़ी कि वह चुप न रह सकी। बोली, "हरेन्द्र बाबू, कुछ ऐसे आदमी होते हैं जो भूत तो नहीं मानते, पर भूतसे डरते जरूर हैं। आप उन्हींमेंसे एक हैं और इसीका नाम है भावके घर चोरी। इतना अनुचित और कुछ हो ही नहीं सकता। इस देशमें आश्रम जैसी संस्थाओंके लिए न कभी रुपयोंकी कमी होगी और न लड़कोंका अकाल पड़ेगा; इसलिए, आपके बिना भी सतीश बाबूका काम चल जायगा मगर इन्हें त्याग देनेका मिथ्याचार आपको हमेशा खलता रहेगा।"

फिर जरा ठहरकर बोली, "मेरे पिता ईसाई थे; पर मैं कौन हूँ, इस बातकी खोज न तो कभी उन्होंने की और न मैंने ही। उन्हें इसकी कोई जरूरत नहीं थी, और मुझे कुछ याद न था। मैं तो यही कामना करती हूँ कि धर्मको आमरण इसी तरह भूली रह सकूँ। परन्तु अभी अभी उच्छृंखल:

और अनाचारी कहकर आपने जिनका तिरस्कार किया और वन्दनीय कहकर जिन्हें नमस्कार किया, उनमेंसे स्वदेशके सर्वनाशमें किनका दान भारी है, इस प्रश्नका जवाब लोग किसी न किसी दिन अवश्य चाहेंगे।"

सतीशकी देहपर मानो किसीने कसके चाबुक मार दिया। तीव्र वेदनासे वह अकस्मात् उठकर खड़ा हो गया और बोला, "आप जानती हैं उनके नाम? कभी सुने हैं किसीके मुँहसे?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

"तो, पहले जान लीजिए।"

कमलने हँसते हुए कहा, "अच्छा। पर नामका मोह मुझे नहीं है। नाम जाननेको ही मैं जाननेका शेष नहीं मान सकती।"

प्रत्युत्तरमें सतीश अपनी आँखोंसे सिर्फ अवज्ञा और घृणा बरसाता हुआ तेज कदमोंसे बाहर चला गया।

वह गुस्सेमें चला गया है, इसमें कोई सन्देह नहीं रहा। इस अप्रीतिकर घटनाको कुछ हलका करनेके ख्यालसे कुछ देर बाद, हरेन्द्रने हँसनेकी कोशिश करते हुए, कहा, "कमलकी आकृति तो प्राच्यकी है पर प्रकृति बिलकुल प्रतीच्यकी। एक तो दिखाई देती है और दूसरी बिलकुल आँखोंके ओझल रह जाती है। यहीं आदमीको गलतफहमी होती है। इनकी परोसी हुई चीज खाई तो जा सकती है, पर हजम करते वक्त पेटकी बत्तीसों नाड़ियोंमें मानों मरोड़ा उठने लगता है। हमारी किसी भी प्राचीन चीजपर न तो इन्हें विश्वास है और न सहानुभूति। बेकाम कहकर रद्द कर देनेमें इन्हें जैसे कुछ दर्द ही नहीं मालूम होता। लेकिन, इस बातको ये समझ ही नहीं सकतीं कि सूक्ष्म काँटा हाथ आ जानेसे ही सूक्ष्म वजन करना नहीं आ जाता।"

कमलने कहा, "समझ तो सकती हूँ; लेकिन सिर्फ दाम देते वक्त एकके बदले दूसरी चीज नहीं ले सकती। मेरी आपत्ति वहीं है।"

हरेन्द्रने कहा, "मैंने तय कर लिया है कि आश्रम जरूर उठा दूँगा। मुझे सन्देह हो गया है कि उस शिक्षासे लड़के आदमी बनकर देशकी मुक्ति और परम कल्याणको पुनः प्राप्त कर सकेंगे या नहीं। लेकिन समझमें नहीं आता कि दीन-हीन घरोंके जिन लड़कोंको सतीश घर छुड़ाकर ले आया है उनका क्या करूँ? सतीशके हाथ सौंप देना भी मुझसे नहीं हो सकता।"

कमलने कहा, "सौंपनेकी कोई जरूरत नहीं। जरूरत सिर्फ इस बातकी है

कि उनके द्वारा कोई असाधारण या अलौकिक बात करवा डालनेकी ख्वाहिश न रखी जाय। दीन दुःखी घरोंके लड़के सभी देशोंमें हैं: वहाँवाले जैसे उन्हें बड़ा करते हैं वैसे ही आप भी इन्हें आदमी बनानेकी कोशिश करते रहें।"

हरेन्द्रने कहा, "इस विषयमें भी अभी तक मैं निःसंशय नहीं हो सका हूँ कमल। शिक्षक लगाकर मैं उन्हें पढ़ा-लिखा सकता हूँ, पर इसका मुझे भय है कि जिस संयम और त्यागकी शिक्षा उन्हें दी जा रही थी, उससे दूर करके भी उन्हें आदमी बनाया जा सकता है या नहीं।"

कमलने कहा, "हरेन्द्र बाबू, सभी बातोंको जो आप लोग इस तरह एकान्त रूपसे सोचा करते हैं, इसीसे किसी प्रश्नका सीधा उत्तर आप लोगोंको नहीं मिल सकता। आपका खयाल है कि लड़के या तो देवता बनेंगे, या फिर बिलकुल ही उच्छृंखल पशु बन जायँगे। जगतका सहज सरल स्वाभाविक सौन्दर्य आपकी दृष्टिके सामने आता ही नहीं। आप लोग दूसरोंके हाथके मनगढ़न्त अन्यायकी अनुभूतिसे अपने सम्पूर्ण चित्तको शंकासे त्रस्त और मलिन रखा करते हैं। उस दिन मैं आश्रममें जो कुछ देख आई हूँ वह क्या संयम और त्यागकी शिक्षा है? उन लोगोंको ही मिला क्या है? सिर्फ दूसरोंका दिया हुआ दुःखका बोझ ही तो मिला है, अनधिकार मिला है, और मिली है प्रवंचितकी क्षुधा। चीन देशमें लड़कियोंके पाँव जन्मसे छोटे बनाये जाते हैं। मेरे लिए यह सह्य है कि पुरुषवर्ग उन्हें सुन्दर बतावे, पर वहाँकी स्त्रियाँ ही जब अपने उन पंगु और विकृत पैरोंकी सुन्दरतापर खुद मोहित हो जाती हैं, तब फिर सुधारकी कोई आशा शेष नहीं रह जाती। इस समय आप लोग अपने कृतित्वपर खुद ही मुग्ध हो रहे हैं। मैंने उन लोगोंसे पूछा, 'बच्चो, कैसे रहते हो तुम लोग, बताओ?' लड़कोंने एक साथ जवाब दिया, 'बहुत अच्छी तरह।' उन्होंने एक बार भी नहीं सोचा कि 'अच्छी तरह' किसे कहते हैं। सोचने-विचारनेकी शक्ति भी उनकी जाती रही है,—ऐसा जबर्दस्त शासन है उनपर। नीलिमा जीजीने मेरी तरफ देखकर शायद इसका उत्तर चाहा था, पर छाती पीटकर रोनेके सिवा मुझे इस बातका कोई जवाब ही ढूँढ़े न मिला। मन ही मन सोचने लगी, ये ही लोग क्या भविष्यमें देशकी स्वाधीनता अर्जन करेंगे?"

हरेन्द्रने कहा, "लड़कोंकी बात जाने दो, लेकिन राजेन्द्र सतीश वगैरह तो युवक हैं? ये भी तो सर्व-त्यागी हैं?"

कमलने कहा, "राजेन्द्रको आप लोग पहचानते नहीं, लिहाजा उसकी चर्चा छोड़िए। बात असलमें यह है कि वैराग्य यौवनके सरपर ही ज्यादा सवार होता है। वह जहाँ शक्ति बनकर बैठा हुआ है वहाँ विरुद्ध शक्तिके बिना उसे वश कौन करेगा ?"

हरेन्द्रने कहा, "गुस्सा मत होना कमल,—तुम्हारे खूनमें तो वैराग्य है ही नहीं। तुम्हारे पिता यूरोपियन थे, और उन्हींके हाथसे तुम्हारा शिशु-जीवन गढ़ा गया है। मा इस देशकी थीं पर उनका जिक्र न करना ही अच्छा है। देहके रूपके सिवा शायद उनकी तरफसे और कोई चीज तुम्हें नहीं मिली। इसीसे, पश्चिमकी शिक्षासे तुमने भोगको ही जीवनकी सबसे बड़ी चीज समझ लिया है।"

कमलने कहा, "गुस्सा मैं नहीं करती, हरेन्द्र बाबू। पर ऐसी बात आप न कहें। सिर्फ भोगको ही जीवनकी सबसे बड़ी चीज समझकर संसारमें कोई भी जाति बड़ी नहीं हो सकती। मुसलमानोंने जिस दिन ऐसी गलती की, उस दिन उनका त्याग भी गया और भोग भी छूट गया। ऐसी ही गलती यदि पश्चिमवालोंने की तो वे भी मरेंगे। पश्चिम भी तो कोई दुनियासे अलग नहीं है। अगर वे इस विधानकी उपेक्षा करके चलेंगे तो उनके भी जीनेका फिर कोई रास्ता नहीं रह जायगा।"

थोड़ी देर मौन रह कर फिर कहने लगी "लेकिन तब मन ही मन मुसकराकर आप लोग कहेंगे, 'क्यों, कहा था न ! हम तो पहलेसे ही जानते थे कि यह थोड़े ही दिनकी उछल-कूद है इनकी, सो किसी न किसी दिन खतम हो जायगी। लेकिन, इधर देखो, हम लोग शुरूसे आखिर तक वैसे ही टिके हुए है !'" और कहते कहते सुनिर्मल हँसीसे उसका साराका सारा चेहरा विकसित हो उठा।

हरेन्द्र बोला, "ऐसा ही हो, वही दिन आये।"

कमलने कहा, "ऐसी बात नहीं कहना चाहिए हरेन्द्र बाबू। इतनी बड़ी जाति अगर नीचे गिर जाय, तो उसकी धूलसे ही संसारके बहुतसे प्रकाश-स्तम्भ म्लान हो जायेंगे। मनुष्य जातिके लिए वे बहुत ही बुरे दिन साबित होंगे।"

हरेन्द्र उठ खड़ा हुआ। बोला, "उसे अभी देर है, पर अपने बुरे दिनोंका आभास मैं अभीसे ही पा रहा हूँ। बहुतसे प्रकाश स्तम्भ बुझते

दिखाई दे रहे हैं। अपने पितासे तुमने उन्हें बुझानेका ही कौशल सीखा है कमल, जलानेकी विद्या नहीं सीखी। अच्छा, अब चल दिया। अजित बाबूको अभी देर होगी शायद ?"

अजित उठनेके लिए जरा हिला-डुला, पर उठा नहीं।

कमलने कहा, "हरेन्द्र बाबू, प्रकाश-स्तंभका प्रकाश रास्तेपर न पड़कर अगर आँखोंपर पड़े, तो ठोकर खाकर नालीमें गिरना पड़ता है। उस प्रकाशको जो बुझा देता है उसे हितैषी मित्र ही समझिएगा।"

हरेन्द्रने एक गहरी साँस ली, और कहा, "बहुत बार खयाल आता है कि तुम्हारे साथ बुरे क्षणमें परिचय हुआ था। विश्वासका इतना जोर तो मुझमें नहीं है जितना कि तुममें है, फिर भी मैं कह सकता हूँ कि वे विद्या, बुद्धि, ज्ञान और पौरुषकी चाहे जितनी चकाचौंध दिखलावें, भारतके सामने वह कुछ भी नहीं,—सब अकिञ्चित्कर है।"

कमलने कहा, "यह तो ऐसी बात हुई जैसे क्लासमें प्रमोशन न पानेवाले विद्यार्थीका एम० ए० पास करनेवालेको धिक्कार देना। हरेन्द्र बाबू, 'आत्म-सम्मान-ज्ञान' जैसे एक शब्द है, वैसे ही 'बड़ाई करना' भी एक शब्द है।"

हरेन्द्रको क्रोध आ गया, कहने लगा, "शब्द तो बहुत हैं। लेकिन यह भारत ही एक दिन सारे जगतका गुरु था। बहुतोंके पुरखे तो तब शायद पेड़ोंकी डालियोंपर उछला करते थे। और, फिर एक दिन ऐसा आयगा जब भारतवर्ष ही जगतके शिक्षकका आसन ग्रहण करेगा।—करेगा, अवश्य ही करेगा।"

कमलको गुस्सा नहीं आया, वह हँस दी। बोली, "आज तो वे लोग डालियोंपरसे नीचे उतर आये हैं। पर यदि इसी आलोचनाका आनन्द उठाना हो कि कौनसे महा-अतीत कालमें किसके पूर्वपुरुष जगतके गुरु थे और कौनसे महा-भविष्य कालमें उनके वंशधर फिर पैतृक पेशा अख्तियार कर लेंगे, तो अजित बाबूको जाकर पकड़िए। मुझे बहुत काम करना है।"

हरेन्द्रने कहा, "अच्छा, नमस्कार।"

और वह विषण्ण गम्भीर चेहरा लिये घरसे निकल गया।

२६

आठ-दिन बाद कमल आशु बाबूके घर मिलने गई। जिन लोगोंको लेकर यह कहानी है, उनके जीवनमें इधर कई दिनोंमें एक उलट-फेर हो गया है। किन्तु उसे न तो आकस्मिक कहा जा सकता है और न अप्रत्याशित ही। इधर कुछ दिनोंसे जो आकाशमें इधर-उधरसे हवामें उड़ते हुए बादलोंके टुकड़े जमा हो रहे थे, उनके परिणामके सम्बन्धमें विशेष संशय न था,—और हुआ भी वही।

फाटकपर दरबान हाजिर नहीं है। नीचेके बरामदेमें साधारणतः कोई बैठता न था फिर भी, वहाँ कुछ मेजें और कुर्सियाँ पड़ी रहती थीं, दीवारपर बड़े आदमियोंकी कई एक तसवीरें भी थीं,—किन्तु आज वे सब नदारद हैं। सिर्फ छतसे एक काली कलूटी लालटेन लटक रही है। जगह जगह कूड़ा-करकट जमा हो रहा है, उसे साफ करनेकी अब शायद आवश्यकता नहीं रह गई है। न जाने कैसा एक श्रीहीन वातावरण है, जिसे देखकर सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि मकान-मालिक अब यहाँसे पलायन कर रहे हैं।

कमल ऊपर जाकर आशु बाबूकी बैठकमें पहुँची। दिन ढल रहा था। आशु बाबू आराम-कुर्सीपर पैर फैलाये पड़े थे। कमरेमें और कोई न था। परदा हटनेके शब्दसे उन्होंने आँखें खोलीं और वे उठकर बैठ गये। कमलके आनेकी शायद उन्होंने आशा नहीं की थी; इससे कुछ ज्यादा खुश होकर उन्होंने अभ्यर्थना की, बोले, "कमल हो! आओ बेटा, आओ।"

उनके चेहरेकी तरफ देखकर कमलके हृदयमें चोट पहुँची। उसने कहा, "यह क्या! आप तो बूढ़े से दिखाई देने लगे हैं, चाचाजी!"

आशु बाबू हँस दिये, बोले, "बूढ़ा! यह तो भगवानका आशीर्वाद है कमल। भीतर ही भीतर जब कि उमर बढ़ती है तब मनुष्यके लिए इससे बढ़कर दुर्भाग्य और नहीं हो सकता कि बाहरसे बूढ़ा न दिखाई दे। यह अवस्था बचपनमें ही गंजे हो जाने जैसी करुण है।"

"लेकिन तबीयत भी तो अच्छी नहीं दीख रही है?"

"नहीं।"

परन्तु, इसके बाद, फिर उन्होंने आगे प्रश्न करनेका मौका नहीं दिया, बोले, "तुम कैसी हो, सो तो बताओ!"

" अच्छी हूँ । मैं तो कभी बीमार पड़ती नहीं, चाचाजी । "

" सो तो मालूम है । न देह और न मन, तुम्हारे दोनों ही बीमार नहीं होते । कारण इसका यह है कि तुम्हें लोभ नहीं । तुम कुछ भी चाहती नहीं, इसीसे भगवानने तुम्हें दोनों हाथोंसे सब कुछ उँड़ेल कर दे दिया है । "

" मुझे ? क्या देते देखा आपने, बताइए तो ? "

आशु बाबूने कहा, " यह डिप्टी साहबकी अदालत नहीं जो धमकी देकर मामला जीत जाओगी । खैर, कुछ भी हो, पर मैं मानता हूँ कि दुनियाके विचारसे मैंने खुद भी कुछ कम नहीं पाया । यही तो मैं आज सवेरेसे थैली झाड़कर और फर्द मिला मिलाकर देख रहा था । देखा कि शून्यके अंकोंने ही इतने दिनोंसे तहवील फुला रखी थी,—अन्तःसारहीन थैलीके भारी-भरकम आकारने आदमियोंकी आँखोंको महज धोखा ही दिया,—भीतर कोई चीज़ उसमें थी ही नहीं । लोग सिर्फ गलतीसे ही सोचा करते हैं बेटी, कि गणित-शास्त्रके अनुसार शून्योंकी भी कीमत है । मैंने तो देखा कि उनकी कोई भी कीमत नहीं । एकके अंककी दाहनी तरफ वे अगर पंक्तिवार खड़े हो जायँ तो उस एकको ही एक करोड़ बना देते हैं, पर अगर सिर्फ शून्य ही अपनी संख्याके जोरसे चाहें कि करोड़ हो जायँ तो नहीं हो सकते । जहाँ कोई और अंक नहीं, वहाँ तो वे सिर्फ माया ही हैं । मेरा पाना भी ठीक उन शून्योंको पाने जैसा है । "

कमलने बहस नहीं की, वह उनके पास कुरसी खींचकर बैठ गई । आशु बाबूने अपना दाहना हाथ कमलके हाथपर रखते हुए कहा, " बेटी, अबकी बार तो सचमुच ही मेरे जानेकी पारी आ गई, कल-परसों तक चला जाऊँगा। बूढ़ा हो गया,—न जाने अब फिर कब भेंट होगी । पर इतना तुम भरोसा दो कि मुझे कभी भूलोगी नहीं । "

कमलने कहा, " नहीं, भूलूँगी नहीं । और भेंट भी होगी फिर कभी । आपको अपनी थैली सूनी मालूम पड़ रही है, पर मैंने अपनी थैली शून्योंसे नहीं भर रक्खी है चाचाजी, उसमें सचमुचकी चीज है,—माया नहीं । "

आशु बाबूने इस बातका कुछ जवाब नहीं दिया, पर मनमें समझ लिया कि लड़कीने रंचमात्र भी झूठ नहीं कहा ।

कमलने कहा, " मैं घरमें घुसते ही समझ गई कि आप यहाँ हैं जरूर, पर आपका मन यहाँसे विदा हो गया है । इसलिए अब आपको पकड़कर नहीं रखा जा सकता । कहाँ जायँगे ?—कलकत्ते ? "

आशु बाबू धीरेसे सिर हिलाते हुए बोले, "नहीं, वहाँ नहीं। अबकी बार जरा दूर जानेकी सोची है। पुराने मित्रोंको वचन दिया था कि अगर जिन्दा रहा तो फिर एक बार मिल जाऊँगा। यहाँ तुम्हें तो कोई काम नहीं कमल, चलोगी बिटिया, मेरे साथ विलायत? अगर वहाँसे मैं न लौट सका, तो तुम्हारे मुँहसे कोई खबर तो सुन ही लेगा।"

इस अनुद्दिष्ट सर्वनामका उद्दिष्ट कौन है, सो कमलको समझनेमें देर न लगी; परन्तु इस अस्पष्टताको सुस्पष्ट कर दुख देना भी उसने अनावश्यक समझा।

आशु बाबू कहने लगे, "डरकी कोई बात नहीं बेटी, इस बूढ़ेकी तुम्हें सेवा न करनी होगी। इस अकर्मण्य देहकी कीमत ही क्या है?—इसे ढोते रहनेके लिए मैं अपने ऊपर किसीका ऋण नहीं बढाना चाहता। पर कौन जानता था कमल, कि इस मांस-पिण्डको लेकर भी प्रश्न जटिल हो सकता है? ऐसा लगता है कि मारे लज्जाके जमीनमें गड़ा जा रहा हूँ। इस दुनियामें इतनी बड़ी आश्चर्यकी बात भी होती है, सो भला कब कौन सोच सका है, बताओ?"

कमल सन्देहसे चौंक पड़ी, बोली, "नीलिमा जीजीको नहीं देख रही हूँ चाचाजी, वे कहाँ हैं?"

आशु बाबूने कहा, "शायद अपने कमरेमें होगी,—कल सवेरेसे ही नहीं दिखाई दे रही है। सुना है कि हरेन्द्र आकर उसे अपने घर ले जायगा।"

"अपने आश्रममें?"

"आश्रम अब नहीं रहा। सतीश चला गया है, कुछ लड़कोंको भी अपने साथ ले गया है। सिर्फ चार पाँच लड़कोंको हरेन्द्रने नहीं जाने दिया है, वे यहीं हैं। उनके मा-बाप, नाते-रिश्तेदार कोई भी नहीं हैं, वह चाहता है कि उन्हें वह अपने आइडियाके अनुसार नवीन ढंगसे तैयार करे। तुमने सुना नहीं शायद?—सुनतीं भी किससे?"

जरा ठहरकर फिर कहने लगे, "परसों शामको लोगोंके चले जानेपर अधूरी चिट्ठी पूरी करके नीलिमाको सुनाने लगा। कई दिनोंसे वह बराबर कुछ अन्य-मनस्क-सी रहती थी, इधर उसे देख भी कम पाता था। चिट्ठी थी कलकत्तेके अपने कर्मचारीके नाम, मेरे विलायत जानेका सारा आयोजन जल्दी पूरा करनेके लिए। एक नये वसीयतनामेका मसविदा भी भेजा था,—शायद यही मेरा आखिरी वसीयतनामा है,—अटर्नीको दिखाकर पक्का करके दस्तखतके लिए वापस भेजनेको लिखा था। और भी बहुत-सी आज्ञाएँ थीं। नीलिमा

कुछ सी रही थी। उसकी तरफसे भला बुरा कुछ भी उत्तर न पाकर मैं मुँह उठाकर उसकी तरफ देखने लगा तो देखा, उसके हाथका सिलाईका कपड़ा जमीनपर पड़ा है, सिर चौकीके एक किनारे लुढ़क गया है, आँखें मिची हैं और चेहरा बिलकुल सफेद फक है। मेरी कुछ समझहीमें न आया कि अचानक क्या हो गया, झटपट उठकर जमीनपर लिटाया, गिलासमें पानी था उससे मुँह और आँखोंपर छींटे मारे। पंखा था नहीं, सो अखबार उठाकर उससे हवा करने लगा,—नौकरको पुकारना चाहा, पर मुँहसे आवाज ही न निकली। शायद दो तीन मिनट ही यह अवस्था रही, ज्यादा नहीं, इसके बाद उसने आँखें खोलीं और झिझकके साथ उठकर बैठ गई। एक बार सारा शरीर काँप उठा और फिर वह औंधी होकर मेरी गोदमें मुँह छिपाकर जोरसे रोने लगी। ऐसी रोई कि कुछ पूछो मत। मालूम हुआ जैसे उसकी छाती ही फट जायगी। बहुत देर बाद मैंने उसे उठाकर बिठाया,—कितने दिनोंकी कितनी ही बातें और कितनी ही घटनाएँ याद आ गईं,—फिर मुझे समझनेमें कुछ भी बाकी न रह गया।"

कमल चुपचाप उनके मुँहकी तरफ देखती रही।

आशु बाबूने क्षण-भर अपनेको सम्हालनेमें लगाया और फिर कहा, "मैं समझता हूँ, इस तरह दो तीन मिनट बीते होंगे। मेरे यह सोचनेके पहले ही कि ऐसी हालतमें मुझे क्या कहना चाहिए, वह तीरकी तरह उठ खड़ी हुई,—मेरी ओर एक बार देखा तक नहीं,—और कमरेसे बाहर निकल गई। न तो उसने कोई बात कही और न मैं ही कुछ बोल सका। उसके बाद फिर मुलाकात नहीं हुई।"

कमलने कहा, "यह क्या आप पहले समझ नहीं पाये थे?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं। कभी स्वप्नमें भी न सोचा था। और कोई होता तो सन्देह करता कि यह महज छल है, स्वार्थ है। पर उसके विषयमें ऐसी बात सोचना भी अपराध है।—यह स्त्रियोंका मन कितनी आश्चर्यजनक चीज है! इससे बढ़कर संसारमें और क्या आश्चर्यकी बात होगी कि यह रोगातुर शरीर, ऐसा अक्षम और अवसन्न मन, जीवनकी यह संध्या वेला जिसमें जीवनकी कानी-कौड़ी भी कीमत नहीं,—इसपर भी किसी सुन्दरी युवतीका मन आकृष्ट हो! फिर भी, यह सच है, जरा भी झूठ नहीं।"

इतना कहकर वह सदाचारी प्रौढ़ आदमी क्षोभ, वेदना और निष्कपट लज्जासे

एक साँस लेकर चुप हो रहा। आशु बाबू कुछ देर इसी तरह रहकर फिर कहने लगे, "मगर मैं यह निश्चित जानता हूँ कि यह बुद्धिमती नारी मुझसे कुछ भी प्रत्याशा नहीं करती। वह सिर्फ चाहती है मेरी सेवा करना, और वह भी इसलिए कि सेवाके अभावमें मेरे जीवनके बाकी दिन कहीं दुःखमें न बीतें। केवल दया और अकृत्रिम करुणा, बस।"

कमलको चुप देख वे कहने लगे, "बेलाने विवाह-विच्छेदका जब मामला चलाया था तब मैंने उसमें अपनी सम्मति दी थी। बातोंमें ही बातोंमें उस दिन जब प्रसंग उठ पड़ा, तो नीलिमा बहुत नाराज हुई और उसके बादसे तो बेला उसके लिए असह्य हो गई। अपने पतिको इस तरह सर्वसाधारणके सामने लज्जित और बेइज्जत करनेकी प्रतिहिंसाको नीलिमा हृदयसे पसन्द न कर सकी। उसने कहा कि 'पतिको त्याग देना कोई बड़ी बात नहीं, उसे फिरसे पानेकी साधना ही स्त्रीके लिए परम सार्थकता है। अपमानका बदला लेनेमें ही स्त्रीकी वास्तविक मर्यादा नष्ट होती है, अन्यथा, वह तो कसौटी है जिसपर जाँचकर प्रेमकी कीमत आँकी जाती है। और फिर यह कैसा आत्म-सम्मानका भाव कि जिसे असम्मानके साथ अलग कर दिया, उसीसे अपने खाने-रहनेका खर्च हाथ पसारकर लिया जाय? क्या गलेमें फाँसी डालनेके लिए रस्सी भी नहीं जुटी?' सुनकर मैंने सोचा था कि नीलिमाकी यह बात बेजा है,—ज्यादती है। पर आज सोचता हूँ कि प्रेम क्या नहीं कर सकता? रूप, यौवन, सम्मान, सम्पदा,—यह सब कुछ नहीं बेटी, क्षमा ही उसकी वास्तविक आत्मा है। जहाँ क्षमा नहीं, वहाँ प्रेम सिर्फ विडम्बना है,—वहींपर रूप-यौवनका विचार-वितर्क उठता है और वहींपर आता है आत्म-सम्मान ज्ञानका टग् ऑफ्-वार।"

कमल उनके मुँहकी तरफ देखती हुई चुप हो रही।

आशु बाबू कहने लगे, "कमल, तुम ही उसकी आदर्श हो,—पर, चाँदकी चाँदनी मानो सूर्य-किरणोंसे भी बढ़ गई है। तुमसे जो कुछ उसने पाया है, अपने हृदयके रसमें भिगोकर स्निग्ध माधुर्यके साथ उसने उसे न जाने कितनी तरफ बखेर दिया है। मैंने इन दो दिनोंमें दो सौ वर्षकी चिन्ता की है, कमल। स्त्रीका प्रेम मैंने पाया था, उसका स्वाद मैं पहचानता हूँ, स्वरूप जानता हूँ; परन्तु इस नवीन तत्त्वने, कि नारीके प्रेमका वह सिर्फ एक ही पहलू था, सहसा आज मुझे आच्छन्न कर दिया है। इसमें न जाने कितनी

बाधा है, न जाने कितनी व्यथा है, अपनेको विसर्जन करनेकी न जाने कितनी बिनजानी तैयारियाँ हैं। यद्यपि मैं उसे हाथ पसारकर ले नहीं सका, पर क्या कहके उसे नमस्कार करूँ सो भी मेरी समझमें नहीं आ रहा है कमल।"

कमल समझ गई कि पत्नी-प्रेमकी सुदीर्घ छायाने इतने दिन जिन दिशाओंमें अँधेरा कर रखा था, आज वे ही दिशाएँ धीरे धीरे उज्ज्वल होती जा रही हैं।

आशु बाबूने कहा, "ठीक है; मणिको मैंने क्षमा कर दिया है। बापके अभिमानको मैं अब उसके आगे लाल आँखें न करने दूँगा। मैं जानता हूँ कि वह दुःख पायेगी, जगत्का विधिबद्ध शासन उसे छुटकारा नहीं देगा। अनुमति तो नहीं दे सकूँगा, पर जाते समय यह आशीर्वाद छोड़ जाऊँगा कि दुःखमेंसे वह फिर अपनेको किसी दिन खोज कर पा ले। उसकी भूल-भ्रान्ति और प्रेम,—भगवान् उन लोगोंका सुविचार करें।" कहते कहते उनका गला भारी हो आया।

इसी तरह नीरवतामें बहुत क्षण कट गये। उनके मोटे हाथपर कमल धीरे धीरे हाथ फेर रही थी, बहुत देर बाद उसने मृदु कण्ठसे कहा, "चाचाजी, नीलिमा जीजीके विषयमें आपने क्या निर्णय किया?"

आशु बाबू अकस्मात् सीधे होकर बैठ गये,—जैसे किसीने उन्हे ठेलकर उठा दिया हो, "देखो बेटी, तुम्हें मैं पहले भी नहीं समझा सका हूँ और अब भी न समझा सकूँगा और शायद अब सामर्थ्य भी नहीं है। पर, ऐसा संशय मेरे मनमें कभी नहीं आया कि एकनिष्ठ प्रेमका आदर्श मनुष्यका सच्चा आदर्श नहीं। नीलिमाके प्रेमपर मैं सन्देह नहीं करता; पर जैसे वह सत्य है वैसे ही उसे अस्वीकार करना भी मेरे लिए वैसा ही सत्य है। किसी तरह भी मैं इसे निष्फल आत्म-वंचना नहीं कह सकता। तर्कसे इसका मेल नहीं खायेगा, पर यह सच है कि इसी निष्फलतामेंसे होकर मनुष्य आगे बढ़ेगा। मैं नहीं जानता कि कहाँ जायगा, पर जायगा जरूर। यद्यपि वह मेरी कल्पनासे अतीत है, पर मैं यह निश्चयसे जानता हूँ कि इतनी बड़ी व्यथाका प्रतिफल मनुष्य किसी न किसी दिन पायेगा अवश्य। नहीं तो संसार असत्य, सृष्टि असत्य हो जायगी।"

वे कहने लगे, "इसी नीलिमाको ही ले लो, किसी भी आदमीके लिए जो नारी अमूल्य सम्पदा हो सकती है,—उसके लिए कहीं भी खड़े होनेकी

जगह नहीं। उसकी व्यर्थता मेरे बाकी दिनोंको शूलकी तरह चुभती रहेगी। इसीसे सोचता हूँ, अगर वह और किसीसे प्रेम करती। यह उसकी कैसी भूल है!"

कमलने कहा, "भूल सुधारके दिन तो अभी उसके खतम नहीं हो गये चाचाजी!"

"कैसे? तुम समझती हो, अब क्या वह फिर किसीसे प्रेम कर सकती है?"

"कमसे कम, असम्भव तो नहीं है। इसे भी क्या आपने कभी सम्भव समझा था कि आपके अपने जीवनमें कभी ऐसी घटना हो सकती है?"

"लेकिन नीलिमा? उसके जैसी स्त्री?"

कमलने कहा, "सो नहीं जानती। पर उसके लिए क्या आप यही प्रार्थना करेंगे कि जिसे उसने पाया नहीं, और पा सकती नहीं, उसीकी यादमें सारा जीवन व्यर्थ निराशामें काट दे?"

आशु बाबूके चेहरेकी दीप्ति बहुत कुछ मलिन हो गई। बोले, "नहीं, ऐसी प्रार्थना नहीं करूँगा।" फिर क्षण-भर चुप रहकर कहने लगे, "मगर मेरी बात भी तुम नहीं समझोगी, कमल। मैं जो कर सकता हूँ, वह तुम नहीं कर सकतीं। सत्यका मूलगत संस्कार तुम्हारे और मेरे जीवनका एक नहीं है,—बिलकुल भिन्न है। इस जीवनको ही जिन लोगोंने मानव-आत्माकी चरम प्राप्ति समझा है, उनके लिए प्रतीक्षा करना मुश्किल है, वे तो आनन्द-भोगकी अन्तिम बूँद तक इसी जीवनमें पी लेना चाहेंगे; परन्तु हम जन्मान्तर मानते हैं, प्रतीक्षा करनेका समय हमारे लिए अनन्त है,—उसमें औंधे लेटकर पीनेकी जरूरत नहीं पड़ती।"

कमलने शान्त कण्ठसे कहा, "यह बात मैं आपकी मानती हूँ चाचाजी। लेकिन, सिर्फ इसी कारण तो आपके संस्कारको युक्तिके रूपमें स्वीकार नहीं किया जा सकता; और आकाश-कुसुमकी आशासे विधाताके दरवाजेपर हाथ पसारे जन्मान्तर-काल तक प्रतीक्षा करने लायक धैर्य भी मुझमें नहीं है। जिस जीवनको सबके बीच सहज-बुद्धिसे पाया है, वही मेरे लिए सत्य है, वही महान् है। फूल-फल और शोभा-सम्पदासे मेरा यह जीवन भर उठे, परलोकके विशाल लाभकी आशासे इस जीवनकी मैं उपेक्षा, अवज्ञा और अपमान न करूँ,—इतना ही मैं ठीक समझती हूँ। चाचाजी, इसी तरह आप लोग आनन्दसे और सौभाग्यसे स्वेच्छापूर्वक वंचित रहा करते हैं। आप लोग

इहलोकको तुच्छ समझते हैं, इसीसे इहलोकने भी आप लोगोंको सारे जगतके सामने तुच्छ बना रखा है। नीलिमा जीजीसे भेंट होगी या नहीं, सो नहीं मालूम, अगर होगी तो मैं उनसे यही बात कह जाऊँगी।"

कमल उठकर खड़ी हो गई। आशु बाबूने सहसा जोरसे उसका हाथ पकड़ लिया, बोले, "जा रही हो बेटी! पर यह सोचते ही कि 'तुम जा रही हो' मेरी छातीके भीतर हाहाकार-सा मच जाता है।"

कमल बैठ गई, बोली, "पर आपको तो मैं किसी भी तरफसे तसल्ली दे नहीं पाती चाचाजी, देह और मनसे जब कि आप अत्यन्त अस्वस्थ हैं; और सान्त्वना देना ही जब कि सबसे जरूरी वस्तु है, तब मैं सब तरफसे मानो आपको चोट ही पहुँचाया करती हूँ। फिर भी, यह सच है कि मैं आपको किसीसे भी कम प्यार नहीं करती चाचाजी।"

आशु बाबूने इसे मन ही मन स्वीकार करते हुए कहा, "इसके सिवा नीलिमा,—यह भी क्या साधारण आश्चर्य है! पर जानती हो इसका कारण क्या है कमल?"

कमलने मुसकराते हुए कहा, "शायद आपके अन्दर दलदल नहीं है,—इसीसे। दलदल अपने शरीरका भी बोझ नहीं ढो सकता,—पाँवोंके नीचेसे अपनेको हटाकर अपने आपको डुबा देता है। लेकिन ठोस मिट्टी लोहे और पत्थरका भी बोझ झेल लेती है,—इमारत उसीपर बनाई जा सकती है। नीलिमा जीजीको सब स्त्रियाँ नहीं समझ सकतीं; हाँ जिनके अपनेको लेकर खेल खेलनेके दिन बीत चुके हैं और सिरका बोझ उतार कर जो सहज निःश्वास लेती हुई जीना चाहती हैं, वे उन्हें समझ सकेंगी।"

"हाँ।" कहकर आशु बाबूने एक गहरी साँस ली, और कहा, "और शिवनाथ?"

कमलने कहा, "जिस दिनसे मैंने उन्हें सचमुच समझा है, उस दिनसे क्षोभ और अभिमान मेरे मनसे बिलकुल धुल पुँछ गया है,—ज्वाला बुझ गई है। शिवनाथ गुणी आदमी हैं, कलाकार हैं,—कवि हैं। चिरस्थायी प्रेम कलाकारोंके मार्गका विघ्न है, उनकी सृष्टिके लिए अन्तराय है, उनके स्वभावका परम विरोधी है। यही बात उस दिन ताजके सामने खड़ी होकर मैं कहना चाहती थी। स्त्रियाँ तो एक उपलक्ष-मात्र हैं,—नहीं तो, असलमें वे प्रेम करते हैं सिर्फ अपने आपसे। अपने मनको दो भागोंमें विभक्त करके

उनकी दो दिनकी लीला चलती है,—उसके बाद वह खतम हो जाती है। इसीलिए उनके गलेका स्वर ऐसा विचित्र होकर बजता है,—अन्यथा वह बजता नहीं, सूखकर जम जाता। मैं तो समझती हूँ, शिवनाथने उसे नहीं ठगा, मनोरमाने अपने आप ही भूल की है। सूर्यास्तके समय बादलोंपर जो रंग खिलने लगता है चाचाजी, वह न तो स्थायी होता है और न उसका वह स्वाभाविक रंग ही है। लेकिन फिर भी उसे झूठ कौन कह सकता है?"

आशु बाबूने कहा, "सो मालूम है; पर केवल रंगसे ही तो आदमीके दिन नहीं कटते बेटी, और न उपमासे उसकी व्यथा ही मिटती है। बताओ बेटी, इसका क्या उपाय है?"

कमलका चेहरा क्लान्तिसे मलिन हो गया, उसने कहा, "इसीसे घूम फिरकर एक ही प्रश्न बार बार सामने आ जाया करता है चाचाजी, वह जैसे शेष ही नहीं होता। बल्कि यही ठीक है कि जाते समय आप अपना यही आशीर्वाद छोड़ जायँ कि मणि दुःखके दिनोंमें अपने आपको ढूँढ निकाले, जो झड़नेवाला है उसके झड़ जानेके बाद वह विना किसी संशयके अपनेको पहचान सके। और, आपसे भी मैं कहूँगी कि संसारमें होनेवाली अनेक घटनाओंमेंसे विवाह भी एक घटना है, उससे ज्यादा कुछ नहीं। उसीको जिस दिनसे नारीका सर्वस्व मान लिया गया है उसी दिनसे स्त्रियोंके जीवनकी सबसे बड़ी ट्रैजिडी शुरू हो गई है। विदेश जानेके पहले अपने मनकी असत्यकी जंजीरसे अपनी लड़कीको मुक्त कर जाइए, चाचाजी, यही आपसे मेरी अन्तिम प्रार्थना है।"

सहसा दरवाजेके पास किसीके पैरोंकी आहट सुनकर दोनों उधर देखने लगे। हरेन्द्रने भीतर आकर कहा, "भाभीजीको मैं लिवाने आया हूँ, आशु बाबू, वे भी तैयार हैं,—तांगा लानेके लिए आदमी भेज दिया है।"

आशु बाबूका चेहरा फक पड़ गया, बोले, "अभी? लेकिन दिन तो अब नहीं रहा?"

हरेन्द्रने कहा, "दस-बीस कोस दूर नहीं है, पाँचेक मिनटमें पहुँच जायँगी।" उसका चेहरा जैसा गम्भीर था बातें भी उसकी वैसी ही नीरस थीं।

आशु बाबूने आहिस्तेसे कहा, "सो तो ठीक है। पर शामका वक्त है—आज जाये बगैर नहीं चलेगा?"

हरेन्द्रने जेबमेंसे कागजका एक टुकड़ा निकालकर आगे बढ़ाते हुए कहा, "आप ही विचार कीजिए।"

उसमें लिखा था, "लालाजी, यहाँसे मुझे ले जानेका उपाय अगर तुम न कर सको, तो मुझे खबर दे देना। पर कल मत कहना कि मुझसे कहा क्यों नहीं?—नीलिमा।"

आशु बाबू सन्न रह गये।

हरेन्द्रने कहा, "निकट-आत्मीयके रूपमें तो मैं दावा नहीं कर सकता, पर उन्हें तो आप जानते हैं, उनकी इस चिट्ठीके पानेके बाद देर करनेकी भी हिम्मत नहीं पड़ती।"

"तुम्हारे ही घरपर तो रहेंगी?"

"हाँ, कमसे कम उससे अच्छी व्यवस्था जब तक न हो सके तब तक। सोचा कि इस घरमें उनके इतने दिन बीत गये तो उस घरमें भी कुछ अनुचित न होगा।"

आशु बाबू चुप रहे। इतना भी न कहा कि यह सुबुद्धि अब तक कहाँ रही?

इतनेमें बेहरा आया और बोला, "मेमसाहबका सामान लेने मजिस्ट्रेट साहबके यहाँसे आदमी आया है।"

आशु बाबूने कहा, "उनका जो कुछ सामान है सब बता दो।"

कमलकी आँखोंसे आँखें मिलते ही उन्होंने कहा, "कल सवेरे बेला यहाँसे चली गई है। मजिस्ट्रेटकी स्त्री उनकी सहेली है।—तुम्हें एक सुसंवाद देना तो भूल ही गया कमल,—बेलाके पति आये हैं उसे लेनेके लिए,—मालूम होता है शायद आपसमें उनका 'रिकन्सीलिएशन' (=तसफिया) हो गया है।"

कमलने जरा भी आश्चर्य प्रकट न करते हुए कहा, "लेकिन यहाँ क्यों न आये?"

आशु बाबूने कहा, "शायद आत्म-गौरवपर आँच आती। जब विवाह-बन्धन तोड़नेका मामला चला था तब बेलाके पिताकी चिट्ठीके उत्तरमें मैंने अपनी तरफसे सम्मति दी थी। उसके पति शायद इस बातको क्षमा न कर सके होंगे।"

"आपने सम्मति दी थी?"

आशु बाबूने कहा, "इसमें आश्चर्यकी बात क्या है कमल? जो पति चरित्र-दोषका अपराधी है उसे त्यागनेमें मैं अन्याय नहीं देखता। मैं नहीं मान सकता कि यह अधिकार सिर्फ पतिको ही है; स्त्रीको नहीं।"

कमल चुप हो रही। उसे फिर एक बार स्मरण हो आया कि इस आदमीकी विचार-धारामें किसी तरहका कपट नहीं,—मन और वचन एक ही स्वरमें बँधे हुए हैं।

नीलिमा दरवाजेके पाससे नमस्कार करके चली गई। न तो भीतर आई, और न उसने किसीकी तरफ आँख उठाकर देखा ही।

बहुत देर तक कमल उसी तरह आशु बाबूके हाथपर हाथ फेरती रही, कुछ बोली-चाली नहीं। अन्तमें, जानेके पहले, उसने धीरेसे कहा, "एक जदूके सिवा इस घरमें पुराना और कोई नहीं रह गया।"

"जदू?"

"हाँ, आपका पुराना नौकर।"

"पर वह तो यहाँ है नहीं, बिटिया। उसका लड़का बीमार है, सो चार-पाँच दिन हुए छुट्टी लेकर देश गया है।"

फिर बहुत देर तक कोई बातचीत नहीं हुई। आशु बाबू अकस्मात् पूछ बैठे, "अच्छा, वह राजेन्द्र लड़का कहाँ है, कुछ मालूम है तुम्हें, कमल?"

"नहीं, चाचाजी।"

जानेके पहले उसे एक बार देखनेकी इच्छा हो रही है। तुम दोनों मानो बहन-भाई हो, एक ही पेड़के दो फूलसे लगते हो।" इतना कहकर वे चुप होना चाहते थे कि सहसा एक बात याद आ गई, बोले "तुम लोगोंका दारिद्र्य ऐसा लगता है जैसे महादेवका दारिद्र्य। तुम्हारे धन-ऐश्वर्य काफी है, पर अन्यमनस्क से होकर जैसे उसे कहीं भूल आये हो। ऐसी उदासीनता कि उसे ढूँढनेकी भी कोई गर्ज नहीं।"

कमलने हँसते हुए कहा, "ऐसा क्यों कहते हैं चाचाजी? राजेन्द्रकी बात मैं नहीं जानती, पर मैं तो पैसे-पैसेके लिए दिन-रात मेहनत किया करती हूँ।"

आशु बाबूने कहा, "सो मैंने सुना है। यही तो बैठा सोचा करता हूँ।"

* * * *

उस दिन कमलको घर लौटनेमें काफी देर हो गई। आते समय आशु बाबूने कहा, "डरनेकी कोई बात नहीं बेटी, जो आजतक कभी मुझे छोड़कर नहीं रही, आज भी वह मुझे छोड़कर न जायगी। निरुपायका उपाय वही

करेगी।" कहते हुए उन्होंने हाथ उठाकर सामनेकी दीवारपर टँगी हुई अपनी स्वर्गीया धर्मपत्नीकी तसवीर दिखा दी और चुप हो रहे।

* * * *

कमलने घर पहुँचकर देखा कि ऊपर जानेका रास्ता ही बन्द है, बक्सोंका ढेर सीढ़ीके सामने अड़ा पड़ा है। एकाएक उसकी छातीके भीतर छौंक-सा लग गया। किसी तरह रास्ता निकालकर वह ऊपर पहुँची। रसोईघरमें शोर-गुल सुनकर उसने झाँककर देखा कि अजितने नौकरानीकी मददसे 'स्टोव' जलाकर चायके लिए पानी चढ़ा दिया है, और चाय-चीनी आदिकी तलाशमें घर-भरकी तमाम चीजें उथल पुथल कर डाली हैं।

"यह क्या कर रक्खा है?"

अजित चौंककर कमलकी ओर देखने लगा, बोला, "चाय-चीनी वगैरह क्या तुम लोहेकी तिजोरीमें बन्द रक्खा करती हो? पानी कबसे खौलकर मिट्टी हुआ जा रहा है।"

"लेकिन मेरे घरकी चीज आपको मिलेगी कैसे, सो तो बताइए? चलिए, इधर आइए, मैं तैयार किये देती हूँ।"

अजित हटकर अलग खड़ा हो गया।

कमलने कहा, "पर आज बात क्या है? बक्स-ट्रंक, गठरी-पोटली,—यह सब किसका सामान है?"

"मेरा। हरेन्द्र बाबूने नोटिस दे दिया है।"

"नोटिस दिया है तो वहाँसे चले जानेका दिया होगा। पर यहाँ आनेकी बुद्धि किसने दी?"

"वह मेरी अपनी है। इतने दिनोंसे पराई बुद्धिपर ही चलता आ रहा हूँ,—अब मैंने अपनी बुद्धि ढूँढ़ निकाली है।"

कमलने कहा, "अच्छा किया है। पर चीज-वस्त क्या सब नीचे ही पड़ी रहेगी? कोई चुरा नहीं ले जायगा वहाँसे?"

सुनते ही अजित चंचल हो उठा, बोला, "चुरा तो नहीं ले गया कोई कुछ? एक चमड़ेके सूट-केसमें बहुतसे रुपये रक्खे हैं।"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "बहुत अच्छा किया है! एक खास जातिके आदमी होते हैं जो अस्सी वर्षकी उमर तक भी बालिग नहीं हुआ करते; उनके सरपर एक न एक अभिभावक होना ही चाहिए। पर इसकी व्यवस्था

भगवान् स्वयं कृपा करके कर देते हैं। चाय रहने दीजिए, चलिए, नीचे चलिए पहले;—किसी तरह पकड़-थामकर सामान ऊपर लानेकी कोशिश की जाय।"

२७

मकानवाला अभी अभी पूरे महीनेका किराया लेकर गया है। इधर उधर बिखरे हुए सामानके बीच, विशृंखल कमरेके एक किनारे, कन्वासकी आराम-कुरसीपर अजित आँखें मींचे पड़ा है। मुँह सूखा हुआ है, देखते ही पता चल जाता है कि उसके चिन्ताग्रस्त मनमें सुखका लेश भी नहीं है। कमल सिलसिलेवार बँधी सँची चीजोंको फर्दसे मिलाकर एक कागजपर लिख रही है। स्थान छोड़नेका समय सन्निकट है, इस कारण उसके काममें किसी तरहकी चञ्चलता नहीं आई है।—ऐसा लगता है मानो यह उसका रोज़-मर्राका काम हो। सिर्फ नीरवता कुछ अधिक है।

इतनेमें हरेन्द्रके यहाँसे शामके भोजनका निमंत्रण आया। किसी आदमीके मारफत नहीं,—डाकसे। अजितने चिट्ठी खोलके पढ़ी। आशु बाबूकी विदाके उपलक्षमें यह आयोजन है। बहुतसे परिचित लोगोंको आमंत्रित किया गया है। नीचेके एक कोनेमे छोटे हुरूफ़में लिखा है, 'कमल, जरूर आना बहन।—नीलिमा'।

अजितने उसे दिखाते हुए पूछा, "जाओगी क्या?"

"जाऊँगी क्यों नहीं। मेरी कदर इतनी थोड़े ही बढ गई है कि निमंत्रण जैसी चीजकी उपेक्षा कर सकूँ। मगर तुम?"

अजितने दुविधाके स्वरमें कहा, "यही सोच रहा हूँ। आज तबीयत कुछ—"

"तो जरूरत नहीं जानेकी।"

अजितकी निगाह अब तक चिट्ठीपर ही थी। नहीं तो वह कमलके ओठों-पर आई हुई कौतुकपूर्ण मुसकराहट जरूर देख लेता।

चाहे जैसे भी हो, बंगाली-समाजमें यह खबर सबको लग गई है कि ये दोनों आगरा छोड़कर कहीं जा रहे हैं। पर इस विषयमें कि किस तरह और कहाँ, लोगोंका कुतूहल अभी तक सुनिश्चित मीमांसापर नहीं पहुँचा है। असमयके बादलोंकी तरह वह अन्दाज और अनुमानकी हवामें ही उड़ उड़ कर भटक रहा है और मजा यह कि जानना कोई कठिन बात नहीं थी,—

कमलसे पूछनेसे ही मालूम हो सकता था कि फिलहाल उनका गन्तव्य स्थान अमृतसर है।—पर पूछनेका किसीको साहस न हुआ।

अजितके पिता गुरु गोविन्दसिंहके परम भक्त थे। इसीसे सिखोंके महातीर्थ अमृतसरमें उन्होंने खालसा-कालेजके पास खुले मैदानमें एक बंगला बनवाया था। समय और सुविधानुसार वे वहाँ जाकर रहा करते थे। उनकी मृत्युके बाद बंगला किरायेपर उठा दिया गया था; पर अब वह खाली है। दोनों वहीं जाकर कुछ दिन रहेंगे। असबाब सब लॉरीमें जायगा, और शेष-रात्रिमें पौ फटते फटते ये दोनों मोटरसे रवाना होंगे उसी प्रथम दिनकी स्मृतिमें,—यही कमलकी अभिलाषा है।

अजितने कहा, "हरेन्द्रके यहाँ क्या तुम अकेली ही जाओगी?"

"जाऊँगी नहीं? आश्रमका दरवाजा तो तुम्हारे लिए हमेशा ही खुला रहेगा, जब चाहो तब भेंट कर आ सकते हो। पर मेरे लिए तो उसके खुलनेकी आगे कोई आशा नहीं,—अंतिम बार जाकर मिल आऊँ,—क्यों, क्या कहते हो?"

अजित चुप रहा। उसे स्पष्ट ही दिखाई देने लगा कि वहाँ तरह तरहके छलसे तथा व्यक्त और अव्यक्त इशारोंसे तीखे और कडुए वाक्य-बाण आज सिर्फ उसीको लक्ष्य करके छूटेंगे और उन आक्रमणोंके सामने इस अकेली रमणीको छोड़ देना कितनी बड़ी कायरता है! पर उसमें साथ देनेकी भी हिम्मत नहीं थी और मना करना भी उतना ही कठिन था।

नई मोटर खरीदी गई है; शाम होनेके कुछ देर बाद शोफर कमलको लेकर चला गया।

हरेन्द्रके घर, दूसरी मंजिलपर लम्बा हॉल था उसीमें, नया कीमती कार्पेट बिछाकर अतिथियोंके लिए इन्तजाम किया गया है। बहुत-सी बत्तियाँ जल रही हैं, कोलाहल भी कम नहीं हो रहा है। बीचमें आशु बाबू हैं, और उन्हें घेरे हुए कुछ सज्जन बैठे हैं। बेला आई है और उनके साथ एक और महिला,—मॅजिस्ट्रेटकी स्त्री मालिनी भी आई हैं। एक सज्जन इधरकी ओर पीठ किये हुए उनसे बातें कर रहे हैं। नीलिमा नहीं है, शायद अन्यत्र कहीं काममें फँसी हुई होगी।

हरेन्द्र भीतर पहुँचा और पहुँचते ही उसने देखा कि दरवाजेके पास कमल खड़ी है। आश्चर्यके साथ उसने मीठे स्वरमें उसका स्वागत किया, "ओ हो, कमल आ गई! कब आई? अजित कहाँ है?"

सबकी दृष्टि एकाग्र होकर उसी तरफ मुड़ गई। कमलने देखा कि जो व्यक्ति महिलाओंके साथ बातचीत कर रहा था वह और कोई नहीं, स्वयं अक्षय है। कुछ दुबला हो गया है। इन्फ्लुएञ्जासे तो बच गया, पर बंगालके मलेरियासे न बच सका। अच्छा ही हुआ जो वह लौट आया, नहीं तो अन्तिम बार उससे भेंट न हो पाती, मनमें पछतावा रह जाता।

कमलने कहा, "अजित बाबू नहीं आये,—तबीयत जरा ठीक नहीं है। मैं तो बहुत देरकी आ गई हूँ।"

"बहुत देरकी ! कहाँ थीं ?"

"नीचे। लड़कोंकी कोठरियाँ घूम घूमकर देख रही थी। देख रही थी कि धर्मको तो धोखा दिया है, साथ ही कर्मको भी धोखा दिया या नहीं।" कहकर वह हँसती हुई कमरेके भीतर जाकर बैठ गई।

मानो वह वर्षा ऋतुकी वन्य-लता हो जो दूसरोंकी आवश्यकताके लिए नहीं, बल्कि अपनी ही आवश्यकताके लिए आत्मरक्षाका सम्पूर्ण सचय लेकर मिट्टी फोड़कर ऊपर सिर उठाती आ रही है। पारिपार्श्विक विरोधका उसे न तो जरा डर है, और न चिन्ता है,—काँटोंका घिराव बनाकर उसकी रक्षाकी कोशिश ही मानो ज्यादती है। आखिर वह ऐसी क्या थी !—परन्तु फिर भी जब भीतर जाकर बैठी तब ऐसा मालूम हुआ जैसे रूप, रस और गौरवसे उसने अपनी महिमाका एक स्वच्छन्द प्रकाश सब चीजोंपर बखेर दिया है।

ठीक यही भाव हरेन्द्रकी बातसे भी प्रकट हुआ। अन्य दो नारियोंके सामने शालीनतामें भले ही कुछ त्रुटि हो गई हो, पर वह आवेगमें आकर कह ही बैठा, "अब कहीं हमारी मिलन-सभा पूर्णताको प्राप्त हुई।" कमलके सिवा शायद वह और किसीके लिए ऐसी बात नहीं कह सकता था।

अक्षयने कहा, "क्यों ? इससे दर्शनशास्त्रका ऐसा कौन-सा सूक्ष्म तत्त्व परिस्फुटित हो गया, जरा कहो तो सही ?"

कमलने हरेन्द्रसे हँसते हुए कहा, "अब बताइए ! दीजिए इसका जवाब !"

हरेन्द्र तथा औरोंने भी मुँह फेरकर अपनी अपनी हँसी छिपानेकी कोशिश की।

अक्षयने नीरस-कण्ठसे पूछा, "क्यों कमल, मुझे पहचाना कि नहीं ?"

आशु बाबू मन ही मन असन्तुष्ट हुए, बोले, "तुम पहचान लो इतना ही काफी है। तुमने तो पहचान लिया न !"

कमलने कहा, "यह प्रश्न आपका बेजा है आशु बाबू। आदमी पहचानना तो इनका खास पेशा है। इसमें भी सन्देह करना इनके पेशेपर चोट पहुँचाना है।"

बात उसने इस ढंगसे कही कि अबकी बार किसीसे हँसी दबाये नहीं दबी; मगर साथ ही इस डरसे कि यह दुःशासन आदमी कहीं कुछ कुत्सित बात न कह बैठे, सब शंकित हो उठे। आजके दिन अक्षयको बुलानेकी हरेन्द्रकी इच्छा नहीं थी; पर यही सोचकर निमंत्रण दे दिया गया था कि वह बहुत दिन बाद घरसे आया है, न देनेसे बहुत ही भद्दा दीखेगा। हरेन्द्रने डरते हुए और विनयके साथ कहा, "हमारे इस शहरसे,—अथवा यों कहिए कि इस देशसे ही आशु बाबू चले जा रहे हैं। इनके साथ परिचित होना किसी भी आदमीके लिए सौभाग्यकी बात है और वह सौभाग्य हम लोगोंको प्राप्त हुआ है। आज आपकी तबीयत ठीक नहीं है, मन भी अवसन्न है, इसलिए हमें आशा करनी चाहिए कि आज हम आपको सहज-सौजन्यके साथ ही विदा कर सकेंगे।"

बातें साधारण-सी थीं; पर उस शान्त सहृदय प्रौढ़ व्यक्तिके चेहरेकी तरफ देखते ही वे सबके हृदयमें पैठ गईं।

आशु बाबूको सकोच मालूम हुआ। इस आशंकासे कि बातचीतका सिलसिला कहीं उन्हींके विषयमें न चल पड़े, उन्होंने चटसे दूसरी बात छेड़ दी; बोले, "अक्षय, शायद तुम्हें मालूम हो गया होगा कि हरेन्द्रका ब्रह्मचर्याश्रम अब नहीं रहा। राजेन्द्र तो पहलेसे ही लापता है और सतीश भी उस दिन चलता बना। जो कुछ दो-चार लड़के रह गये हैं, हरेन्द्रकी इच्छा है कि उन्हें संसारके सीधे रास्तेसे ही आदमी बनाया जाय। तुम सब लोग बहुत दिनों तक बहुत सी बातें करते रहे, पर नतीजा कुछ नहीं हुआ। अब तुम लोगोंका कर्तव्य है कि कमलको धन्यवाद दो।"

अक्षय भीतरसे जल गया और सूखी हँसी हँसता हुआ बोला, "अन्तमें फल फला शायद इनकी बातोंसे? लेकिन कुछ भी कहिए आशु बाबू, मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। यह अनुमान तो मैंने बहुत पहलेसे ही कर रक्खा था।"

हरेन्द्रने कहा, "सो तो करते ही, क्योंकि आदमी पहचानना आपका पेशा ठहरा!"

आशु बाबू बोले, "फिर भी, मैं समझता हूँ, तेकनेकी कोई जरूरत नहीं

थी। सभी धर्म या मत मूलतः एक ही हैं,—सिद्धि प्राप्त करनेके अर्थ वे सिर्फ कुछ प्राचीन आचार-अनुष्ठान ही तो हैं! जो उन्हें मानते नहीं या पालते नहीं, वे न मानें या न पालें; पर जिनमें मानने या पालनेका अध्यवसाय है उन्हें निरुत्साह करनेसे क्या लाभ! क्या कहते हो अक्षय!"

अक्षयने कहा, "जरूर।"

आशु बाबूने कमलकी तरफ देखा। उनके देखते ही वह जोरसे सिर हिलाकर बोल उठी, "आपका यह दृढ विश्वास तो नहीं हुआ आशु बाबू, बल्कि यह तो अविश्वास-उपेक्षाकी बात हुई। इस तरह सोच सकती तो मैं आश्रमके विरुद्ध एक शब्द भी न कहती। मगर बात ऐसी नहीं है। यह कहना कि आचार अनुष्ठान मनुष्यके लिए धर्मसे भी बड़ी वस्तु हैं वैसा ही है जैसा कि राजासे बढ़कर राजाके कर्मचारियोंको बड़ा बताना।"

आशु बाबूने हँसते हुए कहा, "माना कि यह ठीक है, पर इससे क्या तुम्हारी उपमाको ही युक्ति मान लूँ!"

यह बात कमलके चेहरेसे ही जाहिर थी कि उसने परिहास नहीं किया। उसने कहा, "क्या सिर्फ उपमा ही है आशु बाबू, उससे ज्यादा कुछ नहीं? इसे मैं मानती हूँ कि सभी धर्म असलमें एक हैं, सर्व कालों और सर्व देशोंमें वे उसी एक अज्ञेय वस्तुकी असाध्य साधना हैं। उन्हें मुट्ठीके अन्दर तो पाया जा नहीं सकता। प्रकाश और हवाको लेकर मनुष्यका विवाद नहीं होता, विवाद होता है अन्नके बँटवारेके लिए,—जिसे कि अपने अधिकारमें लिया जा सकता है या दखल करके अपने वंशधरोंके लिए इकट्ठा किया जा सकता है। इसीसे तो जीवनकी आवश्यकताओंमें वह इतना बड़ा सत्य हो रहा है। यह तो सभी जानते हैं कि विवाहका मूल उद्देश्य सभी क्षेत्रोंमें एक ही है, पर इससे क्या सब उसे मान सकते हैं! आप ही बताइए न अक्षय बाबू, ठीक है कि नहीं!" यह कहा और उसने हँसकर मुँह फेर लिया।

इसका भीतरी अर्थ सभी समझ गये। क्रुद्ध अक्षयने इसके जवाबमें कोई कड़ी बात कहनी चाही, पर वह उसे ढूँढ़े न मिली।

आशु बाबूने कहा, "पर मुश्किल तो यह है कमल, कि तुम कुछ भी मानना नहीं चाहतीं। सभी आचार-अनुष्ठानोंके प्रति तुम्हारे अन्दर अवज्ञाका भाव है। इसीसे तो तुम्हें समझाना कठिन है।"

कमलने कहा, "कुछ भी कठिन नहीं। एक बार सामनेका परदा हटा

दीजिए और फिर कोई समझे या न समझे, आपको समझनेमें देर न लगेगी। यह नहीं होता तो आपका स्नेह मैं कैसे पा सकती? बीचमें कुहरेकी ओट न हो सो बात नहीं, मगर फिर भी वह प्रेम मुझे मिला है। मैं जानती हूँ आपको चोट पहुँचती है, लेकिन आचार-अनुष्ठानको मैं झूठा बताकर उड़ा देना नहीं चाहती, मैं करना चाहती हूँ सिर्फ उसमें परिवर्तन। समयके धर्मानुसार आज जो अचल हो रहा है, चोट पहुँचाकर मैं उसीको सचल कर देना चाहती हूँ। यह जो मेरी अवज्ञा है, वह इसीलिए है कि उसका मूल्य मैं समझती हूँ। झूठ समझती होती तो झूठके साथ स्वर मिलाकर झूठी श्रद्धासे सबके साथ मेल मिलाकर ही जीवन बिता देती,—जरा भी विद्रोह न करती।"

जरा ठहरकर वह फिर कहने लगी, "योरोपके उन *रिनेसान्सके दिनोंकी तो जरा याद कीजिए। उन लोगोंने नई सृष्टि करनी चाही, पर आचार-अनुष्ठानको हाथ भी न लगाया। पुरानेकी देहपर ही ताजा रंग चढ़ाकर भीतर ही भीतर करने लगे उसकी पूजा। भीतर जड़ पहुँची नहीं, और यह फैशन दो ही दिनमें विला गया। डर था हमारे हरेन्द्र बाबूको कि कहीं उच्च अभिलाषा इसी तरह विला न जाय। पर अब कोई डर नहीं, वे सम्हल गये है।" और वह हँसने लगी।

इस हँसीमें हरेन्द्र शरीक न हो सका, गम्भीर हो रहा। उसने काम तो कर डाला है, पर भीतरसे अब भी उसे समर्थन नहीं मिल रहा है, और अब भी मन रह रहकर भारी हो उठता है। वह बोला, "मुश्किल तो यह है कि तुम भगवानको नहीं मानती और मुक्तिपर भी तुम्हारा विश्वास नहीं। मगर जो लोग तुम्हारी उस 'अज्ञेय वस्तु' की साधनामें लगे हुए हैं और उसके तत्त्व-निरूपणमें व्यग्र हैं, उनके लिए कठोर आचार-पालनके सिवा और कोई मार्ग भी तो नहीं है। आश्रम उठा देकर मैं अहंकार नहीं करता; उस दिन जब लड़कोंको लेकर सतीश चला गया तब मैंने अपनी कमजोरी ही महसूस की है।"

कमलने कहा, "तब तो आपने अच्छा नहीं किया हरेन्द्र बाबू। मेरे पिता कहा करते थे कि जिन लोगोंका भगवान जितना ही अधिक सूक्ष्म और अधिक जटिल है, वे लोग उतने ही ज्यादा उलझकर मरते हैं और जिन लोगोंके

* Renaissance पंद्रहवीं शताब्दीमें होनेवाला साहित्य-कला आदिका नवजीवन

भगवान् जितने ही अधिक स्थूल और सहज हैं, वे लोग उलझनोंसे उतनी ही दूर, किनारेके निकट हैं। ईश्वरको मानना असलमें नुकसानका कारोबार है। कारोबार जितना ही विस्तृत और व्यापक होगा, नुकसान भी उतना ही बढ जायगा। उसे समेटकर छोटा कर डालनेसे यद्यपि लाभ ज्यादा नहीं होता किन्तु नुकसानकी मात्रा जरूर घट जाती है। हरेन्द्र बाबू, आपके सतीशसे मैंने बातचीत कर देखी है। आश्रममें उन्होंने अनेक प्रकारके प्राचीन नियमोंका प्रवर्तन किया था,—उनके मनकी कामना थी कि उसी प्राचीन युगमें लौटा जाय। उन्होंने सोचा था कि दुनियाकी उमरमेंसे दो हजार वर्ष पोंछ डालनेसे ही परम लाभ अपने आप आ पहुँचेगा। योरोपमें भी एक दिन ऐसे ही झूठे लाभकी स्कीम बाँधी थी प्युरीटनोंके * एक दलने। सोचा था कि भागकर अमेरिका चले जायँगे और पिछली सत्रह शताब्दियाँ मिटाकर बिना किसी झंझटके आनन्दके साथ बाइबलका सत-जुग कायम कर लेंगे। किन्तु, उनके लाभका हिसाब आज बहुतोंको मालूम हो गया है; नहीं मालूम है तो सिर्फ मठाधीशोंके दलको। पिछले जमानेके दर्शन-शास्त्रसे जब वर्तमान विधि-विधानोंका समर्थन किया जाने लगता है, वास्तवमें, तभी उन विधि-विधानोंके वास्तवमें टूटनेका दिन आ जाता है। हरेन्द्र बाबू, आपके आश्रमको शायद नुकसान पहुँचाया हो मैंने, पर उस टूटे हुए आश्रमसे जो बाकी बच रहे हैं उनका मैंने नुकसान नहीं किया।"

प्युरीटनोंका इतिहास अक्षयको मालूम था, क्योंकि वह इतिहासका प्रोफेसर था। इस बार और सब चुप रहे, सिर्फ उसीने सिर हिलाकर इसका समर्थन किया।

आशु बाबू कहने लगे, "पर उस युगके इतिहासका जो उज्ज्वल चित्र है—"

कमल बीचमें ही बोल उठी, "चाहे जितना उज्ज्वल हो वह चित्र, पर है तो चित्र ही,—उससे ज्यादा कुछ नहीं। ऐसी पुस्तक आज तक संसारमें लिखी ही नहीं गई आशु बाबू, जिससे समाजके यथार्थ प्राणोंका परिचय प्राप्त किया जा सकता हो। आलोचना करके हम गर्व अनुभव कर सकते हैं, पर पुस्तकसे मिला मिलाकर समाज नहीं गढ़ सकते। श्रीरामचंद्रके युगका भी नहीं, युधिष्ठिरके युगका भी नहीं। 'रामायण' और 'महाभारत' में चाहे जितनी ही बातें लिखी हों पर उनके श्लोकोंको टटोलनेसे उस जमा-

* महारानी एलिजाबेथके समयका एक अति श्रद्धालु निष्ठावान् ईसाई धार्मिक दल।

नेके साधारण मनुष्यके दर्शन नहीं मिल सकते; और माकी कोख चाहे जितनी ही निरापद क्यों न हो, बड़े होनेपर उसमें वापस नहीं जाया जा सकता। संसारकी सम्पूर्ण मानव-जातिको मिलाकर ही तो मनुष्यका अस्तित्व है, वह तो आपके चारों तरफ है। कम्बल ओढ़कर क्या हवाके दबावको रोका जा सकता है?"

बेला और मालिनी चुपचाप बैठीं सुन रहीं थीं। इस स्त्रीके सम्बन्धमें बहुत-सी बातें उन लोगोंने सुन रखी थीं, पर आज आमने-सामने बैठकर इस परित्यक्त और निराश्रय महिलाके वाक्योंकी निःसंशय निर्भयता देखकर उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा।

दूसरे ही क्षण ठीक यही भाव आशु बाबूके मुँहसे प्रकट हुआ। उन्होंने कहा, "बहसमें हम चाहे जो भी कहा करें कमल, पर तुम्हारी बहुत-सी बातें हम मानते हैं। जिसे हम नहीं कर सकते, हृदयसे उसकी अवज्ञा भी नहीं करते। इसी घरमें किसी दिन स्त्रियोंका दरवाजा बन्द था, और सुना है, एक दिन तुम्हारे आ जानेसे सतीशने इस जगहको कलुषित समझ लिया था। मगर, आज हम सभी यहाँ आमंत्रित होकर आये हैं, किसीके आनेकी रोक टोक नहीं—"

इतनेमें एक लड़का दरवाजेके पास आकर खड़ा हो गया। साफ-सुथरी पोशाक पहने था, चेहरेपर आनन्द और सन्तोषका भाव झलक रहा था; बोला, "बहनजीने कहा है, रसोई तैयार है, आसन बिछाये जायँ?"

अक्षयने कहा, "हाँ हाँ, बिछाये जायँ। कहो जाकर, रात भी तो हो रही है।"

लड़का चला गया। हरेन्द्रने कहा, "जबसे भाभीजी आई हैं, खाने-पीनेकी चिन्ता किसीको नहीं करनी पड़ती। उनके लिए तो कहीं जगह न रह गई थी,—पर सतीश गुस्सा होकर चला गया।"

आशु बाबूका चेहरा क्षण-भरके लिए सुर्ख हो उठा।

हरेन्द्र कहने लगा, "और मजा यह कि सतीशके लिए भी और कोई उपाय नहीं था। वह त्यागी ब्रह्मचारी आदमी ठहरा,—उसकी साधनामें यह सम्पर्क विघ्न था। पर मुश्किल तो यह है कि मेरी कुछ समझहीमें नहीं आ रहा है कि वास्तवमें कौन-सा काम ठीक हुआ।"

कमलने तुरन्त निःसंकोच स्वरमें कहा, "यही काम हरेन्द्र बाबू, यही काम

ठीक हुआ है। संयम जब सहज स्वाभाविक न रहकर दूसरेपर आघात करने लगता है, तब वह दुर्वह हो उठता है।" कहते कहते उसने लहमे-भरके लिए आशु बाबूकी तरफ देखा,—शायद कोई एक गुप्त इशारा था,—पर फिर उसने हरेन्द्रसे ही कहा, "भगवानके रूपमें वे अपने आपको ही बढ़ाकर देखते हैं, अपने आपको ही खींच-खाँचके वे अपने भगवानकी सृष्टि करते हैं। इसीसे उनकी भगवानकी पूजा बार बार सिर झुकाकर अपनी ही पूजापर उतर आती है। इसके सिवा उनके लिए और कोई रास्ता भी नहीं। मनुष्य न तो सिर्फ पुरुष ही है और न सिर्फ स्त्री ही; दोनों मिलकर ही एक होते हैं। आधेको बाद देकर शेष आधा जब सिर्फ अपनेको ही विशाल रूपमें पाना चाहता है, तब वह अपनेको भी नहीं पाता और भगवानको भी खो बैठता है। सतीश बाबुओंके लिए दुश्चिन्ता मत रखिए हरेन्द्र बाबू, उनकी सिद्धि स्वयं भगवानके जिम्मे है।"

सतीशको लगभग कोई भी देख न पाता था; इसीसे अंतिम बातपर सबके सब हँस पड़े। आशु बाबू भी हँसे, परन्तु बोले, "हमारे हिन्दू-शास्त्रोंमें जो सबसे बड़ी बात है कमल, वह है आत्म-दर्शन। अर्थात्, अपनेको गंभीरताके साथ जान लेना। ऋषियोंका कहना है कि इसकी खोजमें ही विश्वकी सम्पूर्ण जानकारी,—सम्पूर्ण ज्ञान भरा पड़ा है। भगवानको पानेका यही एक मार्ग है और इसीके लिए ध्यानका उपदेश है। तुम ईश्वरको नहीं मानतीं,—पर जो मानते हैं, विश्वास करते हैं, उन्हें चाहते हैं,—वे अगर संसारके अनेक विषयोंसे अपनेको वंचित न रखें तो एकाग्रचित्त होकर ध्यानमें सफल नहीं हो सकते। सतीशकी बात मैं नहीं कहता,—पर कमल, यह तो हिन्दुओंका अच्छिन्न-परम्परासे प्राप्त संस्कार है, और यही तो योग है। समुद्रसे लेकर हिमालय तक सम्पूर्ण भारत अविचल श्रद्धासे इसी तत्त्वपर विश्वास करता है।"

भक्ति, विश्वास और भावके आवेगसे उनकी दोनों आँखें छलछला आईं। सब तरहके बाहरी साहबी ठाठके नीचे उनका जो दृढ़निष्ठ विश्वास-परायण हिन्दू-चित्त निर्वात दीप-शिखाकी तरह जल रहा था, कमलने क्षण-भरके लिए उसका अनुभव किया। वह कुछ कहना चाहती थी, पर संकोचके मारे कह न सकी। संकोच और किसी बातका नहीं, सिर्फ इसी बातका कि इस सत्यव्रती संयतेन्द्रिय वृद्ध पुरुषको व्यथा पहुँचाना ठीक नहीं। परन्तु उत्तर न पाकर जब वे खुद ही पूछने लगे, "क्यों कमल, क्या यह सत्य नहीं?" तब

उसने सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं, आशु बाबू, यह सच नहीं। सिर्फ हिन्दू धर्ममें ही नहीं, यह विश्वास सभी धर्मोंमें है। मगर सिर्फ विश्वासके जोरसे ही तो कोई बात कभी सत्य नहीं हो जाती। न त्यागके जोरसे ही वह सच हो सकती है और न मृत्यु-वरण करनेके जोरसे ही। संसारमे अत्यन्त तुच्छ तुच्छ मत-भेदोंके कारण बहुतसे प्राणोंका बहुत बार लेना-देना हो चुका है। उससे जिदका जोर ही प्रमाणित हुआ है, विचारोंकी सत्यता प्रमाणित नहीं हुई। योग किसे कहते हैं सो मैं नहीं जानती, लेकिन, अगर वह निर्जन स्थानमे बैठकर केवल आत्म-विश्लेषण और आत्म-चिन्तन करना ही है तो मैं यही बात जोरके साथ कहूँगी कि इन दो सिंहद्वारोंसे संसारमें जितने भ्रम और जितने मोहने प्रवेश किया है, उतना और कहींसे नहीं। और ये दोनों अज्ञानके ही सहचर हैं।"

सुनकर, सिर्फ आशु बाबू ही नहीं, हरेन्द्र भी मारे आश्चर्य और दुखके चुप हो रहा।

इतनेमें उस लड़केने फिर आकर कहा, "सब तैयार है, चलिए जीमने।"

सब नीचे चले गये।

२८

भोजन हो चुकनेके बाद कमलको क्षण-भरके लिए एकान्तमें पाकर अक्षयने चुपकेसे कहा, "सुना है कि आप यहाँसे चली जा रही हैं। लगभग सभी परिचितोंके घर आप एक-आध बार हो आई हैं, सिर्फ मेरे ही—"

'आप!' कमलके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। सिर्फ स्वरमें ही परिवर्तन हो, सो बात नहीं, सम्बोधनमें भी 'आप!' इस बातपर कि क्यों सब लोग उससे 'तुम' कहकर बोलते हैं, उसे न तो कोई शिकायत थी और न किसीसे वह नाराज ही होती थी। परन्तु अक्षयकी बात ही और थी। वह इस स्त्रीके लिए 'आप' कहना ज्यादती समझता था; बल्कि उसकी तो यहाँ तक धारणा थी कि ऐसा करना शिष्टताका दुरुपयोग है। कमलको यह बात मालूम थी, पर इस अति तुच्छ ओछेपनकी तरफ देखनेमें भी उसे शर्म आती थी। उसे डर था कि कहीं इसी विषयको लेकर कोई बहस न छिड़ जाय।

कमलने हँसते हुए कहा, "आपने तो कभी मुझे बुलाया नहीं?"

"नहीं। यह मेरा कसूर है। जानेके पहले क्या अब आपको वक्त न मिलेगा?"

" कैसे मिल सकता है बताइए, हम लोग कल तड़के ही रवाना हो रहे हैं।"

" तड़के ही ? " फिर जरा ठहरकर कहा. " भविष्यमें इधर अगर फिर कभी आना हो तो मेरे घर आपका निमंत्रण रहा।"

कमलने हँसते हुए कहा, " क्या एक बात आपसे पूछ सकती हूँ अक्षय बाबू ? अचानक मेरे विषयमें आपकी राय कैसे बदल गई ? बल्कि अब तो आपको और भी कठोर होना चाहिए था ? "

अक्षयने कहा, " साधारण तौरसे वैसा ही होता। लेकिन अबकी बार देशसे कुछ अनुभव इकट्ठा कर लाया हूँ। आपने जो प्युरीटनोंका दृष्टान्त दिया न, सो मेरे हृदयमें जाकर बिंध गया है। और किसीने समझा या नहीं, मैं नहीं कह सकता,—और न समझना कोई आश्चर्यकी बात भी नहीं,—मगर, मैं तो उस सम्बन्धमें बहुत कुछ जानता हूँ। एक बात और है। हमारे गाँवमें लगभग चौदह-आने मुसलमान हैं,—वे आज भी अपने डेढ़ हजार वर्षके पुराने सत्यपर दृढ हैं,—वही सब विधि-निषेध, कायदे-कानून, आचार-अनुष्ठान हैं,—कुछ भी व्यत्यय नहीं हुआ है। "

कमलने कहा, " उनके सम्बन्धमें मुझे लगभग कुछ भी नहीं मालूम;—जाननेका मौका भी कभी नहीं मिला। पर अगर आपकी बात सच हो, तो मैं सिर्फ यही कह सकती हूँ कि उनके लिए भी अब सोचने समझनेके दिन आ पहुँचे हैं। यह सत्य कि सत्यकी सीमा किसी एक बीते-दिनमें ही सुनिर्दिष्ट नहीं हो गई है, उन्हें भी किसी न किसी दिन मानना ही पड़ेगा। लेकिन,—ऊपर चलिए। "

" नहीं, मैं यहींसे विदा लूँगा। मेरी स्त्री बीमार है। इतने आदमियोंसे भेंट की है आपने, एक बार उससे भी भेंट न कीजिएगा ? "

कमल कुतूहलवश पूछ बैठी, " कैसी हैं वे देखनेमें ? "

अक्षयने कहा, " ठीक नहीं मालूम। हमारे परिवारोंमें ऐसा प्रश्न कोई नहीं करता। पिताजी नौ सालकी उमरमें उसे पुत्र-वधू बनाकर घर ले आये थे। पढने लिखनेका न तो समय ही मिला, न जरूरत ही समझी गई। रसोई बनाना, घरके काम-धन्धे, व्रत-उपवास, पूजा-पाठ,—इसीमें लगी रहती है,—मुझको ही इहलोक परलोकका देवता समझती है, बीमार होनेपर दवा नहीं खाना चाहती; कहती है, ' पतिके पादोदकसे ही सब बीमारियाँ अच्छी हो जाती हैं। अगर न अच्छी हों तो समझना चाहिए कि स्त्रीकी आयु खतम हो चुकी ! ' "

कमलको, इसका थोड़ा-बहुत आभास हरेन्द्रसे मिल चुका था; उसने कहा—"तब तो आप भाग्यवान् हैं,—कमसे कम स्त्रीके भाग्यसे। इतना जबरदस्त विश्वास इस युगमें दुर्लभ है।"

अक्षयने कहा, "शायद ऐसा ही हो, ठीक नहीं जानता। संभव है, इसीको स्त्री-भाग्य कहते हों। पर कभी कभी ऐसा मालूम होता है कि संसारमें मेरा कोई नहीं, मैं अकेला हूँ,—बिलकुल निःसंग अकेला।—अच्छा, नमस्कार।"

कमलने हाथ उठाकर प्रति-नमस्कार किया।

अक्षय एक कदम बढ़ाकर फिर मुड़ पड़ा, बोला, "एक अनुरोध करूँ?"

"कहिए"

"अगर कभी समय मिले, और मेरी याद रहे, तो एक पत्र लिखिएगा? आप खुद कैसी हैं, अजित बाबू कैसे हैं,—यही सब आप लोगोंकी बात मैं अकसर सोचा करूँगा। अच्छा अब जाता हूँ, नमस्कार।" इतना कहकर अक्षय जल्दीसे चला गया और कमल वहीं स्तब्ध होकर खड़ी रही। भले-बुरेका विचार करके नहीं, उसे सिर्फ इसी बातका खयाल हुआ कि यह वही अक्षय है! और मनुष्यकी जानकारीके बाहर इस भाग्यवानका दाम्पत्य-जीवन निर्विघ्न-शान्तिके साथ इस तरह बहा चला जा रहा है। एक चिट्ठीके लिए उसे इतना कुतूहल, ऐसी विनीत और सच्ची प्रार्थना!

ऊपर जाकर देखा कि नीलिमाके सिवा और सब यथास्थान बैठे हैं। यह नीलिमाका स्वभाव है,—इसपर कोई कुछ खयाल भी नहीं करता। आशु बाबूने कहा, "हरेन्द्रने एक बड़े मजेकी बात कही थी कमल, सुननेसे पहले तो सहसा वह एक पहेली-सी मालूम होती है, पर बात असलमें सच है। कह रहे थे, लोग इतना भी नहीं समझ सकते कि समाजके प्रचलित विधि-विधानोंके उल्लंघन करनेका दुःख सिर्फ चरित्र-बल और विवेक-बुद्धिके बलपर ही सहन किया जा सकता है। मनुष्य बाहरके अन्यायको ही देखता है, अन्तःकरणकी प्रेरणाकी कुछ खबर ही नहीं रखता। और यहींपर समस्त द्वन्द्व और विरोधोंकी सृष्टि होती है।"

कमलने समझा कि इसका लक्ष्य वह खुद और अजित है, इसलिए वह चुप रही। उसने यह बात नहीं कही कि उच्छृंखलताके जोरसे भी समाजके विधि-विधानोंका उल्लंघन किया जा सकता है। दुर्बुद्धि और विवेक-बुद्धि दोनों एक चीज नहीं हैं।

बेला और मालिनी उठ खड़ी हुईं, उनके जानेका समय हो गया। कमलकी बिलकुल उपेक्षा करके उन्होंने हरेन्द्र और आशु बाबूको नमस्कार किया। इस स्त्रीके सामने उन्होंने हमेशा अपनेको छोटा समझा है, इसलिए अन्तमें उसका बदला चुकाया उपेक्षा दिखाकर। उनके जानेपर आशु बाबूने स्नेहके साथ कहा, "कुछ खयाल मत करना बेटी, इसके सिवा उनके पास और कुछ है ही नहीं। मैं भी तो उसी दलका आदमी हूँ। सब जानता हूँ।"

आशु बाबूने हरेन्द्रके सामने आज पहली बार उसे 'बेटी' कहके पुकारा। कहा, "दैवसे वे पदस्थ व्यक्तियोंकी स्त्रियाँ हैं, हाई सर्किलकी महिलाएँ ठहरीं। अँग्रेजी बातचीतमें, चाल-चलन और पहना-उढावमें अप-टू-डेट हैं। यह भूल जानेसे तो उनकी मूल पूँजीपर ही चोट पड़ती है, कमल। उनपर गुस्सा होना भी अन्याय है।"

कमलने हँसते हुए कहा, "गुस्सा तो मैं नहीं हुई।"

आशु बाबूने कहा, "सो मैं जानता हूँ। गुस्सा मुझे भी नहीं आया, सिर्फ हँसी आई। पर, घर कैसे जाओगी बेटी, मैं उतारता जाऊँ तुम्हें?"

"वाह, नहीं तो मैं जाऊँगी कैसे?"

कहीं लोगोंकी निगाह न पड़ जाय, इस डरसे उसने अपनी मोटर लौटा दी थी।

"अच्छी बात है। पर, अब देर करना भी शायद ठीक न हो,—क्यों, ठीक है न?"

सबको खयाल हो आया कि अभी वे सम्पूर्ण नीरोग नहीं हुए हैं।

इतनेमें जीनेमें जूतेकी आवाज सुनाई दी, और दूसरे ही क्षण सबने अत्यन्त आश्चर्यके साथ देखा कि दरवाजेके बाहर अजित आ खड़ा हुआ है।

हरेन्द्रने मीठे स्वरसे स्वागत किया, "हेलो! बैटर लेट दैन नैव्हर। (=कभी नहीसे देर भली।) ब्रह्मचर्याश्रमका कैसा सौभाग्य है!"

अजित अप्रतिभ होकर बोला, "लेने आया हूँ।" और पलक मारते ही एक अनचीती दुःसाहसिकताने उसके भीतरकी बातको जोरसे धक्का देकर बाहर निकल दिया, बोला, "नहीं तो फिर मुलाकात न होती। हम लोग तड़के ही चले जा रहे हैं।"

"तड़के ही? आजकी रात बीते?"

"हाँ। सब तैयारियाँ हो चुकी हैं। यहींसे हम लोगोंकी यात्रा शुरू होगी।"

बात किसीसे छिपी हुई नहीं थी, फिर भी सबके सब मानो लज्जासे म्लान हो उठे।

इतनेमें दबे-पाँव चुपकेसे नीलिमा आ पहुँची और एक तरफ बैठ गई। संकोच दूर करके आशु बाबूने आँख उठाकर देखा। जो बात वे कहना चाहते थे वह एक बार उनके गलेमें अटकी, फिर धीरे धीरे वे बोले, "हो सकता है कि हम लोगोंकी अब फिर कभी भेंट न हो, तुम दोनों मेरे स्नेहके पात्र हो, अगर तुम लोगोंका ब्याह हो जाता तो म देख जाता।"

अजितको सहसा मानो किनारा नजर आ गया, वह व्यग्र कण्ठसे बोल उठा, "यह चीज मैं नहीं चाहता आशु बाबू, यह तो मेरे लिए कल्पनाके बाहरकी बात है। विवाहके लिए मैंने बार बार कहा है, और बार बार सिर हिलाकर कमलने अस्वीकार कर दिया है। अपनी सारी सम्पत्ति,—जो कुछ मेरे पास है सब,—उसके नाम लिखकर मैं मजबूतीसे पकड़ाई देनेको तैयार था, पर कमल राजी नहीं हुई। आज इन सबके सामने मैं फिर प्रार्थना करता हूँ कमल, तुम राजी हो जाओ। मैं अपना सर्वस्व तुम्हें देकर जी जाऊँ। धोखेके कलंकसे छुटकारा पा जाऊँ!"

नीलिमा अवाक् होकर देखती रह गई। अजित स्वभावतः झेंपू प्रकृतिका आदमी था, सबके सामने उसकी ऐसी असीम व्याकुलता देख सबके सब मारे आश्चर्यके दंग रह गये। आज वह अपनेको बिलकुल निःसत्व कर देना चाहता है। अपनी कहनेको कोई चीज अपने हाथमें रखनेकी आज उसे कोई आवश्यकता ही नहीं मालूम हो रही है।

कमलने उसके मुँहकी तरफ देखकर कहा, "क्यों, तुम्हें इतना डर किस बातका हो रहा है?"

"डर आज न सही, पर—"

"'पर'का दिन पहले आये तो सही।"

"आनेपर तो फिर तुम हर्गिज कुछ लोगी नहीं, मैं जानता हूँ।"

कमलने हँसते हुए कहा, "जानते हो? तो वही होगा तुम्हारे लिए सबसे बड़ा और मजबूत बन्धन।"

जरा ठहरकर फिर कहने लगी, "तुम्हें याद नहीं, मैंने एक दिन कहा था कि बहुत ज्यादा मजबूत बनानेके लोभसे बिलकुल ठोस और निच्छिद्र मकान बनानेकी कोशिश मत करो। उससे मुरदेकी कब्र भले ही बन जाय, पर जीवित मनुष्यका शयनागर नहीं बन सकता।"

अजितने कहा, "कहा था, मुझे याद है। जानता हूँ, तुम मुझे बाँधना नहीं चाहतीं,—पर मैं जो बँधना चाहता हूँ। नहीं तो फिर मैं तुम्हें किस चीजसे बाँध रखूँगा कमल? मुझमें कहाँ है इतना जोर?"

कमलने कहा, "जोरकी जरूरत नहीं। बल्कि तुम अपनी कमजोरीसे ही मुझे बाँध रखना। मैं इतनी निष्ठुर नहीं कि तुम जैसे आदमीको दुनियामें यों ही बहाकर चली जाऊँ।" फिर पलकमात्र आशु बाबूकी तरफ देखकर बोली, "भगवानको तो मैं मानती नहीं, नहीं तो उनसे प्रार्थना करती कि तुम्हें संसारके समस्त आघातोंकी ओटमें रखकर ही मैं एक दिन मर सकूँ।"

नीलिमाकी आँखोंमें आँसू भर आये। आशु बाबूने भी अपनी आँसुओंसे व्याकुल आँखोंको पोंछते हुए रुँधे हुए कण्ठसे कहा, "तुम्हें भगवान माननेकी भी जरूरत नहीं कमल। सब एक ही बात है बेटी। यह आत्म-समर्पण ही तुम्हें एक दिन गौरवके साथ उनके पास पहुँचा देगा।"

कमल हँस दी, बोली, "वह तो मेरी ऊपरी प्राप्ति होगी। हककी प्राप्तिसे भी उसकी ज्यादा इज्जत है।"

"सो ठीक है, बेटी। पर यह जान रखना कि मेरा आशीर्वाद निष्फल नहीं होनेका।"

हरेन्द्रने कहा, "अजित, खाके तो आये नहीं होगे, चलो नीचे।"

आशु बाबू हँसते हुए बोले, "तुम्हारी अक्ल भी खूब है। ऐसा भी कभी हो सकता है कि अजित बिना खाये-पीये ही चला आये और कमल यहाँ खा-पीकर निश्चिन्त हो जाये।"

अजितने लज्जाके साथ स्वीकार किया कि बात दर-असल ऐसी ही है। वह बिना खाये नहीं आया।

इस बातका स्मरण आते ही कि यही शेष रात्रि है, किसीका जी नहीं चाहता था कि सभा भंग हो; परन्तु आशु बाबूके स्वास्थ्यका खयाल करके आखिर उठनेकी तैयारी करनी ही पड़ी। हरेन्द्रने कमलके पास आकर धीमे स्वरमें कहा, "इतने दिनों बाद अब असल चीज पाई कमल, मेरा अभिनन्दन ग्रहण करो।"

कमलने उसी तरह चुपकेसे जवाब दिया, "पाई है? कमसे कम यही आशीर्वाद दीजिए।"

हरेन्द्रने आगे और कुछ न कहा। परन्तु कमलके कण्ठसे जैसा चाहिए

वैसा दुविधाहीन परम निःसंशय स्वर झंकृत नहीं हुआ और यह बात उसके कानोंको खटकी। मगर फिर भी ऐसा ही हुआ करता है। विश्वका विधान ही ऐसा है।

कमलको दरवाजेकी ओटमें बुलाकर नीलिमाने अपनी आँखें पोंछते हुए कहा, "कमल, मुझे भूल न जाना कहीं।" इससे ज्यादा उससे कहते नहीं बना।

कमलने उसे झुककर नमस्कार किया और कहा, "जीजी, मैं फिर आऊँगी। पर जानेके पहले मैं आपके पास एक प्रार्थना रख जाऊँगी कि जीवनमें कल्याणको कभी अस्वीकार न करना। उसका सत्य रूप आनन्दका रूप है। उसी रूपमें वह दिखाई देता है,—उसे और किसी तरह भी पहचाना नहीं जा सकता। तुम और चाहे जो भी करो जीजी, पर अविनाश बाबूके घरकी बेगार करनेको अब राजी न होना।"

नीलिमाने कहा, "ऐसा ही होगा कमल।"

आशु बाबू गाड़ीमें जाकर बैठे तो कमलने हिन्दू-रीतिसे उनके पाँव छूकर प्रणाम किया। आशु बाबूने उसके माथेपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। कहा, "तुमसे मुझे एक वास्तविक तत्त्वका पता लगा कमल। अनुकरणसे मुक्ति नहीं मिलती, मुक्ति मिलती है ज्ञानसे। इसीसे डर लगता है कि तुम्हें जिसने मुक्ति मिला दी है; कहीं अजितको वही असम्मानमें न डुबो दे। उससे इसकी रक्षा करना बेटी। आजसे इसका भार तुम्हींपर है।"

कमलने इशारा समझ लिया।

आशु बाबू फिर कहने लगे, "तुम्हारी ही बात मैं तुम्हें याद दिलाये देता हूँ कमल। उस दिनसे मैंने इस बातपर बार बार विचार किया है कि प्रेमकी पवित्रताका इतिहास ही मनुष्यकी सभ्यताका इतिहास है,—उसका जीवन है। यही उसके महान् होनेका धारावाहिक वर्णन है। फिर भी शुचिताकी संज्ञा या व्याख्याको लेकर मैं चलते वक्त तर्क नहीं करूँगा। अपने क्षोभके निःश्वाससे तुम लोगोंकी विदाकी घड़ियोंको मैं मलिन नहीं करना चाहता। मगर इस बूढ़ेकी इतनी-सी बात याद रखना कमल, कि आदर्श या आइडिया सिर्फ दो-चार आदमियोंके लिए ही है,—इसीसे उसकी कीमत है। उसे साधारणके बीच खींच लानेसे फिर वह पागलपन हो जाता है, उसका शुभ मिट जाता है और बोझ दुःसह हो उठता है। बौद्ध युगसे लेकर वैष्णव

युग तक इसकी बहुत-सी दुःखद नजीरें संसारमें फैली पड़ी हैं। क्या तुम फिरसे वही दुःखका चित्र संसारमें खींच लाना चाहती हो बेटी ?"

कमलने मृदु कण्ठसे उत्तर दिया, "यह तो मेरा धर्म है चाचाजी !"

"धर्म ! तुम्हारा यह धर्म है ?"

कमलने कहा, "हाँ। जिस दुःखसे आप डर रहे हैं चाचाजी, उसीमेंसे फिर उससे भी बड़ा आदर्श पैदा होगा। और उसका भी काम जिस दिन खतम हो जायगा, उस दिन उसके मृत शरीरके सारमेंसे उससे भी महान् आदर्शकी सृष्टि होगी। इसी तरह संसारमें आजका शुभ कलके शुभतरके चरणोंमें आत्म-विसर्जन करके अपना ऋण चुकाता रहता है। यही तो मनुष्यकी मुक्तिका मार्ग है। देखते नहीं चाचाजी, सती-दाहका बाहरी चेहरा राजशासनसे बदल गया है, पर उसके भीतरकी आग आज भी ज्योंकी त्यों धधक रही है और उसी तरह भस्म किये जा रही है। यह बुझेगी किस चीजसे ?"

आशु बाबूसे कुछ बोला न गया, वे एक गहरी साँस लेकर रह गये। परन्तु दूसरे ही क्षण बोल उठे, "कमल, मणिकी माका बन्धन मैं आजतक नहीं तोड़ सका, सो इसे तुम कहा करती हो कि मोह है, कमजोरी है,—मालूम नहीं वह क्या है, पर यह मोह जिस दिन जाता रहेगा उस दिन उसके साथ साथ मनुष्यका बहुत-कुछ चला जायगा, बेटी। मनुष्यकी यह बहुत तपस्याकी पूँजी है कमल !—अच्छा, अब जायँ। चलो वासुदेव।"

इतनेमें टेलिग्राफ-पियून सामने आकर साइकिलसे उतरा। अर्जेण्ट तार है।

हरेन्द्रने गाड़ीकी बत्तीके सामने जाकर तार खोलकर पढ़ा। लम्बा टेलिग्राम है, मथुरा जिलेके एक छोटे सरकारी अस्पतालके डाक्टरने भेजा है। उसमे लिखा है :

"गाँवके एक मन्दिरमें आग लग गई थी। बहुत दिनोंकी बहुजन-पूजित प्रतिमा ध्वंस होनेको थी। रक्षाका कोई भी उपाय न रह गया था कि इतनेमें उस जलते हुए मन्दिरके अन्दर राजेन्द्र घुस पड़ा और मूर्तिको बाहर ले आया। देवताकी रक्षा हो गई, पर उनके रक्षा-कर्ताकी रक्षा न हो सकी दो दिन तक चुपचाप अव्यक्त यातना सहता हुआ आज सवेरे वह वैकुण्ठ चला गया। दस हजार जनताने मिलकर कीर्तन-भजनादिके साथ जुलूस निकाल कर यमुना-तटपर उसकी अन्त्येष्टि-क्रिया सम्पन्न की है। मरते समय राजेन्द्र आपको समाचार देनेके लिए कह गया है।"

स्वच्छ नील आकाशसे मानो वज्र गिरा।

रुलाईसे हरेन्द्रका गला रुक गया, और स्वच्छ चाँदनी रात मुहूर्त-भरमें अन्धकारमें एकाकार हो गई।

आशु बाबू रो पड़े, बोले, "दो दिन,—अड़तालीस घण्टे,—इतने नजदीक, फिर भी जरा खबर तक नहीं दी!"

हरेन्द्र आँखें पोंछता हुआ बोला, "जरूरत नहीं समझी। कुछ किया तो जा नहीं सकता था, इसीसे शायद उसने किसीको दुःख नहीं देना चाहा।"

आशु बाबूने अपने दोनों हाथ माथेसे लगाकर कहा, "इसके मानी यह हैं कि सिवा देशके किसी आदमीको उसने अपना आत्मीय नहीं माना। सिर्फ देश,—समग्र भारतवर्ष। फिर भी, भगवान्, तुम अपने चरणोंमें उसे स्थान देना। तुम और चाहे जो भी करो, पर इस राजेन्द्रकी जातिको संसारसे न मिटाना।—वासुदेव, चलो।"

इस शोककी मार्मिक चोट कमलसे बढ़कर शायद और किसीको न पहुँची होगी, परन्तु वेदनाकी भापसे उसने अपने कण्ठको रुँधने नहीं दिया। उसकी आँखोंसे चिनगारियाँ-सी निकलने लगीं, बोली, "दुःख किस बातका? वह वैकुण्ठ गया है।" फिर हरेन्द्रसे बोली, "रोइए मत हरेन्द्र बाबू, अज्ञानकी बलि हमेशा इसी तरह अदा होती है।"

कमलके स्वच्छ कठोर स्वरने पैने छुरेकी तरह सबके कलेजेको छेद दिया।

आशु बाबू चले गये।

और, उस शोकाच्छन्न स्तब्ध-नीरवताके बीच कमल अजितके साथ गाड़ीमें जा बैठी। बोली, "रामदीन—चलो।"